TEXT DARK WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY

OU_182840

UNIVERSAL LIBRARY

धूलि-धूसरित मणियां

[लोक-गीतों पर एक विवेचन]

लेखिका
सीता, बी० ए०
दमयन्ती, एम० ए०
लीला, प्रभाकर

प्रकाशक
नेशनल पब्लिशिंग हाउस
नई सड़क : दिल्ली

OUP—24—4-4-69—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 801
S 45 D

Accession No. G.H. 247

Author सीता तथा द्वारे

Title धूलि-धूसरित मणियाँ। 1956.

This book should be returned on or before the date last marked below.

प्रथम संस्करण
दिसम्बर, १९५६

आवरण चित्र
के० सी० आर्यन

मूल्य
पन्द्रह रुपये

मुद्रक
बाल कृष्ण, एम० ए०
युगान्तर प्रेस, डफ़रिन पुल, दिल्ली

समर्पण

श्रद्धेय श्री बनारसीदास चतुर्वेदी जी
की पुनीत सेवा में
सादर समर्पित

●

उत्तर-प्रदेश सरकार

के प्रति

आभार-प्रदर्शन

उत्तर-प्रदेश सरकार ने इस पुस्तक के
प्रकाशनार्थ हमें १५०० रुपये प्रदान
किये हैं। एतदर्थ हम उनके
प्रति आभार प्रदर्शित
करती हैं।

●

आमुख

इस पुस्तक की पांडुलिपि मुझे उत्तर-प्रदेश-सरकार के शिक्षा-विभाग से सम्मति के लिए मिली थी। पुस्तक की उपयोगिता की दृष्टि से और स्त्री-लेखिकाओं को प्रोत्साहन देने के विचार से भी मैंने अपनी उपयुक्त सम्मति दी और शिक्षा-विभाग ने लेखिकाओं को आर्थिक सहायता देकर प्रोत्साहित भी किया, जिसके लिए वह धन्यवाद का पात्र है।

बाद में लेखिका श्रीमती सीतादेवी ने इच्छा प्रकट की कि मैं उनकी इस पुस्तक की पांडुलिपि को एक बार ध्यानपूर्वक पढ़ जाऊं। मैंने पढ़ लिया। यत्र-तत्र शुद्धियां भी कर दीं। पुस्तक बहुत परिश्रम और साहित्य के गहरे अध्ययन के साथ लिखी गई है, ऐसा मुझे लगा।

मुझे यह लिखने में विशेष हर्ष हो रहा है कि यह पुस्तक स्त्री लेखिकाओं ने लिखी है। ग्राम-गीत मुख्यतः स्त्रियों ही की सम्पत्ति हैं। उन्हें इस पर अधिकार करना ही चाहिए। यह उन अशिक्षिता, छन्द-रचना से अनभिज्ञा, अलंकार आदि काव्य के गुणों से अपरिचिता देवियों की रचनाएं हैं, जिनमें न कोई तुलसीदास पैदा हुआ, और न कबीर, सूर, बिहारी और पद्माकर ही, फिर भी ललनाओं ने हिन्दी के कवियों को चुनौती दी है। मानो सरस्वती ने स्वयं स्वजाति का पक्ष करके उनके कंठ में बैठकर गान किया है। उनका यह त्याग भी उनके गौरव के उपयुक्त ही है कि किसी ने गीतों में अपना नाम नहीं दिया है। भरत मुनि के नाट्यशास्त्र का अभ्यास किए बिना भी देवियां अपने गीतों के साथ नृत्य भी कर लेती हैं। इन गीतों में भारत की प्राचीन संस्कृति इस प्रकार सन्निहित है, जैसे फूलों में सौन्दर्य। देवियां जब अपने कोकिल कंठ से गान करने लगती हैं तब प्रकृति निस्तब्ध-सी दिखाई पड़ने लगती है। स्त्रियों को अपनी इस अनमोल सम्पदा पर गर्व होना चाहिए।

श्रीमती सीतादेवी ने इस पुस्तक द्वारा स्त्री-समाज की बड़ी सेवा की है। अनपढ़ स्त्रियों की बुद्धि में भी कितनी चेतनता है, उसकी कुछ झलक उन्होंने हमारे सामने रक्खी है, और उनके गौरव को बढ़ाया है। शिक्षिता स्त्रियां

हमें इन में बहुत से लोक-शब्द मिलते हैं, जिन्हें अपनाकर हिन्दी-साहित्य अपने शब्द-कोष को समृद्ध कर सकता है। कुछेक शब्द तो इतने भाव-पूर्ण हैं कि उनके पर्यायवाची शब्द साहित्यिक भाषा में नहीं मिलते।

बाल कृष्ण जी[1] ने हमें समय-समय पर अपनी अमूल्य सम्मति देकर बहुत सहायता की है।

राधा[2] और सुधा[3] ने प्रूफ़ ठीक करते हुए गीतों को गा-गा कर उनकी लय और गति ठीक कराने में बड़ा सहयोग दिया है। उनके द्वारा दिये गए कई गीत भी पुस्तक में सम्मिलित किए गए हैं।

श्री रामनरेश त्रिपाठी जी ने प्रारम्भ में ही हमारे मृत्यु-सम्बन्धी लेख को पढ़कर उसे बहुत पसन्द किया था और अपने पत्र के द्वारा विशेष-रूप से हमारा उत्साह बढ़ाया था। अब तो उन्होंने इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ा भी है और यत्र-तत्र उचित संशोधन भी कर दिए हैं। उनके अमूल्य परामर्श और सुझावों के लिये हम उनकी अत्यन्त कृतज्ञ हैं।

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी जी ने इस पुस्तक के लिखने में हमें बड़ा प्रोत्साहन दिया है। श्री 'अज्ञेय' जी ने हमें अमूल्य सुझाव दिये हैं। हम इन दोनों के प्रति आभार प्रकट करती हैं।

इस पुस्तक के प्रकाशन का मुख्य श्रेय उत्तर-प्रदेश सरकार को है, जिन्होंने हमें १५००) रुपये देकर पुस्तक के प्रकाशन को सुगम बना दिया। हम उत्तर-प्रदेश सरकार की विशेष रूप से आभारी हैं।

वर्षों पश्चात् हमारे परिश्रम का पुनीत फल पाठकों के सम्मुख आ रहा है। आशा है, वे इसे अपनायेंगे।

सीता
दमयन्ती

---

१. सीता के देवर, २. सीता की देवरानी, ३. बाल कृष्ण जी की पुत्री।

विषयानुक्रमणिका

भूमिका ... क—र

अध्याय ... पृष्ठ संख्या

खण्ड १—लोक-गीतों में भक्ति-रस

१. लोक-गीत और कृष्ण ३
२. राम और सीता के गीत ३७
३. लोक-गीत और ईश्वर-भक्ति ५५

खण्ड २—सोहर तथा विवाह के गीत

४. सोहर ७६
५. विवाह-सम्बन्धी गीत १११

खण्ड ३—नृत्य के गीत तथा हास्य-रस और व्यंग के गीत

६. नृत्य के गीत १७३
७. हास्य-रस तथा व्यंग के गीत २०१

खण्ड ४—सावन के गीत

८. सावन के गीत २१३

खण्ड ५—लोक-गीतों में करुण-रस

९. कन्या की विदा के गीत २८३
१०. विरह के गीत २९१
११. करुण-रस के विविध गीत ३०५
१२. मृत्यु के गीत ३१८

खण्ड ६—विविध गीत तथा ग्राम-दोहे

१३. विविध गीत ३३५
१४. कुछ ग्राम-दोहे ३७१

परिशिष्ट

लोक-भाषा के विशिष्ट शब्द और उनके अर्थ ... ३७९

भूमिका

काव्य की रूपरेखा—

मानव-जीवन में काव्य का विशिष्ट स्थान है। वास्तव में देखा जाए तो यह विश्व ही कवित्व-मय है। इस विशाल सृष्टि का निर्माता स्वयं एक महा-कवि है। कवि प्रकृति-वाटिका का वर्षा-काल है। जैसे ग्रीष्म के प्रचण्ड तेज से उत्तप्त पृथ्वी में वर्षा नव-अँकुर उत्पन्न कर देती है, उसी प्रकार कवि मृत-हृदयों में जीवन का संचार कर देता है।

कवि स्वभावतः ही भावुक-प्रकृति का होता है। उसका प्रत्येक वस्तु को देखने का दृष्टिकोण निराला ही होता है।

कवि अपनी कला से नीरस को सरस बना देता है। कहते हैं कि कादम्बरी का अन्तिम भाग महाकवि बाण का नहीं, बल्कि उनके छोटे लड़के का लिखा हुआ है। कादम्बरी की रचना अधूरी ही थी, परन्तु बाण मृत्यु-शय्या पर लेटे हुए थे। उन्हें अपने ग्रन्थ के विषय में चिन्ता हुई। उन्होंने उसे पूरा करने का भार अपने लड़कों पर छोड़ना चाहा, परन्तु इससे पहले उनकी परीक्षा लेना आवश्यक समझा। उन्होंने पहले बड़े लड़के को बुलाया और एक सूखे वृक्ष की ओर संकेत करके पूछा—'वत्स, यह क्या है ?" पुत्र ने साधारण भाव से कहा—"शुष्को काष्ठस्तिष्ठत्यग्रे।" कवि को बड़ी निराशा हुई। उन्होंने अपने छोटे पुत्र से पूछा कि बेटा तुम बताओ, यह क्या है ? छोटे ने उत्तर दिया—"नीरस तरुरिह विलसति पुरतः।"

क्या ही काव्यमय उत्तर था ! उसने अपनी कला की महानता से नीरस वृक्ष को सरस बना दिया।

कहावत है, "जहाँ न जाय रवि, वहाँ जाय कवि।" कवि की दृष्टि बड़ी पैनी होती है। निर्झर की झर-झर, पत्तों की मर-मर, सरिता की कल-कल, कोकिल की कुहू-कुहू और पपीहे की प्यू-प्यू में उसे संगीत के दर्शन होते हैं, और उसकी आत्मा कल्पना-लोक में विचरण करने लगती है। सब लोग प्रकृति को देखते हैं, परन्तु कवि के भाव ही दूसरे होते हैं। वह हंस की चाल पर छन्द

रचता है, तो मृग-शावक, मछली, खञ्जन, आदि के नैन उसका मन मोह लेते हैं। पुष्प-भार से लदे हुए वृक्षों में वह किसी महान् दानी का प्रतिबिम्ब झलकता हुआ देखता है, तो हिमालय में उसे शिव के विराट् रूप के दर्शन होते हैं। वह गंगा में मातृमूर्ति निरख कर गद्-गद् हो उठता है। सूर्यदेव में उसे उषादेवी के दर्शन हो जाते हैं। सारांश यह कि कवि का हृदय विशाल होता है। वह प्रकृति में अपने को मिला देता है। जितने भी महाकवि हुए हैं, वे प्रकृति-निरीक्षण के प्रेमी रहे हैं, और प्रकृति की गोद में ही उनका लालन-पालन हुआ है। महाकवि वाल्मीकि की कविता में बड़ी स्वाभाविकता है, क्योंकि सरिता के तट पर उपवन में उनका आश्रम था, मृगछौने उनके साथी थे, और पक्षियों से उन्होंने संगीत सीखा था।

अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध लेखक मैकाले की सम्मति है कि ज्यों-ज्यों सभ्यता की वृद्धि होती जाती है, त्यों-त्यों कवित्व का ह्रास होता जाता है। उनके कथन का अभिप्राय यही है कि ज्यों-ज्यों मनुष्यों में प्राकृतिक भाव नष्ट होते जाते हैं और कृत्रिमता आती जाती है, त्यों-त्यों वे प्रकृति का संसर्ग छोड़कर संसार में प्रवेश करने लगते हैं, और उनका जीवन-रस सूखता जाता है। जीवन के प्रभात में किसको यह जग सुन्दर मालूम नहीं होता! उस समय हम वायु से क्रीड़ा करते हैं, कुसुमों से मैत्री स्थापित करते हैं, पशु-पक्षियों के साथ खेलते हैं, माँ वसुन्धरा के आँचल में विश्राम पाते हैं। उस समय हमारा जीवन बाल-रवि की प्रथम किरण की भाँति ज्योतिपूर्ण, निर्मल, सौम्य एवं मधुर होता है। हमारे वस्त्र धूल में भर जाते हैं, हाथ-पैर कीचड़ से लथपथ हो जाते हैं, परन्तु हमें इसका कुछ भी ध्यान नहीं रहता। वर्षा के गन्दे पानी में हम नाचते-कूदते, थिरकते फिरते हैं। किन्तु ज्यौं ही हमारे जीवन का मध्य युग आता है, हमारे भाव परिवर्तित हो जाते हैं। तितलियों के साथ फुदकने, भौरों के साथ भन-भन करने, और फूलों के साथ मुस्कराने में हमें आनन्द नहीं आता, और हमारा जीवन कृत्रिमता से भर उठता है। सभ्यता के रङ्ग में रङ्ग कर हम प्रकृति से कोसों दूर हो जाते हैं। हमारे काव्य पर भी इसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। उसमें सौन्दर्य और स्वाभाविकता की मात्रा कम होती चली जाती है।

परन्तु हमारे ग्राम अभी तक भी इस प्रकार की सभ्यता के प्रभाव से अछूते ही रहे हैं। मस्तिष्क से अधिक हृदय का ही उन पर आधिपत्य है। इसके अतिरिक्त प्रकृति का वास्तविक सौन्दर्य हमें ग्रामों में ही देखने को मिलता है। वहां जिधर भी हमारी दृष्टि जाती है उधर ही प्रकृति नेत्रों का स्वागत

सा करती प्रतीत होती है। अमराइयों में कोकिल की सुमधुर कुहु-कुहु, पपीहे की प्यू-प्यू, मयूर का नृत्य, कमलों से भरे हुए सरोवर, हरे-भरे खेत, प्रभात में उदय होता हुआ दिवाकर, जुन्हाई में स्नान करती हुई वसुन्धरा, कुलाचें भरते हुए मृग-शावक किसके मन को मुग्ध नहीं कर लेते।

हमारी ग्रामीण बहनों और भाइयों का समस्त जीवन प्रकृति की गोद में ही व्यतीत होता है। अतएव उनके संगीत में हमें एक अनुपमेय स्वाभाविक आनन्द मिलता है।

लोक-गीतों पर विचार करते हुए एक बार महात्मा गांधी ने कहा था— "लोक-गीतों में धरती गाती है, पहाड़ गाते हैं, नदियां गाती हैं, फ़सलें गाती हैं, उत्सव और मेले, ऋतुएं और परम्परायें गाती हैं।" सच तो यह है कि लोक-गीतों में असंख्य मूक-हृदय गाते हैं। वहां जड़ प्रकृति भी चेतन रूप धारण करके मानव की चिर-सहचरी बन जाती है। बदली और बिजली विरहिणी की प्यारी सखियां हैं जो उसके बिछुड़े हुए प्रियतम तक उसका सन्देश पहुँचाती हैं। यहां कौआ भी सोने से अपनी चोंच मढ़ी जाने के लोभ में विरह-विधुरा बाला को आकर उसके प्रियतम के आने का सन्देश सुनाता है।

जो बातें हम नित्य-प्रति खेतों-खलिहानों और घरों में देखते हैं उन्हीं का अनूठा चित्रण हमें लोक-गीतों में मिलता है।

कृषक ने अपनी क्षुधा की पीड़ा को बिरहे गा-गा कर, तो कभी होली गाते हुए मस्ती से झूम-झूम कर, भुला दिया है। सन-सन चलती हुई वायु के गर्म झोंकों और कंपकंपाते हुए शीत को उसने इन्हीं गीतों के सहारे सहन किया है। रात्रि-भर खेत में जागकर रखवाली करनी है, तो गीत ने ही उसे कर्तव्य-पालन में संबल दिया है। वह उसकी स्वर-लहरी में खो गया है और शीत की लम्बी-लम्बी रातें भी उसे छोटी-सी ही जान पड़ी हैं।

प्रियतम के वियोग में आकुल वधू ने चरखा कातते हुए, चक्की पीसते हुए इन गीतों के मधुर संगीत में स्वयम् को भुला दिया है। पितृ-गृह से प्रथम बार वियुक्त हुई बाला ने रिमझिम-रिमझिम बरसती बदली को देखकर अपने प्यारे भैया को बुलाने का सन्देश भेजकर शान्ति पायी है।

लोक-गीत किसी एक कवि की रचना न होकर सामूहिक रूप से रचे गये हैं। इन गीतों को कभी किसी ने एक साथ बैठकर नहीं लिखा। इनकी रचना स्वतः होती है। इनका संबंध तो श्रुति से है।

गीतों के रचयिता अथवा रचियित्रियों ने इनमें अपने नाम प्रकट करने की आवश्यकता नहीं समझी।

इन गीतों में हमें समय-समय की नव-परम्परा, नव-संस्कृति और नव-भावों की झांकी मिलती रहती है। ये गीत किसी भी समाज और राष्ट्र का सच्चा और जीता-जागता इतिहास हैं। मुग़लकालीन गीतों में मुग़लों के विषय में लिखा गया है। 'चन्द्रावलि' के गीत में हम उसे मुग़ल-सरदार के घेरे में घिर जाने पर अग्नि लगाकर अपने सतीत्व की रक्षा करते पाते हैं। मुग़ल काल में कितनी ही बहनों ने अपनी धर्म-रक्षा के लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर दिए थे। यह गीत अनेकों बहनों के कण्ठ से निकला हुआ हमारे देश का अमर इतिहास है। यह झूले का गीत हमने करुण-रस के गीतों में दिया है। यह गीत अनेक रूपों में विभिन्न प्रान्तों में गाया जाता है। इसी प्रकार के और गीत भी हैं, जिन्हें पढ़कर हम उनके रचना-काल का पता चला सकते हैं।

सरसता, सरलता, माधुर्य्य, स्वाभाविकता, रस और लय—यही लोक-गीतों के विशिष्ट गुण हैं।

लोक-गीतों की वास्तविक परिभाषा क्या है—यह कह सकना तो बहुत कठिन है।

डा० यदुनाथ सरकार लिखते हैं—

"Rapidity of movement, simplicity of diction, primary emotions of universal appeal, action rather than subtle analysis, broad striking characterisation, thumb-nail sketches of back-ground and the sparest use (or rather complete avoidance) of literary artifices, these are the essential requisites of the true ballad."

लोक-गीत आदि-मानव का उल्लासमय संगीत है। गुफाओं में पनपते हुए मानव में जब थोड़ी-बहुत बुद्धि आई और उसके आधार पर उसमें भावनाओं के अंकुर फूटे तो उन भावनाओं को व्यक्त करने के लिये उसने विकृत अलाप लेना आरम्भ किया। यही आदि-संगीत, पेरी के शब्दों में, लोक-गीत है। समस्त जन-समाज में चेतन-अचेतन रूप में जो भावनाएँ गीत-बद्ध होकर व्यक्त हुईं उन्हीं को लोक-गीत का नाम दिया गया।

ग्रिम के अनुसार लोक-गीत अपने आप बनते हैं।

मि० आर० वी० विलियम्ज़ ने कहा है—

"A Folk song is neither new nor old, it is like a forest tree with its root deeply buried in the past, but which

continually puts forth new branches, new leaves, new fruit."

अर्थात्—"लोक-गीत न पुराना होता है न नया; वह तो जंगल के एक वृक्ष के समान होता है, जिसकी जड़ें तो धरती में दूर तक (भूतकाल में) धँसी हुई होती हैं, किन्तु जिसमें नित्य नई-नई डालियां, पल्लव और फूल लगते रहते हैं।"

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं—

"ग्राम-गीतों का समस्त महत्व उनके काव्य-सौंदर्य तक ही सीमित नहीं है। इनका एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है एक विशाल सभ्यता का उद्घाटन, जो अब तक या तो विस्मृति के गर्भ में डूबी हुई है, या ग़लत समझ ली गई है। आर्य आगमन के पूर्व ही समृद्ध आर्येतर सभ्यता भारतवर्ष में फैली हुई थी, उसके साथ ही और भी छोटी-मोटी सभ्यताएँ इस विशाल भू-भाग में फैली हुई थीं। आर्यों ने राजनीतिक रूप में तो भारतवर्ष को जीत लिया था, पर वे सांस्कृतिक रूप में पूर्ण-रूप से यहां के मूल-निवासियों के द्वारा प्रभावित हो गए थे। यहां की मूल सभ्यता वैदिक सभ्यता से एकदम भिन्न थी, और आज भी लोकाचार, स्त्री-आचार, पौराणिक परम्परा आदि के रूप में वह विद्यमान् है। ग्राम-गीत इस सभ्यता के वेद हैं। वेद भी तो अपने आरम्भिक युग में श्रुति कहलाते थे। वेद भी आर्यों की महान् जाति के गीत ही थे, और ग्राम-गीतों की भांति ही सुन-सुनकर याद किए जाते थे। सौभाग्य-वश वेद ने श्रुति से उतर कर लिपि का रूप धारण कर लिया, पर हमारे ग्राम-गीत अब भी श्रुति ही हैं। जिस प्रकार वेदों द्वारा आर्य्य सभ्यता का ज्ञान होता है, उसी प्रकार लोक-गीतों द्वारा आर्य्य-पूर्व सभ्यता का ज्ञान हो सकता है। ईंट-पत्थर के प्रेमी विद्वान् यदि धृष्टता न समझें, तो ज़ोर देकर कहा जा सकता है कि लोक-गीत का महत्व मोहनजोदड़ो से कहीं अधिक है। मोहनजोदड़ो सरीखे भग्न-स्तूप ग्राम-गीतों के भाष्य का काम दे सकते हैं।"

एक और स्थान पर, 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' में (पृष्ठ १३० पर) वे लिखते हैं—"लोक-गीत की एक-एक बहू के चित्रण पर रीतिकाल की सौ सौ मुग्धाएं, खण्डिताएँ और धीराएँ न्योछावर की जा सकती हैं, क्योंकि ये निर-लंकार होने पर भी प्राणमयी हैं, और वे अलंकारों से लदी होकर भी निष्प्राण हैं। ये अपने जीवन के लिए किसी शास्त्र विशेष की मुखापेक्षी नहीं हैं और अपने आप में परिपूर्ण हैं।"

लाला लाजपतराय ने अपने एक पत्र में लिखा था, जो 'कविता-कौमुदी' भाग ५, पृष्ठ ७७ पर उद्धृत किया गया है :—"देश का सच्चा इतिहास और उसका

जा रहा है। पत्र-पत्रिकाओं में भी लेख प्रकाशित होते रहते हैं। परन्तु सहस्रों गीत अनेकों कण्ठों पर बिखरे हुए हैं जो अभी भी सङ्कलित नहीं हुए हैं। सच तो यह है कि यदि यत्न किया जाये और ग्राम-ग्राम में लोक-साहित्य की समितियां बनाई जाएं तो ग्राम-साहित्य-उदधि-मन्थन के द्वारा हमें अनेकों अमूल्य रत्न प्राप्त होंगे, जिन्हें पाकर हमारा साहित्य बहुत समृद्ध बन सकता है।

लोक-गीत कितने प्रकार के होते हैं यह लिख सकना भी बहुत कठिन है, क्योंकि जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन की प्रत्येक घटना पर, हास्य में, रुदन में, जीवन के प्रत्येक पहलू पर हमें लोक-गीत मिलेंगे।

लोक-गीतों का विभाजन अनेक प्रकार से अनेक लेखकों ने किया है। लम्बी-लम्बी सूचियां भी दी हैं, परन्तु यहां उन्हें देना निरर्थक प्रतीत होता है। यदि मनुष्य के हृदय में उठने वाले भावों की गणना की जा सकती है तो गीतों के प्रकारों की भी गणना हो सकती है।

प्रत्येक देश के लोक-गीतों में भाव-साम्य पाया जाता है, क्योंकि मानव-हृदय में उठने वाली मूल भावनायें प्रायः प्रत्येक प्राणी में समान ही होती हैं, चाहे वह विश्व के किसी भी कोने में क्यों न रहता हो। किसी विशिष्ट स्थान के साहित्य में वहां की विशिष्ट परिस्थितियों के कारण थोड़ा-बहुत अन्तर अवश्य आ जाता है (जिस प्रकार राजस्थान के लोक-साहित्य में वीररस प्रचुर मात्रा में मिलेगा), किन्तु फिर भी सभी देशों के लोक-गीतों में हमें एक समानता मिलती है।

भावों की विशदता—

सुन्दर भाव कविता के प्राण हैं। ग्राम रमणियों की कविता में भावों की सुन्दरता दर्शनीय है। उन्होंने गीत रचने की इच्छा से गीत नहीं रचे हैं। किसी घटना की उंगली से यदि सहसा उनकी हृत्तन्त्री बज उठी तो उसी समय एक सुन्दर गीत स्वतः उनके कण्ठ से निकल पड़ा। ऐसे सभी गीत भाव-प्रधान हैं। स्वानुभूति के फल-स्वरूप लोक-गीतों की सृष्टि हुई है। इसी से वे हृदय पर गहरा प्रभाव डालते हैं।

अंग्रेजी भाषा के महाकवि वर्ड्ज़वर्थ ने काव्य का प्राण भाव को ही बतलाया है। वे लिखते हैं—

"Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings."

अर्थात—"कविता आप से आप उमड़ने वाले भावों की तीव्र उमंग है।"

कविता वही है, जो हृदय में तीर-सी जाकर लगे।
है सुन्दरी वह श्वेत वस्त्रा हो तदपि सुन्दर लगे।।

रस—

वास्तव में लोक-गीतों का जीवन-प्राण रस ही है। उनको सुनते-सुनते तथा पढ़ते-पढ़ते हृदय एक नवीन-रस की मन्दाकिनी में अवगाहन करने लगता है और थोड़ी देर के लिए हम स्वयम् को भूल-से जाते हैं।

काव्य में नौ रस माने गए हैं—शृङ्गार, वीर, करुण, अद्भुत, रौद्र, भयानक, शान्त, हास्य, वीभत्स।

लोक-गीतों में अधिकतर तीन रसों का वर्णन है—शृङ्गार, करुण तथा शान्त। हास्य-रस की पुट भी कहीं-कहीं मिलती है।

शृङ्गार-रस की कविता में कटि-कुच-वर्णन में समय नष्ट नहीं किया गया है। इनका शृङ्गार भी पावन है, महान है। इनमें प्रणय की उज्ज्वल आभा है, प्रेम का स्वर्गीय रूप अंकित है।

मुग़लकालीन गीतों में वीर-रस भी है। निहालदे, चन्द्रावली तथा 'गहरा-सा झंझर खुदा मोरे बाबा' में करुण-रस और वीर-रस दोनों का सम्मिश्रण है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन तीनों गीतों में सूर्य और चन्द्रमा एक साथ ही उदित हुए हों। चन्द्रावली, निहालदे, 'मेरी लाश पै उनको बुला लेना,' तथा 'गहरा-सा झंझर खुदा मोरे बाबा' के गीत की नायिकाओं के बलिदान की वीरता-पूर्ण कहानी सुनकर नेत्रों में अश्रु उमड़ आते हैं।

मृत्यु के गीत, कन्या की विदा के गीत, तथा विरहिणियों के विरह वर्णन के गीत करुण-रस से सराबोर हैं।

भक्ति के बहुत से गीतों में तथा अन्य कुछ गीतों में भी शान्त-रस का सुन्दर चित्रण है।

नृत्य के कुछ गीतों में हास्य-रस की सुन्दर झलक मिलती है।

उदाहरण स्वरूप विभिन्न रसों के कुछ गीत नीचे दिए जाते हैं:—

शान्त रस का गीत

कुन्दन बन क्यूं छोड़ा रे माधो,
कुन्दन बन क्यूं छोड़ा।
जो मैं होती मोर का पंजा,
कृष्ण लेते मोल, मुकट लग रहती, रे माधो।

जो मैं होती सीप का मोती,
कृष्ण लेते मोल, कान लग रहती, रे माधो। कुन्दन० ॥
जो मैं होती तुलसी की माला,
कृष्ण लेते मोल, गले लग रहती, रे माधो। कुन्दन० ॥
जो मैं होती जल की मछुलिया,
कृष्ण करते स्नान, चरण लग रहती, रे माधो। कुन्दन० ॥
जो मैं होती फूलों की छड़ियां,
कृष्ण लेते मोल, हाथ लग रहती, रे माधो। कुन्दन० ॥
जो मैं होती चन्दन का बिरवा,
तिलक लग रहती, रे माधो। कुन्दन० ॥

शृङ्गार रस

(विरह वर्णन)

बड़े घरों की धीय, बाज़ारों बिच क्यों खड़ी, हाय राम।
चल चल असल गंवार, तुझे मेरी क्या पड़ी, हाय राम।
दे गया खोटा पैसा हाथ, बंजारन करके छोड़ गया, हाय राम।
दे गया हल्दी की गांठ, पंसारन करके छोड़ गया, हाय राम।
जनु ए कुएँ बिच लाव लटकती को छोड़ गया, हाय राम।
जनु ए बंजारे की आग, धधकती को छोड़ गया, हाय राम।
जनु ए कड़ाही बिच तेल, उबलती को छोड़ गया, हाय राम।

(पिया मिलन की आतुरता)

मेरे राजा की अलग अटरिया, मिलन जनै कब होगा ?
आधी सी रात, पहर का तड़का, मिलने चढ़ी अटरिया।
मिलन जनै कब होगा ?
जैसे ही मैंने पैर बढ़ाया,
तो आ गई सास बुढ़रिया।
ललना दे मैंने सासू जी भेजीं,
तो आगई जुलम जिठनिया।
मिलन जनै कब होगा ?
आधा बांट जिठानी जी भेजीं,
तो आ गई ननद बिजलिया।

गुड़िया दे मैंने बीबी जी भेजीं,
तो आ गया पीहर का नउआ।
मिलन जनै कब होगा?
मूढ़ा दे मैंने भय्या बिठाया,
मिलने चढ़ी अटरिया।
मूढ़े से उठ भय्या बोला,
जल्दी चलो जीजी भय्या!
मिलन जनै कब होगा?

करुणा-रस

(कन्या की विदा का गीत)

काहे को ब्याही विदेश रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
हम तो बाबुल तोरे बागों की कोयल,
कूकत पर घर जाएं, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
हम तो बाबुल तोरे खेतों की चिड़ियां,
चुग्गा चुगत उड़ जाएं, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
हम तो बाबुल तेरे बेले की कलियां,
जिधर मांगें चली जाएं, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
हम तो बाबुल तेरे खूंटे की गैयाँ,
जिधर हाँको हँक जाएँ, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
भैया को दीने बाबुल शाल-दुशाले,
तो हमको दिया है दहेज, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
भैया को दीने बाबुल महल-दुमहले,
तो हमको दिया परदेश, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
छज्जे खड़ी ताई चाची जो छोड़ी बुआ जीजी जो छोड़ी,
तो छोड़ा बाबुल तोरा देश, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे॰ .
औले तो कौले बाबुल गुड़िया जो छोड़ी,
तो छोड़ा सहेलियों का साथ, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
महल तले से डोला जो निकला,
तो भैया ने खाई पछाड़, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
आम तले से डोला जो निकला,
तो कोयल करै पुकार, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥

तू क्यों रोवै मेरी काली कोयलिया,
हम तो चले परदेश, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
नँगे से पैरों बाबुल बीरा जो भागे, ताऊ चाचा जो भागे,
साजन डोला थाम, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
मेरी बेटी थारे महलों की बाँदी,
तो हम थारे बन्द गुलाम, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
थारी बेटी म्हारे महलों की रानी,
तो तुम समधी सरदार, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
परदा उठाकर जो देखन लागी,
तो आया साजन का देश, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
सोना भी दीना बाबुल रूपा भी दीना,
दीना है जड़त जड़ाव, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
एक न दीनी बाबुल सिर की जो कंघी,
तो सास ननद ताना देंय, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥

वीर-रस का गीत

ननद-भावज पानी चली रे, मल-मल धोवैं री पांय।
रगड़-रगड़ दातुन करैं री, मुगला री बुरी बलाय।
अब रुत आई बाली बीजना[1] रे, बीजने की बहार।
लाल-लाल तंबुआ तन रहे री, रेशम खिंच रही डोर।
आवै तो फ़ौज पठान की रे, दे लयी तंबुओं के बीच। अब०
जांदे रे जांदे बटेवड़ा[2] रे, एक संदेशा ले जाय।
बाप म्हारे से यूँ कहो जी, थारी बेटी तंबुओं के बीच। अब०
जांदे रे जांदे बटेवड़ा रे, एक संदेशा ले जाय।
म्हारे भैया से यूँ कहो जी, थारी बहना रे तंबुओं के बीच। अब०
जांदे रे जांदे बटेवड़ा रे, एक संदेशा ले जाय।
म्हारे राजा से यूँ कहो जी, थारी धन[3] तंबुओं के बीच। अब०
बाप हमारे हस्ती पर रे बीरा घोड़े असवार।
राजा हमारे पालकी रे, चाबें नागर पान। अब०

---

१. पंखा, २. यात्री, ३. पत्नी।

ओ रे मुग़ल के छोकरे रे, कर मेरे हस्ती का मोल ।
मेरी सांवल बेटी छोड़ दे रे, करले अपना ब्याह । अब०
ओ रे मुग़ल के छोकरे रे, कर मेरे घुड़ले का मोल ।
मेरी चन्द्रावल बहना छोड़ दे रे, करले अपना ब्याह । अब०
ओ रे मुग़ल के छोकरे रे, कर मेरी पालकी का मोल ।
मेरी सांवल गोरी छोड़ दे रे, करले अपना ब्याह । अब०
ना चहिए तेरा हस्ती रे, ना चहिए लख चार ।
तेरी सांवल बेटी ना छूटै रे, ना करूँ अपना ब्याह । अब०
ना चहिए तेरी घोड़ली रे, ना चहिए लख चार ।
तेरी चन्द्रावल बहना ना छूटै रे, ना करूँ अपना ब्याह । अब०
ना चहिए तेरी पालकी रे, ना चहिए लख चार ।
तेरी सांवल गोरी ना छूटै रे, ना करूँ अपना ब्याह । अब०
बाप हमारे रो दिये रे, भैया खाई है पछाड़ ।
सैयां हमारे हँस दिये रे, ऐसी लाऊँ दोए चार । अब०
जाओ बाबल घर आपने रे, राखूँगी पगिया[1] की लाज ।
रोटी ना खाऊँ तुरक की रे, बैठूँगी आसन मार । अब०
जाओ भैया घर आपने रे, राखूँगी कुल की लाज ।
पानी ना पीऊँ मैं तुरक का रे, बैठूँगी आसन मार । अब०
जाओ सैयां घर आपने जी, राखूँगी फेरों की लाज ।
सेज न सोऊँ तुरक की रे, बैठूँगी आसन मार । अब०
जाओ मुग़ल के छोकरे रे, जल भर गडुआ[2] तो लाय ।
प्यासी मरे चन्द्रावली रे, जाके भाई है न बाप । अब०
मुग़ल के ने पीछा फेरिया रे, दे लयी तंबुओं में आग ।
ठाड़ी जलै चन्द्रावली रे, जाके भाई है न बाप । अब०
तोबा-तोबा मुग़ल करै रे, मुल्ला पढ़ें रे कुरान ।
देखी ही पर चाखी नहीं रे, कैसी हुई करतार । अब०
दाँत जलें जैसे कौड़ियाँ रे, जीभ कमल का सा पात ।
हाड़ जलें जैसे लाकड़ी रे, केश जलें जैसे दाभ । अब०
ठाड़ी जलै चन्द्रावली रे, जैसे पूनों का चाँद । अब०

---

१. पगड़ी, २. लोटा ।

हास्य-रस का गीत

आज मोरा राजा बिकै है कोई ले लो।
दो सौ में ले लो, सौ में ले लो,
जिया मोरा जर जाय, पचासई में ले लो।
पचासई में ले लो, पचीसई में ले लो,
जिया मोरा जर जाय, पन्द्रह में ले लो।
पन्द्रह में ले लो, पांच में ले लो,
जिया मोरा जर जाय, ढाई में ले लो।
अठन्नी में ले लो, चवन्नी में ले लो,
जिया मोरा जर जाय, दुवन्नी में ले लो।
दुवन्नी में ले लो, इकन्नी में ले लो।
जिया मोरा जर जाय, मुफत में ले लो।
आज मोरा राजा बिकै री कोई ले लो।

गीतों में अलंकार—

काव्य में अलंकारों की आवश्यकता प्रायः सभी ने अनुभव की है। एक कवि ने कहा है—

जदपि सुजाति, सुलच्छनी, सुबरन, सरस सुवृत्त।
भूषन बिना न सोहई कविता, बनिता, मित्त ॥

लोक-गीतों को अलंकार-शून्य नहीं कहा जा सकता। उनमें रूपक, उपमा आदि की निराली ही छटा है। स्वभावोक्ति का जो सुन्दर रूप उनमें है, वह कुछ महाकवियों की रचनाओं को छोड़ कर अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। लोक-गीतों में कहीं-कहीं अर्थालंकारों के अतिरिक्त बहुत सुन्दर शब्दालंकार भी मिलते हैं।

लोक-गीतों में कहीं भी अलंकार का भार असह्य नहीं होता है। वे काव्य के सौन्दर्य में कहीं भी कृत्रिमता नहीं लाते।

उपमा आदि अलंकारों के कुछ उदाहरण देखिए—

"मान बिहूनी कर गया
जनु बेल बिहूना फूल।"

◇ ◇ ◇

"दांत जलैं ज्यौं कौड़ियां,
जीभ कमल का सा पात।

हाड़ जलें ज्यौं लाकड़ी,
केस जलें ज्यौं दाभ।"

◇ ◇ ◇

"हम तो बाबुल तोरे बागों की कोयल,
कूकत पर घर जाएं, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥
हम तो बाबुल तोरे खेतों की चिड़ियां,
चुग्गा चुगत उड़ जाएं, रे लक्खी बाबुल मोरे। काहे० ॥"

◇ ◇ ◇

"हा हा बच्ची मोरनी ए,
आंख नींबू की फांक,
नाक सुए की चौंच,
मूंगफली सी आंगली,
जीभ पीपल का पात।"

◇ ◇ ◇

"प्रियतम हमारे फूल गुलाबी,
हम कलियां सुखदर्शन की।"

◇ ◇ ◇

"बनजारे की आग ज्यौं,
गया सुलगती छोड़।"

◇ ◇ ◇

अतिशयोक्ति अलंकार का उदाहरण :—

"इतना आटा मैं पीसा री,
जितना नदियों रेत।
इतने चावल मैं कुट्टे री,
जितने समुन्दर मोतियां।"

◇ ◇ ◇

अनुप्रास का उदाहरण :—

"झट देसी तोड़ा नातना, पट देसी तोड़ी रई।
मट देसी फोड़ी बिलोवनी, दूधों की नदी बही॥

एकावली अलंकार का उदाहरण:—

हमारे कंकरिया किसने मारी ?
कंकरिया के मारे, कंकरिया के मारे
हमारी गगरी फूट जायेगी ।
गगरिया के फूटे, गगरिया के फूटे,
हमारी चुनड़ी भीग जायेगी ।
चुनरिया के भीगे, चुनरिया के भीगे,
हमारी सासरिया गाली देगी ।
सासरिया की गाली से, सासरिया की गाली से,
हमारे नैनों से नीर जारी ।
नीर जारी होने से, नीर जारी होने से,
हमारा सिंगार, सुरमा बिगड़ जायेंगे ।
सिंगार सुरमे के बिगड़े, सिंगार सुरमे के बिगड़े,
हमारे राजा जी रूठ जायेंगे ।
राजा जी के रूठे, राजा जी के रूठे,
हमारी सेजरिया सूनी हो जायेगी ।

◇ ◇ ◇

पुनरुक्ति-प्रकाश का उदाहरण:—

उधो पाती कैसे लिखूं, लिखी ना जाए ।
पाती लिखत मोरा कर काँपत है, डोबा[1] बहि बहि जाय ।
पाती लिखत दोऊ नैन बहत हैं, नदियाँ बहि बहि जायं ।।
एक एक बात मेरी ऐसी मरम की, छतिया फटि फटि जाय ।
हाड़ मांस सब खून सूखिगो, भस्म टटोलेंगे आय ।।

'बहि-बहि' और 'फटि-फटि' में सुन्दर पुनरुक्ति-प्रकाश है ।

छन्द—

छन्द-शास्त्र की दृष्टि से लोक-गीत सदोष कहे जा सकते हैं । इनमें मात्राओं, वर्णों और गणों की गणना का कोई ध्यान नहीं रक्खा गया है, क्योंकि ग्रामीण

---

१. स्याही ।

पिंगल के ज्ञान से रहित होते हैं। उनके गीत लय-बद्ध होते हैं, छन्दोबद्ध नहीं। इन गीतों की गणना हम संगीतात्मक छंदों में कर सकते हैं।

ग्राम-बालाएँ कुछ स्वरों को खींचकर लय ठीक कर लेती हैं। वे इस ढंग से गाती हैं कि गीत में कहीं भी गति-भङ्ग या यति-भङ्ग दोष मालूम नहीं होता।

बहुत से लोक-गीत तुकान्त होते हैं, किन्तु अधिकांश गीत अतुकान्त ही होते हैं। किन्तु अतुकान्त होने से कोई दोष नहीं आता। अतुकान्त लोक-गीत भी बड़े श्रुतिमधुर होते हैं। आजकल के बहुत से कवि अतुकान्त कविता की रचना के प्रेमी होते जा रहे हैं।

गीतों में संगीत—

लोक-गीतों का वास्तविक रसास्वादन करना हो तो इन्हें गाते हुए सुनिये। लोक-गीत तो हैं ही संगीतात्मक छन्द। गायन के बिना इनकी सरसता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। विभिन्न गीतों की विभिन्न लय होती हैं।

करुण रस के गीतों की टोन बड़ी करुण होती है। इसी प्रकार सुहाग, बन्ने, हास्यरस और नृत्य के गीतों आदि को गाते हुए सुनिये तो उल्लास बरसता सा प्रतीत होता है।

झूले के गीत तथा बारहमासे मिश्रित मल्हार-रागिनी में गाये जाते हैं।

बारहमासों को सुनकर ऐसा प्रतीत होता है मानो मूसलाधार वर्षा हो रही हो। किन्तु झूले के अन्य गीतों का गायन सुनिये तो ऐसा प्रतीत होगा मानो रिमझिम-रिमझिम नन्ही-नन्ही बूंदें पड़ रही हैं। झूले के गीतों के गायन में यह विशेषता है कि इन गीतों की एक पंक्ति प्रायः उतने ही समय में गाई जाती है जितने में एक पेंग पूरी होती है।

घर-घर में ये लोक-गीत साधारणतया ढोलकी तथा मंजीरे के साथ गाए जाते हैं। किन्तु अनेक बार बिना किसी वाद्य-यंत्र के भी इन गीतों को गाया जाता है। तब भी इनकी श्रुतिप्रियता में कोई अन्तर नहीं पड़ता। कुछ गीत—जैसे झूले के गीत तथा कन्या की विदा के गीत—तो बिना किसी वाद्य-यंत्र के ही गाए जाते हैं।

हम काँटों पर चलने वाले हैं,
हम साथी वीर जवाहर के ॥

◇ ◇ ◇

ज़िन्दगी है किरान्ती से,
किरान्ती में बिताये जा ।
दुनिया के पूंजीवाद को,
दुनिया से मिटाये जा ॥ जिन्दगी०॥
दुनिया में ग़रीबों का पैसा,
जिसने चूस लिया ।
हां जी पैसा जिसने चूस लिया ।
उसकी हड्डी हड्डी से पैसा फिर चुकाये जा ।
हँस के गोली दागे जा, हँस के गोली खाये जा ।
जिन्दगी०॥

◇ ◇ ◇

स्वदेशी के आन्दोलन को जन साधारण ने कितना अपना लिया था, निम्नलिखित पंक्तियों में देखिये :—

खादी की चुनरिया रंग दे छापेदार रे रंगरेजवा ।
बहुत दिनन से लागल वा मन हमार रे रंगरेजवा ॥
कहीं पै छापो गांधी महातमा, चरखा मस्त चलाते हों ।
कहीं पै छापो वीर जवाहर, जेल के भीतर जाते हों ।
अंचरा पै झंडा तिरंगा बांका लहरदार रे रंगरेजवा । खादी०॥

◇ ◇ ◇

हिन्दू मुस्लिम झगड़ों का साधारण जनता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा । उन्हें मिटाने के लिये जनता अकुला उठी । निम्नलिखित पंक्तियों में दुखी जनसाधारण की पुकार सुनिये :—

अरे चमकै मन्दिरवा में चाँद,
मसजिदवा में बंसी बाजै ।
मिलि रहू हिन्दू मुसलमान,
छाँड़ि देहु सगले[1] झगड़े ।

---

१. सब ।

अरे मिलि रहू दोहुन भय्या,
लड़ाई झगड़ा ना साजै ।
मानि जाव गांधी कर सीख,
इन झगड़न में काह धरौ ।

◇ ◇ ◇

स्वराज्य को भारत मां का अभिषेक करते हुए देखकर हमारी बहनें हर्ष-विह्वल होकर गा रही हैं :—

कथि जे चढ़िये आयेल,
भारत माता ।
कथि जे चढल सुराज,
चलु सखी देखन को ।
कथि जे चढ़ि आयेल,
वीर जवाहिर ।
कथि पर गांधी महाराज,
चलु सखी०॥
हाथी चढ़ल आवै भारत माता,
डोली में बैठल सुराज ।
चलु सखी०॥
घोड़ा चढ़ि आये वीर जवाहिर,
पैदल गांधी महाराज ।
चलु सखी०॥

◇ ◇ ◇

महीना कातिक का आया,
जवाहर जेलों में छाया ।
सब सब सखियाँ दिवाली मनावें,
हम तो दिवाली जभी मनाबें,
जो मिल जाये स्वराज ।

◇ ◇ ◇

जिस जेल में बीबी सत्यवती,
उस जेल में हम भी जायेंगे ॥

जे चार दिनों से मलमल चल गई,
तो कूँ और बिसायेंगे।
गाँधी की तो आँधी आ गई,
शोर मचायेंगे ॥
गाँधी पहुँचा जेल में,
हम जेल में जायेंगे ॥

◇ ◇ ◇

महंगाई ने जन-जीवन को किस प्रकार उद्वेलित कर दिया है—इसके उदाहरण-स्वरूप कुछ गीतों की पंक्तियां देखिए—

पड़ रहा छप्पनिया का काल
पड़ रहा कैसा री दुकाल।
दिया री महंगाई नै मार।
दमड़ी के हो गये चार ॥
अन्न दाल का टोटा पड़ गया,
कपड़ा मिलै न हाट
बालक सारे रोते डोलैं,
जीना जी का जंजाल। पड़० ॥
आया जंवाई धड़का जी,
कहां से लाऊं शक्कर घी।
मान महत मेरा सारा मर गया,
कौन ओड़ निभावै करतार। पड़० ॥

(बंगाल के दुर्भिक्ष पर)

बड़ा जुलुम कीन्हा अकलवा रे,
बंगाल मुलकवा में,
चार करोड़ आदमी मर गइल रे ॥

◇ ◇ ◇

देसवा के सब धन-धान,
बिदेसवा में जाय रहे।
महंगी पड़त हर साल,
कृसक अकुलाय रहे ॥

◇ ◇ ◇

महंगी के मारे बिरहा बिसरिगो,
भूलि गई कजरी कबीर ।
देखि के गोरी के उभरा जोबनवा,
अब उठै न करेजवा में पीर ॥

◇ ◇ ◇

ना बिरहन की खेती पाती,
ना बिरहन को बंज ।
जाही पेट से बिरहा उपजें,
गाऊं दिन औ रात ॥

इससे अधिक महंगाई का सजीव चित्रण कदाचित् हम कवियों की रचना में भी न पा सकेंगे ।

◇ ◇ ◇

(भर्ती के गीत)

भरती हो ले रे तेरे बार खड़े रंगरूट ।
अरे यहाँ मिलें हैं टूटे लित्तर[1],
वहाँ मिलें फुल बूट ॥

गीतों में साइन्स—

देखो रे लोगो अंग्रेजों की हिम्मत,
अम्बर में चीलगाड़ी[2] उड़ा रहे हैं।
वहीं पै साबुन वहीं पै कंघा,
वहीं पै पाउडर मंगा रहे हैं ॥

सामाजिक गीत—

देखो लोगो कलियुग आया,
कैसा गजब कराया है ।
जनवासे में लड़का जाया,
गोद खिलाता आया है ।

◇ ◇ ◇

१. टूटे जूते, २. चीलगाड़ी—हवाई जहाज । टर्की में हवाई जहाज को तैयारा कहते हैं। तायर का अर्थ पक्षी होता है, उसी से तैयारा बना है ।

डीयर थोड़ी सी इंगलिश पढ़ा दो मुझे।
एक साड़ी वह मंगाओ जो हो धानी रंग की,
यह झूल सा लहंगा हमें भाता नहीं।

◇ ◇ ◇

सवा लाख तो रुपया चाहिये घर में लेडी रखने को।
डेढ़ लाख की साड़ी चाहिये, राबा लाख का जम्पर भी।
दोय लाख की तगड़ी चाहिये, कमर लपेटा खाने को।
अच्छा सा इक साबुन चाहिये, अच्छा तेल इतर भी॥
में तो क नल भी चाहिये, मजदुन्नी तेल लगाने को।
जब मेम साहब नहाकर उट्ठें, नौकर धोती धोने को॥
बड़े तो बंगले चाहियें, मेज़ कुरसी सजाने को।
दो चार तो नौकर चाहियें, खाना उन्हें पहुंचाने को॥
चांदी की एक रकेबी चाहिये, नमकीन मिठाई खाने को।
कंच का एक गिलास चाहिये, सोडावाटर पीने को॥
बढ़िया सी एक मोटर चाहिए, हवाखोरी को जाने को।
छोटा सा एक साहब चाहिये, हाथ में हाथ मिलाने को।
एक तो हारमोनियम चाहिये, वह भी रोज बजाने को।
एक तो मशीन चाहिये, तवा चढ़ाके गाने को॥

◇ ◇ ◇

आधुनिक लोक-गीतों की भाषा—

आजकल के अधिकांश गीतों की भाषा खड़ी बोली है। कुछ गीतों में भाषा उर्दू-मिश्रित हो गई है। उर्दू गज़लों के छन्दों और शैली की भी छाप लोक-गीतों पर पड़ी है। उदाहरण देखिये :—

बने को शौक शादी का,
मुबारिक हो, मुबारिक हो।
बने के संग में बन्नो,
तेरी जोड़ी मुबारिक हो॥
बने तुम फूलना फलना,
तुम्हें जीवन मुबारिक हो।
सुखों की वर्षा हो तुम पर,
तुम्हें शादी मुबारिक हो॥

चित्र-पट के संगीत का भी लोक-गीतों पर बहुत प्रभाव पड़ रहा है। चित्रपट संगीत पर बहुत से लोक-गीतों की रचना नित्यप्रति की जा रही है, जैसे—

मन डोलै मेरा तन डोलै
मेरा बन्ना गया बजार रे
अब कौन बजावै बांसुरिया।
शीस बने के चीरा सोहै,
पेची अजब बहार रे
अब कौन बजावै बांसुरिया।
कान बने के मोती सोहैं
चुन्नी अजब बहार रे
अब कौन······
गले बने के तोड़ा सोहै
लड़ियां अजब बहार रे
अब कौन······
हाथ बने के घड़ियां सोहैं,
अंगूठी अजब बहार रे
अब कौन······
पैर बने के जूता सोहै,
चलगत अजब बहार रे
अब कौन······
संग बने के घोड़ी सोहै,
बन्नी अजब बहार रे।
अब कौन······

◇ ◇ ◇

कुछ गीत तो केवल तुकबन्दी-से ही प्रतीत होते हैं। परन्तु जन-पद में वे आजकल बहुत प्रिय हैं। निम्नलिखित बारहमासा देखिए। तीस वर्ष से पहले से भी यह बारहमासा बराबर मेरठ ज़िले में तथा उसके आस-पास के प्रदेशों में गाया जाता है :—

चैत पिछले पाख, राम नवमी को जन्म लिया।
अवधपुरी सुख धाम, सखिन मिल मंगलचार किया।

खबर जब दशरथ ने पाई, दिये दान गजराज,
गऊ दिन थोड़े की ब्यायी ।
सभा प्रफुल्लित हो आई ।
करम लेख ना मिटै, करो कोई लाखों चतुराई ।
हरीहर बोलो रे भाई, राम को सुमरो रे भाई ।
लागत ही बैसाख बावरी कैकेयी कर डारी ।
भरत कहें धिक् जीवन हमरा, तुमसी महतारी ।
दुःख सब नगरी को दीन्हा, तीन लोक के नाथ,
जिन्हें तुम बनबासी कीन्हा ।
मती कछु ऐसी बन आई । कर्म लेख ना टरै···
जेठ जुड़े सब पंच, भरत को गद्दी बैठारो ।
भरत धरत कानन पर हाथ नाथ मोहि गरदन मत मारो ।
सरै ना इन बातन काजा, मैं तो उनको दास, राम अजुध्या
को राजा ।
ढ़ड़ाई कौशलपुर छाई । करम लेख···
···　　···　　···
···　　···　　···
फागुन के फेरि हरि सिय रावण उनको वश कीन्हा ।
रावण मार भक्त मन भावन राज्य विभीषण को दीन्हा ।
विभीषण गद्दी बैठाए, शुक सनकादि मुनि नारद दरशन को धाये ।
देवगण फूलन झड़ि लाई । करम लेख ना···।

यहां केवल इस बारहमासे का कुछ अंश ही दिया गया है ।

◇　　◇　　◇

गीतों की महान कवियों की रचनाओं से तुलना क्यों ?

प्रत्येक वस्तु का अपना निजी सौंदर्य होता है । गीतों में भी अपना स्वाभाविक सौंदर्य है, अतः महान् कवियों की रचनाओं से लोक-गीतों की तुलना की कोई आवश्यकता नहीं है । परन्तु कुछ समय से लोक-गीतों की बहुत ही अवहेलना की जाने लगी थी, अतः उनके पुनरुत्थान के लिए यह आवश्यकता हुई कि गीतों के वास्तविक महत्त्व को अपने नागरिक भाई-बहनों के सम्मुख इस रूप में रखा जाए, जिससे वे यह समझना छोड़ दें कि लोक-गीतों का साहित्यिक महत्व कुछ भी नहीं है । इसके लिए यह आवश्यक समझा गया कि हम इनसे

मिलती-जुलती महाकवियों की कुछ रचनायें भी अपने संग्रह में दें।

आधुनिक सभ्यता और लोक-गीत—

आधुनिक शिक्षित वर्ग की महिलायें इन गीतों को प्रायः भुला ही बैठी हैं। परन्तु वृद्धाओं के पास इनका अमूल्य भण्डार सुरक्षित है। यदि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया तो उनके साथ ही साथ बहुत से प्राचीन गीत सदा के लिये अनन्त में विलीन हो जायेंगे।

पुस्तकों में गीत किन प्रान्तों के हैं ?

इस पुस्तक में कुछ गीत पूर्वी उत्तर-प्रदेश के और अधिकांश गीत पश्चिमी उत्तर प्रदेश, देहली, तथा पूर्वी पंजाब के और कुछ गीत राजस्थान के भी दिये गये हैं।

लोक-भाषा के विशिष्ट शब्द—

पुस्तक के अन्त में लोक-भाषा के कुछ विशिष्ट शब्द अर्थ-सहित दिये गये हैं जिनको अपनाकर हिन्दी-भाषा अपना कोष समृद्ध बना सकती है।

सीता
दमयन्ती

खण्ड 1

लोक-गीतों में भक्ति-रस

: १ :

लोक-गीत और कृष्ण

भारत ने जो भी चाहा है, वह कृष्ण के रूप में पाया है। कृष्ण केवल उन्हीं का नहीं है जो अत्यन्त वैभवशाली हैं तथा सभ्य और सुशिक्षित हैं। कृष्ण को नागरिकों से भी कहीं अधिक ग्रामीणों ने अपनाया है। वे छोटी-सी कुटिया में रहते हैं, न उनके पास खाने के लिये फल, मेवा और स्वादिष्ट पकवान हैं, न पहिनने को वस्त्राभूषण; जिनका भोजन है दो सूखी रोटी और छाछ तथा वेश-भूषा है एक लंगोटी और फटी-सी कुर्ती। उनके समान ही कृष्ण ने बाल्य-काल में गउएँ चरायी हैं, वह भी ग्वाल-बालों में खेला, वृक्ष की टहनियों पर झूला, प्रकृति की गोद में पला तथा उन्हीं के समान वृक्ष की छाया में बैठकर उसने भी हाथ में लेकर छाछ के साथ रोटी खायी है। उसने भी श्रावण में मलार गाया है, वसन्त में वसन्तोत्सव मनाते हुए होली खेली है। कदम्ब के नीचे ज्योत्स्नामयी रजनी में उसने बंशी बजायी है। रात्रि में उसने भी कहानियाँ कही और सुनी हैं। उनके कृष्ण ने उन्हीं के सदृश गोप-बालों के साथ वन-वन स्वच्छन्द पक्षी की नाईं विचरण किया है। इसीलिये उनका कृष्ण उन्हें बहुत प्रिय है।

उनके लिये कृष्ण उनका भगवान्, इष्टदेव, रक्षक है तो एक सरल अबोध-शिशु भी, जिसकी तुतली बोली, घुटनू चलना, बा-बा करना, "मैया मैं तो चन्द खिलौना लेइहौं" कहकर मचलना उन्हें अभी भी नहीं भूला है। उसका माखन चुराना, मिट्टी खाना, मटकी तोड़ना, बंशी बजाना उन्हें अब भी ज्यों का त्यों याद है। उनका मोहन प्रति-वर्ष जन्माष्टमी को एक बार अपने उसी वेश में, कभी शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण करके, कभी गीता का कर्म्मयोगी कृष्ण बनकर, कभी कंसारि तो कभी नन्द और यशोदा का दुलारा, हृदयसितारा बनकर, कभी बंशी से मन्त्र फूंकता हुआ, गोपियों से झगड़ता हुआ, तो कभी गउएँ चराता हुआ आता है।

अपने किसी भी कष्ट में वे कभी अपने यदुनन्दन को नहीं भुला पाते। वे "यदा यदाहि धर्मस्य......" वाली प्रतिज्ञा का स्मरण करा उसकी तीव्र भर्त्सना

करते हैं। वे अपने श्याम को झुलाते, उसकी बाल-क्रीड़ा पर रीझते, उसके वियोग में आकुल होते और ऊधो के द्वारा उसके पास सन्देश भेजते हैं। उनका निर्मम माधव १६०८ विवाह कराके सुख सौभाग्य का अधिकारी बनकर उन्हें भूल बैठा, परन्तु बुरा है तो, भला है तो, है उनका ही; वह उसे कैसे विस्मृत करें। क्या गूजरी अब भी उसके भय से मार्ग में नहीं ठिठक जातीं कि कहीं नटखट माखनचोर आकर उनकी गगरी न गिरा दे? क्या पनघट पर जाती हुई ब्रज-बालाएँ अब भी उस पीताम्बरधारी की बाट नहीं हेरा करतीं? क्या सजल दृष्टि से अब भी गउएँ उसकी मुरली की विह्वलतापूर्वक प्रतीक्षा नहीं किया करतीं? सच तो यह है कि चाहे युग पर युग क्यों न बीत जायें, भारतीय जीवन के साथ कृष्ण सदा एकाकार रहेंगे।

ग्रामीणों ने अपनी सरल प्रकृति के अनुरूप ही उसकी पूजा भी की है। उसके बाल-स्वरूप ने ही उन्हें अधिक मुग्ध किया है। वह उनके लिये शिशु-प्रेम की तृषा को शान्त कर उनके हृदय में वात्सल्य की धारा बहाने वाला और उन्हें प्रेम का अमृत पिलाने वाला है। इन गीतों में मातृ-हृदय और प्रेमिकाओं के छलकते हुए आँसू निहित हैं। अधिकाँश ग्राम-गीतों का नायक कृष्ण और नायिका राधा है। विरह-विधुरा रमणी ने अपने प्यारे को स्मरण किया तो कृष्ण कहकर। माता ने अपने लाल को याद किया तो 'कुँवर कन्हाई' 'लाल' 'गोविन्द' 'मुरारी' कहकर।

माँ अपने लाल को झुला रही है, वह गाती है :—

(१)

झुलाओ सजनी पालना।
काहे का तेरा पालना रे सजनी, काहे की लग रही डोर।
झुलाओ मेरे श्याम को, झुलाओ मेरे लाल को।
अरुन चंदन का पालना, रेशम की लग रही डोर।
नारी गाएँ, पुत्र खिलायें, झुलाओ मेरे० ॥
कन्या गायें, घर वर पायें, झुलाओ मेरे० ॥
बुढ़िया गावें, बैकुण्ठ जावें,
झुलाओ मेरे श्याम को, झुलाओ मेरे लाल को।

वर्णन सरस और स्वाभाविक है। जन्माष्टमी को कृष्ण-मूर्ति को झुलाते हुए भी यह गीत गाया जाता है।

माता गाते-गाते अपने पुत्र को ही श्याम का रूप समझ बैठती है और कहती है—"अरुण चन्दन के पालने में रेशम की डोर लगी है। मेरे लाल को झुलाओ, मेरे कृष्ण को झुलाओ। मेरे कुँवर कन्हैया को झुलाने से लड़कियों को अच्छा घर-वर, स्त्रियों को पुत्र और वृद्धाओं को बैकुण्ठ की प्राप्ति होगी।" प्रेम और भक्ति का अपूर्व मिश्रण है।

एक कवि ने राम के झूले का वर्णन इस प्रकार किया है :—

झूलत रघुकुल राज दुलारे।
कंचन जटित अनेकन विद्रुम, भूषन बसन हिंडोल सँवारे।
मन्दिर महल विपुल शोभा छवि, दिनकर तुल्य दीप उजियारे।

सूरदास जी का कृष्ण का झूला-वर्णन देखिये :—

जसोदा हरि पालने झुलावै।
हलरावै, दुलराइ, मल्हरावै, जोइ सोइ कछु गावै।
मेरे लाल को आउरी निंदरिया, काहे न आनि सुवावै।
तू काहे न वेगिसों आवै, तोको कान्ह बुलावै।
कबहुँ पलक हरि मूंदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावैं।
सोवत जानि मौन ह्वै ह्वै रहि, कर करि सैन बतावैं।
इहि अंतर अकुलाय उठे हरि, जसुमति मधुरे गावैं।
जो सुख सूर अमर मुनि दुर्लभ, सो नँद भामिनि पावै।

× × ×

(२)

मथुरा में तूने जनम लिया था गोकुल में बँटी रे बधैया[१]
कन्हैया मैया लेगी बलैया।
काहे का तुझे कुर्ता सिला दूँ, काहे की टोपैया। कन्हैया० ॥
हरा-हरा री कुर्ता सिला दूँ, जाली की टोपैया। कन्हैया० ॥
काहे की तुझे हंसली गढ़ा दूँ, काहे की टोडरिया[२]।
चाँदी की तुझे हंसली गढ़ा दूँ, सोने की टोडरिया।

---

१. नव-पुत्र के जन्म पर बिरादरी को भोज दिया जाता है और ब्राह्मण, पुरोहित, नाई, कहार आदि सेवक गणों को उनके नव-दूर्वा-दल लाने पर वस्त्र तथा रुपये के रूप में उपहार दिये जाते हैं। इस प्रथा को 'बधाई बांटना' कहते हैं। २. कड़े।

ओढ़ पहिर मेरा चला लाडला, जल-जल मरैं लुगैया।
दूर खेलन मत जाय कन्हैया, आगे धारा बहइया।
तू धारा में रपट पड़ेगा, ना कोई पकड़े बहियाँ।
ना तेरे चाचा, ना तेरे ताऊ, ना कोई तन का भइया।
बाँह पकड़ेंगे आप किशन जी, जिन यह सृष्टि उपजैया।
वही चाचा, वही ताऊ, वही हैं तन के भैया।
कन्हैया मैया लेगी बलैया॥

ऐ कृष्ण ! तेरा मथुरा में जन्म हुआ, परन्तु गोकुल में तेरे जन्म पर बधाई बाँटी गयी। मेरे कुँवर कन्हैया ! मैं तुझ पर बलि-बलि जाती हूँ। बता मेरे लाडले तेरे लिए कैसा कुर्ता बनाऊँ और कैसी टोपी ? (प्रेम के आवेश में यशोदा रानी स्वयं ही कह उठती हैं) तेरे लिए हरा कुर्ता सिलाऊँगी और जाली की टोपी बनाऊँगी। तेरे लिए कैसी हँसली (गले का आभूषण) बनाऊँ और कैसे कड़े ? तेरे लिए चाँदी की हँसली बनाऊँगी और सोने के कड़े। सज-सजाकर कृष्णजी घर से निकले। यशोदा उनकी सुन्दर छवि देख कर मुग्ध हो गयीं।

चित्रकार जैसे अपने बनाये हुए सुन्दर चित्र को देखकर मुग्ध हो जाता है, इसी प्रकार माँ भी अपने बच्चे की सुन्दर छवि पर रीझ उठती है, क्योंकि वह उसकी स्वयं ही की कृति है। यशुमति गर्व और हर्ष से भरकर कह उठती हैं, 'मेरा लाल बहुत ही सुन्दर लग रहा है, सब स्त्रियाँ एक बार ईर्ष्या-भरी दृष्टि से उसे देखेंगी।' किन्तु उसी समय प्रेम भरी आशंका मातृ-हृदय को उद्वेलित कर देती है। वह बच्चे को चेतावनी देती हुई कहती है—"मेरे कन्हैया, दूर खेलने न जाना। आगे जमुनाजी बह रही हैं। तू यदि जमुना में गिर गया तो कौन वहाँ सूने में तुझे बाँह पकड़ के निकालेगा ?"

शैक्सपियर ने सत्य ही कहा है:—"Where love is great the littlest doubts are fears; Where littlest fears grow great, great love is there." अर्थात् अत्यधिक स्नेह में छोटी-छोटी आशंकाएँ भय का रूप धारण कर लेती हैं। जिसके मन में छोटे से छोटा भय विराट् रूप धारण कर लेता है, समझ लीजिये कि उसके मन में प्रगाढ़ प्रेम विद्यमान है।

सूरदासजी ने भी इस भाव को इस प्रकार व्यक्त किया है—

खेलन दूर जात कित कान्हा।
आज सुन्यो बन हाऊ आयो, तुम नहिं जानत नान्हा।
इक लरिका अबहीं भजि आयो, रोवत देख्यो ताही॥
कान काटि वह लेत सबनि के लरिका जानत जाही॥

"बिटौने! तेरे चाचा, ताऊ तथा सहोदर भैया कोई भी तो नहीं हैं।" परन्तु उसी समय यशोदा को अपने इस कथन पर ग्लानि होती है और भक्ति से उनका हृदय गदगद् हो उठता है। वह कहती हैं, "स्वयं भगवान् तेरी रक्षा करेंगे, बच्चे! उन्होंने ही यह सृष्टि उत्पन्न की है, वही चाचा, ताऊ तथा सहोदर भैया सब कुछ हैं।"

त्वमेव माता च, पिता त्वमेव।
त्वमेव बन्धुश्च, सखा त्वमेव॥
त्वमेव विद्या, द्रविणं त्वमेव।
त्वमेव सर्वं मम देव देव॥

यह कह कर तो ईश की अर्चना आज तक सभी करते रहे हैं।

इस गीत की अन्तिम पंक्तियों से ऐसी ध्वनि भी निकलती-सी जान पड़ती है, मानो गायक यशोदा से कह रहा है कि जो सारे संसार का रचयिता है. उसकी तुम क्या चिन्ता करती हो?

गीत की स्वाभाविकता दर्शनीय है।

(३)

मोरि पत राखो आय मुरारि।
देश-देश के नृपति आये, आये नगर नर नारि।
उन्हीं की कुल वधू कहाऊँ, वही उबारनहार।
मोरि पत०॥
ए जी रामा निर्बल के बलदायक तुम ही संकट मेटनहार।
मोरि पत०॥
भव सागर में बही जात हूँ, तुम्हीं बल्ली[1] लगावनहार।
मोरि पत०॥

---

१. पतवार।

ए जी द्वारिका में कृष्ण रुक्मणी खेलें चौपड़ सार ।
द्रौपदी की टेर सुन कै, कियो चीर अपार ।
मोरि पत० ॥

ए जी रामा पासे बारह और अठारह छः पड़ गये नौ सात ।
अन्त पासा कबहूँ ना देखा, खेले ना समझ विचार ॥
मोरि पत० ॥

दुर्वासा के कारज सारे[1], दिया है दान अघाय ।
द्रौपदी की लज्जा राखो, चीर अनन्त बनाय ॥
मोरि पत० ॥

उपरोक्त गीत को पढ़ने से ज्ञात होता है कि ग्रामीण भी महाभारत की घटनाओं से परिचित हैं । द्रौपदी को पाँचों पाण्डव जूए में हार गये हैं । शोकातुर द्रौपदी कृष्ण का आह्वान कर रही है—

"हे माधव ! आकर मेरी लज्जा की रक्षा करो । देश-देशान्तरों के राजा, महाराजा और स्त्री-पुरुष आये हुए हैं । मैं उन सब की ही कुल-वधू हूँ, परन्तु यही सब आज मेरी लज्जा अपहरण करने पर तुले हैं । हे दयानिधे ! तुम्हीं निर्बल के बल और दुःखहर्ता हो । मैं भवसागर के प्रबल प्रवाह में बही जा रही हूँ । हे नाथ ! तुम्हीं पतवार बनकर मेरी नौका को पार लगाओ ।" कृष्ण भगवान् द्वारिका में रानी रुक्मणी के साथ सार (पासा) खेल रहे थे । उन्होंने द्रौपदी की करुण पुकार सुनी । द्रौपदी का चीर अनन्त हो गया । द्रौपदी कहने लगी—"नाथ ! सोच-समझ कर नहीं खेले । बारह, अट्ठारह, छः नौ सात पासे पड़ गये । हे करुणेश ! तुमने दुर्वासा ऋषि को अमित दान दिया, द्रौपदी का चीर अनन्त करके उसकी लज्जा की रक्षा कर लो ।"

वर्णन बड़ा ही सजीव है । इस घटना पर अनेक कवियों ने रचना की है ।

रह्यौ ऐंचि अन्त ना लह्यौ, अवधि दुशासन वीर ।
आली ! बाढ़त विरह त्यौं, ज्यौं पंचाली चीर ॥

—बिहारी

१. पूरे किये ।

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(४)

गोकुल गढ़ तें चली कामिनी, सिर पर मटकी आयी, मेरे राम।
आगे जी नन्द जी का लल्ला अड़ रहा, मेरे राम।
मटकी फोड़ी, मेरा दही गिराया, माखन भोग लगाया, मेरे राम।
माथे की इंढवी[1] जल में गिरा दी मेरे राम।
हार हबक लियो, चीर झबक लियो मोतियन की लड़ तोड़ी, मेरे राम।
गोरे से मुख पर मारी थपकी, मेरे राम।
अंगिया फाड़ी, बहियां मरोड़ी, मेरे राम।
बाजूबन्द की लड़ी तोड़ी, मेरे राम।
गोरे से पहुँचे[2] में लाल नोह[3] दियो, मेरे राम।
जाओ जी ललना, जाओ जी कान्हा, नन्द जी के घर जाओ, मेरे राम।
मूढले बैठी दधी बिलोवै, नन्द जी की पटरानी, मेरे राम।
ऐसो री यह चपल खिलाड़ी क्यों जन्यौ[4], मेरे राम।
क्या तेरा तोड़ा क्या तेरा फोड़ा,
कैसे देस्यां[5] ए गुजरी ओलना[6] मेरे राम।
मटकी फोड़ी दही गिराया, मक्खन भोग लगाया, मेरे राम।
हार हबक लियो, चीर झबक लियो,
मोतियन की लड़ तोड़ी, मेरे राम।
जाओ री ग्वालन, जाओ री गुजरी,
जाओ चन्द्रावल घर, मेरे राम।
साँझ पड़ी कान्हा घर को आया,
बंसी अधिक बजायी, मेरे राम।
ऐसी रे मस्तानी गुजरी क्यों छेड़ी, मेरे राम।
वृन्दावन की कुंज गली में बैठा गऊ चराऊँ, मेरे राम
मेरी गउओं के मारी लात थी तब मैंने छेड़ी थी, मेरे राम।

× × ×

---

१. इंढवी सिर पर रखकर मटकी उसके ऊपर रखी जाती है, २. कलाई, ३. नाखून, ४. जन्म दिया, ५. देती है, ६. उलहना।

नटखट कृष्ण की नटखटी का इस 'गूजरी' में सुन्दर चित्र अंकित किया गया है। अन्त में यशोदा के सम्मुख कृष्ण को बहाना बनाते देख सहसा हँसी आ जाती है।

"जो बालक कछु अचगरि करहीं।
लखि पितु मातु मोद मन भरहीं ।।"

सूरदास के कृष्ण ने भी एक दिन ऐसा ही बहाना बनाया था।

अपनो गाउँ लेउ नँद रानी।
बड़े बाप की बेटी, पूतहि भली पढ़ावति बानी ।।
सखा भीर लै पैठत घर में आपु खाइ तो सहिये।
मैं जब चली सामुहे पकरन, तब के गुन कहा कहिये ।।
भाजि गए दुरि देखत कतहुँ, मैं घर पौढ़ो आइ।
हरै हरै बेनी गहि पाछे, बाँधी पाटी लाइ ।।
सुनु मैया याके गुन मो सौं, इन मोहिं लियौ बुलाई।
दधि में पड़ी सेंत की मो पै चींटी सबै कढ़ाई ।।
टहल करत मैं या के घर की, यह पति संग मिलि सोई।
'सूर' वचन सुनि हंसी जसोदा, ग्वालि रही मुख गोई ।।

लोक-गीतों में कृष्ण की बाल-लीला और प्रेम-वर्णन में अधिकतर परुषा-वृत्ति का उपयोग नहीं मिलता। 'हार हबक लियो और चीर झबक लियो' में अनुप्रास दर्शनीय है।

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(५)

इस रे ब्रज में कर लागै है, दीजो लाग हमारी।
ठाड़ी रहियो ए दूध बेचनवारी, ठाड़ी रहियो ए दूध बेचनवारी ।।
तू अनोखा फिरै बिरज में रोके डगर हमारी
ठाड़ी रहियो ए० ।।
कौड़ी कौड़ी अभी चुका दूं, सारा मोल दही का।
लपट झपट मोरि मटकी फोड़ी, सारी छाछ खिडायी[1]।
सांझ पड़ी दिन छिपने लागा, गुजरी घर कों आयी।

---

१. बिखेर दी।

सुन सुन री यशोदा माई, हम ब्रज में बेचें दूध ।
आ गये कुँवर कन्हाई, ऐसी उधम मचायी ।
ठाड़ी रहियो ए० ॥
ऐसा उतारी[1] तूने जनम दिया है रोके डगर हमारी
लपट झपट मोरि फोड़ी मटकी, सारी छाछ खिडायी
क्या तेरे पै पड़ी बीजुली, ऐसी भड़कती आयी ।
घाट घाट पर चरचा तेरी, किस बाबल[2] की जायी ।
एक की तू चार भराले, जो तेरी छाछ[3] खिडायी ।
मेरा इकलौती का प्राण लाडला माँगी भीख परायी ।

इस 'गूजरी' को सुनते ही सारा दृश्य एक बारगी नेत्रों के सम्मुख आ जाता है । मटकी फोड़ना, दही बिखेरना नटखट श्याम के लिए नया नहीं है । यशुमति दण्ड देते-देते हार गयीं, ऊखल से बांधा, परन्तु कृष्ण भी पूरे हठी थे । क्यों मानने लगे ? आज फिर कृष्ण के कारण यशोदा को उलहना सुनना पड़ा । परन्तु माँ का प्रेम अनिवर्चनीय है । एक बार दण्ड देने की पीड़ा ही माँ के हृदय में तीव्र कसक उठा देती है । यशोदा तभी तो उत्तर देती हैं, "अरे ! ऐसी क्या बिजली गिर गयी जो इतना चिल्ला रही हो ? तुम किस पिता की पुत्री हो ? सब तो तुम्हारी बुराई करते हैं । तुम एक मटकी दही के बदले चार मटकी दही की ले लो, क्योंकि मेरे कुँवर ने तुम्हारी छाछ बिखेर दी है । यह मेरा एक-मात्र लाल है और वह भी परायी भिक्षा माँग कर मिला है ।"

यशोदा का अन्तिम चरण में यह कहना "मेरा इकलौती का प्राण लाडला, माँगी भीख परायी" बड़ा ही मर्मस्पर्शी है ।

कन्या पितृकुल से पृथक् होकर भी कभी पृथक् नहीं हो पाती । उनकी लज्जा और मानमर्यादा का उत्तरदायित्व उस पर सदैव ही बना रहता है । तभी तो यशोदा ने यह न पूछा कि तू किस की स्त्री है; बल्कि झट से कह बैठी तू किस की पुत्री है ।

कृष्ण के राह चलते झगड़ने पर एक कवि ने कहा है—

मोहन मोसे करत रार, जाओ जी कान्हा अपने द्वार ।
ऐसे हो तुम नन्द के छैल बाट चलत मोरि रोकत गैल ।
आँचल पकड़त बहियाँ मरोरत, 'सुघर पिया' करत रार ।

अन्तर केवल इतना ही है कि गूजरी का रोष वास्तविक है और कवि की नायिका का रोष कृत्रिम है ।

---

१. नटखट, २. पिता, ३. मट्ठा ।

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(६)

बस भरी सभा में द्रोपदी यही पुकारै साँवरिया।
रख लीजे लाज हमारी, कृष्ण मुरारी, रे साँवरिया ॥
जीति लिये कर कपट दुसासन, सब हैं मौन गहे।
रीति नीति में पाण्डव फँस के, कोटिन कठिन कलेस सहे ॥
दीनानाथ दया अब करिये, अबला के दुख को हरिये।
दे दीजे तुम अभयदान, बनवारी, रे साँवरिया ॥
गज की टेर सुनत तुम आये, गज को ग्राह से लियो बचाय।
अगम अथाह जल बरसत ब्रज में, तब तुम गिरि को लिये उठाय,
रे साँवरिया ॥
क्या भूलि गये हो मुझको अबके मोरी पारी, रे साँवरिया।
जस जस देर करत यदुनन्दन, तस तस जी काँपत मोर ॥
भरी सभा में खड़ी अकेली, नहिं कुछ जोर चलता है मोर।
चुप भयी सभी सभा इक बारी, रे साँवरिया ॥
खेंचत खेंचत हारा दुसासन, लगा सभा में चीर का ढेर।
कहै दयाल जब अचल कृपा भयी क्या कर सकता हथ-फेर[1] ॥
ऐसे बचा ली द्रौपदी नारी, रे साँवरिया ॥

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(७)

ऐ दही लो मेरे रामा अब दही लो।
कहाँ की तू छैल गुर्जरिया, कहाँ तो तेरा रहना।
अब दही लो दही लो मेरे रामा अब दही लो।
गोकुल की मैं छैल गुजरिया, मथुरा में मेरा रहना।
अब दही लो० ॥

१. लज्जा लूटने वाला अथवा दुष्ट।

मटकी फोड़ी दही खिडाई। अब दही लो०॥
तोरी तो दही गुजरी खट्टी खट्टी
मीठे तो तेरे बोल जी। अब दही लो० ॥
सास सुनेगी गाली देगी, नन्द मारें ताने[1] ॥
वृन्दावन की कुँज गली में,
श्याम मोरे मिल गये। अब दही लो० ॥

कृष्ण ने दही बेचते गूजरी को देखा, फिर क्या था पूछ बैठे। कवि के शब्दों में :—

नाम कहा सुन्दरी तुम्हारा, क्यों मुख से नहिं बोलति हो।
हँसे हँसति चितए चितवति तुम, तनु डोले, तनु डोलति हो।
अपने मुख की वचन माधुरी, काहे न हमें सुनावति हो।
कहो वचन काकी तुम घरनी, काके मन को चोरति हो॥

गूजरी केवल इतना ही कह पायी थी कि मैं गोकुल की गूजरी हूँ और मथुरा में रहती हूँ कि झट से कृष्ण ने मटकी फोड़ दी। वह कहने लगे—"दही तो खट्टी है; परन्तु तेरी बोली बड़ी मधुर है।" सास, ननद के भय से गूजरी भयभीत हो उठी। परन्तु श्याम का सलोना रूप देखते ही उसने अपने भाग्य की सराहना की। "वृन्दावन की कुंज गली में मेरे मोहन मिल गये लो अब दही लो," कहती हुई गूजरी आगे बढ़ गयी।

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(८)

अरे ऊधो अरे माधो, भला कंस राज की मैं गुजरी।
अरे ऊधो अरे माधो, पानी भरने मैं निकली।
रे भला कंस राज की मैं गुजरी।
अरे ऊधो अरे माधो मेरे गोद जडूला[2] सिर मटकी।
रे भला० ॥
अरे ऊधो अरे माधो मेरी छीन लयी हरि ने मटकी।

---

१. व्यंग कसना, २. पुत्र।

अरे ऊधो अरे माधो, न्याय नहीं हरि की नगरी।
भला न्याय नहीं हरि की नगरी, रे भला कंस०॥

गूजरी ने कृष्ण को चुनौती खूब दी। स्वयं भगवान् की नगरी में भी न्याय न हो यह कैसा अन्धेर है। कृष्ण लज्जित होकर रह गये होंगे। कवियों के भी एक दो उद्धरण दिये जाते हैं :—

पनघटुवा पै न जाऊँगी,
श्रीकृष्ण मो से करत रार। पनघटवा०॥
हाथ पकरि मोरि बहियाँ मरोरत।
उँगरि पकरि चहुँ ओर नचावत।
ठाढ़ी अटा पै करति पुकार। पनघटुवा०॥

× × ×

गगरिया मोरी काहे गिरायी मोहन।
विनती करूँ छल जिन कर मान।
भयो पिया तू निपट अनारी।
रोकत पनघट पै पर नारी।
निरखि गिरिधारी, चितवत सखियन।

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(६)

हे गुजरी ठेठ[1] गोकुल तें धमकी गुजरी।
कर शृंगार, धरी सिर मटकी चली वनज[2] को गोकुल नगरी।
सिर पर दखिनी[3] चीर अमोला।
जर्द किनारी, सूआ साढ़ी छाय रही छतियन पर चोला।
कहा रे कहूँ किस्मत शृंगार की।
पट घूंघट में भाव बतावै, नैना तो बान विरह के मारति।
हे चन्द्रावलि गुजरी! घने दिनों की दूध बेचै थी।
कहाँ रे गंवा दी सुन्दर आरसी?
ए रे कन्हैया तू वृन्दावन धेनू चरायी।
मेरी आरसी तूने चुरायी।

---

१. खास, २. व्यापार, ३. दक्षिण का बना।

मेरी आरसी थी अमोली[1], नाड़े से मैं कभी न खोली।
देखत सुरमा सारति[2], ऐसी आरसी फेर ना होगी।
मेहनत मोरी लागी डेढ़ हज़ार की रे नन्दन के नन्दा।
लाओ जड़ाऊ मेरी आरसी रे।
ब्रजवासी कन्हैया! गुंठड़े[3] का मांटन[4] मोरी आरसी।
गुंठड़े का मांटन शोभा ले लयी सब संसार की।
हे ब्रजवासी कन्हैया! दे दो मोरी आरसी।
हे गुजरी! मैं वृन्दावन धेनु चरायी, मैं चुरवायी तेरी आरसी।
आरसी थी तेरी अमोली, नाड़े से तू कभी न खोली।
लाल! घर ही पै न्हान संजोया, झगड़े में खो दी लंगर[5] आरसी।
ए चन्द्रावलि! बहुत दिनों की दूध बेचै थी कहाँ।
हे गुजरी! मैं पांच नाम ठाकुर के सिमरूं
बुध का धनी बिनै एक सिमरूं
हृदय में सरस्वती सिमरूं, भूलों को मारग दे समुझावति हे चन्द्रा
यशोदा पाला, पौन[6] लगी दिन चार की।
भरे पेट जब[7] लगै अघाई। छोड़ कान्ह हमसे चतुराई
मेरी सखियां करैं विचार।
हाथ छोड़ दे जाने दे रे प्यारे
नहीं रे सुहावे तेरी पारसी[8]
हे ब्रजवासी दे दो मोरी आरसी
आरसी अंगूठे का सिंगार
शोभा सब संसार की।

उपरोक्त 'गूजरी' में कृष्ण का आरसी छुपाने का सुन्दर वर्णन है।

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(१०)

जब रे हुआ परभात चली दूधा बेचन मैं रे
दे दे लम्बी टेर बुला ली सब रे।

---

१. अमूल्य, २. लगाना, ३. अंगूठा, ४. शृंगार, ५. सुन्दर, ६. हवा, ७. जब भरपेट खूब अच्छा खाना मिलता है, ८. भले बनना।

दामन[1] पहिना, चुंदड़ी[2] पाट पीताम्बर दखिनी चीर
आगे मिल जावे कोई क्या कहे हम गूजर वो अहीर।
प्राण हर तैं लगे। तुम भज लो कृष्ण मुरारि। प्राण० ॥
आगे बैठा आप ओढ़ के काली कंबली
तोरे नैन रहे झरि लाय आज मैंने देखी नयी नयी।
मटकी धरो उतार बात करलो हम सेती[3]।
परे हट जा रे छोकरे, थप्पड़ मारूं दोय।
सिर दुक्खै, तेरी पसली दुक्खै, मारूं प्राण चित्त[4] होय
कल हमारा क्या किया, और आज करोगी क्या।
पीताम्बर इसका खोस[5] लो, मुरली धरो लुकाय[6]
बांध मुश्क, मथुरा ले चलो, होनी हो सो होय। प्राण० ॥
मुझे ले जाओ मथुरा मांह[7], दुन्द मैं घना मचाऊं
छीन छीन दूध पी गया मक्खन भोग लगाऊं
चुप रह, चुप रह, क्या मुँह ले कै बोलै।
तू बेचै खट्टी छाछ और घर में ना पावै
प्राण हर तैं लगे।

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(११)

गंगा का उर्ला[8] पार, पर्ले[9] पार मोहन गुजरी हो राम
कै तू गढ़ी सुनार, कै तू गढ़ी कुम्हार, कै अम्बर तैं उतरी मेरे राम
ना मैं गढ़ी सुनार, ना मैं गढ़ी कुम्हार, ना अम्बर तैं उतरी मेरे राम
जन्म दिया मेरी माय ने, रूप दिया भगवान् मेरे राम
जमना जी के उर्ले पार, पर्ले पार मोहन गुजरी है राम।

गूजरी

[नृत्य-गीत]

(१२)

संग की सहेलियां दूध बेचन को जांय।
दूध उनका पी गया, वह गाली देती जांय ॥

---

१. लहंगा, २. दुपट्टा, ३. से, ४. अचेत हो जाना, ५. छीन लो, ६. छिपाना, ७. में, ८. इधर का, ९. दूसरे।

बजाय गया रे वह तो आंगन में बंसरी।
सुनाय गया रे आँगन में शब्द सुनाय गया रे ॥
छोटी सी तो मुरलिया, कान्हा उसका नाम।
बजाय गया रे, मोहन मन्त्र डाल गया रे ॥
सुध बुध हर लयी रे, मनहर उसका नाम।
बजाय गया रे वह तो आँगन में बंसरी ॥

कृष्ण भी विचित्र जादूगर है। दूध भी पी लिया और वंशी बजाकर रूठी हुई ब्रज वनिताओं को मना भी लिया। उन्हें अपनी सुधि भी न रही। वह कृष्णमय हो उठीं। धन्य है कृष्ण तुम्हारी निराली मुरली को —

"सुरति न ताल, अरु तान की,
स्वर न ठीक ठहराय।
ए री राग बिगारि गो,
बैरी बोल सुनाय ॥"

(१३)

अरी माता बोल तो सही, घरसी[1] बोल तो सही।
दे दे दही दे दे दही सौ बार तो कही।
घरसी बोल तो सही।
अस्सी बरस का नातना[2], नब्बै बरस की रई[3]।
तातक तैया हो रही माता बिलोवै दही ॥
घरसी बोल तो सही।
झट-देसी तोड़ा नातना, पट-देसी तोड़ी रई।
मट-देसी फोड़ी बिलोवनी[4], दूधों की नदी बही।
घरसी बोल तो सही।
दे दे दही दे दे दही, सौ बार तो कही ॥

नटखट कृष्ण आये और कहने लगे, "मां! मां!! बोल तो सही। मैं कहते-कहते थक गया ज़रा बोल तो सही। मुझे दही देदे ना मां!" अस्सी वर्ष

---

१. प्रेम और रोष से भरा एक सम्बोधन। इसका पर्यायवाची शब्द हिन्दी साहित्य में नहीं है, २. जो रस्सी दूध बिलोते हुए बाँधी जाती है। ३. जिससे दूध बिलोते हैं, ४. दही बिलोने की हँडिया।

का पुराना नातना है और नव्वे वर्ष की पुरानी रई। दूध बिलोते हुये तातक तैया का शब्द हो रहा है। यशोदा रानी दही बिलो रही है। नटखट श्याम आये और झट से नातना और रई तोड़ डाली। फिर दही की गगरी का भी नम्बर आ गया। उसके फूटते ही सारा दही सरिता की भाँति बहने लगा। सौ बार कहने पर भी जब नवनीत और दही के दर्शन न हुए तो बेचारा माखनचोर करता भी क्या।

गीत को पढ़ते-पढ़ते कृष्ण की मनमोहिनी मूर्ति नेत्रों के सम्मुख आ जाती है। झट, पट और मट में अनुप्रास दर्शनीय है। 'दूध की नदी' में अतिशयोक्ति देखिये।

सूरदास जी के कृष्ण की नटखटी के दो पद निम्नलिखित हैं :—

क्रीड़त प्रात समय दोउ बीर।
माखन माँगत, बात न मानत, झख जसोदा जननी तीर।
जननी मध्य सन्मुख संकर्षण, ऐंचत कान्ह खस्यौ तनु चीर।
मनौ सरस्वती तीर उभय द्विज, रुचिर हंस औ नील कठोर।
सूर श्याम गही कबरी कर मुग्ना माँग गही बल वीर।
दोउ खग अपनो अपनो भखु, मानहु लेत निबेरि निसीर॥

× × ×

पाहुनी ! कर दै तनिक मथ्यौ
हौं लागी गृह काज रसोई, जसुमति विनय कह्यौ।
आरि करै मनमोहन मेरौ, अंचल आनि गह्यौ।
व्याकुल मथत मथनिया रीती, दधि भ्वैं ढरकि रह्यौ।
माखन जात जानि नंदरानी, सखिन सम्हारि कह्यौ।
'सूर' श्याम मुख निरखि मगन भयीं दुहुनि संकोच कह्यौ॥

फागुन के नृत्य का गीत

(१४)

ढुंढवा दो बंसी मोरी जी, ढुंढवा दो बंसी मोरी जी।
काहे से गाऊँ राधे, काहे से बजाऊँ राधे,
काहे से लाऊँ गय्या[1] हेरी[2] जी। ढुंढवा दो०॥
मुख से गाओ रामा, हाथों से बजाओ रामा
सीटी से लाओ गय्या हेरी जी। ढुंढवा दो०॥

---

१. गाय, २. ढूंढकर।

सोने की नांही रामा, चाँदी की नांही रामा
हरे हरे बाँस की पोरी जी। ढुंढवा दो० ॥
तेरी तो बंशी रामा धरी ताक[1] पै
मेरे सिर ला दयी चोरी जी। ढुंढवा दो० ॥

कृष्ण की वंशी राधा ने छुपा ली। कृष्ण ने राधा से वंशी को अनेक कारण बतलाकर मांगा परन्तु राधा न मानी। कृष्ण खीझ उठे। राधा ने चुपके से वंशी ताक पर रख दी और कहने लगी, "तुम्हारी वंशी रखी तो है ताक पर और दोष देते हो हमें।"

कृष्ण-राधा की प्रेम-लीला का वर्णन साहित्य में नवीन नहीं है। एक दो उदाहरण कवियों की रचनाओं के भी देखिये :—

सोच रही है राधा मन में, मुरली जहाँ सीख पायी।
श्याम सहचरी मेरी बैरन, बस मेरे हाथों आयी॥

× × ×

या मुरली मुरलीधर की अधरान धरी अधरा न धरौंगी।

× × ×

राधे रानी दे डारो न वंशी मोरी।
जिस वंशी में प्राण बसत हैं, वही गई है चोरी।
सोने की नांही राधे, रूपे की नांही राधे।
हरे हरे बाँस की पोरी।

"सोने की नांही राधे, रूपे ही नांही राधे, हरे हरे बाँस की पोरी" में ग्रामीण गीत की पंक्ति से अचानक भाव-साम्य हो गया है। दाम्पत्य प्रेम भी अद्भुत है। वहाँ कभी-कभी रूठने-रुठाने में भी आनन्द आता है तो कभी मनाने में भी। आज राधा अपने मनमोहन को खिझा कर ही रीझ रही है।

महाकवि बिहारी ने भी तो इसी लिये कहा है :—

मन न मनावन को करै, देत रुंठाय रुंठाय।
कौतुक लागे प्रिय प्रिया, खीझहु रिझवत जाय।

(१५)

मेरो कन्हैया मैं कौन बन ढूंढूं
घर रोवें गैया जंगल रोवें बछड़ू
साँझ होय कब आवें कन्हैया।
मेरो कन्हैया मैं कौन बन हेरूँ ?

---

१. आला।

एहि पार गंगा ओही पार जमना
सरजू के तीरे तीरे डारैहूँ मढ़ैया।
मैं कौन बन हेरूँ ?
कासी उजाड़ राम मथुरा बसा आये
ढूंढते ढूंढते हो गई संझइया।
मैं कौन बन हेरूँ ?
हाथै लकड़िया कांधै कमरिया
गऊ का चरइया, मोरा बंसी का बजइया।
मैं कौन बन हेरूँ ?

गीत में कृष्ण के न आने पर यशोदा जी की व्याकुलता का बड़ा ही स्वाभाविक चित्रण है।

गूजरी

(१६)

एक दिन हरि ने मता[१] उपाया[२] रामा।
चल गुजरी के द्वारे आया रामा॥
चारों खूंट[३] खड़े जो लखाये[४] रामा।
नर और नारि नज़र नहीं आये रामा॥
उसका ताला तोड़ बड़ा[५] री उसके घर में
चक्की का उठाया पाट, थाम[६] लिया कर में
कोने में मेला[७] जाय भीतरं[८] घर में
गुजरी का छींका तोड़, ऊखल भी फोड़ा
उसका घड़ा भी कर दिया बोड़ा[९]
इतने कर कर काम बड़ा री कोठी में
दधि मक्खन लिया घाल[१०], खाय रोटी में
बाहर से गुजरी आयी, उन खुली खिड़की पायी।
आज कौन चोर है आया, मेरा सारा घर लुटाया
गुजरी धर के देखे ध्यान, दीख गया कान्हा
मूंद[११] दिया कोठी का ताला

---

१. चालाकी, २. सोचा, ३. दिशा, ४. देखा, ५. घुस गया, ६. ले लिया, ७. डाल दिया, ८. अन्दर, ९. बिना दांत का आदमी अर्थात् दांत-रहित आदमी के समान, १०. डाल, ११, बन्द कर दिया।

तेरा नहीं मानता कान्हा, दुखी सब कर दीं ब्रज बाला
माता से मत कहियो जाय रामा
दूंगा खाँड मोल[1] दधि खाया रामा
तैंने छींके मंगा दूं दोय सुतली[2] जड़ के ।
तुझे ऊखल मंगा दूं चार काठ के गढ़[3] के
तू इतनी मतना भड़कै, मैं फेर ना आऊं तड़के[4]
ए गुजरी मैं समझाऊं तोय[5] छोड़ दे मो[6] को
खोल दे कोठी का ताला । तेरा नहीं० ॥
वहाँ से चली गूजरी नन्द घर आई नन्द घर आई
मैं दोनों जोड़ूं हाथ, सुनो री मेरी माई ।
तैं अपने कुँवर को बान[7] बुरी सिखलायी । मैं दोनों जोड़ूं हाथ ।
बैरी समझ ना समझाया, उन काले नाग ना खाया
तू अपने को ले समुझाय, तोड़ लूँ मुकुट और माला ।
वहाँ से चली यशोदा माय हाथ ले सोटी[8] हाथ ले सोटी
कोठी के खोले किवाड़, पकड़ ली चोटी
कोई जब बोले महाराज बात भयी गाढ़ी
गुजरी का बन गया धनी[9] लगा के डाढ़ी ।
गुजरी गूजर को देख बात नहीं बोले
उसके मुख में जाड़ न दाँत, फकाफक बोले ॥
चल गतराड़ी[10] रांड खसम[11] पै लायी ।
मेरा बालक सा नादान, सुम्रा कै आयी ॥
वहाँ से चली यशोदा माय, देत भयी गाली
कोई जब बोले महाराज, सुनो री मेरी प्यारी
माता को लायी सिखलाय, कहा री करवायो ।
तू अपनों कियो आप ही गुजरी पायो ।
छुटा के चल दिये नन्दलाल ॥

अपने ढंग का कृष्ण की नटखटी का निराला वर्णन है ।

---

१. मूल्य, २. बारीक रस्सी या डोरी, ३. बनाकर, ४. प्रातःकाल, ५. तुझे, ६. मुझे, ७. आदत, ८. डण्डा, ९. पति, १०. एक गाली, ११. पति के लिये रोष के समय प्रयुक्त होता है ।

(१७)

जमुना जी के घाट पै, कान्हा गउएँ चरावै, हो राम।
गउएँ चरावै लाड़ला, मुख बीन बजावै, हो राम॥
हाथ लठौली[1] बाँस की, टसरी की धोती, हो राम।
काँधे काली कामर्ला[2], माथे तिलक बिराजै, हो राम॥

कृष्ण जी यमुना के तट पर गाय चरा रहे हैं। गाय चराते हुए वंशी बजा रहे हैं। हाथ में बाँस की लठिया है। टसरी की धोती पहने हुए हैं। कन्धे पर काला कम्बल है और माथे पर तिलक सुशोभित हो रहा है।

गाय चराते हुये कृष्ण का सुन्दर चित्र अंकित किया गया है। इस पर सूरदास की सुन्दर उक्ति देखिए :—

देखि सखी वन ते जु बने आवत हैं नंद नन्दन।
शीश शिखण्डी, मुख मुरली, तिमि बन्यौ तिलक उर चन्दन।
कुटिल अलक मुख, चंचल लोचन, निरखत अति आनंदन
कमल मध्य मानों द्वै खंजन, बँधे आप उड़ फन्दन।
अरुण अधर छवि दसन बिराजत, जब गावत कल मंदन॥
मुक्ता मनो लालमनि में पुट, धरे मुरकि बर बंदन
गोप वेष गोकुल गो चारत, हैं प्रभु असुर निकन्दन।
'सूरदास' प्रभु सुजस बखानत, नेति नेति श्रुति छन्दन॥

महाकवि सूरदास की उपमाएँ बहुत सुन्दर हैं, परन्तु गाय चराते समय की दो आवश्यक वस्तुओं का उन्हें ध्यान न रहा—लाठी और कम्बल।

महाकवि बिहारी ने कृष्ण के रूप का इस प्रकार वर्णन किया है :—

शीश मुकुट, कटि काछनी, कर मुरली, उर माल।
यही बानिक मो मन बसो, सदा बिहारी लाल॥

(१८)

ले के चीर कदम पर बैठे हो राम।
दे दो ना चीर हमारा किशन जी॥
थारा[3] चीर हम जभी जो देंगे,
हो जाओ जल से न्यारी।
दे दो ना चीर मुरारी किशन जी॥

---

१. लठिया, २. कम्बल, ३. तुम्हारा।

जो मैं हो जाऊँ जल से न्यारी
रामा दीखेगा बदन हमारा किशन जी।
दे दो ना चीर० ॥

राधा रानी ज्यों ही स्नान करने लगी, कृष्ण उनके वस्त्र लेकर कदम्ब के वृक्ष पर जा बैठे। राधा ने वस्त्र मांगे परन्तु कृष्ण कब मानने वाले थे। राधा से बोले, "जल से बाहर आओ तो वस्त्र मिलेंगे।"

राधा कहने लगी, "हमारा नग्न शरीर दिखलायी देगा, हम कैसे बाहर आयें। हमारे वस्त्र दे दो ना।"

इसी घटना का महाकवि सूर ने भी वर्णन किया है :—

हमारे अम्बर देहु मुरारी।
ले सब चीर कदम्ब पर बैठे, हम जल माँझ उघारी।
तुम कहलावत नंद के नंदन, हम वृषभानु दुलारी॥
तुम्हरे अम्बर जब ही देई हौं, जल तें हूजे न्यारी।
तट पर बिना वसन क्यों आवैं, लाज लगति है भारी॥
तुम यह बात असम्भव भाषत, नांगी आवहु नारी।
सूर श्याम कछ छोह करौ जू, सीत गयी तन मारी॥

(१६)

बंसी की तान सुनूंगी सुनूंगी मैं तो, बंसी० ॥
जब बंसी वाला तालों पे आवै
तालों की धोबन बनूंगी बनूंगी मैं तो।
बंसी० ॥
जब बंसी वाला बागों पे आवै
बागों की मालन बनूंगी बनूंगी मैं तो।
बंसी० ॥
जब बंसी वाला सड़कों पे आवै
सड़कों की गस्तन[1] बनूंगी बनूंगी मैं तो।
बंसी० ॥
जब बंसी वाला सेजों पे आवै
सेजां की रानी बनूंगी बनूंगी मैं तो
बंसी० ॥

१. घूमने वाली।

प्रेम का उज्ज्वल स्वरूप दर्शाया है। गोपी वंशीधर कृष्ण की मुरली की ध्वनि सुनने के लिये मालन, धोबन तक बनने को तत्पर है। प्रेम में ऊँच-नीच का विचार नहीं रहता।

(२०)

कुन्दन बन क्यूँ छोड़ा, रे माधो
कुन्दन बन क्यूँ छोड़ा।
जो मैं होती मोर का पंजा,
कृष्ण लेते मोल, मुकुट लग रहती, रे माधो।
जो मैं होती सीप का मोती
कृष्ण लेते मोल, कान लग रहती, रे माधो।
कुन्दन० ॥
जो मैं होती तुलसी की माला,
कृष्ण लेते मोल, गले लग रहती, रे माधो।
कुन्दन० ॥
जो मैं होती जल की मछलिया,
कृष्ण करते स्नान, चरन लग रहती, रे माधो।
कुन्दन० ॥
जो मैं होती फूलों की छड़िया,
कृष्ण लेते मोल, हाथ लग रहती, रे माधो।
कुन्दन० ॥
जो मैं होती चन्दन का बिरवा,
तिलक लग रहती, रे माधो।
कुन्दन० ॥

कविवर रसखान ने भी इसी भाव का एक सवैया लिखा है :—

मानुष हौं तो वही रसखान,
बसौं नित गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पसु हौं तो कहा बस मेरो,
चरौं नित नन्द की धेनु मँझारन ॥
पाहन हौं तो वही गिरि को,
जो कियो कर छत्र पुरन्दर धारन।
जो खग हौं तो बसेरो करौं,
नित कालिन्दी कूल कदम्ब की डारन ॥

भक्त रसखान अपने इष्टदेव के पास रहने के लिये ग्वाला, पशु, पाषाण और पक्षी बनना स्वीकार करते हैं; किन्तु गीत की भक्त कवयित्री इतना पृथक्करण भी नहीं चाहती। वह तो अपने प्रियतम का ही एक अंग बनकर रहना चाहती है। इसीलिये वह कहती है, "प्यारे कृष्ण ! तुमने कुन्दन वन क्यों छोड़ दिया ? मैं तुम्हारे वियोग में व्याकुल हूँ। प्रियतम ! यदि मैं मोर का पंख होती तो तुम्हारे मुकुट में लग कर रहती। जो सीप का मोती होती तो तुम्हारे कानों की शोभा बढ़ाती। जो मैं तुलसी की माला होती तो तुम्हारा हृदय-हार बनती। जो फूलों की छड़ी होती तो तुम्हारे हाथ में रहती।" अन्त में बेचारी कहती है—"यदि मैं जल की मछली होती तो जब प्यारे कृष्ण स्नान करने आते तो उनके चरणों से लिपट जाती।" कितना व्यापक और कैसा उज्ज्वल प्रेम है ! करुणा में सराबोर भक्ति का सुन्दर चित्रण है।

रामनरेश त्रिपाठी ने भी विरहिणी के द्वारा इसी प्रकार के भाव व्यक्त कराये हैं :—

हे भगवान घास मैं होती, प्रिय उस पर पग धरते।
अति कृतज्ञ होती, प्रिय पद की धूल मुझे तुम करते॥
प्राणों का आराम वही, आनन्द वही है मन का।
आत्मा की है शान्ति, वही जीवन है इस जीवन का॥

—'पथिक' से

सूरदास की गोपियां भी कृष्ण की वंशी बनने को उत्सुक थीं।

(२१)

बिहारी जमुना में कूदि पड़े, गिरिधारी जमुना में कूदि पड़े।
मारा टोल गेंद गयी जल में, जल में ही कूदि पड़े। बिहारी०॥
उठ री नागिन जगा ले नाग कू, कृष्ण तो काले पड़े।
उठा नाग फुंकार जो मारी, फन फन निरत करे। बिहारी०॥
बैठि किनारे पै माता रुदन करै, सिर के बाल बहे। बिहारी०॥
अपने री हक में माता भली करी है, दुनिया कू कछु न करी।
बालक माँ के समुहैं मरैं री, री माता दुनिया कू कछु ना करी।
क्यों न जल में कूदि मरी। बिहारी०॥

यह कृष्ण की बाल-लीला का वर्णन है। कालीदह में उनके कूदने की कथा प्रसिद्ध है। सूरदास जी ने भी इस घटना का ललित-छन्दों में वर्णन किया है:—

रिस करि लीन्हीं फेंट छुँड़ाई ।
सखा सबै देखत हैं ठाड़े, आपुन चढ़े कदम पर धाई ।
तारी दै दै हँसत सबै मिलि, स्याम गए तुम भाग डराई ।
चलत रुदन श्रीदामा घर को, जसुमति आगे कहिहौं जाई ।
'सखा' 'सखा' कहि स्याम पुकार्यो, गेंद आपुनी लेहु न आई ।
'सूर' स्याम पीताम्बर काछे कूदि परे दह में थहराई ।

× × ×

हाय ! हाय !! करि सखन पुकार्यो ।
गेंद काज यह करी श्रीदामा, नन्द महर को ढोटा मार्यो ॥
जसुमति चली रसोई भीतर, तबहिं ग्वाल इक छींकी ॥
ठिठक रही द्वारे पै ठाढ़ी, बात नहीं कछु नीकी ।
खन भीतर खन बाहर आवति, खन आँगन केहि भाँति ।
सूर स्याम को टेरत जननी, नेक नहीं मन साँति ॥

गीत की अन्तिम पंक्तियों में एक नवीन कल्पना करके गीत रचयित्री ने नवीन रस का संचार कर दिया है। वह कहती है, "अपने प्यारे लाल को नदी में सांप के फन्दे में फंसा देखकर भी माता साथ नहीं कूद पड़ी। कदाचित् यही कारण है कि आजकल मां के सम्मुख ही सन्तान की मृत्यु हो जाती है।" विचित्र कल्पना है।

(२२)

दे दे गेंद मेरी गिरिधारी, दधि माखन के खाने वाले ।
घर से मुझे बुला के लाया, पहिले ही अपना पोत बनाया ।
दे दे गेंद मेरी रतनाले[1], तूने क्यूं जमुना में डाली ।
वहाँ तो बसै नागिनी काली, जा नहीं सकते जाने वाले ।
तेरा मोर मुकुट लूं छीन, दिल में कर ले खूब यकीन ।
तुझको हाथ पकड़ समझाऊँ, तेरी माता पै ले जाऊँ ।
तुझको चोर कठिन बतलाऊँ, तुम हो गेंद चुराने वाले ॥

गेंद के कालीदह में गिर पड़ने पर उपरोक्त गीत में श्रीकृष्ण पर श्रीदामा रोष प्रकट कर रहे हैं।

(२३)

सखी री मैंने लिये कृष्ण जी मोल ।
काहे की डण्डी, काहे के पलड़े, काहे की डाली डोर । सखी री० ॥

---

१. प्रेम भरा सम्बोधन ।

नेह की डण्डी, धर्म्म के पलड़े, सत की डाली डोर।
सखी री मैंने प्रेम की डाली डोर। सखी री० ॥
सोना, चाँदी, सभी चढ़ाया, जब भी न हुए पूरे[1] मोर।
एक पात तुलसी का चढ़ाया, सखी री वे तो हो गये पूरे मोर।
वृन्दावन की कुंज गली में सखी री वे तो सखियों से करें किल्लोल।
सखी री० ॥

सच्चे प्रेम और तपस्या में अपूर्व शक्ति है। गिरिराज किशोरी पार्वती शिवजी को अपने रूप की मोहिनी डालकर वश में न कर सकी, परन्तु उनके प्रेम और तपस्या से शिव का आसन भी डोल गया। कालिदास ने 'कुमार-सम्भव' में इसका सुन्दर वर्णन किया है। 'मेवाड़-पतन' में श्री द्विजेन्द्रलाल राय ने मानसी के मुख से प्रेम की महिमा का सुन्दर चित्रांकन कराया है :—

अद्भुत प्रेम को व्यवहार।
प्रेम किये नर परबश होवे, पर पै निज अधिकार ॥
प्रेमहि से रवि, ससि उगत हैं, फूलत फूल हजार ॥
प्रेम से स्वर्ग पृथ्वी पर आवत, पृथ्वी चढ़त सुर द्वार ॥

सचमुच किसी ने सत्य ही कहा है, "वश में होते आये भगवान् भगत के।" इसीलिये प्रेम विजयिनी गोपी कह रही है कि प्रेम, धर्म्म और सत्य की डोरी डालकर उसने कृष्ण जी को मोल ले लिया है। वह चांदी और सोने से वश में नहीं होते परन्तु केवल श्रद्धाभरी तुलसी-पत्र की भेंट को उन्होंने तुरन्त अंगीकार कर लिया। यही तो प्रेम की महिमा है।

(२४)

करमों की रेखा न्यारी, ऊधो टाली नाय टलै।
राजा दसरथ के तालाब में, सरवण नीर भरै ॥
खैंच बाण गौड़ के मारा, राम हि राम रटै।
पुत्र वियोग से व्याकुल दसरथ, अपने प्राण तजै ॥
करम की रेखा० ॥
इक लख घोड़े, सवा लख हाथी, सोने का छतर[2] फिरै।
हरीचन्द राजा पै भीर पड़ी, तब नीच घर नीर भरै ॥
करम की रेखा० ॥

---

१. पूर्णतया मेरे; २. छत्र।

भाग्य प्रबल है। प्रारब्ध का लिखा कोई मिटाने वाला नहीं। राजा दशरथ ने श्रवणकुमार को भूल से मार दिया, फलस्वरूप राम-वियोग में प्राण त्यागने पड़े। हरिश्चन्द्र से राजा को जिनके एक लाख घोड़े और सवा लाख हाथी थे, जिनके ऊपर सोने का छत्र रहता था, उन्हें भी नीच चाण्डाल की सेवा करनी पड़ी।

तभी तो तुलसीदास जी भी यह कहने पर विवश हो गये थे :—

होइहै वहि जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा॥

कृष्ण का गोपियों के वस्त्र छुपाना—

(२५)

ले गया चीर मुरारी री मैं कैसे करूँ।
लेकर चीर कदम चढ़ि बैठे, हम जल बीच उघाड़ी।
हमरा चीर हमें दो गिरिधर, हम जल बीच उघाड़ी।
मैं कैसे करूँ० ॥
तुम्हरा चीर हम जभी जो देंगे, हो जाओ जल से न्यारी।
जल से न्यारी कैसे रहूँगी, सखियाँ हँसैं दे तारी॥
मैं कैसे करूँ० ॥
सखियाँ हंसैं तो हंसने दो, हम पुरुष तुम नारी।
मैं कैसे करूँ० ॥

यही गीत ज़िला करनाल में इस प्रकार गाया जाता है—

(२६)

रलमिल[1] सखियाँ न्हाने चलीं, संग हो लिये कृष्ण मुरारी।
डगर[2] म्हारी छोड़ दो ना गिरिधारी।
तुम तो जानो थे रामा, आयी अकेली।
संग हमारे सौ सठ[3] नारी। डगर० ॥
ले कै चीर कदम्ब चढ़ि बैठे, रह गई जल में उघारी।
हाथ जोड़ विनती करूँ, दे दो ना चीर मुरारी। डगर० ॥
थारा चीर जभी तो मिलेगा, हो जाओ जल से न्यारी।
लोग हँसेंगे, चर्चा करेंगे, दुनियाँ हँसेगी सारी।
लोग हँसेंगे, पड़े झख मारो, हम पुरुष तुम नारी॥ डगर० ॥

१. साथ-साथ, २. मार्ग, ३. साठ।

(२७)

दही कैसे बिलोऊँगी, किसन को क्यों जगाया है।
रपट घुटनूं चले आये, झपट नेती पकड़ लीन्ही।
घमोड़ा आन के मारा, सभी माखन खिडाया है।
झटक नीचे बिठा दीना, तो रो के फैल मचाया है।
तुझे मैं झुन्झुना दूंगी, अभी मैंने मंगाया है।
जरा-सी डाल के मिश्री, अभी माखन चटा दूंगी।
किशन को गोद में ले के, अभी दधि को खिलाऊँगी॥

उपरोक्त गीत में कृष्ण की बाल-लीला का वर्णन है।

(२८)

हो गई शाम नहीं आये री कन्हैया हो गई शाम।
कौन दुहै मोरी गइया। हो गई० ॥
मातु यशोदा ढूंढन निकसीं।
हरि की मैया हरि को देवै री दुहइया[1]। हो गई० ॥
एक ग्वालिन यों उठ बोली, सुनो यशोदा मैया।
चोर चोर दधि खाय गयो री।
तेरा कन्हैया राम बंशी का बजैया।
गेंद का खिलैया, माखन का खिलैया। हो गई० ॥
मेरा कान्ह क्या भूखा नंगा, सौ सौ गऊ का बंधैया।
मेरे घर में कुंवरि राधिके, तुझसी ग्वालिन मेरे गोबर की पचैया।
कूड़े की गिरइया[2]। हो गई० ॥

गोधूलि की वेला आ गई। यशुमति प्रतीक्षा करते-करते थक गयीं किन्तु कृष्ण न आये। वह नटखट श्याम को ढूंढने को निकली परन्तु मार्ग में एक ग्वालिन मिल गयी जिसका मक्खन चुराकर कृष्ण ने खा लिया था। उसने यशोदा को उलहना दिया। प्रतीक्षाकुल, चिन्ताविह्वल मां के लिये आज उलहना असह्य था। वह झट से कह उठी मेरे कन्हैया को किस बात की कमी है। सौ-सौ गाय उसके यहाँ बंधी हैं। कुंवरि राधिका उसके घर में निवास करती है। तेरे जैसी ग्वालिनें उसके यहाँ गोबर पाथती हैं, कूड़ा डालती हैं, वह चोरी क्यों करने लगा? अर्थात् कृष्ण का सब के प्रति प्रेम है, सब के घर को अपना घर समझता है। नहीं तो उसे किसी से कुछ भी लेने की क्या आवश्यकता है? यह

---

१. दुहाई, २. कूड़ा फेंकने वाली।

सुनकर ग्वालिन क्या निष्प्रभ न हो गयी होगी ? सन्ध्या हो गई । कौन गाय दुहेगा, मेरा कृष्ण अभी तक नहीं आया ।

सूरदास जी का भी एक पद देखिये :—

यशुमति धौं देखि आनि, आगे ह्वै लो पिछानी,
बहियाँ गहि लाई कुंवर और को कि तेरो ।
अब लौं करी कानि, सही दूध दही हानि,
अजहुँ जिय जानि मानि कान्हहै अनेरो ॥
उरहनो दिन देहु काहे तू इतनी रिसाय,
नाहीं ब्रजवास सासु ऐसी विधि मेरो ।

होली

(२९)

वृन्दावन के बीच आज ढप बाजे हैं ।
बाजें ताल मृदंग झांझ ढप
दौड़त आवें लाल आज हरि नाचै हैं ।
उड़त गुलाल, लाल भए बादल
रंग की पड़त फुहार आज हरि बरसन लागे हैं ।
फेंट गुलाल, हाथ पिचकारी
मैं लायी रंग घोल, आप डर भागन लागे हैं ।

वृन्दावन में आज ढोलक, झाँझ, मृदंग और तबला वज रहा है । दौड़ते-दौड़ते कृष्ण आज हर्षोत्फुल्ल हो नाच रहे हैं । गुलाल के आधिक्य के कारण बादल भी रक्त वर्ण हो रहे हैं, रंग की फुहार सी पड़ रही है । आज कृष्ण रंग की वर्षा कर रहे हैं । कृष्ण ने धोती की फेंट में गुलाल छुपा रखा है । हाथ में पिचकारी है । इतने में एक गोपी रंग घोल कर ले आयी । कृष्ण भयभीत हो भागने लगे ।

गीत का वर्णन बड़ा ही स्वाभाविक है । कृष्ण का होली खेलना प्रसिद्ध है—

होरी खेलन मैं तो ब्रज को चलूँगी ।
श्याम सुन्दर जहँ फाग खेलत हैं, ले संग राधा प्यारी ॥
वृन्दावन की कुंज गली में, कर में ले पिचकारी ।
रंगीला फाग रचौंगी ॥

लब अबीर उड़ा के रंग से, चारों दिशा भरौंगी।
जमुना जल को रंग बासन्ती, बरसा पीत करौंगी।
श्याम के रंग में रंगौंगी।

× × ×

"पीठि दिये ह नेकु मुरि, कर घूँघट पट डारि।
भरि गुलाल की मूठ सौं, गई मूठ सी मारि॥"—बिहारी

होली

(३०)

तुम सीधे फेंको गुलाल, लाल देखो मेरी आँख बचा के।
अब रे गुलाल के बादल छाए, रंग की पड़त फुहार। देखो० ॥
अब रे गुलाल के लाल लगे हैं, रंग की पड़त फुहार। देखो० ॥

× × ×

श्री रसिक बिहारी जी का भी होली वर्णन देखिये :—

होरी होरी कहि बोलैं सब ब्रज की नारी।
नन्दगाँव बरसाना हिलमिलि, गावत इत उत रस की गारी।
रसिक बिहारी भानु दुलारी नायक संग खेलैं खेलवारी।
उड़त गुलाल अरुण भयो अम्बर, चलत रंग पिचकारी की धारी॥

× × ×

बाघेली विष्णु प्रसाद की कविता भी होली पर देखिये—

श्याम सौं होरी खेलन आई।
रंग गुलाल की झोली लिये, नवला सब सज सज आयीं॥
बांके नैन चपल चल रीझैं प्रियतम पै टकटकी लगायी।
दौड़ी दौड़ी देखी देखी होरी की रंग छाई॥
उतै सखन संग आन विराजे सुन्दर त्रिभुवन राई।
इतै सखिन संग होरी खेलन, राधेजू चलि आई॥
बारम्बार अबीर उड़ावैं, डार कृष्ण अंग धाई।
दाऊजी पिचकारी चलावैं, सुन्दरि मारि हटाई॥
मधुर मधुर मुसकात जाय, पकड़े हलधर को भाई।
राधे जू के नवल वदन से साड़ी देय हटाई॥
निरखि अनूपम होरी खेलन, सभी हँसे ठठाई।
विष्णकुँवरि सखियाँ सब छोड़ीं हलधर में सुखदाई॥

होली

(३१)

अब की फागुन मोसे खेलो ना होरी ।
छोड़ि देओ अबीरा, अंचल छोड़ि मोरी ॥
कान्हा मान जाओ, उमर मोरि थोरी ।
तोरी शपथ, मैं उमरिया की थोरी ॥ अब की० ॥
अब की बार गम खा जा कन्हैया ।
जब होरी खेलैं जब होय वरजोरी ॥ अब की० ॥
आओ, सइयाँ मुख देखो पलंग पर ।
मुख जैसे चन्दा, नयन जैसे तारा ॥ अब की० ॥

गीत की नायिका ने हठीले श्याम को बहुत समझाया कि वह छोटी है, होली न खेलेगी। होली खेलने में एक दूसरे से जबरदस्ती की जाती है। परन्तु कृष्ण न माने तो उसने कहा, "आओ मेरे प्रियतम को देखो, उनका मुख चन्द्रमा के सदृश है और नेत्र तारे के समान।" भला वह क्यों नटखट कृष्ण से होली खेलने लगी।

होली

(३२)

मोरी अँखियाँ अबीर ना डालो लला ।
कर मोरा पकरि कलाई मोरि मसकी[1] घूंघट उलट दिया ।
उड़त गुलाल लाल भये बादल रंग पिचकारी न डाल लला ।
ब्रज की सखी कैसे निबइ हैं, होरी के रंग बस माता[2] ॥

होली

(३३)

अपनी बार चन्दा हिलमिल खेलैं,
हमारी बार चन्दा छिप जाइयो री ।
आओ श्याम मिल खेलैंगे होरी,
शीशी में रंग भर लाइयो री ।
ऊदी[3] ऊदी साड़ी, जरद[4] किनारी,
घूँघट में समझाइयो री ।

---

१. मोड़ दी, २. मतवाला, ३. बैंगनी, ४. पीला ।

शीशी में रंग भर लाइयो, भर के छिड़क जाइयो री।
बहियाँ पकड़ समुझाइयो शीशी में रंग भर लाइयो री।।

होली खेलने की उत्सुकता का बड़ा ही सजीव वर्णन है। सचमुच—

जिन्दगी जिन्दा दिली का नाम है। मुर्दा दिल खाक जिया करते हैं।।

नृत्य का गीत

(३४)

इन्हीं चोरों ने ले लीन्हा डुपट्टा मोरा।
चाहे जा पूछो बजाज मोरे से।
जिसने गजों नाप दीन्हा डुपट्टा मोरा।
इन्हीं कान्हा ने ले लीन्हा डुपट्टा मोरा।
चाहे जा पूछो रंगरेज मोरे से।
जिसने यह धानी रंग दीन्हा डुपट्टा मोरा।
इन्हीं चोरों ने०।।
चाहे जा पूछो धोबी मोरे से।
जिसने यह चिट्टा[1] कर दीन्हा डुपट्टा मोरा।
इन्हीं कान्हा ने०।।
चाहे जा पूछो राजा मोरे से।
जिसने यह लाकर दीना डुपट्टा मोरा।
इन्हीं चोरों ने०।।

बेचारी गोपी का दुपट्टा लेकर नटखट कृष्ण चलते बने और उसे छुपा दिया। एक दिन कृष्ण के पास उसी दुपट्टे को देखा तो गोपी ने तुरन्त पहिचान लिया। "मेरा डुपट्टा इसी अनोखे चोर ने चुराया है।" वह बोली, "चाहे कन्हैया, तुम बजाज से पहिचान करा लो जिसने यह गज़ से नाप कर दिया था, चाहे धोबी से पूछ लो जिसने इसे धोकर सफेद कर दिया था, चाहे रंगरेज से पूछ लो जिसने इसे धानी रंग का रंगा था, और चाहे मेरे हृदय-सम्राट् से पूछ लो जिन्होंने यह लाकर दिया था।" इस बार तो कान्हा बुरी तरह फंसे हो। बोलो माधव ! अब क्या करोगे ? तुम्हारे विरुद्ध चोरी का अभियोग है और फिर तुम्हारे विरुद्ध साक्षियों की भी कमी नहीं है। यह कोई माखन चोरी तो है नहीं जो बात बनाकर बच जाओगे।

१. सफ़ेद।

महाकवि सूरदास ने हार चुराने का वर्णन किया है :—

कहि राधा किन हार चुरायो ।
ब्रज युवतिन सबहि मैं जानती घर घर लै लै नाम बतायो ।
बुमिला, रंभा, कृष्णा, ध्याना, मैना, नैना, रूप ।
रत्ना, कुमुदा, मोहा, करुना, ललना, लोभा, नूप ।
इतमनि में कहु कौनै लीन्हौ ताको नाम बताउँ ।
सूर श्याम हैं चोर तिहारे, मैं जानति सब दाऊ ।।

यहाँ पर भी कृष्ण पर चोरी का अभियोग है ।

सोहर

(३५)

मैंने सुनते ही राम मनाया, नन्द जी मैं गोबरधन से आया
दौरानी आवै पलंग बिछावै, माँगेगी पलंग बिछाई ।
बाहों के बाजू दौरानी को दीजो, शुभ घड़ी पलंग बिछाया ।
नन्द जी० ।।

दाई आवै ललन जनावै, माँगेगी नाल छिवाई ।
एक रुपइया दाई जी को दीजो, शुभ घड़ी नाल छिवाया ।
नन्द जी० ।।

नायन आवै उबटि निल्हावै, मांगेगी ललन नहलाई ।
हाथ अंगूठी नायन जी को दीजो, शुभ घड़ी ललन नहलाया ।
नन्द जी० ।।

सासू आवै, चरुवा चढ़ावै माँगेगी चरुवा चढ़ाई ।
हार गले का सासू जी को दीजो, शुभ घड़ी चरुवा चढ़ाया ।
नन्द जी० ।।

जिठानी आवै, छटी पुजावै, माँगेगी छटी पुजाई ।
हाथों के गजरे जिठानी को दीजो, शुभ घड़ी सूरज पुजाया ।
नन्द जी० ।।

देवर आवै बाहर निकालै, तो माँगेगा बाहर निकाली ।
हाथों की घड़ी देवर को देना, शुभ घड़ी बाहर निकाला ।।
नन्द जी० ।।

नन्दल आवैं, सतिया धरावैं, माँगेगी सतिया धराई ।
कमर की तगड़ी नन्द जी को दीजो, शुभ घड़ी सतिया धराई ॥
नन्द जी० ॥

सखियाँ आवैं, मंगल गावैं, माँगें मंगल गवाई ।
शीश चुनरिया सखियन को दीजो, शुभ घड़ी मंगल गाया ॥
मैंने सुनते ही राम मनाया, नन्द जी मैं गोबरधन से आया ॥

नन्द जी को किसी ने कृष्ण जी के गोवर्द्धन पर्वत उठाकर ग्वालों और गायों की रक्षा करने का शुभ समाचार सुनाया। वह हर्षित हो उठे और उन्होंने ऐसा सुपुत्र प्रदान करने के लिये ईश्वर को धन्यवाद दिया। नन्द की रानी यशोदा ने कहा—"हे राजन् ! आज मेरे लाल ने शुभ कार्य किया है। इसलिये इस शुभ अवसर पर मैं सब स्वजनों एवं लागियों को पारितोषिक देना चाहती हूँ जिनके आशीर्वाद से ऐसा पुत्र हुआ। उन्होंने शुभ घड़ी में बच्चे के जन्म के समय सब कार्य किये थे, इसी से आज मेरा लाल इतना महत् बन सका है।

धन्य है यशोदा मय्या की उदारता ! और धन्य है उसके कुँवर कन्हैया को !!

भजन मीरा

(३६)

चरखा परै हटा ले री, मेरी सुरत राम से लागी ।
ना बोए हमने बाग बगीचे, ना बोई हमने बाड़ी[1] ।
औरों की बाड़ी से क्या पड़ा, आप ही फिरै उघाड़ी[2]।
चरखा छोड़ा, पीढ़ी छोड़ी, छोड़ा कातना सूत ।
संग की सहेली सारी छोड़ी, छोड़ दिया सास का पूत ॥
मीरा की सासू भी उठ बोली, सुन ले मीराबाई ।
हमरे घर में राम नहीं था, राम कहाँ से लाई ॥
मीरा बोली सुन मेरी माता, मेरी सुरत राम से लागी ।
सांवरिया गिरधारी आगे, बाँध घूंघरू नाची ॥

प्रेम की मतवाली मीरा को चरखे, पीढ़े, सूत, बाग़, खेत, पति, सखी आदि से क्या सरोकार ? वह तो प्रियतममय हो चुकी है।

---

१. रुई के पौधे, २. विवस्त्र ।

कवि के भावपूर्ण शब्दों में देखिये—

न चाहिये मुझे कछू धन धाम।
भले ही लोग करें बदनाम॥
रमा है रोम रोम में राम।
तुमी हो मेरे लोक ललाम।

भजन मीरा

(३७)

मीरा है मोरा नाम, मीरा है मोरा नाम।
मोरा मन लागा हरि चरनन में॥
साधुन संगति छोड़ दे मीरा अरे दोऊ कुल आवें लाज।
साधू संगति छूटै ना राणा मोरे जावे क्यों ना कुल की लाज॥
मोरा मन०॥
जहर का प्याला भेजा पापी मीरा को देहु पिलवाय।
कर चरणामृत पी गयी, रे हो गई अमृत की घूंट॥
मोरा मन०॥
सर्प पिटारी भेजिया जी, मीरा को दो कटवाय।
न्हाय धोय मीरा खोलिया जी झट हो गये सालिग्राम॥
मोरा मन०॥
कोठे चढ़ के देखियो रे मीरा मरी है कि नाय।
मुख से बजावै मीरा बाँसुरी रे वह गावै गिरिधर लाल॥
मोरा मन०॥

इस लोक-गीत के भाव अनायास ही मीरा के स्व-रचित अनेक गीतों के भाव से मिल गये हैं।

: २ :

राम और सीता के गीत

ग्रामीण नारियाँ इतिहास से अपरिचित हैं, इसलिये उनके गीतों में ऐतिहासिक त्रुटियाँ बहुत पायी जाती हैं। जनक जी का सीता से वन में वार्तालाप ऐतिहासिक घटना नहीं है, परन्तु पति से तिरस्कृता और उपेक्षिता नारी हृदय ने यदि कहीं सान्त्वना पायी है तो वह माता-पिता के वात्सल्य की शीतल छाया में। गीत रचयित्री सीता जी के लिये भी यही कल्पना कर बैठती है और उनके हृदय के उद्गार सहसा गीत के रूप में परिणित हो गये हैं।

निम्नलिखित ग्राम्य-गीत के भावों से बिल्कुल मिलता-जुलता गीत हमने मलयालम में अपनी एक त्रावणकोर की सखी से सुना था।

(१)

अरी मेरी भाभी लंका भेद हमें री बताओ,
तो कैसी लंका बनी है री।
अरी मोरी नन्दी, बावन कोट, छप्पन दरवाजे
तो लंका लिख री बनाई है॥
अरे बीरा, या सीता कूँ बन को खंदाओ[1]
रावण में रह आई है।
अरे आगे आगे सीता पीछे लछमन,
तो लछमन ने सरसों बोई है॥
अरे सीता के सत सों बन सरसों लहलहायी है
अरे मोरे बीरा, यू सीता लंका में रह आई है॥
यह सत की सीता ना है जी।
अरे आगे आगे सीता पीछे पीछे लछमन
वे बन को खंदा आए हैं जी॥

---

१. निकाल दो।

अरे जब सीता कूँ छोड़ के आए
तो भर भर आँसू रोई हैं जी।
अरे वा बन में एक बाबा जी
तो उनने अवाज सुनी है जी।
एजी वहाँ तो बाबा जी सीता कूँ ले गये
उन बेटी कर के राखी है जी।
अरी मेरी पुत्री, यहाँ मौज मार,
तू कहीं मत जइयो जी ॥

जब सीता के लड़का हुआ,
सीता कूँ रोज[1] आया जी।
दाई रे माई सकल बुलाती,
अन्न बधाई घर घर बाँटती ॥

अरी माल दरब[2] मेरे बहुत बहुतेरा,
चुन्नी की मेरे लगी चिनाई।
जब सीताजी पानी कूँ जायें,
तो पालने में लल्ला सुलावें जी ॥

जब उदिना सीता लड़के कूँ ले गयी,
तो पालना रीता पाया जी।
और बाबाजी ने जूरा[3] बना के,
भगवान जी से हाथ जोड़े हैं जी ॥

जब भगवान जी ने उसमें जी[4] गेरा
तो बाबा बैठ झुलावें जी।
ऐ पिता जी! मैं लड़के कूँ गैल जु लै गयी
यह लड़का किसका है जी ॥

बेटी! यह लड़का तेरा ही है,
मैंने भगवान जी से लिया हैगा जी।
अब सीता ने दूध पिलाय कै,
दोनों पाले हैं जी ॥

---

१. रोना, २. धन, ३. तृण एकत्रित किये हुए, ४. प्राण।

जब अच्छे ठाढ़े[1] हो गये तो,
शिकार खेलन कूँ जावें जी।
अजी जब वे दोनों भइया शिकार खेलें,
रामइ लछमन आवें जी ॥
अजी जब लछमन ने बाण चलाये,
तो लौंडों के सिर पै उतरे जी।
अजी जब लछमन ने बाण चलाये,
लौंडों के नाय लगे हैं जी ॥
अजी जब लौंडों ने बाण चलाये
लछमन की टांगों में कूँ लिकड़े हैं जी।
लड़तां लड़तां बहुत देर हो गयी,
तो लड़के किसके हो जी ॥
तो लड़कन धौरे[2] आये जी।
"कहां तेरी माता कहां पिता जी,
तू हमको भेद बतइयो जी।"
"पिता अपने का नाम ना जानें
सीता हमारी माँ है जी।"
ले चल रे लड़के वा ही देश को,
जहाँ तिहारी माँ है जी ॥
ए जी आगे आगे लछमन पीछे पीछे राम
तो सीता सीस सुखावै ही।
अरी ढक ले माता केश तू अपने,
पीछे राम जी ठाढ़े हैं जी ॥
अरी फट जा धरती, समा जाय सीता,
मैं मुखड़ा ना देखूं राम का जी।
अरे फट गयी धरती, समा गई सीता,
तो देखें खड़े दोनों भय्या जी ॥

इस गीत में राम के उत्तर चरित्र का वर्णन है। ऐतिहासिक दृष्टि से गीत महत्वपूर्ण न होने पर भी सुन्दर है।

---

१. बलिष्ठ, २. पास।

ननद ने कहा—"भाभी तुम लंका में रहकर आई हो, लंका का हाल सुनाओ।"

सीता जी ने झट से लंका का, जिसमें बावन किले और ५६ द्वार थे, चित्र अंकित कर दिया।[1]

बहिन ने जाकर भाई से भाभी के चरित्र की बुराई कर दी। रामचन्द्र जी ने यह सुनते ही सीता को वन में निर्वासित कर दिया।

वन में सीता का विलाप सुन कर एक तपस्वी आये। और उन्होंने पुत्री के रूप में सीता को रखा। यही रामायण के आदि कवि वाल्मीकि जी हैं।

पुत्र का जन्म हुआ। सीता जी को अपनी ससुराल की याद आई और वह रोने लगीं। वाल्मीकि जी ने उन्हें ढाढ़स बँधाया।

दो पुत्रों के विषय में की गई कल्पना बड़ी विचित्र है। कुश नाम से वह यह अनुमान लगाती हैं कि तपस्वी ने अवश्य ही इसे कुशा से बनाया होगा। इसीलिये यह विचित्र कहानी गढ़ ली गई है। कहानी अल्पज्ञान का द्योतक होने पर भी मनोरंजक है।

अन्त की पंक्तियों में राम के अश्वमेध की झलक है। राम-लक्ष्मण और लव-कुश में संग्राम होता है, किन्तु कोई भी पराजित नहीं होता। उनकी वीरता पर मुग्ध हो लक्ष्मण उनके माता-पिता का नाम पूछते हैं। बच्चों का उत्तर सुन कर क्या राम का हृदय वश में रह सका होगा? लव-कुश ने कहा—"हम अपने पिता का नाम नहीं जानते। हमारी माँ सीता है।"

राम अपना टूटा हृदय लेकर सीता के पास पहुँचे; परन्तु सीता का आत्म-गौरव सजग हो उठा। माँ वसुन्धरा से उन्होंने प्रार्थना की। धरती फट गयी। सीता उसमें समा गई। राम देखते ही रह गये। राम के साथ चौदह वर्ष तक निरन्तर वन-वन की खाक छानने वाली सीता अयोध्या न लौट सकी, यहाँ तक कि राम से बोलने को भी मन न किया। सीता ने कुछ न कह कर ही सब कुछ कह दिया। रावण और कुम्भकर्ण के कठिन तीरों के आघात को सहने वाले

---

१. भारतीय नारियाँ प्राचीन समय में चित्र-कला में बहुत निपुण होती थीं। उसकी अवशिष्ट स्मृति हम सतिये रखने, होई रखने और दीवाली, रक्षाबन्धन आदि बनाने के रूप में पाते हैं। यद्यपि सभ्य जनता इस प्रकार दशहरा गोबर्द्धन आदि बनाने को ढकोसलेबाजी कहती है, परन्तु यह हमारे अतीत गौरव के ध्वंसावशेष हैं। कभी हमारे प्रत्येक घर में चित्रशाला होती थी।

राम का हृदय क्या वज्राहत न हो गया होगा। राम और लक्ष्मण खड़े हुए देखते रह जाते हैं। सतवन्ती स्त्री चली गई, किन्तु पुरुष अभी तक वहीं खड़ा है।

सीता की व्यथा समस्त नारी जाति की व्यथा है। सीता के अपमान को इसीलिये नारी-हृदय ने बहुत अनुभव किया है।

इस गीत की टोन बड़ी करुण है। यह गीत हमने एक चर्म्मकार जाति की स्त्री से लिखा था। गाते-गाते उसकी आँखों में आँसू उमड़ आए थे।

(२)

अजी राम औ' लछमन दोनों भय्या वे बनखंड कूं जाएं, हरे।
यू विपत पड़ी सीता पै, मैं सासू के घर होती।
अनहोते[1] दरब लुटाती, मैं सासू के घर होती।
चार सखी मिल मंगल गाती, घर घर भाजी बाँटती, हरे।
अरी माल दरब मेरे बहुत बहुतेरा, चुन्नी की मेरे लगी चिनाई[2]।
बैठी दरब लुटायो जा, तू सासू के मत जइयो बेटी।
अरे आग लगे इस माल दरब में, जल जाइयो सब गहना रे बाबा।
ऐसे में भगवान मिलें कोई अपने पुरुष सँग जाती॥

महारानी सीता की विपत्ति ने स्त्रियों को बहुत ही प्रभावित किया है। स्त्री होने के नाते उन्हें नारी-हृदय का अधिक ज्ञान होना स्वाभाविक ही है। इसीलिये देवी सीता के चरित्र का उन्होंने अपने-अपने भावों के अनुसार नाना प्रकार से वर्णन किया है। हिन्दू-समाज में आये दिन ऐसी घटनाएं होती रहती हैं, जबकि सती साध्वी स्त्रियों को मिथ्या कलंक के भय से घर से निकाल दिया जाता है और हिंस्र पशुओं से भरे हुए संसार में उन्हें निराधार छोड़ दिया जाता है।

गीत कितना भावपूर्ण है। राम लक्ष्मण को सीता की याद आती है और वह वन में सीता को ढूंढने जाते हैं। इधर सीता जी वन में अपने पुत्रों के जन्म पर विलाप कर रही है। हाय! यदि आज मैं अपनी ससुराल में होती तो कितना दान करती, कितने उत्सव मनाती!

सीता को दुखी देख कर राजा जनक कहते हैं कि मेरे पास धन का अभाव नहीं है। रत्न इतने अधिक हैं कि उनका ही महल बनाया जा सकता है। तू जितना चाहे दान कर। किन्तु सीता का दुखी हृदय शान्ति नहीं पाता। "तू ससुराल कभी ना जाना" जनक के इस कथन से सीता की व्यथा और भी बढ़

---

१. अथाह धन २. अमूल्य रत्न।

जाती है। वह कहती है—"तुम्हारा धन मेरे किस काम का, यदि ईश्वर कृपा कर दे तो मैं अपने प्रियतम के साथ चली जाऊँगी।"

स्त्री विवाह के पश्चात् हिन्दू-विधि के अनुसार पिता की सम्पत्ति की अधिकारिणी नहीं रह जाती। आर्य-कन्या शैशव से ही इसे सीखती है। अतः पति से अपमानित होकर पिता के यहाँ रहना उसे आश्रित जीवन जान पड़ता है। हां, अब हिन्दू सक्सैशन बिल पास होने से लड़की भी पिता की सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी हो गई है।

दो प्रेमी-हृदय पृथक् होकर भी पृथक् नहीं हो पाते। क्या निर्वासिता सीता के हृदय में अपने प्रियतम के एक बार दर्शन करने की साध न रही होगी ?

(३)

तू कहना मेरा मान जानकी ! मुझको पती बना ले।
मेरे बीस भुजा दश शीश जानकी ! मुझको पती बना ले ॥
मैं गढ़ लंका का राजा, मेरे बीस भुजा दश शीश, जानकी०।
तेरे मल-मल धोऊँ पैर, जानकी मुझको पती बना ले।
तू कहना मेरा० ॥
मेरे पवन देत बुहारी[1] जानकी मुझको पती बना ले।
मेरे इन्द्र करैं छिड़काव, जानकी मुझ को पती बना ले।
मेरे मेघनाथ से पुत्र, जानकी० ॥
मेरे मन्दोदरी पीसे चून, जानकी० ॥
मेरे सोलह सौ हैं रानी, तेरे मल-मल धोवैं पैर।
तू कहना मेरा मान, जानकी मुझको० ॥

रावण ने सीता जी को नाना प्रकार से फुसलाने की चेष्टा की, पर सीता पर उसका तनिक भी वश न चला।

तुलसीदास ने भी इस प्रसंग का वर्णन ऐसा ही किया है :—

कह रावण सुनु सुमुखि सयानी।
मन्दोदरी आदि सब रानी ॥
तव अनुचरी करौं प्रण मोरा।
एक बार बिलोकु मम ओरा ॥

—रामायण

---

१. झाड़ू।

(४)

हे राम जी चले जी शिकार नै सीता को दे गए कार[1] ।
जो सीता जी आवै मोड़िया[2] मत ना घालो भीख ।।
ये राम जी पीछे मोड़िया[3], मौड़ी[4] उभा[5] बार[6] ।
भिक्षा घालो सीता जी आया हूँ तेरे बार ।
हे भिक्षा कैसे घालूँ जोगी श्रीराम की कार ।।
भुजा पसार के घालो सीता, तू सतवन्ती नार ।
खारी[7] रखलो पाटड़ा[8], पाटे[9] पै रख लो पैर ।
भुजा फैला के घालो सीता तू सतवन्ती नार ।।
अगाड़ी[10] रख लिया पाटड़ा, पाटे पै रख लिया पैर ।
भुजा पसार के घालन लागी, मौड़ी लयी उठाय ।।
ये हर आसी हो राम, ये हर आवेंगे भगवान ।

रावण योगी के वेश में आता है और छल करके सीता जी से रेखा के ऊपर पटड़ा बिछवा लेता है । ज्यों ही सीता भिक्षा देने लगती है, रावण उन्हें हर कर ले जाता है । तुलसीदासजी ने इस घटना का इस प्रकार उल्लेख किया है :—

करि अनेक बिधि छल चतुराई ।
माँगेउ भीख दशानन आई ।।
अतिथि जानि सिय कन्द मूल फल ।
देन लगी तेहि कीन्ह बहुरि छल ।।
कह रावन सुनु सुन्दरि बानी ।
बाँधी भीख न लेउँ सयानी ।।
विधि गति बाम काल कठिनाई ।
रेख लाँघि सिय बाहर आई ।।

राम का विलाप

(५)

सूनी कुटिया देख कर मोरे तन की रे होरी हो गई ।
सीता प्यारी कहाँ गई, मोरे मन में आग लगा गई ।।
सीता को संग ना लावते, वन में विपत ना पावते । सीता प्यारी०।।

१. कुण्डलाकार रक्षा की लाइन, २. चालाक साधू, ३. फिरे, ४. साधू, ५. आया, ६. द्वारा, ७. तुलियों की टोकरी ८. पटड़ा, ९. पटड़ा, १०. आगे ।

वन वन राम भटकते डोलैं, सीता बिन कैसे होयगी।
आंखों से नीर बहावैं, अजोध्या तो सूनी हो गई॥
सीता प्यारी०॥
वनों के बीच गिद्धराव ने भेद बताया।
समाचार तो पूछैं राम, सीता प्यारी कहाँ गई॥
"रावण लियो उठाय, आकाश में तड़पत जावैं।
बिलखती रोवती और राम राम रटती वह गई।"
सीता प्यारी०॥

शोकाधिक्य से शरीर की होली होना और शरीर में आग-सी लग जाना यह दोनों उपमाएं सुन्दर हैं। विरह-वर्णन स्वाभाविक है।

कवि के भावमय शब्दों में :—

हे खग मृग, हे मधुकर श्रेनी।
तुम देखी सीता मृग-नैनी॥
कुन्द कली दाड़िम दामिनी।
सरद कमल, ससि, अहि भामिनी॥
वरुन पास मनोज धनु हंसा।
गज, केहरि निज सुनत प्रसंसा॥
सुनु जानकी तोहि बिनु आजू।
हरषे सकल पाय जनु राजू॥
किमि सहि जाति अनख तोहि पाही।
प्रिया वेगि प्रकटसि कस नाहीं॥

—रामायण

(६)

पूछैं सुहेली[1] सीता किस संग आयी ?
कौन से देश से आयी सखी री।
कौन देश में जाओगी।
कौन सखी भर्तार तुम्हारे,
किस के संग चली आई॥ पूछैं०॥

---

१. चतुर नारियां।

अयोध्या से मैं आयी सखी री,
अगले देश मैं जाऊँगी ।
साँवली सूरत नाथ हमारे
उनके संग वन आयी ॥ पूछें० ॥
गोर वर्ण लघु देवर मेरे,
सिर पर जटा सुहायी । पूछें० ॥

रामायण में वर्णित सीता का उत्तर भी देखिये :—

बहुरि बदन विधु अंचल ढाँकी ।
प्रिय तन चितै भौंह कर बाँकी ॥
खंजन मंजु तिरीछे नयननि ।
निज पिय कहेउ तिनहि सिय सैननि ॥

राम का सीता को समझाना

(७)

सीता मानो हमारी बात वन मत जाइयो ।
उस वन की तुझे साख[1] सुनाऊँ, कहीं नहीं बिसराम ।
अयोध्यापुरी में तुम्हीं विराजो, जहाँ तुम्हारी सास ।
शैल, शूल, वन गह्वर आयें, नदियाँ गहरे नीर ।
अयोध्यापुरी में तुम्हीं विराजो, जहाँ हमारे बीर ।
राक्षस, भालू, शेर धड़कें[2] धूप बनावे अधीर ।
अयोध्यापुरी में तुम्हीं विराजो, जहाँ श्वसुर रणधीर ॥
कन्द, मूल का भोजन करना, रहना कुटिया बीच ।
अयोध्यापुरी में प्यारी विराजो, जावें ये दिन बीत ॥

रामायण में राम ने सीता को इस प्रकार समझाया है :—

एहि तें अधिक धर्म्म नहिं दूजा ।
सादर सास ससुर पद पूजा ॥
हँसगवनि तुम नहिं बन जोगू ।
सुनि अपजस मोहि देहिय लोगू ॥
भूमि शयन बल्कल वसन, असन कन्द फल मूल ।
तेकि सदा सब दिन मिलहिं, समय समय अनुकूल ॥

---

१. बड़ाई, २. गरजते हैं ।

सीता का उत्तर

(८)

मुझको न दिल से बिसार न बिसार मोरे स्वामी ।
मुझको न० ॥
बिस्तर नहीं माँगूं, कुशा पर लेटूं
चाहे बीतें वर्ष हज़ार, हज़ार मोरे स्वामी
मुझको न० ॥
कपड़े नहीं माँगूं, वल्कल ही पहिनूं
चाहे बीतें० ॥
खाना नहीं माँगूं, फलों पर सारूं[1]
चाहे बीतें० ॥
महल नहीं माँगूं कुटी में रहना
सेवा करके जन्म सुधारूं
चाहे बीतें० ॥
स्वामी मेरे मैं बन को चलूंगी
तुम बिन जीना धिक्कार
चाहे बीतें० ॥

तुलसी की सीता के समान हमारी ग्रामीण बहिनों की सीता भी सती साध्वी, तेजस्विनी नारी है । जिसके प्रति वास्तविक प्रेम होता है, अहर्निश उसके समीप रहने से शूल भी फूल बन जाते हैं ।

श्री गोस्वामी तुलसीदास के शब्दों में—

मोहि मग चलत न होइय हारी ।
छिनु छिनु चरन-सरोज निहारी ॥
जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते ।
पिय बिनु तियहि तरनि तें ताते ॥
रोग सोक सम भूषन भारू ।
जम जातना सरिस संसारू ॥
जिय बिनु देह नदी बिनु बारी ।
तैसेहि नाथ पुरुष बिनु नारी ॥

---

१. निर्वाह करना ।

(९)

मत लावै बदन के हाथ दुष्ट क्यों गई अकल तेरी मारी।
मैं राजा जनक की जाई, दशरथ घर ब्याही आई ॥
दुष्ट क्यों० ॥
ये राम लखन चारों भाई, आ अवध सें करें सहाई[1]।
तेरी लंका देंगे फूँक, दुष्ट क्यों गई अकल तेरी मारी ॥

इस लोक-गीत में सीता जी का रावण को फटकार बताना भी अद्भुत सौन्दर्य लिये हुए है। 'राजा जनक की पुत्री और दशरथ की पुत्रवधू' का अपमान करना सरल नहीं है। तभी तो सीता जी कहती हैं—"राम लक्ष्मण ये चार भाई हैं; अयोध्या से आकर वे लोग सहायता करेंगे। तेरी सोने की लंका खाक में मिल जायेगी। ऐ दुष्ट ! तेरी बुद्धि क्यों भ्रष्ट हो गयी है ?"

तुलसीदास जी ने सीता जी से निम्नलिखित पंक्तियां कहलायी हैं :—

चन्द्रहास हरु मम परितापम्।
रघुपति विरह अनल सन्तापम् ॥
सुनु शठ ! कहुँ खद्योत प्रकाशा।
कबहुँ कि नलिनी करहि विकासा ॥

(१०)

कहीं तो बताओ भय्या नीर, सिया प्यासी है।
कहीं से लाओ जाय नीर, सिया प्यासी है ॥
चलत चलत सिया थकित भयी है
नैनों से बहता नीर, सिया प्यासी है। कहीं० ॥
जाओ भैया लक्ष्मण झारी भर लाओ।
सिया को पिलाओ झट नीर, सिया प्यासी है। कही० ॥
ना कहीं कूआ ना कहीं बावड़ी
कहाँ से लाऊँ भय्या नीर, सिया प्यासी है। कहीं० ॥
इतनी सुनत सिया बेसुध भयी है
लक्ष्मण ढूंढे नीर, सिया प्यासी है। कहीं० ॥

तृषा से आतुर सीता की करुण-मूर्ति गीत को पढ़ते-पढ़ते नेत्रों के सम्मुख आ जाती है।

---

१. सहायता।

सीता चलते-चलते थक गयी हैं। एक कवि के द्वारा भी इस घटना का वर्णन देखिये :—

जल को गये लखन हैं लरिका
परखौं पिय ! छाँह घरीक ह्वै ठाढ़े।
पौंछि पसेउ बयारि करौं
अरु पाँव पखारिहौं भू भुरि डाढ़े ॥

सीता का वन जाने को आग्रह करना

(११)

अकेली को छोड़ चले जंगल के बन खंड में
इन महलों में नहीं रहती, कुटी अच्छी बहुत है, जंगल के बनखंड में।
ये सखियाँ और सम्बन्धी, तज दूंगी चलूं जंगल के० ॥
ये भोजन मैं नहीं खाती, कन्द मूल बहुत हैं जंगल के० ॥
यह चौपड़ मैं नहीं खेलूं, चिड़ियाँ बहुत हैं जंगल के० ॥
यह सेजें काँटों की लगतीं, घास पै सोऊँगी जंगल के० ॥
यह कपड़े हैं नहीं अच्छे, बल्कल बसन बहुत जंगल० ॥
यह नहाना मैं नहीं नहाती, गंगा जल बहुत है जंगल० ॥
यह शरबत मैं नहीं पीती, दूध बहुत है जंगल० ॥
अकेली छोड़ के हमको, चले क्यों जंगल० ॥
चलो ले साथ प्रिय ! हमको नहीं तो प्राण दे देंगे।
अवध सूनी लगती है हमको, चले छोड़ जंगल के० ॥

महाकवि तुलसीदास ने निम्नलिखित चौपाइयों में इसी प्रकार के कुछ भाव व्यक्त किये हैं :—

वन देवी, वन देव उदारा,
करिहैं सासु ससुर सम सारा ॥
कुस किसलय साथरी सुहाई।
प्रभु सँग मंजु मनोज तुराई ॥
कन्द मूल फल अमिय अहारू।
अवध सौध सत सरिस पहारू ॥

(१२)

रस्ते चलो रघुनाथ जी काँटे चुगूँगी मैं ।
आज्ञा मेरे माँ बाप की, सेवा करूँगी मैं ।।
ठण्डा सा पानी गंगा किनारा,
नहाओ वहाँ रघुनाथ जी, रस्ता तकूँगी मैं ।।
कन्द मूल का ले आऊँ दोना,
खाना वहाँ रघुनाथ जी, पंखा झलूँगी मैं ।।
तुम बिन रघुनाथ जी कैसे जिऊँगी मैं ।
कुमुद हूँ बिन चन्द्रमा कैसे खिलूँगी मैं ।

इस गीत में भी सीता जी वन में चलने का हठ कर रही हैं । महाकवि तुलसीदास सीता जी के मुख से कहलाते हैं :—

सबहि भाँति पिय सेवा करिहौं ।
मारग जनित सकल स्रम हरिहौं ।।
पाँव पखारि बैठि तरु छाँहीं ।
करिहौं वायु मुदित मन माँही ।।

(१३)

लक्ष्मण धीरे चलो मैं हारी ।
हाथ छतरिया सिर पै गगरिया,
पैरों में पायल[1] भारी । लक्ष्मण० ।।
उज्ज्वल रूप दिया बगले को,
कोयल कर दी कारी । लक्ष्मण० ।।
नार चतुर तो बाँझ कर डारी
फूहड़ जन जन हारी । लक्ष्मण० ।।
नीर कुँए का अमृत कर दियो,
समन्दर कर दियो खारी । लक्ष्मण० ।।
बड़े बड़े नैन दिये मिरगा को,
चर लई खेती सारी । लक्ष्मण० ।।
लम्बी लम्बी जटा बँधा के,
राजा हो गए भिखारी । लक्ष्मण० ।।

---

१. पैरों का एक प्रकार का आभूषण ।

रामचरितमानस में सीता की सुकुमारता का वर्णन थोड़े शब्दों में देखिये कितना सुन्दर है !

पलँग पीठि तजि गोद हिंडोरा।
सिय न दीन्ह पग अवनि कठोरा ॥

आज वही मिथिलेश कुमारी और रघु-वंश की कुलवधू सीता वन में चलते-चलते थक कर लक्ष्मण जी से धीरे-धीरे चलने की याचना कर रही हैं। ईश्वर की गति ही निराली है, जिसने बगुले को सुन्दरता दी और कोकिला को कुरूप बना दिया। चतुर स्त्री को बन्ध्या बना दिया और मूर्ख स्त्री का घर शिशुओं से भर दिया। सागर को खारा बनाया और कुँए को अमृत सदृश जल से पूर्ण कर दिया। हरिणों को सुन्दर नेत्र दिये, जिन्होंने सारी कृषि को नष्ट कर दिया। उसी ईश्वर ने राजा को लम्बी-लम्बी जटा बनाकर भिखारी बनने पर विवश कर दिया।

गीत भावपूर्ण और सरस है। उपमा उपयुक्त और सुन्दर है। सचमुच—

"भले भले विधि ना रचे पै सबहि में कौन।
कामधेनु पशु कठिन मणि, दधि खारो शशि छीन ॥"

ग्रहण और स्नान का गीत

(१४)

सात जनी का झूमटा[1], सीता माटी नै चाली, हो राम।
सीता माटी लाय कै, हरियल गोबर नै चाली, हो राम ॥
जल गंगा का लाय कै, केसर घोट कै घोली, हो राम।
केसर, चन्दन घोल कै, हरि के मन्दिर लीपे[2], हो राम ॥
हरि के मन्दिर लीप कै, दोय रावण मांडे[3], हो राम।
साँझ पड़ी दिन छिपने लागा, रामजी घर आये, हो राम ॥
पानी लाओ माता सब की, रामजी बहुत तिसाए[4], हो राम।
हाथ की पूनी हाथ रही, सीधी गंगा चाली, हो राम ॥
पानी पियो बेटा राम जी, जल गंगा का लायी, हो राम।
हाथ का लोटा हाथ रहा, रावण किन मांडे, हो राम ॥
हम ना जाने बेटा रामजी, बहू सीता ने मांडे, हो राम।
सीता सखियां कातती, सीता वेगि बुलाई, हो राम ॥

---

१. समूह, २. पुताई करना, ३. चित्र खींचना, ४. प्यासे।

थरथर थरथर काँपती, रामजी घर आई, हो राम।
हम तेंने बूझें, बतला दे सीता, रावण किन माँडे, हो राम॥
मारो चाहो छोड़ो सुनो रामजी, रावण हम माँडे, हो राम।
इतने वचन के कारणे सीता जी दुतकारी, हो राम॥
लक्ष्मण देवर साथ ले, तड़के वन को जइयो, हो राम।

बारहवीं सदी के एक बौद्ध जातक में भी सीता को वनवास देने का कारण रावण का चित्र बनाना लिखा है। यह कारण हिन्दू-धर्म-मर्यादा के अनुकूल भी है, क्योंकि हिन्दू-नारी के लिये पर-पुरुष का चिन्तन भी अपराध है। धोबी की कथा राजा राम के लिये उपयुक्त हो सकती है, पर पति राम के लिये नहीं। मर्यादा पुरुषोत्तम राम को सीता के स्त्री-धर्म की मर्यादा के उल्लंघन ही पर क्रोध आना संभव है।

सीता-हरण

(१५)

मैं वारी रामा ना मिटती रेख करम की।
जा जंगल में कुटिया बनाई और बसाई जानकी।
जा जोगी ने अलख जगाई भिक्षा तो डालो जानकी।
मैं भिक्षा कैसे डालूँ जोगी, कार लगी है राम की।
कार छोड़ सिया डालन आयी, अधर[1] उठायी जानकी॥
अरे भय्या लक्ष्मण जानकी कौन हरी ?
दिवला जला कुटिया में क्या कहीं छिपी खड़ी॥
क्या कोई खाली शेर, बघेरा, क्या असुरों ने भखी।
क्या ले गया लंका का रावण, सीता कहाँ गई ?

गीत सरल और भावपूर्ण है।

कौशल्या का विलाप

(१६)

पिउ का मरन पुत्र का बिछड़न, दुखड़ा किसे सुनाऊँ री ?
जो मेरे राम बाहुड़[2] घर आवें, घर घर बाँटूं बधाई री। दुखड़ा०॥
जे मेरे राम सीता संग आवें, नगरी के विप्र जिमाऊँ री। दुखड़ा०॥

१. बीच के बीच में, २. लौट कर।

बांझ हिया मोरा लरजै[1] किसके लाल खिलाऊँ री ?
लक्ष्मण राम कहाँ पाऊँ री। दुखड़ा० ।।

महारानी कौशल्या का दुख असीम है। प्राणाधार ने स्वर्ग को प्रयाण कर दिया, दुलारे लाल और पुत्र-वधू वन में चले गये। उनकी आँखें खोजा करतीं, हृदय ढूंढा करता, परन्तु अन्त में वह बेचारी तड़प-तड़प कर रह जातीं। "रह गई बांझ हिया मोरा लरजै" "लक्ष्मण राम कहाँ पाऊं री" में मातृ-हृदय की आकुल वेदना अन्तर्निहित है। 'राम, लक्ष्मण, सीता सकुशल घर आयें' यही एकमात्र उनके जीवन की साध अवशिष्ट रह गयी है।

(१७)

राजा दशरथ के होके सुखी राम जनकपुर आइयो।
होती है देर जनकपुर जाना होगा।
हस्ती घोड़े सजे राम के और जोगी दरबाना।
कोतल घोड़े सजे राम के, झण्डी और निसाना ।।
होती है देर० ।।
ले सोने का थाल, कपूर की बाती, सीता जी करें आरती।
देश देश के राजा जुड़ गए, ऋषि और व्यापारी।
अयोध्यापुरी का कोई ना आया, किसके डालूंगी माला ।।
जब रे राम ने कछनी काछी[2], सिया गई मुरझाय।
गोरी बहियाँ नरम सलोनी, धनुष उठेगा कि नांय ।।
चरण कमल का लिया आसरा[3], धनुष लिया उठाय।
सीता लयी परिणाय ।।

दशरथजी बरात सजाकर मिथिलापुरी को चले। इधर सीता जी राम को पति रूप में पाने के लिये आरती कर रही हैं। सीताजी चिन्ता कर रही हैं कि सब आये, परन्तु अयोध्यापुरी के राम न आये। इतने में राम धनुष तोड़ने को उठते हैं। सीता उनकी सुकुमारता देखकर व्यग्र हो उठती हैं। उनकी इस व्याकुलता का वर्णन महाकवि तुलसीदास ने इस प्रकार किया है—

तब रामहिं बिलोकि बैदेही।
सभय हृदय बिनवति जेहि तेही ।।

---

१. हिलोरें उठना या उमड़ना, २. लंगोट बाँध कर एकदम तैयार हो जाना, ३. भरोसा।

मन ही मन मनाय अकुलानी।
होहु प्रसन्न महेश भवानी ।।

श्री राम ने धनुष उठा लिया और सीता का विवाह हो गया।

लंका में हनुमान जी

(१८)

अरे बीरा ! मैं नहीं पिछानूं रे, तेरा दुर्बल बेस सरीर।
क्या तुझे देखा अयोध्यापुरी में क्या सरवर के तीर। अरे बीरा० ।।
क्या कोई देखा राजघाट पै, क्या है तू छलबलिया ।।
अरे क्या कोई मर गये क्या सिंहों ने खाए ?
ये मुंदरी रामचन्द्र की तुम कैसे ले आये ?
तेरी सुधि लेने माता आया, हरि ने मुझे पठाया ।।
सकुशल राम बसें जंगल में,
तेरी शपथ माँ नाम हनुमन्त हमारा। मैं नहीं० ।।

इसी अवसर पर महाकवि तुलसीदास की लिखी हुई कुछ पंक्तियाँ देखिये—

तब देखी मुद्रिका मनोहर।
राम नाम अंकित अति सुन्दर ।।
चकित चितै, मुद्रिका पहिचानी।
हर्ष विषाद हृदय अकुलानी ।।
जीति को सकै अजय रघुराई।
माया ते अस रची न जाई ।।
सीता मन विचार कर नाना।
मधुर वचन बोला हनुमाना ।।
रामदूत मैं मातु जानकी।
सत्य सपथ करुना-निधान की ।।

सुमित्रा का विलाप

(१९)

सुधि बिसराई न जात लछिमन।
कागज़ होती मैं बांच सुनाती, करम न बांचा जाय लछिमन।
लकड़ी होती मैं तोड़ के जलाती, प्रीति न तोड़ी जाय लछिमन।
नय्या होती मैं खेई पार करती, उमरि न खेई जाय लछिमन।

बगुला[1] बैठा ताल पै, चुन चुन मछली खाय।
सींजी मछली कांटा ने मारी, तड़प तड़प जिय जाय।
राम विपति न बाँटी जाय लछमन।

गीत करुण रस से सराबोर है। उपमाएं दर्शनीय हैं।

(२०)

ए माता हम कह देहु बताई, चले गये राम लछमन भैया।
जिनके पीछे सीता चली गई मधुवन लेत बलइया॥
झमिरि झिमिरि मन मेहुँ बरसिहै पवन चलै पुरबइया।
कउन बिरछ तरे भीजत होइहैं राम लछिमन भइया॥
ए माता हम कह देहु बताई।
राम बिना मोरी सूनी रसोइया बिनु सीता महल अटरिया।
लछिमन बिन मोरी सूनी नगरिया कब लौटें दोनों भइया॥
बन-बन भूखे डोलत होइहैं राम लखन दोनों भइया।
ए माता हम कह देहु बताई।
सीता हर के रावण ले गये कोउ नहीं मदद करइया।
सीता की विपदा कहि नहिं आवै कोउ ना धीर बँधइया॥
सीता ढूंढन राम चले हैं, पीछे लछमन भइया।
ए माता हम कह देहु बताई॥

उपरोक्त गीत को गाते-गाते गायिका रो पड़ी थी। गीत करुणरस से परिपूर्ण है। भरत जी प्रेम-विह्वल होकर राम-सीता और लक्ष्मण को स्मरण कर रहे हैं। गीत की स्वाभाविकता दर्शनीय है।

---

१. भाग्य रूपी बगुला।

: ३ :

लोक-गीत और ईश्वर-भक्ति

यह विश्व क्षरण-भंगुर है। जीवन में मृत्यु का ताण्डव छुपा है। निर्विच्छिन्न पवित्र सुख मनुष्य के भाग्य में नहीं। शान्ति की खोज में व्याकुल होकर मनुष्य सदैव ही इधर से उधर भटकता फिरा है। बुद्ध भगवान् जैसों को सब राज-पाट त्यागने के लिये विवश होना पड़ा। अन्त में उसी अनन्त ज्योति की शरण में मानव ने शान्ति और शक्ति प्राप्त की है।

आज के वैज्ञानिक युग में विज्ञान ने भी यह सिद्ध कर दिया है कि समस्त विश्व एक ही है अर्थात् उसी का रूप है। सृष्टि के अनुपम रचना-सौन्दर्य को देख-कर सूर्य, चन्द्र, झरने, कल-कल करती सरिता, पक्षियों का गायन, पर्वत, मलय-समीर, षट्-ऋतु, रात-दिन का चक्र, शिशु की दिव्य मुस्कान, दुखी की आह, हमें सहसा उसकी याद दिला देते हैं।

कुछ व्यक्ति ईश्वर को एक कपोल-कल्पित वस्तु समझते हैं, परन्तु वह भी एक दिव्य शक्ति में विश्वास करते हैं, जिसके द्वारा यह विश्व-क्रम चल रहा है। उस शक्ति को चाहे प्रकृति कहो चाहे परमाणु कहो, और चाहे ब्रह्म कहो, नाम भिन्न हो सकते हैं, परन्तु उसके अस्तित्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। कोई खुदा, कोई ब्रह्म, कोई शिव, कोई विष्णु, कोई ईसा, कोई कृष्ण कहकर उस एक ही शक्ति की अर्चना करते हैं। भिन्न-भिन्न धर्म उस तक पहुँचने के ही भिन्न मार्ग हैं।

ईश्वर सर्वव्यापक है; फिर भी हम उसके दर्शन क्यों नहीं कर पाते? प्राय: बहुत से जिज्ञासु यह प्रश्न कर बैठते हैं। एक घड़ा जो जल में डूबा हुआ है, जिसके अन्दर और बाहर सर्वत्र जल है, जल के पृथकत्व का अनुभव नहीं कर पाता। वह इसी प्रकार संसार में व्याप्त है जिस प्रकार पुष्प में गन्ध, चन्द्र में चन्द्रिका, शरीर में आत्मा, दूध में नवनीत।

मोह और माया में ग्रसित प्राणी विश्वेश के दर्शन नहीं कर पाता। किन्तु जिस दिन माया का आवरण उठ जाता है उस दिन सकल विश्व ब्रह्ममय हो उठता है। तभी तो कबीर ने कहा था—

लाली मेरे लाल की,
जित देखूँ तित लाल।
लाली देखन मैं गयी,
मैं भी हो गई लाल॥

एक बार इस नवीन विश्व के दर्शन होते ही भक्ति की वल्लरी दिन दूनी रात चौगुनी लहलहाने लगती है और सुख-दुख से परे मानव सच्चे अर्थ में मानव बन जाता है। उसके लिये अपने-पराये का भेद नहीं रह जाता। वह सब की सेवा करने को तत्पर हो जाता है; क्योंकि सब में उसी का प्यारा, उसी का सर्वस्व विद्यमान है।

एक बार भक्ति के राज्य में प्रवेश करते ही मनुष्य पूर्ण-काम हो जाता है—

पाकर उसे फिर और कुछ पाना न रहता शेष है।
पाता न जब तक जीव उसको, भटकता सविशेष है॥
जो जन तुम्हारे पद कमल के, असल मधु को जानते।
वह मुक्ति की भी कर अनिच्छा, तुच्छ उसको मानते॥

—मैथिलीशरण गुप्त

भक्त में अनिवर्चनीय शक्ति आ जाती है, तभी तो—

मीरा प्रेम में पागल हो उठी। ध्रुव ने अटल पद पाया, प्रह्लाद ने हँसते-हँसते सब आपत्तियाँ झेल लीं, शिव ने हलाहल पान कर लिया, महात्मा गाँधी ने अपना जीवन बलिदान कर दिया।

भक्ति किसी के सिखाने से अथवा कहने से नहीं आती :—

"सती को कौन सिखावत है,
संग स्वामी के तन जराना जी।
प्रेमी को कौन बतावत है,
त्याग माहि भोग का पाना जी॥"

यह तो हृदय में ही उत्पन्न होती और फूलती-फलती है। अथवा यों कहिये :—

तुम्हरी कृपा तुमहि रघुनन्दन।
जानत कछुक भक्त उर चन्दन॥
सोई जानै जेहि देहू जनाई।
जानत तुमहि तुमहि होइ जाई॥

—रामायण

एक दिन किसी ने देवी राबिया से कहा—"बाहर जाओ और वसन्त आवरणमयी वसुन्धरा की शोभा देखो।"

देवी राबिया कुटी में बैठी थीं, उन्होंने कहा—"भीतर आओ और स्रष्टा की शोभा देखो।"

भक्ति हमारा जीवन है। भक्ति के बिना जीवन गहन निराशामय हो उठता है। भक्ति दुखी हृदय की सान्त्वना तथा अशान्त मन की चिर विश्रान्ति है।

किसी न किसी समय भक्ति का संचार प्रत्येक मानव के हृदय में होता है; यहाँ तक कि बड़े से बड़ा पापी भी एक बार पाप करते हुए काँप उठता है, क्योंकि उसका हृदय भी उसी परब्रह्म का मन्दिर है और उसी की भक्ति का प्रकाश पाप करते हुए उसके हृदय को कम्पित कर देता है। बार-बार उस आत्मा की पुकार की अवहेलना करके ही मनुष्य पथभ्रष्ट हो पाता है।

जो अपनी आत्मा की पुकार की अथवा ब्रह्म के आदेश की अवहेलना नहीं करता, वह स्वयं ब्रह्ममय हो जाता है।

हमारी बहिनों ने भी आत्म-विस्मृत होकर एवं भक्ति-विभोर होकर बहुत से पद गाये हैं। कुछेक निम्नलिखित हैं :—

(१)

हरि के चरन चित्त क्यूं ना धरो रे।
यो संसार रैन बरगा[1] सुपना, आँख खुले जब बिछड़ गयो रे।
यो संसार न्हान बरगा मेला, साँझ पड़े जब बिछड़ गयो रे॥
यो संसार ओस बरगा मोती, धूप पड़े जब ढुलक गयो रे।
यो संसार बाढ़ बरगा काँटा, निरख परख पग क्यूँ ना धर्यो रे॥

ऐ प्राणी ! ईश्वर के चरणों में ध्यान क्यों नहीं लगाते ! यह जगत् रात्रि में दृष्टिगत स्वप्न के सदृश है, प्रातः होते ही स्वप्न केवल स्वप्न-मात्र रह जाता है। यह विश्व किसी पर्व पर होने वाले मेले के सदृश है। सन्ध्या होते ही मेला

---

१. समान।

Let only that little be left of my will whereby I may feel Thee on every side, and come to see Thee in everything, and offer to Thee my love every moment.

Let only that little be left of me, whereby I may never hide Thee.

Let only that little of my fetters be left whereby I am bound with Thy will and Thy purpose is carried out in my life; and that is the fetter of my love.

अर्थात्—"प्रभो ! मैं तुम्हें अपना सर्वस्व मान सकूं, बस मेरे अन्दर इतनी ही समझ शेष रहने दो !

प्रभो ! मेरे अंदर केवल इतनी ही चेतना शेष रहे कि मैं अपने चारों ओर तुम्हारी ही उपस्थिति का अनुभव कर सकूं, प्रत्येक वस्तु में तुम्हें ही देख सकूं और हर घड़ी अपना प्रेम तुम्हारे ही चरणों में समर्पित कर सकूं !

प्रभो ! मेरा इतना ही अस्तित्व रह जाए कि तुम्हें उसमें छिपाने की जगह शेष न रहे। मैं और तुम मिलकर एकाकार हो जाएं।

प्रभो ! मेरे केवल इतने ही बंधन शेष रहने दो जिनसे मैं तुम्हारे साथ बंधा रहूँ और तुम्हारी इच्छा पूर्ण कर सकूं। मैं प्रेम की डोर से सदा तुम्हारे साथ बंधा रहूँ।

(३)

इतना सा मृग फिरे जंगल में।
(हां) कोई लगा कलेजे बाण फेर कैसा चरना ॥
छोटा सा तीतर रह जंगल में, चुग चुग दीमक पेट भरे।
पड़ा अधर[1] से बाज, फेर कैसा चुगना ॥
करता है तू मेरी मेरी, माया संग चलै ना तेरी।
मत कर मान गुमान, फेर कैसा जीना ॥

हे प्राणी ! संसार में तेरा कुछ भी नहीं। तू क्यों इसे अपना समझे बैठा है ? स्वच्छन्द होकर हरिण विपिन में चरता है। किन्तु एक बाण ही उसकी समाप्ति कर देता है। तीतर दीमक खाकर मन में प्रसन्न होता है, किन्तु ऊपर से बाज़ सहसा झपट कर उसकी जीवन-लीला समाप्त कर देता है। ऐसा ही

१. ऊपर से।

क्षण-भंगुर मनुष्य का जीवन है। उस पर अभिमान करना व्यर्थ है।

कबीर साहब कहते हैं :—

माली आवत देखि के, कलियाँ करीं पुकार।
फूली फूली चुनि लयीं, काल हमारी बार॥

(४)

सुध भूला जग में आइ कै।
कली कली तेरी काया बनायी, भेजा सुरत बनाय कै।
तू तो कहे था मैं तो राम भजूंगा, सुध भूला जग में आय कै॥
तीन वचन तूने हरि से भरे थे, नाम जपूंगा तेरा जाय कै।
गंगा जमुना के दोनों तीरथ, काया शुद्ध करो नहाय कै॥

माया के इन्द्रजाल में फँस कर मनुष्य ज्ञान, धर्म्म, कर्तव्य सभी कुछ भूल जाता है। विश्वामित्र और नारद से मुनीश्वरों का व्रत भी भंग हो गया। इसीलिये गीत की रचयित्री कहती है कि तीर्थ-स्नान और ध्यान के द्वारा जीवन सफल बना लो।

(५)

मिसर[1] बैठा तेरे बार[2], पोथी पत्रा खोले, मेरे राम।
देख दादा मेरे हाथ के सै[3] रे कर्म्म में लिखा, मेरे राम॥
अन्न धन भरे बुखार[4], किशन[5] फल लिक्खा, मेरे राम।
जैसी करनी, पार उतरनी, ऐसा फल लिक्खा, मेरे राम॥
देख बिराना[6] खेत हाथ ना घालिये[7], मेरे राम।
जे घर अपने होय काट बिटोलिये मेरे राम॥
देख बिराना पूत, साँस ना घालिये[8] मेरे राम।
जो घर अपने होय, गोद खिला लिये मेरे राम॥
देख पड़ौसन का पीय, साँस ना भरिये मेरे राम।
जो घर अपने होय, हँस बतला[9] लिये मेरे राम॥

गीत शिक्षाप्रद है। पण्डित से भाग्य का फल गीत की नायिका ने पूछा। पण्डित ने कहा—"अन्न और धन से घर पूर्ण रहेगा, परन्तु कर्मानुसार फल

---

१. पण्डित, २. घर, ३. क्या है, ४. अन्न और रुपये से भरी हुई कोठरी, ५. अच्छा, ६. पराया, ७. डालना, ८. उसांस भरना, ९. बातचीत करना।

मिलता है। पराये खेत में अधिक अन्न उपजता देखकर तथा दूसरों के पति, पुत्र को देखकर ईर्ष्या न करनी चाहिये; जो मिल जाये उसी में सन्तोष करो।" गृहस्थ के लिये कैसा सुन्दर उपदेश है।

(६)

हर बिन कोई ना विपत का साथी।
पहली विपत राजा दशरथ पै आई।
राम हुए बनवासी। हर बिन० ॥
दूजी विपत राजा सरवण पै बीती।
बाण लगा उनकी छाती। हर बिन० ॥
तीजी विपत रानी सीता पै आयी।
हर ले गया रावण पापी। हर बिन० ॥
चौथी विपद राजा रावण पै बीती।
सोने की लंका विनासी। हर बिन० ॥
फिर से विपद रानी सीता पै आयी।
वन में खायी बन पाती। हर बिन० ॥
बन ही में उन लव कुश जाये।
धरती में अन्त समाती। हर बिन० ॥

विपत्ति में ईश्वर के बिना कोई किसी का नहीं। अपने ही पराये हो जाते हैं। सचमुच इंगलिश की यह कहावत बिल्कुल सत्य है :—

"He only is helped, who has God for his helper."

"संसार में सहायता उसी की हो पाती है जिसका स्वयं ईश्वर सहायक होता है।"

(७)

चलो रे मन यहीं ना रहना।
तीन खूंट[1] की सीढ़ी बनायी ऊपर चूंदड़[2] ताना।
चलो रे मन यह है देश बिराना।
भाई बन्ध तेरा कुटुम कबीला छोड़ अकेले जाना।
अन्न धन के तेरे कोठे भरे हैं, तुझे अकेले जाना।

संसार की क्षणभंगुरता का सुन्दर चित्रण है।

---

१. किनारे अर्थात् सिर, धड़, पैर, २. चमड़ा।

(८)

स्याही गई सफ़ेदी आई, सुमिरा ना तूने हरि हरि ।
अन्त बुढ़ापा आ गया जिवड़े[1] नै आन बनी ।।
भजन करो एक घड़ी ।।
बन्दे ! धन्धा करो दिन रैन
भजन करो एक घड़ी ।।
भाई बन्ध तेरा कुटुम कबीला सब माया का है धनी । भजन० ।।

काले बाल सफेद हो गये । फिर भी तूने भगवान् का भजन न किया । अन्त में वृद्धावस्था आ गयी । अब अन्त समय निकट है । कम-से-कम कुछ समय के लिये तो ईश्वराराधन कर लो । सांसारिक कार्यों में हर समय लगे रहते हो । कुछ समय भगवद्-भक्ति में भी लगाओ । भाई, बन्धु, परिवार सब चलती के साथी हैं । कवि के भावनामय शब्दों में भी देखिये—

नाहक जन्म गंवायो, हो रामा, कछु ना कमायो ।
बालापन माया वश पामर, खेल कूद मन भायो, हो रामा ।
तरुण भयो तन तमकि बढ़ी अति, तरुनी संग भुलायो, हो रामा ।।
वृद्ध भयो कोउ देत न आदर, ममता ज्ञान भुलायो, हो रामा ।
तुलसीदास कहत कर जोरे, राम चरन चित्त लाओ, हो रामा ।।

× × ×

जागो भाई ! जागो, अब रैन रही थोरी ।
काल चोर नहीं करन चहत है, जीवन धन की चोरी ।
औसर चूके पुनि पछितइहौ, हाथ मींजि सिर फोरी ।
काम करो नहिं काम न अइहैं, बातें कोरी कोरी ।।

× × ×

काया का पिंजरा डोलै,
इक साँस का पंछी बोलै ।।
माँ बाप पती पत्नी का,
झगड़ा है जीते जी का ।
दुनिया में न कोई किसी का । काया० ।।

---

१. प्राण ।

(६)

हरिणों को क्या जंगल थोड़ा, गलियों में आन बड़े।
करम गति टाली नांहि टलै।
चतुर नारि कांटें भी बोवै, फूहड़ बोवै फूल।
अगत[1] में क्यों बोवै है शूल।
चतुर नारि पुत्र बिन झीखै, फूहड़ बोझ मरै।
करम गति टाली नांहि टलै।
चोरी भी करता जारी भी करता।
पीछे ना पावै धूल।
अगत में क्यों बोवै है शूल।
चन्दन बिड़ला[2] कोउ ना सींचै, सींचै आक बबूल।
करम गति टाली नांहि टलै।

भाग्य का चक्र प्रबल है। हिरणों के लिये जंगल में स्थानाभाव न था, परन्तु वह गली में आये और मारे गये। चतुर स्त्री ने तो काँटे बोये और फूहड़ स्त्री ने फूल। परिणाम स्वरूप फूहड़ स्त्री के तो पुत्र उत्पन्न हुआ और चतुर स्त्री की गोद सूनी रही। प्रारब्ध के वशीभूत होकर मनुष्य कुछ का कुछ कर बैठता है।

गीत की रचयित्री कहती है—ऐ प्राणी! भविष्य के लिये क्यों काँटे बोता है? जो चोरी और व्यभिचार करता है, उसे पीछे कुछ भी नहीं मिलता। भविष्य के लिये क्यों काँटे बोता है? चन्दन के वृक्ष को छोड़कर क्यों आक और बबूल के पेड़ों को सींचता है? भविष्य के लिये काँटे क्यों बोता है?

(१०)

बन्दे! भज ले हरि का नाम उमर तेरी थोड़ी है।
सुबरण[3] बरगी काया काठ की घोड़ी सी। तैं भज ले० ॥
एक अन्धा एक कोढ़ी राम ने फोड़ी है।
तू कर दे आशनाई की टाल मेरी तेरी जोड़ी है।
तू ने ले ली सुमरनी हाथ काठ की घोड़ी सी।
तू ने मन से भजा न नाम उमर तेरी थोड़ी है।

ऐ प्राणी! यह जीवन छोटा-सा है। इसलिये ईश्वर का भजन कर। यह

---

१. भविष्य, २. वृक्ष, ३. सोना।

सोने के सदृश शरीर काठ की घोड़ी के समान है, जो झट से टूट जाती है। राम ने तेरा भाग्य फोड़ दिया, जो प्रेम के फन्दे में तू फंस गया। तुम दोनों ही भक्त नहीं हो। तुम पर यह उक्ति चरितार्थ होती है "एक अन्धा और एक कोढ़ी।" तू यह झंझट छोड़ दे तो मेरी और तेरी जोड़ी ठीक रहेगी। तूने हाथ में सुन्दर माला तो ले ली; किन्तु तूने मन से भगवान् का नाम नहीं जपा। तेरा जीवन छोटा-सा ही है, इसलिये भजन कर।

अन्तिम पंक्तियों के भाव कबीर के दोहे के भाव से मिलते हैं—

माला फेरत जुग भया, मिटा न मन का फेर।
कर का मनका डारि कै, मन का मनका फेर॥

बिहारी ने भी ऐसा ही भाव व्यक्त किया है—

जप, माला, छापा तिलक, सरै न एको काम।
मन कांचे नाचे वृथा, सांचे राचे राम॥

(११)

ब्राह्मण की लड़की अखण्ड-क्वारी, हो राम।
कोई सींचै धर्म्म की क्यारी, हो राम॥
सींच सांच कै घर को आयी, हो राम।
कोई मिल गये कृष्ण मुरारी, हो राम॥
मैं तुझे पूछूं ब्राह्मण की बेटी, हो राम।
कौन तेरे जीवड़े का साथी, हो राम॥
एक गज धरती, सवा गज कपड़ा, हो राम।
वही मेरे जीवड़े का साथी, हो राम॥
इतना सा तेल दिये बिच बाती, हो राम।
जगमग जगमग हो रही, हो राम॥
जल गया तेल खतम हुई बाती, हो राम।
ले चलो, ले चलो हो रही, हो राम॥
देहली[1] तक मेरी माय चलेगी, हो राम।
फलसे[2] तक मेरा बाबल, हो राम॥
मरघट[3] तक मेरे भाई चलेंगे, हो राम।
आगे अकेली रह गई, हो राम॥

१. द्वार, २. श्मशान भूमि के समीप, ३. श्मशान भूमि।

इस काया पर जोहड़ खुदेगा, हो राम।
जल पी गायें जावें, हो राम ॥
इस काया पर सड़क बनेगी, हो राम।
घोड़े दौड़ावे सारी दुनिया, हो राम ॥

सचमुच:—

ख़ाक का पुतला बना है, ख़ाक की तस्वीर है।
ख़ाक में मिल जायेगा बस ख़ाक दामनगीर है ॥

(१२)

जे री भजन सवेरे को गावें, री रामा।
दही दूध के भोजन पावें री रामा ॥
तुमें री सहेली राम जी बुलावें। हरे
जे री दुपहरी को भजन गावें री रामा।
दाल फुलकिया के भोजन पावें री रामा। हरे
जे री निसदिन भजन गावें री रामा।
सच बोलें, ब्राह्मण जिमावें री रामा। हरे
सब सुख सान्ती वह पावें री रामा।
जे साधू संगत मन को लगावें री रामा। हरे
गीता का पाठ सुनें सुनावें री रामा ॥ हरे
भगवान के दरसन वह पावें री रामा ॥ हरे

(१३)

सन्झा भयी[1] सिमरण करो रे भूले मन।
सन्झा सिमरण करो रे ॥
सांझ भयी जब गउएं आयीं, गर्द गई अस्मान ॥
भूले मन०।
काहे का दिवला, काहे की बाती काहे का घृत पराया[2] रे
हरि का भजन नित भजो रे
भूले मन० ॥
दीपक[3] बाल[4] मन्दिर[5] में रखो मन्दिर भया उजाला रे
राधे कृष्णा सन्झा सिमरण करो रे
भूले मन० ॥

---

१. वृद्धावस्था आ गयी, २. डाला, ३. ज्ञान रूपी दीया, ४. जलाकर, ५. हृदय।

जो तू चाहे मुक्ति आपनी तीन वक्त हरि भज रे
भूले मन० ॥
चोरी, जारी, परायी निन्दा तीन बात से बच रे
भूले मन० ॥
धरम, करम, सब की सेवा तीन बात तू कर रे।
भूले मन० ॥
केवल एक आस रघुवर की, हरि के चरण चित्त धर रे।
भूले मन० ॥

अन्तिम पंक्तियाँ बड़ी ही शिक्षाप्रद हैं। चोरी, व्यभिचार और परायी निन्दा से बढ़कर कोई पाप नहीं। यदि मनुष्य इनका परित्याग कर कर्मयोगी और सेवाव्रती बन जाये, तो वह देवता के सदृश हो जायगा।

(१४)

भरी सभा में जइये, जहँ राम नाम जस गइये।
साधू मिलैं ज्ञान को सुनिये, ज्ञान में ज्ञान मिलइये[1] ॥
मूरख मिलैं, मौन ह्वै रहिये, ऊसर बीज न बइये[2]।
काहे की कूँडी, काहे का सोटा, काहे के पल्ले छनइये॥
रसना से तू राम गुण गा ले, विमल विमल जस पइये।
नेम की कूँडी, धर्म्म का सोटा, प्रेम के पल्ले छनइये॥
रसना से तू राम गुण गा ले, विमल विमल जस पइये।
तन मन धन का लोभ छोड़ दे, लोक लाज बिसरइये॥
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह इन सब को दूर बहइये।
मनुआ राम नाम जस गइये॥

(१५)

काट लइयो बांस, बांध लइयो टाटी।
क्या जाने राम कहां डालें माटी॥
वारी[3] ! गन्दी काया तेरा क्या गुण गाऊँ ?
महल चिनाया, जिसमें रहन ना पाऊँ॥

---

१. तर्क-वितर्क करके ज्ञान चर्चा करना, २. ऊसर में बीज न बोओ,
३. ग्राम्य सम्बोधन।

कोरा कोरा कलश भरा जल पानी ।
ढुल[1] गया नीर, काया कुम्हलानी ।।
वारी ! पापन काया तेरा क्या गुण गाऊँ ?
सोने का महल, रूपे का छज्जा ।
छोड़ चला काया नगरी का राजा ।।
वारी पापन० ।।
लोहे का कोट वज्र का ताला ।
कहां गया री तेरा खोलन वाला ।।
वारी पापन० ।।
बालू की भीत अटारी का चढ़ना ।
पापी की प्रीत कटारी का मरना ।।
वारी पापन० ।।
जल गया तेल निबट गई बाती ।
उड़ गया हँस पड़ी रह गई माटी ।।
वारी पापन० ।।

जीवन क्षणभंगुर है। एक दिन मृत्यु रूपी रजनी में सब कुछ विलीन हो जाता है। गीत की कवयित्री ने मृत्यु का चित्र ही इस गीत में अंकित किया है।

बाँस काटकर मंगा लिये गये और अर्थी तैयार कर ली गई। केवल ईश्वर ही जानता है कि कहाँ यह शरीर मिट्टी में मिल जाएगा। ऐ पापी शरीर ! तेरी महिमा किस प्रकार वर्णन करूँ ? शरीर रूपी महल बनाकर तैयार किया; परन्तु वह उसी में रहने के अधिकार से वंचित हो गया। शरीर रूपी कलश में जीवन रूपी पानी भरा था। जीवन रूपी पानी आज बिखर गया है और शरीर निष्प्राण हो रहा है। सोने का महल था, जिसमें चाँदी का छज्जा था, परन्तु आज शरीर रूपी नगर का राजा इस महल को छोड़कर चल दिया। शरीर रूपी लोहे के सुदृढ़ किले में वज्र रूपी जीवन का ताला लगा हुआ था, परन्तु आज इस जीवन के ताले को खोलने वाली आत्मा कहाँ है ? बालू की दीवार से बनी अटारी पर चढ़ना असम्भव है। पापी के प्रेम पर विश्वास करना स्वयं कटारी से मरने के बराबर है। अतः इस असार संसार के झंझटों में ग्रसित होना वृथा है। जीवन रूपी तेल समाप्त हो गया है। प्राणों की बत्ती जल

१. बिखर गया।

चुकी है। आत्मा महाप्रयाण कर चुकी है। आज शरीर मिट्टी बना अर्थात् निष्प्राण हुआ पड़ा है।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का मृत्यु-वर्णन भी देखिये—

सिर पीड़ा जिनकी नहीं हेरी।
करत कपाल क्रिया तिन केरी ॥
फूल बोझ हू जिन न सहारे।
तिन पै बोझ काष्ठ बहु डारे ॥

(१६)

आये री मेरे ज्ञान गणपति आये । टेक ।
गणपति आये मेरे मस्तक पै बैठे रामा
मैं बलिहारी रामा बड़े बड़े सीस नवाये। आये० ॥
गणपति आये मेरे नैनों पै बैठे रामा।
मैं बलिहारी रामा बड़े बड़े दर्शन पाये ॥ आये० ॥
गणपति आये मेरे कानों पै बैठे रामा।
मैं बलिहारी रामा बड़े बड़े ज्ञान सुनाये ॥ आये० ॥
गणपति आये मेरे मुखड़े पै बैठे रामा
मैं बलिहारी रामा बड़े बड़े भजन कराये ॥ आये० ॥
गणपति आये, मेरे हाथों पै बैठे रामा।
मैं बलिहारी रामा बड़े बड़े दान कराये ॥ आये० ॥
गणपति आये मेरे घुटनू पै बैठे रामा।
मैं बलिहारी रामा, बड़े बड़े तीरथ कराये ॥ आये० ॥

इस गीत में ज्ञान की महिमा का वर्णन है। ज्ञान का उदय होते ही मस्तिष्क सत्कार्य करने लगता है और बड़े-बड़े राजा तक उसके सम्मुख नतमस्तक हो शीश झुकाते हैं। वह धन्य हो जाता है। उसके नेत्र सदैव अच्छी वस्तुओं को देखते, कान सुन्दर शब्द सुनते, मुख ज्ञानपूर्ण शब्द बोलता और पैर तीर्थ-यात्रा किया करते हैं।

नोट—तीर्थ से तात्पर्य आज के काशी, प्रयाग, बद्रीनाथ आदि से नहीं है। प्राचीन समय में काशी, गया आदि तीर्थ-स्थानों में विद्वान् महर्षि निवास करते थे। यहाँ पर आकर मनुष्य सत्संग करते और उपदेश सुनते थे। यह पवित्र स्थान तीर्थ कहलाते थे। इन पुण्यक्षेत्रों का भ्रमण करने वाला क्यों न भाग्यशाली होगा ?

(१७)

क्या करूँ कछु बनि नहीं आवै, कैसे पार उतरिहौं ?
गहरी नदिया, नाव जुझारी[1] छोरा[2] मल्लाह क्या करिहौं ?
ना बादबान ना हैं चप्पू, ना कोउ तेजू[3] खेंचन वारो।
चलत पुरवाई उड़त है मेंड़ा[4], कच्छ मच्छ से डरिहौं।
ऐ रामा ! कच्छ मच्छ से डरिहौं।
बहुत दिनों से या ही किनारे, बैठि रही मैं तुम्हरे सहारे।
अब के खेवा बड़ी मौज का, तुम ही पार लगइहौ।
किरपा कर के हे रामा !
कैसे पार उतरिहौं।

गीत में भक्त भगवान् से पार लगाने के लिये अनुनय-विनय कर रहा है।

(१८)

हे हरि मो से पतित उबारो।
जो हरि मो से पतित न तारो, स्वर्ग लोक रह खारो।
भक्ति किये प्रभु सब कोई तारे, कहा भयो नाम तिहारो ॥
हे हरि० ॥
बिना भक्ति प्रभु मोहि जो तारो, तब है नाम तिहारो।
और पतित तुम अनगिन[5] तारे अब की मोहि जो तारो ॥
विनती करूँ तिहारी भगवन्, अपनी ओर निहारो।
हे हरि० ॥

(१९)

अरजी हमारी, प्रभु मरजी तुम्हारी है।
'नरसिंह' के शीश पै शिलाहु[6] भारी है ॥
हम कहं प्रभु वह शिला से भारी है।
काहे के कारण तुमने रूप धारण कियो।
काहे कारण तुमने हिरनाकुश मार्‌यो है ॥ अरजी० ॥
भक्ति के कारण तुमने अवतार लिया है।
भक्त कारण तुमने हिरनाकुश मार्‌यो है ॥ अरजी० ॥

---

१. हल्की, २. लड़का सा मल्लाह, ३. रस्सी, ४. रेत, ५. अगणित, ६. पाप रूपी शिला अर्थात् बोझ।

कहत कबीरा सुनो भई साधो।
तारने की बिरियां[1] प्रभु अब के हमारी है॥ अरजी

(२०)

मैंने हरि दर्शन का चाव, कौन विध राम से मिलूँ।
जो हरि मिलें मुझे बैठ गुफा में
बैठ गुफा में मैं तो ज़रा न हिलूँ।
जो हरि मिलें मुझे तीरथ किये से
गंगा जी में बैठ काया ख़ूब मलूँ।
जो हरि मिलें मुझे भजन किये से,
काशी में सुमरन रोज़ करूँ।
जो हरि मिलें मुझे शिखर[2] दुपहरी
नंगे पैर मैं तो भाग मिलूँ।

प्रभु के दर्शेच्छुक हृदय की व्याकुलता उपरोक्त पंक्तियों में भरी है। भक्त प्रियतम-मय हो गया है। उसकी प्रतीक्षा अनन्त है और उसकी साधना भी अनन्त। कुछ अन्य भक्तों के उद्‌गार भी देखिये—

"दर्शन के प्यासे नयन, लगे तुम्हारी ओर।
नाच रहा नटराज मन, बाँध प्रेम की डोर॥"

—रामनरेश त्रिपाठी

The night is spent nearly waiting for him in vain. I fear lest in the morning he suddenly come to my door when I have fallen asleep wearied out. Friends, leave the way open for him, forbid him not.

अर्थात्—"उसकी विफल प्रतीक्षा करते-करते रात लगभग समाप्त हो गई है। ऐसा न हो कि जब मैं थक कर प्रातःकाल सो जाऊँ तब वह सहसा द्वार पर आ जाए। इसलिये मेरे साथियो! उसके आगमन के लिये हर समय मार्ग खुला रखो—उसे आने से मत रोको!"

—टैगोर

(२१)

राम भजौ मन राम भजौ।
अरे तुम पाछे पछतइहो।
भजन बिनु उमरि गँवइया।
मौत द्वार पै होइ है ठाड़ी। राम भजौ०॥

---

१. बारी, २. तेज़।

क्या करिहो तब भइया।
अरे खाट पकरि के माता रोवैं।
बाँह पकड़ सगा भैया।
लट छिटकाय सुन्दर तिरिया रोवै।
जाओ इकल्ले भैया। राम भजौ० ॥

सचमुच, मनुष्य अकेला आता और अकेला ही जाता है। यह सब सांसारिक बन्धम कुछ ही समय के लिए हैं।

(२२)

सोचि ना करौ रामा भजन करौ,
कौड़ी कौड़ी माया जोड़ी,
संग ना जायेगा अधेला। भजन करौ० ॥
लिया दिया तुम्हारे संग जायगा,
नेकी हरदम जायेगी, सबर करो।
द्वारे तोरे गंगा भरी है,
गड़ढइया में क्या डूबौ। भजन करौ० ॥
किसी के बालक देख न जलना,
राम दिया सो पाया। भजन करौ० ॥

गीत शिक्षाप्रद है। सचमुच :—

मुट्ठी बाँधे आता है बन्दा, हाथ पसारे जाता।
ना कुछ लाता ना ले जाता, जग से झूठा नाता ॥

(२३)

मना रे तू ने राम न जाना रे।
जैसा मोती ओस का रे, तैसा यह संसार।
देखत में तो झिलमिला,[1] चलत ना लावै वार ॥
मना रे० ॥
सोने का गढ़ लंका बनायी, सोने का दरबार।
रत्ती भर सोना ना मिला रावण चलती बार ॥
मना रे० ॥

संसार ओस-बिंदु के समान क्षण-भंगुर है। इसलिए ऐ मन! ईश्वर का भजन कर। संसार की बाह्य चमक पर मुग्ध न हो। रावण ने सोने की लंका

१. जगमगाता हुआ।

और सोने का किला बनाया, परन्तु एक रत्ती सोना भी उसके साथ नहीं गया। धर्म ही मनुष्य के साथ जाता है।

हमारे कवियों ने इस विषय पर इस प्रकार लिखा है :—

मिट्टी में मिलने के पहिले, और अधिक क्या जाय कहा।
उसे भोग लो व्यय होने से, जो अब भी है शेष रहा॥
धूल धूल में मिल जायेगी, धूल तले सोना होगा।
गीत न गायक, सुरा न साकी, और न कोई अवधि हहा॥

× × ×

"Gather ye rose-buds, while ye may,
Old time is still a-flying;
And this same flower that smiles to-day,
To-morrow may be dying."

अर्थात् "जब तुम गुलाब की कलियां एकत्रित कर सकते हो कर लो, क्योंकि समय बीतता जा रहा है। वही सुमन जो आज मुस्करा रहा है, कल मुरझा जायेगा।" **—उमर खैयाम से भावानुवाद**

× × ×

ख़ाक का पुतला बना है, ख़ाक की तस्वीर है।
ख़ाक में मिल जायेगा, बस ख़ाक दामनगीर है॥

× × ×

जहाँ शाह जमशेद विभव था, वही जहाँ मदिरा लहरी।
बने आज उन राज गृहों के, सिंह श्रृगालादिक प्रहरी॥
उस बहराम गौर के शिर पर, जो मशहूर शिकारी था।
टाप गोर ख़र चला रहा है, पर है नींद वही गहरी॥

—उमर खैयाम से भावानुवाद

(२४)

मत सोवे रे दिवाने ! तुझे नींद रे घनी।
जो सोवेगा सो खोवेगा, क्या बतावेगा,
जब तेरा पूछेगा धनी।
क्या सोवे तू माया के नशे में,
क्या तूने खा लयी हीरे की कनी।
भाई बन्ध तेरा कुटुम्ब कबीला
कोई ना छुटावै तेरी जान पर बनी।

महात्मा गांधी के प्रिय गीत की पंक्तियों में भी यही भाव मिलते हैं—

उठ जाग मुसाफ़िर भोर भयी,
अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो जागत है सो पावत है,
जो सोवत है सो खोवत है॥
कल करना सो आज करले,
आज करना सो अब कर ले।
जब चिड़ियन ने चुग खेत लिया,
फिर पछताये क्या होवत है॥

(२५)

मेरा कहा मान ले ज्ञान बिना भजन भगवान,
जगत में कोई ना अपना जान।
दो दो दीपक[1] धरे मन्दिर[2] में खिला नार[3] का चेहरा
पीछे फिर के देख लो हो गया घोर अन्धेरा। मेरा० ॥
पाँच चोर[4] दस-अन्दर[5] उतरे, लिया नगर तेरा घेरा।
पकड़ो चोर, चढ़ा दो फाँसी घर घर फिरे ढिंढोरा। मेरा० ॥
भाई बन्धु तेरा कुटुम कबीला, फूले देख घनेरा।
एक दिन तुझ को जंगल ले जा सिर फोड़ेंगे तेरा ॥
टूटी खटिया, फटी गुदड़िया, उसको देख भुलेरा[6]। मेरा० ॥
एक दिन मूरख ऐसा आवै, परै बगादें[7] डेरा।
निबड़ा तेल, खतम हुई बाती, चलो उठा लो डेरा।
अब क्या सोच करै रे मनुआ! हो लिया रैन बसेरा[8]। मेरा० ॥

ईश्वर की भक्ति और सच्चे ज्ञान के बिना संसार में कोई भी किसी का नहीं है। माया और मोह के दीपक हृदय में जलते रहते हैं। जीव उन्हें देखकर फूल उठता है। किंतु कुछ ही समय पीछे जब अज्ञान की झूठी चकाचौंध का आवरण हटता है तो केवल अन्धकार ही रह जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार रूपी पांच चोर मनुष्य की दसों इन्द्रियों पर अपना अधिकार

---

१. माया और मोह, २. हृदय, ३. जीव, ४. काम, क्रोध, लोभ, मोह, और अहंकार, ५. पांच ज्ञानेन्द्रियां और पांच कर्मेन्द्रियां, ६. भूल रहा है, ७. फेंक देंगे, ८. संसार में रहना एक रात कहीं ठहरने के समान है, वह समय पूरा हो गया।

जमा लेते हैं। सब परिवार के व्यक्ति जिन्हें देखकर प्राणी मुग्ध होता है, एक दिन वही कपाल-क्रिया करने पर विवश होते हैं।

इस लोक-गीत का रचयिता कहता है—

"ऐ प्राणी ! इस मिथ्या मायाजाल में न फँस। लो जीवन रूपी तेल समाप्त हो गया है। प्राणों की शलाका जल चुकी है। चलो अब श्मशान में ले चलो। ऐ मन ! अब व्यर्थ चिंता क्यों करता है ? अब रात्रि का पड़ाव समाप्त होता है।

इस गीत के भाव कबीर के भावों से बहुत मिलते हैं।

अकबर इलाहाबादी ने भी कहा है :—

"अल्ला अल्ला के सिवा, आख़िर रहा कुछ भी न याद।
जो किया था याद, सब था भूल जाने के लिये॥
क्या मुझे खुश आये यह हैरत सराए बे-सबाब।
होश उड़ने के लिये हैं, जान जाने के लिए॥"

× × ×

"चुन चुन कंकर महल बनाया,
लोग कहें घर मेरा है॥
ना घर मेरा ना घर तेरा,
चिड़िया रैन बसेरा है॥"

× × ×

"यहाँ कहाँ से क्यों न जानकर
परवश आना पड़ता है।
वाहित विवश वारि सा निज को,
नित्य बहाना पड़ता है।
वहाँ चले फिर कुछ न जानकर,
इच्छा हो कि अनिच्छा हो।
परपट पर सरपट समीर सा
हमको जाना पड़ता है।"

—उमर खैयाम की रुबाई का भावानुवाद

खण्ड १

सोहर (बच्चे के जन्म के गीत)

तथा

विवाह के गीत

: ४ :

सोहर

[शिशु के जन्म के अवसर पर गाये जाने वाले गीत]

शिशु सृष्टि का अनुपम रत्न, माँ की गोदी का शृंगार, निर्धन का धन, मनुष्यत्व का बाल-स्वरूप तथा वृद्धजनों के नेत्रों की विश्रान्ति है। उसके एक बार के आलिंगन और चुम्बन के आनन्द पर सृष्टि का निखिल वैभव न्यौछावर किया जा सकता है। ईर्ष्या, राग, द्वेष और मत्सर से परे वह मनोरम मूर्ति किसके हृदय को मोहित नहीं कर देती। शिशु ही राष्ट्र की भावी आशा और राष्ट्र-निर्माता है। इसी कलिका से नृपति, वीर-शिरोमणि, भक्त, कवि, पण्डित तथा साधू विकसित होते हैं।

स्त्रीत्व का पूर्ण विकास मातृत्व में ही होता है। सचमुच—

नारी के इस भग्न हृदय में, कौन शान्ति सरसाता।
यदि आधार न उसका बनकर, शिशु मुस्काता आता॥
जीवन-मरु के नीरस पथ पर कैसे नारी चलती।
शिशु की प्यार भरी चितवन, यदि नहीं सुधा-रस भरती॥

—सीता

शिशु की मुस्कराहट में संजीवनी शक्ति है, तभी तो ईसा ने कहा है—

"Verily I say unto you, except ye be converted and become as little children, ye shall not enter into the kingdom of heaven."

शिशु के रूप में ही मानव की सकल साधना, तपस्या और पुण्य की इतिश्री हो जाती है। यह प्रणय का पावन वरदान है।

मनुष्य की अमर होने की स्वाभाविक इच्छा की पूर्ति बच्चे के द्वारा हो जाती है, क्योंकि वह अपने ही रक्त माँस से बना, अपने ही हृदय का टुकड़ा तथा

अपनी ही प्रतिमूर्ति है। हम इस संसार से विदा होते हुए जब उसे छोड़ जाते हैं तो इसी के रूप में हम जीवित रहते हैं।

हमारे यहाँ निःसंतान होना घोर पापों का फल माना गया है। कठोपनिषद में लिखा है, "निर्वंश होना महा पातक है।"

हमारे यहाँ साधारण जनता का ऐसा विश्वास है कि जिसका वंश नहीं चलता, उसकी मुक्ति नहीं होती, क्योंकि—

उतारेगा अवसर पा कभी पूर्व-पुरुषों के ऋण का भार ।
सभी कर देगा पूर्ण अभीष्ट इसी से करते अमित दुलार ॥

आइये और सोहर सुनिये। सोहरों में स्वभावतः ही उल्लास, पारिवारिक प्रेम और मातृत्व का मान निहित है।

सोहर

(१)

वृन्दावन से चलिय गवन्त्री[1], कजरी वन में आई, मेरे राम।
कजरी वन में सिंह धड़ूकें, गैया सिंह ने घेरी, मेरे राम।
सुन रे सिंहनी जाये, मुझे मत भछियो[2] घर में बछड़ू राँभै, मेरे राम।
चाँद सूरज मेरे साक्षी होइयो, बछड़ू चुँघातेई आऊँ मेरे राम।
गंगा जमना मेरे साक्षी होइयो, बछड़ू चुँघातेई आऊँ, मेरे राम।
कजरी वन तें चली गवन्त्री, वृन्दावन में आई मेरे राम।
ले रे बछड़ू दुधवा पी ले, वचनों की बाँधी माय, मेरे राम।
वचनों का दूध अम्मा हरबी[3] न पीऊँ, चलूँगा तुम्हारे साथ, मेरे राम।
आगे बछड़ू पीछे गवन्त्री, कजरी वन में आई, मेरे राम।
ले रे मामा मुझे भक्षण कर ले, पीछे गवन्त्री माय, मेरे राम।
काहे का मामा, काहे का भानजा, काहे की गवन्त्री भैन,[4] मेरे राम।
सत का मामा, धर्म का भानजा, नेम की गवन्त्री भैन, मेरे राम।
अपने भानजे को मैं लाख टके दूँगा, अतलस[5] मसरू भैन, मेरे राम।
लेइ लाय कै चली गवन्त्री, वृन्दावन में आई, मेरे राम।
किसने रे बेटा सिख बुध दीनी, किसने पढ़ाये चटसाल,[6] मेरे राम।
अम्मा ने मेरी अम्मा! सिख बुध दीनी, पिता ने पढ़ाये चटसाल, मेरे राम।

---

१. गाय, २. भक्षण करना या खाना, ३. कदापि, ४. बहिन, ५. बढ़िया वस्त्र, ६. पाठशाला।

सोने से मेरे बेटा ! खुर मढ़वा दूं, रूपे से दोनों सींग, मेरे राम ।
अपने बेटा पे मैं सब कुछ वारूँ, ऐसा मीठा बोल, मेरे राम ।।

यह गीत अपने माता-पिता आदि पूज्य जनों की रक्षा के लिए पुत्रों को प्राणदान की महिमा सिखाने के लिए है। ग्रामीण भारत की प्रायः सभी भाषाओं और बोलियों में यह गीत हीरे की तरह जगमगा रहा है।

(२)

जच्चा ने बच्चा जाया है, दिन खुशी का आया है ।
जच्चा ! तेरी सासू आवेगी, वो चरुवा चढ़ाई नेग मांगेगी ।।
तुम उनका नेग दिला देना, नहीं तुम पर झगड़ा डालेगी ।
जच्चा ! तेरी जिठानी आवेगी, वो परदा टंकाई नेग मांगेगी ।।
तुम उनका नेग दिला देना, नहीं तुम पर झगड़ा डालेगी ।
जच्चा ! तेरी दौरानी आवेगी, वो पलंग बिछाई नेग मांगेगी ।।
तुम उनका नेग दिला देना, नहीं तुमसे रार मचायेगी ।
जच्चा ! तेरी नन्दल आवेगी, सतिये धराई नेग मांगेगी ।।
तुम उनका नेग दिला देना, नहीं तुम से रार मचायेगी ।।

(३)

वह घड़ी शुभ घड़ी उस दिन जानूंगी
मेरा री होलरिया[1] जिस दिन बाबा कह के बोलेगा ।
दादी की गोदी खेलेगा ।
पाँवों में पैंजनियां सोहैं, छम्मक-छम्मक डोलेगा ।।
वह घड़ी शुभ घड़ी उस दिन जानूंगी ।।
जिस दिन री लल्लन 'ताऊ' कहके बोलेगा ।
ताई की गोदी खेलेगा ।
तुतली-तुतली बात बनाता, मिश्री सी वह घोलेगा ।
वह घड़ी शुभ घड़ी उस दिन जानूंगी ।।
जिस दिन बिट्टा मेरा 'बापू' कह के बोलेगा ।
अम्मा की गोदी खेलेगा ।
हाथों में कडुलियां होंगी, ठुम्मक-ठुम्मक डोलेगा ।
वह घड़ी शुभ घड़ी उस दिन जानूंगी ।।

---

१. पुत्र के लिए प्रेममय सम्बोधन ।

जिस दिन री मुन्नू मेरा 'चाचा' कह के बोलेगा।
चाची की गोदी खेलेगा।
हाथ में किताब होगी, पण्डित के ढिग जावेगा।
वह घड़ी शुभ घड़ी उस दिन जानूंगी ॥
जिस दिन री लल्ला मेरा 'फूफा' कह के बोलेगा।
नाना कहके बोलेगा। बूग्रा की गोदी खेलेगा।
नानी की गोदी खेलेगा।
चाँद सा मुखड़ा उसका, कहानी हमें सुनायेगा।
खेतों को दौड़ा जायेगा।
वह घड़ी शुभ घड़ी उस दिन जानूंगी ॥

मातृ-हृदय की मधुर कल्पनाओं से गीत परिपूर्ण है। बच्चे के खेलने, चलने, बोलने और पढ़ने के योग्य होने की माता जिस आकुलता से प्रतीक्षा करती है, वह इस गीत में साकार हो उठी है।

सूरदास ने भी अपने निम्न पद में मातृ-हृदय की अभिलाषाओं को व्यक्त किया है :—

जसुमति मन अभिलाष करैं।
कब मेरो लाल घुटरुअन चालै, कब धरणी पग द्वैक धरैं।
कब द्वै दांत दूध के देखौं, कब तुतरे मुख बैन झरैं ॥
कब नन्दहि कहि बाबा बोलै, कब 'जननी' कहि मोहि ररैं।
कब मेरो अंचरा गहि मोहन, जोइ सोइ कहि मोसों झगरैं ॥
कब धौं तनक-तनक कछु खइहैं, अपने कर सों मुखहि भरैं।
कब हँसि बात कहैगो मोसों, छवि देखत दुख दूर करैं ॥
श्याम अकेले आँगन छोड़े, आप गई कछु काज करैं।
एहि अंतर अंधवाइ उठी इक गरजत गगन सहित घहरैं ॥
सूरदास ब्रजलोग सुनत धुनि, जो जहां तहां सब अतिहि डरैं ॥

—सूरदास

(४)

कोडी[१] कोडी अगड़[२] बुहारैं,[३] दर्द उठा है कमर में।
मेरे राजीड़ा[४] अब ना रहूँगी तेरे घर में ॥

१. झुक कर, २. आंगन, ३. झाड़ू लगाना, ४. राजा अर्थात् पति।

जिठानी दुरानी मेरे बोली ठोली मारें[1] ।
तो जब क्यों सोई थी बगल में । मेरे राजीड़ा ॥
सास, नन्द मेरी धीर बँधावें,
यह तो होती आई है जगत में ।
मेरे राजीड़ा अब ना रहूँगी तेरे घर में ।

(५)

हैं घूंघर वाले बाल मेरे ललना के ।
ताऊ भी रहसा[2] बाबा भी रहसा,
रहसा सब परिवार मेरे ललना का ॥ हैं घूंघर ॥
बप्पा[3] भी रहसा, चाचा भी रहसा,
रहसा सब परिवार मेरे ललना का ॥ हैं घूंघर ॥
जीजा भी रहसा, मामा भी रहसा,
रहसा सब परिवार मेरे ललना का ॥ हैं घूंघर ॥
बूआ लाई उसका कुर्ता टोपी,
फूफा लाया गल हार मेरे ललना का ॥ हैं घूंघर ॥
मामी तो लायी उसका घोड़ा, डोला,
मामा लाया जोड़े साथ मेरे ललना के ॥ हैं घूंघर ॥
नाना आये उसपै मोहरें वारीं ।
नानी ने भेजी मोती माल मेरे ललना की ॥ हैं घूंघर ॥

(६)

चली आओ नन्दल मैं लागूं तोरे पैयां ।
भीतर बैठीं दाई माई, बाहर बैठा नाई,
देहली ऊपर नन्दल बैठी, हौं तोरी माँ की जायी ॥
क्या माँगे है दाई माई, क्या माँगे है नाई ।
क्या माँगें ये नन्दल बीबी, ये मोरी माँ की जाई ॥
पाँच रुपैये दाई माई, कड़े दुशाले नाई,
हार झूमके नन्दल माँगें, यह तोरी माँ की जाई ॥
पाँच रुपये दाई को दे दो, कड़े दुशाले नाई ।
हार झूमके नन्दल दे दो, यह मोरी माँ की जाई ॥

---

१. हास-परिहास करते हुए व्यंग करना, २. चाव में आना, ३. पिता ।

नन्दल रूठ गई फिर बोली, यह तो हल्का भाई ।
भाभी आज भतीजा जाया, दो सुन्दर हार मँगाई ।।
क्या नन्दल तुम अटको मटको, क्या तुम करो बड़ाई ।
तोरे भैया ने बेटा जाया, क्या तुम खरचन आई ।।
ना भाभी मैं रूँठूं मटकूं, ना मैं करूँ बड़ाई ।
मेरे भैया ने बेटा जाया, मंगल देखन आई ।।

(७)

जन्मे यादोराय[1] खुशी हुई मन में ।
रानी कौशल्या ने वस्त्र दीन्हें
वस्त्र रह गया एक रानी जी के तन में ।
राजा दशरथ ने हस्ती दीन्हें
हस्ती रह गया एक राजा जी के अस्तबल में ।।
रानी कैकेई ने मोती दीन्हें
रत्न रहा ना एक रानी जी के महलों में ।
रानी सुमित्रा ने लाल लुटाए
लाल रहा ना एक रानी जी के घर में ।।
राजा दशरथ ने मोहरें लुटायीं
मंगता रहा ना एक राजा जी की अयोध्या में ।
अयोध्या नगरी में बजी बधाई,
खुशियाँ छाई सबके घर में
नंगे पैरों सब गये महल को
जन्मे त्रिभुवन नाथ जगत में ।

क्यों न हो, यह अवसर ही इतना शुभ होता है । कवि के भावमय शब्दों में—

शशि बिन सूनी रैन, ज्ञान बिन हिरदय सूनो ।
कुल सूनो बिन पुत्र, पत्र बिन तरुवर सूनो ।।
गज सूनो बिनु दन्त, और तरु पुहुप बिहीनो ।
विप्र सून विन वेद, ललित बिनु सायर सूनो ।।

---

१. लोकगीतों में राम और कृष्ण में भेद नहीं माना गया है ।

(८)

दरद हमने सहे थे सैयां के लाल कैसे कहाये।
आओ सास रानी बैठो पलंग पर
हमारा न्याव चुकाओ, सैयां के लाल कैसे कहाये ?
चाहे बहू मारो चाहे जीजी मारो
लाल तो बेटे के कहाये, तुम्हारे लाल कैसे कहाये ?
आओ जेठानी रानी आओ दौरानी रानी
आओ बैठो पलंग पर
हमारा न्याय चुकाओ सैयां के लाल कैसे कहाये ?
चाहे बहू मारो, चाहे जीजी मारो
लाल तो भैया के कहाये, तुम्हारे लाल कैसे कहाये ?
आओ ननद रानी बैठो पलंग पर
हमारा न्याय चुकाओ, सैयां के लाल कैसे कहाये ?
चाहे भाभी मारो, चाहे गरियाओ[1]
लाल तो भैया के कहाये, तुम्हारे लाल कैसे कहाये ?

बच्चा पैदा होने पर समस्त परिवार में जो आनन्द मनाया जाता है, उसमें स्त्रियाँ स्वतंत्र रूप से अपना उल्लास प्रकट करती हैं। इस गीत में उसी की एक छटा है।

(९)

मैं चन्दा कहाँ से लाऊँ मेरे कन्हैया ?
मत रूठो, मत झगड़ो हमसे।
थाली में देखो चन्दा मामा।
श्याम ने चन्दा ज्यों पकड़ा।
चन्दा छिप गया दैया।
कृष्ण मचल गये रोने लागे,
मनाती यशुमती मैया,
दूर खेलन मत जाओ मेरे ललना।
आ रही भूरी गैया।
कजरी का तुम माखन खाना
मिश्री दूंगी कन्हैया ॥

१. गाली दो।

बाबा की तुम गोदी खेलो,
सुना दो अपनी बाँसुरिया ।। मैं चन्दा० ।.

(१०)

अजी केले से आवै हमें बांस[1]
·महल केला किन बोया ?
मुक्के मारूँ पचास, धक्के देऊँ डेढ़ सौ
गोरी महलों से करूँगा जवाब, चली जाओ बाप कै ।
गोरी महलों से दूंगा निकाल, महल केला हम बोया ।।
मेरे बीरा बाढ़ी[2] के गड्डी[3] गढ़ला बाजनी ।
हमारे राजा ने दिया है जवाब चली जाओ बाप के ।।
एक बन लाँघ, दूजा बन लांघा,
तीजे में हुए नंदलाल विपत में सम्पत भई ।।
काहे का करूँ ओढ़ना, काहे का करूँ बिछावना ?
ए जी काहे की पिलाऊँ रसघुट्टी, विपत में सम्पत भई ।।
इतनी तो सुनि कै, सासू आई, बहू घर चलो ।
सासड़ मुड़ तुड़ लगूँ थारे पांय, पोता तो दूंगी गोद में ।।
इतनी तो सुनके जिठानी आई, बहू घर चलो ।
जिठानी मुड़ तुड़ लगूँ थारे पैर, बेटा दूंगी गोद में ।।
इतनी सी सुन कै नन्दल आई, भाभी रानी घर चलो ।
बीबी मुड़ तुड़ लगूँ तेरे पैर भतीजा दूंगी गोद में ।।
इतना तो सुनि कै राजा भी आये, प्यारी घर चलो ।
राजा जी तुम ने दिया है जवाब, जाओ घर बाप के ।।
पिया से रूठे गोरी ना सरै[4], ना सरै गोरी बाप के ।
प्यारी ! मुड़ तुड़ लगूँ थारे पैर, हमारी रानी ! घर चलो ।।

पत्नी गर्भवती थी । उसे बहुत उकावने हो रहे थे । पति ने नख़रे समझकर उसे पिता के यहाँ चले जाने को कहा ।

पत्नी के लिये अपमान असह्य था । वह निकल पड़ी । वन में पुत्र का जन्म हुआ । न बिछाने को कुछ है, न उढ़ाने को और न घुट्टी पिलाने को ही ।

परन्तु यह शुभ सूचना ज्यों ही सास, जिठानी, ननद तथा पति को मिली; सब बहू को मनाने के लिये आये । बहू ने सब का सम्मान किया, परन्तु पति के

१. दुर्गन्धि, २. बढ़ई, ३. गाड़ी, ४. काम चलना ।

कटु वचन वह न भुला सकी। पति ने अन्त में प्रेम से मना लिया। सचमुच, शिशु दाम्पत्य-प्रेम की ग्रन्थि है। विवाह के पश्चात् बच्चे के बिना घर इसी प्रकार सूना है जिस प्रकार फल-फूल के बिना वाटिका। दुष्यन्त शकुन्तला का परित्याग कर सकते हैं, परन्तु भरत की माँ को त्यागने की उनमें शक्ति नहीं है। उसे देखकर तो वह श्रद्धा से कहते हैं—

"सुधि आई, सब भ्रम मिट्यो, सफल भये मम काज।
धन्य भाग सुमुखी लखूँ, सन्मुख ठाढ़ी आज॥"

और भी—

"धनि धनि ते नर मैले जो करत गात।
कनिया लगाय धूरि ऐसे सुवनान की॥"

सीता को राम निर्वासित कर सकते हैं, परन्तु लव-कुश की माता पर वह स्वयं न्यौछावर हैं और उनसे क्षमा माँगने के लिये वाल्मीकि आश्रम में जाते हैं। लव को देखते ही उसके हृदय में प्रेम उमड़ने लगता है और वह लव से कहते हैं—

"नव ललित प्रफुल्लित कमल कोमल गर्भ दल अनुहार।
तव परस सुन्दर सरस सुखप्रद, सुभग सुचि सुकुमार॥
घनसार चन्दन लेप सम, सीतल सुचन्द अमन्द।
मम अंग सौं लगि देत प्रिय, अनुपम परम आनन्द॥

भगवान् मनु ने लिखा है—"पुत्र को जन्म देने के कारण नारी पूजनीया और महाभागा है।"

मातृत्व के मान से गीत पूर्ण है।

(११)

मचियहि बैठी है सासू तो बहुआ से अरज करै।
मोरी ए बहुआ! कउन कउन तप कीन्हे?
होलरवा[1] बड़ सुन्दर।

माघ नहानी बैनी माघौ अगिनी नहीं तापूं।
मोरी ए सासू! भूखाल[2] बम्हना जिमायेऊं
होलरवा बड़ सुन्दर।

---

१. पुत्र, २. भूखे।

मचियही बैठी हैं सासू तो बहुग्रा से ग्ररज करै ।
मोरी ए बहुग्रा ! कवन कवन फल खायेऊ ?
होलरवा बड़ सुन्दर ।
नित उठि खायेऊं गाजर, ग्रनरवा[1] ग्ररु सूग्रा बेरवा[2]
मोरी ए सासू तोरि तोरि खायेऊँ नारियल गोलवा
होलरवा बड़ सुन्दर ।
मचियहि बैठी जिठानी तो बहुग्रा से ग्ररज करै,
मोरी ए बहुग्रा ! कउन कउन फल खायेऊ ?
होलरवा बड़ सुन्दर ।
मोरी ए बड़की ! छीलि छीलि खायेऊँ नरँगिया सेबवा
होलरवा बड़ सुन्दर ।
पिछले बैठी दउरनिया तो बहुग्रा से ग्ररज करै,
मोरी ए जीजी ! कवन कवन तप कीन्हें ?
होलरवा बड़ सुन्दर ।
ससुर का कहना न टारेऊँ, सास सेवा करियऊँ ।
बहू ! ननदा देवर करूं प्यार
ग्ररी मचियहि बइठि ननदिया उनहूं, भल पूछै,
मोरी ए भाभी ! कवन रे मरद चित्त लाये ?
होलरवा बड़ सुन्दर ।
मोरी ए बीबी ! सासू के पूत तिहारे सग भाई ।
उन तजि कबहूं न चितेऊं[3] दूजा
होलरवा बड़ सुन्दर ।

बहू के सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुग्रा है । सुन्दर पुत्र होने के कारण सब बहू से पूछते हैं । बहू का उत्तर श्रवण करने योग्य है । "मैं सदैव माघ के कठिन शीत के महीने तक में त्रिवेणी में स्नान करती रही । कभी ग्रग्नि सेवन नहीं किया । ग्रनार, बेर, नारियल, गोला, सेब, नारंगी ग्रादि फलों का सात्विक ग्रौर स्वास्थ्यप्रद ग्राहार किया । सास, ससुर की ग्राज्ञा को कभी उल्लंघन नहीं किया । देवर, ननद से सदैव प्रेम किया ग्रौर सास के पुत्र तथा ननद के भाई ग्रर्थात् ग्रपने प्रियतम के ग्रतिरिक्त कभी किसी परपुरुष की ग्रोर नहीं निहारा । इसीलिये ऐसा सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुग्रा है ।"

---

१. ग्रनार, २. बेर, ३. देखा ।

उत्तर युक्तिसंगत और सुपुत्र की लालसा रखने वाली प्रत्येक जननी के लिये अनुकरणीय है।

(१२)

ससुर जी आगे सात प्रणाम बहुअड़ नै भावैं
फालसे जी राज।
बागाँ री मेवा खाओ म्हारी बहुअड़
कोई बागाँ में नहीं फालसे जी राज ॥
जेठ जी आगे सात प्रणाम बहुअड़ नै भावैं फालसे जी राज।
भैंसड़ दूधा पीयो बहू म्हारी जी,
अब नहीं ऋतु है जी फालसे जी राज ॥
देवर आगे सात प्रणाम, भाभी नै भावैं फालसे जी राज।
देस्यां भाभी! निबुड़े चुँखाये, बागाँ में नहीं फालसे जी राज ॥
राजा आगे सात प्रणाम गोरी को भावैं फालसे जी राज ॥
पांच पियादे तो दस असवार राजा जी चले बाग में जी राज।
साथिड़े तोड़ैं दाड़िम दाख जी राजा जी तोड़ैं फालसे जी राज।
तोड़ ताड़ कर बांधी चौपट पांड[1]
जी कोई लाये महल में जी राज ॥
खाओ सखियाँ खाओ घर की नार
बाकी के सइयाँ बांट दो जी राज।
थम[2] चिर जियो ससुरा रे जी पूत
म्हारी भलीय पुजाई मन रली जी।
थम चिर जिओ सजनिया री धीय[3]
म्हारा बंस बधाया[4] बाप का जी राज।

गर्भवती को फ़ालसे खाने की बड़ी तीव्र इच्छा है। उसने अपने श्वसुर, जेठ, देवर सब से फ़ालसे मंगाने की विनती की। फ़ालसे मिलने कठिन थे इसलिये सब ने बहू को मेवा, दूध और नींबू खाने के लिये कहा। अन्त में वधू ने अपने पति से कहा। पति पाँच पियादे और दस सवार लेकर फ़ालसे लेने चल दिया। सब ने अनार और अंगूर तोड़े, परन्तु पति ने अपनी प्रियतमा के लिये फ़ालसे तोड़े।

---

१. गठरी, २. तुम, ३. लड़की, ४. बढ़ाया।

आकर पति ने कहा—तुम भी खाओ और तुम्हारी सखियाँ भी खाएंगी।

स्त्री हर्ष-विभोर होकर बोली—तुम्हारी चिरायु हो। तुमने मेरी इच्छा की पूर्ति की।

पति ने उत्तर दिया, तुम्हारी भी दीर्घायु हो। तुमने हमारे पिता के वंश को बढ़ाया है।

चरक, सुश्रुत और बाणभट्ट आदि के ग्रन्थों में गर्भवती की इस प्रकार की दशा का बर्णन किया गया है। महाकवि कालिदास ने रघुवंश में दौहृद का वर्णन किया है—

"अथेप्सितं भर्तु रूपस्थितोदयं
सखीजनोद्वीक्षण कौमुदी-मुखम्॥
निदानिक्ष्वाकु कुलस्य सन्ततेः
सुदक्षिणा दौहृदं-लक्षणं दधौ॥"

× × ×

"माता से उत्पन्न सन्तान का हृदय माता से सम्बन्ध रखता है, इसलिये गर्भिणी की इच्छा का विघात करना अच्छा नहीं है।" —वाग्भट्ट

(१३)

मैं तो थारा हाजिर बन्दा जी,
हमारी धन[1] रूस क्यों गई?
कहो तो अम्मा बुलावें जी, कहो तो चरुवा हमीं चढ़ावें जी।
हमारी धन०॥
कहो तो भाभी बुलावें जी कहो तो मज्जा[2] हमीं बिछावें जी।
हमारी धन०॥
कहो तो दौरानी बुलावें जी कहो तो दिया हमीं जलावें जी।
हमारी धन०॥
कहो तो बीबी बुलावें जी कहो तो सतिये हमीं धरावें जी।
हमारी धन०॥
कहो तो दाई बुलावें जी कहो तो बच्चा हमीं जनावें जी।
हमारी धन०॥
कहो तो बांदी बुलावें जी, कहो तो पोतड़े हमीं धोवें जी।
हमारी धन०॥

गीत में मातृत्व का सम्मान दिखलाया गया है। पत्नी रुष्ट हो गयी है।

---

१. स्त्री, २. चारपाई।

परन्तु उसी समय पुत्र का जन्म होता है। पति को अपनी भूल पर पश्चात्ताप होता है, और वह पत्नी को नाना प्रकार से मनाता है! धन्य है मातृत्व।

(१४)

हथवा में लिये तिल चाउर, डलैया बेला और पतिया।
मोर ए बहुआ, झपटि रे चली है फुलवरिया
तो देवता मनावैं।
देहरी पै बइठी ननदिया, तो बोली इक बोलै।
मोरी ए भवजी! कितना तुम देवता मनउवो
होलरवा रे न होइ हैं।
न्हाय धोय जब उठी त सिव का मनावैं।
मोरे ए सिवजी! हमहु पै होते दयाल।
ननद बोली बोलै।
अरे फुलवरिया के देवता अपन मुख बोलें।
मोरी ए बहुआ! अब मत अइयो फुलवरिया
तू गरुए[1] गरभ तें।
होते बिहान[2], सुरजवा निकला, कन्हैयालाल जनमे।
मोरी हे सखियां, बजन लगी आनँद बधइया
गावहिं सखी सोहर।
आंगन में ठाढ़ी ननदिया तो अड़पि तड़पि बोलै।
मोरी ए भवजिये रे, होलरिवा के जन्मे कंगनवा हम लेइवें।
कितनी लुटाओ घुन घुनवारे, कंगनवा नहीं देवों रे।
मोरी ए ननदी! समझो देहरिया पर की बात
करेजवा मोरे सालै।
बाहर से आये उनके भैया तो बहुआ से अरज करैं।
मोरी ए बहुआ दे डालो हाथ के कंगनवा
होलरिवा न्यौछावर।

बहू निःसन्तान है। नन्द कटु वचन बोलती है। बहू ईश्वर के चरणों में प्रार्थना करती है और पुत्र की याचना करती है। भगवान् उसकी कामना पूर्ण करते हैं।

भतीजे के जन्म होते ही नन्द भाभी के हाथ के कड़े माँगती है। भाभी को

---

१. भारीपन, २. प्रातःकाल।

पहली घटना स्मरण हो आती है। वह कहती है—"तुम कितने ही चावल बताशे लुटाओ, हम तुम्हें कंगन नहीं देंगे।" इतने में उसका पति आता है। वह यह सब सुनकर कहने लगा "प्रिये! आज तो तुम मातृत्व के गौरवमय पद की अधिकारिणी हो; फिर इस कंगन का क्या मूल्य है। यह तो मुन्ने पर न्यौछावर किये जा सकते हैं।"

यशोदा जी ने भी तो कहा था—

राजपथों पर कुंजें वारूं, मंचों पर गोलोक मही।
सरवारों पर ग्वालबाल, और संगनियों पर ब्रज बालायें।
हीर हार पर वार लाड़ले, बनवाली बन मालायें।
छीनूंगी नहिं निधी किसी सौभागिनि पुण्य प्रमोदा की।
लाल! वारना नहीं किसी पर, गोद गरीब यशोदा की।

माँ की गोद भरी रहे और वह सब कुछ अपने लाल पर वार सकती है। बच्चा माँ का सर्वस्व है :—

"मेरा मन्दिर, मेरी मस्जिद काबा काशी यह मेरी।
पूजा पाठ ध्यान जप तप है घट घट वासी यह मेरी॥"

—सुभद्राकुमारी चौहान

(१५)

दिल्ली सहर में से सहबा[१] ! पोत[२] मंगाय दो जी।
दो हाथ पच्चीसी गज, तीसी गड्डा मारू जी॥
अलना तो पलना सायबा ! बन्धन बंधा दो जी।
बिच बिच मोर मंडा दो, गड्डा मारू जी।
पीला तो ओढ़ हमारी जच्चारानी पिढ़ले बैठी जी।
कोई सास नन्द मुख जोड़ा गड्डा मारू जी।
पीलिया तो ओढ़ म्हारी जच्चारानी सरवर चली जी।
कोई सारे सराहां[३] जी, गड्डा मारू जी।
पीला रंगा दो जी॥
कै पीला तेरा बाप रंगाया, कै ससुरा मंगायो जी।
आँखें ना खोलै म्हारी जच्चा मुख से ना बोलै जी।
जच्चा का राजन बिलखा ही बिलखा डोले जी।
पीला रंगा दो जी॥

१. पति, २. जरी का कपड़ा, ३. सराहना की।

दिल्ली शहरों के सायबा[1], वैद बुलाय दो जी।
कोई जच्चा की नबज दिखा दो गड्डा मारू जी।
पीला रंगा दो जी॥
आंखैं भी देखैं, म्हारी जच्चा मुख से भी बोलै जी।
कोई जच्चा का राजन हरषाही हरषा डोलै जी।
पीला रंगा दो जी॥
अपने चढ़न का सयबा धुड़ला दे दो जी।
कोई जच्चा के जीवै की बंधाई गड्डा मारू जी।
हमारे मारू[2] जी मनड़ा भी लेते जी।
कोई प्यारी सूं कि दुप्यारी गड्डा मारू जी॥

जब बच्चा दस दिन का हो जाता है तो पिता के यहाँ से प्रसूता और बच्चे के लिये उपहार आते हैं। गीत की नायिका के लिये कहीं से कुछ नहीं आया। इसलिये उसने अपने पति से पीली पोत की साड़ी मंगायी, बन्धेज का मोर वाला दुपट्टा बनाया और उन्हें पहिन कर सरोवर पर गयी। उसकी शोभा अवर्णनीय थी। सब ने उसकी सराहना की।

परन्तु इसी समय स्त्री को पति के प्रेम की परीक्षा लेने की सूझी। उसने बीमार होने का बहाना कर लिया। पति व्याकुल हो उठा। देहली से वैद्य बुलाया गया।

स्त्री प्रसन्न हो उठी और बोली—"प्रियतम! अपने चढ़ने का घोड़ा देकर वैद्य को विदा कर दो। मैंने तो तुम्हारे प्रेम की परीक्षा ली थी।"

(१६)

सासू कहेगी बहुड़िया, ननद मेरी भवजिया।
राजा मेरा कहेगा बंझोरिया, जीवन कैसे होयगा?
राजा आमला को दो कटवाय, महक हमें आई।
गोरी आमला ना काटा जाय, कहो बार डेढ़ सै।
तुम्हें महलों से करूंगा जवाब, चली जाओ बाप कै।
इक बन उलुखा[3] दूजा वन उलुखा, तीजे में गंगा हिलोरै।
पार कैसे उतरूँ॥

---

१. निवासी, २. पति, ३. पार किया।

मेरे भैया मल्लाह उरै[1] क्यों ना आओ।
जल्दी से नाव डलावो, जाऊँगी अपने बाप कै
आज बसो मेरी सेज, सबेरे डालूं नाव
चली जाना बाप कै ।।
मल्लाह ! मूछों पे धरूँगी अंगार, डाढ़ी तो मूंडूं तेरे बाप की।
चन्द्र-वदन हीरे लाल, सेजों पै छोड़े एकले।
मार कछाला तिरिया उतर गई, मल्लहा का मींजै दोनों हाथ
गजब तिरिया कर गई ।।
एक पग दिया देहल पै दूजा पलंग पै।
ए जी होय पड़े नन्दलाल अंखियां खुल पड़ीं।
जो लाल होते अपनी दादी के अपनी ताई के घर।
राजा दरब सोने की अजुध्या में दोनों हाथों लुटावती।
अब लल्ला हुए हो अपने नाना के, अपने मामा के घर।
बेटा अब मेरी कछु ना बसाय, विपत में सम्पत भयी।
जो लल्ला होते दादा के घर, ताऊ के घर।
लल्ला बजते तबल निसान, गवन लगते सोहिले ।।

बचारी स्त्री निःसन्तान है। वह इसी सोच-विचार में तन्मय है कि यदि उसके बच्चा न हुआ तो वह सास, नन्द और पति के व्यंगमय कटाक्षों को कैसे सहन करेगी ? स्त्री की करुण पुकार को सुनकर करुणेश का आसन डोल गया। स्त्री गर्भवती हो गई। उसने अपने पति से आँवले के वृक्ष को कटवाने को कहा, क्योंकि तबियत ठीक न रहने के कारण उसमें उसे दुर्गन्धि आती थी। पति ने बहुत ही अपमानजनक व्यवहार किया। पति के द्वारा ऐसे कटु व्यवहार को वह कैसे सहन करती, जिसके लिए उसने अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया था। उसका हृदय अपमान की तीव्र ज्वाला में झुलस उठा। वह बिना सोचे-विचारे पिता के यहाँ चल दी।

गंगा चढ़ी हुई थी। मल्लाह से उसने पार उतारने को कहा—परन्तु मल्लाह ने उसका अपमान करना चाहा, परन्तु नारी के लिए सतीत्व से बढ़कर विश्व में कुछ भी नहीं है। वह नाविक से बोली—ऐ मल्लाह ! तेरी दाढ़ी मूंछ जला देने योग्य हैं। जिसने 'भैया' के प्रेममय सम्बोधन से पुकारा उसी का यह अपमान। तेरे जैसे पामर को जन्म देने वाले पिता की भी दाढ़ी मुड़ा देने योग्य है। ऐ

१. यहाँ।

नीच ! मेरे पति का मुख चन्द्रमा के समान है। हीरे और लाल के समान उनकी कान्ति है। उन्हें मैं अकेला शय्या पर छोड़कर क्या इसलिए आई हूँ ?

पितृगृह में पहुँचते ही देहली पर ज्योंही पैर रखा, उसकी गोद सुन्दर शिशु से भर गई। अब उसे अपने श्वसुरालय का स्मरण हो आया। वह सोचने लगी कि यदि मुन्ना अपने घर में जन्म लेता तो संगीत की मधुर ध्वनि और वाद्य-निनाद से गृह गूँज उठता परन्तु मुन्नू का जन्म दुर्भाग्य से नाना और मामा के यहाँ हुआ है, अब मेरा कुछ भी वश नहीं चलता। (नाना के यहाँ बच्चे का जन्म होना बहुत से स्थानों में अच्छा नहीं समझा जाता।) मुन्ने ! तू मेरी इस विपत्ति में सम्पत्ति बन कर आया है।

गीत नारी के उज्ज्वल प्रेम का प्रतीक है। गीत के अन्त में भी नारी-हृदय का सुन्दर चित्र अंकित है।

(१७)

सिया खड़ी पछताय कुश वन में हुए !
जो यहाँ होती ललना की दाई
ललना देती जनाय, सुरज देती पुजाय
मुन्ना लेती खिलाय। कुश० ॥
जो यहाँ होती ललना की नायन
मंगल देती गवाय, चौक देती पुराय,
न्हान देती नहलाय। कुश० ॥
जो यहाँ होती ललना की दादी
चरुए देती धराय, खुशियाँ लेती मनाय
बाजे देती बजवाय। कुश० ॥
जो यहाँ होती ललना की चाची
पलँगा देती बिछाय, दीपक देती जलाय
घुट्टी देती बनाय। कुश० ॥
जो यहाँ होती ललना की ताई
ललना लेती खिलाय, मोहरें देती लुटाय
नेग देती विलाय। कुश० ॥
जो यहाँ होती ललना की बूआ
सतिये देती धराय, काजल देती लगाय
दूध देती पिलवाय। कुश वन में हुए ॥
सिया० ॥

सीता के हृदय के अरमानों का ऐसा सजीव चित्र किसने अंकित किया है ? 'उत्तर-रामचरित नाटक' में आता है कि पीड़ा से विह्वल हो सती सीता सुरसरि में कूद पड़ीं। तदुपरान्त वाल्मीकि ऋषि ने दोनों बच्चों का लालन-पालन किया। पुत्रों को देखकर दु.ख से कातर हो जानकी के मुख से निकल पड़ा कि इन बच्चों का जात-कर्म संस्कार कौन करेगा ? इतना ही कहलाकर महाकवि ने इस घटना पर आवरण डाल दिया है।

भाग्य की कैसी विडम्बना है। महारानी सीता शिशु-जन्म के समय साधारण दाई तक की सहायता नहीं पातीं।

नोट :—लोक-गीतों में सतिये का बहुत वर्णन आता है। सतिया हिन्दू संस्कृति का चिह्न है। यह चिह्न इस 卐 आकृति का होता है। उसके चारों पग धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष; चारों वर्ण, चारों युग और चारों आश्रम के द्योतक माने जाते हैं। यह ॐ का भी चिह्न माना जाता है।

(२०)

पहिला सपन सासू मैं देख्यौ पहले पहरवा।
अंगन में देखा बह्मना गउवा बछ्छउआ लिये।
ए सासू मैं देख्यौ हरी हरी दुबवा
तो अमुवा बउर लागे।
चुप रह बहुआ, चुप रह, बैरन ना सुनै दुश्मन ना सुनै
मोरी ए बहुआ आज सोने के राति होलरवा तोरे होई है।
होत बिहनवा लोई[1] लागे कन्हैया लाला जनमे
मोरी ए सखियो, बजै लागी अनंद बधइया गाँवहि सखी सोहर।

बहू ने स्वप्न में आँगन में ब्राह्मण को गाय का बछड़ा लिये बैठे देखा। हरी-हरी दूब और बौर लगा हुआ आम्र वृक्ष देखा। सास ने कहा, 'किसी और के सन्मुख न कहना। तुम्हारे पुत्र उत्पन्न होगा।"

प्रातः की लालिमा आकाश में फैल रही थी। लाल का जन्म हुआ। आनन्द के बाजे बजने लगे। सखियां सोहर गाने लगीं।

(२१)

चिरी चिंगाल[2] यूं कहैं, सुन राजा मोरी बात।
तुम तो बांझ जन्म के राजा, कोई थारे सम्पत नाय॥
सुनो रघुनाथ हरी।

---

१. लालिमा फैल रही थी। २. [illegible]

हमसे राजा क्या कहो जाओ झण्डू[1] के पास।
झण्डू के तुम पास जइयो, कोई वो ही दे बतलाय ॥
सुनो रघुनाथ हरी।
हमसे राजा क्या कहो जाओ गुरुओं के पास।
ऋषियों के तुम पास जइयो, वे ही दें बतलाय।
सुनो रघुनाथ हरी ॥
वहाँ से राजा चल पड़े, और आये बागों के बीच।
एक बावड़ी दो फल लागे, कोई गिरा धरनि पै आय ॥
सुनो रघुनाथ हरी।
वहाँ से राजा चल पड़े, और आये महलों के बीच।
हम छीलें तुम खाओ कौशल्या, कोई सम्पत होनेहार ॥
सुनो रघुनाथ हरी।
पहला मास जब लगा कौशल्या, अयोध्या मंगलचार।
नवाँ मास जब लगा कौशल्या, पीहर कूँ हम जाँय ॥
सुनो रघुनाथ हरी।
महलों में तो अम्मा रहसी, मेरी आई कौशल्या धीय।
मित्रों में तो भय्या रहसा, मेरी आई कौशल्या बहन ॥
सुनो रघुनाथ हरी।
चौके भाभी हँसती डोलै, मेरी आई ननदिया आज।
दसवां मास जब लगियां, कौशल्या लाचार ॥
सुनो रघुनाथ हरी।
नौ दस मास गरभ में बीते, सुन कौशल्या बात।
अब मत सोच करो तुम मन में, अब लैं हरि अवतार ॥
सुनो रघुनाथ हरी।
किसके हो तुम लाड़ले, किसके तुम फ़रजन्द।
क्या तुम्हारा नाम जू कहिये, जल्दी दो बतलाय ॥
सुनो रघुनाथ हरी।
मातु कौशल्या के लाड़ले, दशरथ के फ़रजन्द।
रामचन्द्र हमारा नाम जू कहिये, जल्दी दिया बताय ॥
सुनो रघुनाथ हरी।

---

१. वैद्य।

हमसे लल्ला क्या कहो, जाओ नाना के पास।
नाना के तुम पास जइयो, कोई वे ही दें भिजवाय॥
सुनो रघुनाथ हरी।
नाना के सुपने गये, सुन नाना मेरी बात।
अब दस मास गरभ में बीते, अब लेंगे अवतार॥
सुनो रघुनाथ हरी।
किसके हो तुम लाड़ले, किसके हो फ़रजन्द।
क्या तुम्हारा नाम जू कहिये, जल्दी दो बतलाय॥
सुनो रघुनाथ हरी।
मातु कौशल्या के लाड़ले, दशरथ के फ़रजन्द।
रामचन्द्र हमारा नाम जू कहिये, जल्दी दिया बताय॥
सुनो रघुनाथ हरी।
हमसे लल्ला क्या कहो, जाओ दादी के पास।
दादी के सुपने में जइयो, कोई वो ही लें [बुलवाय॥
सुनो रघुनाथ हरी।
दादी के सुपने गये, सुन दादी मेरी बात।
नाना के घर जन्म न लेंगे, ननुआ पड़ जाय नाम॥
सुनो रघुनाथ हरी।
किस के हो तुम कुंवर लाड़ले, किसके तुम फ़रजन्द।
क्या तुम्हारा नाम जू कहिये, जल्दी दो बतलाय॥
सुनो रघुनाथ हरी।
दशरथ के हम लाड़ले, कौशल्या के फ़रजन्द।
रामचन्द्र हमारा नाम जू कहिये, अब लेंगे अवतार॥
सुनो रघुनाथ हरी।
हमसे लल्ला क्या कहो, जाओ बूआ के पास।
बूआ से फिर जा कहो, बूआ आई दरबार॥
सुनो रघुनाथ हरी।
एक सम्पत मुझे रातों झगड़े, अब लेंगे अवतार।
सुनते ही राजा चल पड़े, आये सौहरे[1] दरबार॥
सुनो रघुनाथ हरी।

---

१. सुसराल।

बागों में तो बाबल रोया, मेरी चली कौसल्या धीय ॥
महलों में तो अम्मा रोई, मेरी चली कौसल्या धीय ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।
यारों में तो भय्या रोया, मेरी चली कौसल्या बहन ।
चौकों भाभी रोती डोलै, मेरी चली गले का हार ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।
वहां से रानी चल पड़ी, आई सौहरे दरबार ।
ज्यों ही घर के भीतर आई होय पड़े नंदलाल ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।
बहन सुभद्रा लाओ बुलाकै, कोई अब मांगन की बार ।
सीसों बन्दी[1], बैना[2] हदखिला, कोई झूमर[3] डलने हार ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।
सीस पै सालू चद्दर हदखिला[4], कोई ठप्पा डलने हार ।
कानों पत्ते बाली झुमके, नाक में नथ बेसर डलने हार ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।
गले चम्पा, जुगनी बाहों जोशन डलने हार ।
हाथों पेची और अंगूठी, कोई तोड़ा डलने हार ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।
अंगूठा आरसी, ढूंगे तगड़ी गुच्छा डलने हार ।
सुन्दर दामन हदखिला, अरे सलमा लगने हार ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।
इतना तो हम दे चुके, और भी देनेहार ।
बाग बगीचे, ताल तलैया ये लो और भी देनेहार ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।
महल दुमहले, साढ़ी ले लो, बुगचे और पिटारी ले लो ।
मेरा सर्वस सब कुछ बांट दो सभी लाल पै वार ॥
सुनो रघुनाथ हरी ।

हिन्दू समाज में निःसन्तान होना एक अभिशाप है । राजा दशरथ की सन्तान न होने के कारण पक्षी तक बुराई करते थे । राजा ऋषि-मुनियों से पूछने गये । यहां यज्ञ का वर्णन फल की प्राप्ति के द्वारा किया गया है । कौशल्या जी पुत्र

१, २, ३, सिर के आभूषणों के नाम, ४. बहुत सुन्दर लगना ।

जन्म के समय पिता के यहां गई। वहाँ उन्हें देखकर माता, पिता, भाई, भाभी सब हर्ष-विभोर हो उठे। ग्रामों में कहीं-कहीं पर नाना के यहाँ धेवते-धेवती का जन्म लेना अशुभ समझा जाता है। गीत में कल्पना की गई है कि राम अपने नाना के यहाँ जन्म लेना नहीं चाहते। उन्होंने सब से प्रार्थना की। परंतु किसी ने ध्यान न दिया। अन्त में वह बूआ से प्रार्थना करते हैं। बूआ यह सुनते ही भाई को सुसराल भेज देती है। बूआओं को स्वाभाविक ही भतीजे-भतीजियों से बहुत प्रेम होता है। राम का जन्म हुआ। दशरथ जी हर्ष-विभोर हो बहन को बुलाते हैं और अपना सर्वस्व बहन को दे डालते हैं। भाई-बहन का प्रेम अतुलनीय है। इतिहास में दशरथ जी की बहन का वर्णन नहीं है किंतु भाई का भ्रातृत्व बहन के बिना सूना है। इसीलिए गीत की रचयित्री ने दशरथ जी की बहन की कल्पना की है।

(२२)

किस घर मौला अमुवा किस घर नारियल बोया जी
किस घर चुवै है मजीठ।
बाप घर मौला अमुवा, ससुर घर नारियल
सैयां घर चुवै है मजीठ।
बोलो घर के पुरोहित, पुस्तक बांच सुनाओ जी
मां उनकी कहिये रानी, बाबल कहिये राजा जी
भय्या अर्जुन वीर, बहन राधा रुक्मणी।
बोलो वर के पुरोहित, पुस्तक बांच सुनाओ जी।
मां इसकी कहिये नटनी, बाबल इसका नटुआ जी
पांचों भय्या चोर उचक्के, बहिन दारी[1] उरखनी।
इतना वचन सुन जच्चा रानी रूस गई
दे लई चन्दन किवाड़, होलर ले कै पड़ रही।
बाहर से आये कवन रामा, ये मन रहसत वे मन बिलखात।
गोरी खोल डालो चंदन किवाड़, होलर दिखलाइयो।
मैं नटनी की हूँ जाई, तुम्हें ना दिखाइये।
गोरी खोल डालो चन्दन किवाड़ होलर दिखलाइयो।
मां थारी गंगा जमुना, बाबल राजा सूरज
पांचों भय्या अर्जुन वीर, बहिन निर्मल चांदनी॥

---

१. नाचने-गाने वाली।

किसके घर में आम पर बौर आया है ?
किसके घर में नारियल बोया गया है ?
कहाँ पर मजीठ चू रहा है ?
इनके पिता के घर आम पर बौर आया है,
श्वसुर के घर नारियल बोया गया है।
और पति के यहां मजीठ चू रहा है।

अर्थात् यह सब शुभ चिह्न कोई शुभ सूचना दे रहे प्रतीत होते हैं।

वर पक्ष और कन्या पक्ष के पुरोहित आते हैं। कन्या पक्ष का पुरोहित कहता है, 'कन्या का पिता राजा है, माता रानी है, पाँचों भाई अर्जुन के समान हैं, और बहन रुक्मिणी के तुल्य है।" परन्तु वर पक्ष के पुरोहित को हँसी की सूझी। उसने कहा, 'नहीं, बहू की माता नटनी, पिता नट, भाई चोर-उचक्के और बहिन नाचने-गाने वाली है।"

शुभ अवसरों पर इस प्रकार का हास-परिहास ग्रामों में प्रचलित है। बहू ने श्वसुरालय के पुरोहित के यह शब्द सुने। परिहास सभ्यता की सीमा का उल्लंघन कर चुका था। बहू के हृदय में इस की कसक बनी रही। परन्तु उस समय वह कुछ न बोली।

सौभाग्य से उसके पुत्र उत्पन्न हुआ। अब उसने मानलीला प्रारम्भ की। पति ने पुत्र देखने का अनुरोध किया। वह बोली, "मैं नटनी की कन्या और चोर-उचक्कों की बहिन हूँ। मेरा पुत्र देखकर क्या करोगे ?" पति ने कहा, "तुम्हारी मां गंगा-यमुना के समान पवित्र है। पिता सूर्य के समान तेजस्वी, भाई अर्जुन के समान वीर और बहिन चन्द्रमा की धवल ज्योत्स्ना के समान है।" अन्तिम पंक्तियों की उपमाएँ सुन्दर हैं।

पहले पति ने अपनी पत्नी के अपमान पर ध्यान नहीं दिया परन्तु आज वह उसका अपमान कैसे सहन कर सकता था ? वह तो अब उसके पुत्र की जननी है।

मनुस्मृति में भी तो लिखा है, "आचार्य दस उपाध्यायों से अधिक पूजनीय है, पिता सौ आचार्यों से अधिक पूजनीय हैं। परन्तु माता, पिता से भी सहस्र-गुणा पूज्या और शिक्षा देने वाली है।"

मातृत्व का यही मान हम गीतों में यत्र-तत्र पाते हैं।

(२३)

नई य बिहाई लाडली, लावर पुरसाई ।
भले आई, भल आवना, तेरे बल की लोडूंगी बाट ।
गव्दी वे मूढ़े बैठना, तेरे दूध पखालूंगी पैर ॥
जन्म न जाई है धीय, जाया है पूत सुलच्छना ॥
सौहरे घर बाजेंगे निसान, उन घर धरती ऊनई ।
तेरे पितरों ने लिया है उलाहना ।
हापुड़ नगर मझार, लोग महाजन यूं कहें ।
कउन रामा की कुलवधू, कउन रामा की बालई ।
नवल होलर की है माय ।
मन में मतना गरबिये बहू भाग बड़ों का होय ।
भाग बड़ा तेरा सास का जिसने जाये तव पति देवर जेठ ॥
भाग बड़ा जच्चा रानी का जिसने जाया कन्हैया सा पूत ।
तेरी दासी दाबैं पैर, लाल झूलैं पालना ।

प्रसूता से कोई स्त्री कहती है, "हे प्रसूते ! तुम कितनी भाग्यशालिनी हो कि तुम्हारे पुत्र उत्पन्न हुआ है। तुम्हारे पूर्वज भी इस उत्सव में प्रसन्नता से भाग लेने के लिए स्वर्ग में उत्कण्ठित हैं। तुम्हारे श्वसुर के यहाँ, जिनकी वंश वृद्धि हुई है, वाद्य-ध्वनि होगी। हे बहू ! हापुड़ नगर के सब पूछते हैं कि वह सुलक्षणी स्त्री किस सौभाग्यशाली की कुलवधू है और किस तेजस्वी की कन्या है।

सच है, एक ही सुपुत्र कुल के गौरव को बढ़ा देता है। परन्तु सुपुत्र को पाकर गर्व नहीं करना चाहिए। धन्य है तुम्हारी सास जिसने तुम्हारे देवर, जेठ और तुम्हारे पति को जन्म दिया है और धन्य हो बहूरानी तुम, जो तुमने कृष्ण जैसे पुत्र को जन्म दिया है।"

हिन्दू-समाज में कन्या ठुकराया हुआ प्राणी है। इसीलिये तो गीत में बहू से कहा गया है कि तुम भाग्यशालिनी हो जो तुम्हारे कन्या उत्पन्न नहीं हुई।

(२४)

सोने के थाल राजा इमरत भोजन ।
कोई ले कै सासू पै गइयां जी राजा ॥
तेरा तो भोजन बहू हरबीना खाऊं, तेरा तो मस्तक बांझा
वहींय तो थाल छोड़े, वहींय तो भोजन डाला ।

कोई आय महल बिच बैठिये ।
और दिनां तो री गोरी हँसती विलसती री रहती
आज उदासी कैसे छाइये ।
अम्मा तुम्हारी रे राजा ! सासू हमारी रे राजा !
उन मुझे बोले हैं बोल जी ।
सोने के सार जी राजा ले के पहुँचे जी पिता ।
आँखों से देखूं री गोरी, कानों से सुन लूं री गोरी
जब मुझे आवे इतबार जी ।
तेरे तो सार बेटा हरबी ना खेलूं रे
तेरे तो महलों में रे बहू बाँझ जी ।
और दिनां तो रे राजा हँसते बिलसते रे राजा।
आज उदासी कैसे छा गई ।
सोहरा तुम्हारा री रानी, बाबल हमारा री रानी ।
उन हमें बोले हैं बोल जी ।
आँखों से देखा री रानी, कानों से सुन लिया रानी ।
अब मुझे आया इतबार जी ।
लाओ कटारी रे राजा, कोख तराशूं रे राजा
इन मेरे मारे हैं मान जी ।
काहे कटारी मारो री गोरी, काहे कोख तराशो री गोरी ।
हमसे तो तुमसे बहुत जी ।
घर कू तजेंगे रे राजा, बन कू चलेंगे रे राजा ।
कोइ वन में से सम्पत होय ।
इक वन उलखा रे राजा, दूजा वन उलखा रे राजा
तीजे में पाई जड़ी बूटी जी ।
काहे की कूंडी रे राजा, काहे का सोटा रे राजा
काहे का नीर डालें रे राजा ।
ईंट की सिल री रानी, कंकड़ी का बट्टा री रानी
नैनों का डला है नीर जी ।
पहला महीना रे राजा, दूजा भी लगिया रे राजा
तीजा भी लगिया रे राजा

चौथा महीना रे राजा, पंचवां भी लगिया रे राजा
छठवां भी लगिया
सातवां महीना रे राजा, अठवां महीना रे राजा
नवमा भी लगिया
घर कूं चलेंगे राजा, वन कूत लेंगे राजा
कोइ अब म्हारे सम्पत होयगी।
एक पैर देहल पै रे राजा, दूजा पलंग पै रे राजा
कोई होय पड़े नंदलाल जी।
सौहरा बुलाइयो रे राजा, सासू बुलाइयो रे राजा
कोई दामों की बोरी मेरे खरचे जी हो।

बहू के कोई सन्तान न थी। वह सास के लिये थाल परस के खाना ले गई। किन्तु सास ने उत्तर दिया कि मैं बन्ध्या के हाथ का भोजन नहीं करूंगी।

बहू को बहुत दुख हुआ। पति ने उदासी का कारण पूछा तो उसने सास के शब्द कह सुनाये। पति को विश्वास न हुआ। अतः वह स्वयं चौपड़ लेकर पिता के समीप पहुँचा। पिता ने भी उसके साथ बहू बन्ध्या होने के कारण चौपड़ खेलना अस्वीकार कर दिया।

दोनों के लिये यह अपमान की वेदना असह्य थी। स्त्री प्राण त्यागने को प्रस्तुत हो गई। परन्तु पति ने कहा, "प्राण क्यों त्यागती हो? तुम्हारे मेरे समान बहुत से होंगे।"

वे दोनों वन-वन में पुत्र प्राप्त करने की जड़ी की खोज में चल पड़े। स्त्री ने आँसुओं का पानी डाला और ईंट की सिल और कंकड़ का बट्टा बनाकर जड़ी को पीस कर पी लिया।

अन्त में पुत्रोत्पत्ति के समय बहू घर पर आई। पुत्र उत्पन्न होने पर सास-श्वसुर को बुलाया क्योंकि वही तो पोते के जन्म पर चाव मना कर रुपये लुटायेंगे।

गीत की अन्तिम पंक्तियों में बहू के विशाल हृदय का परिचय मिलता है। बहू का उदाहरण कुल-वधुओं के लिए अनुकरणीय है। उसकी क्षमा करने की क्षमता सराहनीय है।

सन्तों की उपमा फलदार वृक्षों से दी गई है—"ये उततें पाहन हनें, वे उततें फल देत।" गीत में वर्णित बहू का चरित्र भी सन्तों के सदृश ही है।

(२५)

सोने के सिंहासन राजा दशरथ मचियै कौसल्या रानी
मोरे ए राजा, जो मेरे होइहैं नंदलाल तो कहा लुटइबौ।
घुड़वा लुटइये घुड़सरिया ता हथनी महावत।
मोरी ए रनियाँ ! ए तेरे होलरिया के जनमे अजुध्या लुटइबे।
कछु ना रहिबे।
होत विहाना, लोई लागै रेत[1] रामा जनम लिये।
मोरी ए सखियाँ, बजन लागी आनंद बधाइयाँ।
गावहिं सखी सोहर।
सोने के सिंहासन तो राजा दशरथ,
तो घोड़ा लुटावै घुड़सरिया त हथनी महावत।
मोरी ए सखिया मचिया बैठि कौसल्या रानी सोनवा संकल्पैं।
राजा से बोली रानी कैकेयी सुनो हे राजा दशरथ
मोरे हे राजा धीरे धीरे पटना लुटाव, हमहु कछु राखो हो।
नित मेरे फूले बेलिया, नित बोरे अमुवा हो।
मोरी ए रनिया, नित मोरे जनमे होलरिवा नित ही मोरे सोहर
मोरी ए रनिया, होलरिवा के जन्मे कछु नहिं रखिबे।

राम के जन्म पर प्रसन्न होकर राजा दशरथ और रानी कौशल्या मन भर कर दान कर रहे हैं। कैकेयी रानी इतना अधिक लुटाने को मना करती है। राजा का उत्तर कैसा सुन्दर है—"हे रानी ! मेरी रानियाँ नित्य ही लताओं की तरह फूलें। जिस प्रकार आम्रवृक्ष बौर से लदा रहता है, इसी प्रकार मैं शिशुओं से घिरा रहूँ। हे प्रिये ! मुझे नित्य ही सोहर की मधुर ध्वनि सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो। आज पुत्र-जन्म के शुभ अवसर पर मैं कुछ भी बचाकर नहीं रखूंगा।"

आज सन्तति-निग्रह के युग में सन्तान की इतनी अधिक कामना मूर्खतापूर्ण प्रतीत होती है। परन्तु वृद्धावस्था तक ३६० रानियों के होते हुए भी राजा पुत्रहीन रहे, इतनी अधिक प्रतीक्षा के पश्चात् पुत्र की प्राप्ति पर राजा को हर्ष होना स्वाभाविक ही है।

(२६)

जच्चा हमारी भोली भाली रे।
जच्चा हमारी बोल ना जानै रे॥

---

१. उषाकाल

सांप मार सिरहाने रख लिया, बिच्छू मार बगल में।
जच्चा मोरी खाना ना जानै रे।
दसों कनस्तर घी के खा गयी, मनों मेवा बूरा।
आये गये को भूखा मारै, धर ले सब कुछ कोठे में।
जच्चा हमारी० ॥
जच्चा हमारी लड़ना ना जानै रे।
आई गई के कपड़े उतारे[1] कह ले नाही कहने में।
जच्चा हमारी० ॥

अच्छी व्यंगोक्ति है।

(२७)

मन खोल के माँगो नन्दी, लेना हो सो लेय।
जेवर मत माँगो नन्दी, डिब्बों का शृंगार।
जेवर में से आरसी दूंगी, छल्ला लूंगी निकाल ॥
मन खोल के माँगो० ॥
तीयल[2] मत माँगो नन्दी, बुगचे का शृंगार।
कपड़े में मैं अंगिया दूंगी, मुलकत लूंगी निकाल ॥
मन खोल० ॥
बर्तन मत माँगो नन्दी, चौके का शृंगार।
बर्तन में मैं कटोरा दूंगी, तल्ला लेऊँ निकाल ॥
मन खोल० ॥
शीशा अलमारी मत माँगो नन्दी, घर का है शृंगार।
तुम्हें तो मैं डिबिया दूंगी, शीशा लेऊँ निकाल ॥
मन खोल० ॥
भतीजा लो गोद में नन्दी, गोदी का शृंगार।
घर आंगन बीबी भर उठै, जब लेने जाय ससुराल ॥
मन खोल० ॥

(२८)

मेरे मैके का जिया उदास, आई ननदिया पाहुनी।
जरा उठ क्यों न बैठो जच्चा रानी,
उठ के खोलो किवाड़। आई० ॥

---

१. अपमान करना। २. लड़की के पूरे कपड़ों का जोड़ा।

बीबी हम पै उठा न बैठा जाय,
अरु लोहे की सांकल खुलती नाय । आई० ॥
जरा उठ क्यों न बैठो जच्चा रानी,
उठ के तो जरा पीढ़ा बिछाओ । आई० ॥
बीबी पीढ़े की पट्टी टूट गई,
मेरे पलके[1] के टूटे चारों पाएँ । आई० ॥
जरा उठ क्यों न बैठो जच्चा रानी,
उठ के पूरी कराओ । आई० ॥
बीबी कोठी के गेहूँ निबट गए,
तेरे भैया की लात गई[2] भूरी भैंस । आई० ॥
जरा उठ क्यों न बैठो जच्चा रानी
उठ के पनिया पिलाओ । आई० ॥
बीबी डोल की रस्सी टूट गई
पनिहारे को आ गया जाड़ा बुखार । आई० ॥
जरा उठ क्यों न बैठो जच्चा रानी
उठ के टोपी कुर्ता सम्भाल
लल्ला का गहना सम्भाल
सारा मेवा सम्भाल । आई० ॥
कुर्ते टोपी मैंने धरे सँगवाय
गहना लल्ला को दिया पहनाय
मेवा तो मैंने धरी संगवाय । आई० ॥
जरा उठ क्यों न बैठो जच्चा रानी
उठ के तो साड़ी संजोय
लड्डू कराओ । आई० ॥
बीबी ! लड्डू करने आते नाय
हलवाइयों को फुरसत होती नाय । आई० ॥
सन्दूकों की ताली तेरे भय्या के पास
वे तो गये अपनी ससुराल
बाजारों की हो रही है हड़ताल । आई० ॥

---

१. पलंग, २. दूध देना बन्द कर दिया है ।

जरा उठ क्यों न बैठो जच्चा रानी
उठ के तो मिलना संजोय । आई० ।।
बीबी हिया हिलोरे लेता नाय
मेरे नैनों से नीर बरसता नाय । आई० ।।
बीबी उठ क्यों न बैठो जच्चा रानी
जरा उठ के तो रस्ता बताय । आई० ।।
बीबी सीधी सड़क मेरठ को जाय
तेरे भय्या को कर दूं तेरे साथ
ड्यौढ़ा टिकट आवे दिलवाय । आई० ।।

(२६)

हां जी साहेबा राजा सुत्ती थी मैं रस भर नींद सुपरे में बांटी घुंगरी जी ।
महाराज हाँ जी ।
हां जी भूली धन असल गंवार बिन जामे कैसी घुंगरी जी महाराज ।
हेरी अम्मा मरूंगी जहर-विष खाए, राजा ने बोली मारी जी महाराज ।
हां बेटी तेरी तो मरेगी बला तेरी राम सुनेगा विनती जी महाराज ।
हां जी राजा खड़ी मुंडेरे की ओट,
इन्द्रराजा झड़ी लगाइया जी महाराज ।।
हां जी साहेबा बरसा है मूसलधार, हिवड़े में बूंद समा गई जी महाराज ।
हां जी साहेबा धन ने पहला दूजा मास फूल झट लगीया जी महाराज ।
हां जी साहेबा लागा तीजा चौथा मास,
मेरे आम निम्बू मन लगीया जी महाराज ।
हां जी साहेबा लागा पंचवां छटा मास मन दूध दही लगीया जी महाराज ।
हां जी साहेबा लागा सतवां मास सतमासा पूजन निकसी जी महाराज ।
हां जी साहेबा लागा धन नै अठवां नौवां मास मैंने देहली से बुलाइया
जी महाराज ।
हां जी लागा धन नै नौवां दसवां मास
मेरा होलर सबद सुनाइया जी महाराज !
हां जी साहेबा हरे बांसां की टोकरी
मंगा गेहूं की घुंगरी जी महाराज ।
हां जी साहेबा नाई बेटा वेग बुला घर घर बांटो घुंगरी जी महाराज ।

हां जी नाई का ससुर बड़े की पोल[1] घर घर में ले जां घुंगरी जी महाराज।
हां जी नाई का जाइयो जेठ की पोल वे रहस कं बांटें घुंघरी जी महाराज।
हां जी नाई का गईयां मेरे भाई की पोल
मेरी बाजे से आव घुंघरी जी महाराज।
हां नाई का मेरे देईयो मेरे परिवार बीबी के न दो घुंगरी जी महाराज।
हां जी बहू जी भूला तेरा परिवार बीबी के झाड़ा टोकरा जी महाराज।
हां जी नाई का बैठो न मेरे पास मेरी किस विध बांटी घुंघरी जी महाराज।
हां जी साहेबा इतना सुनके आसनपाटी ले के पड़ी जी महाराज।
हां जी साहेबा बाहर से आया गोरी का राजा
उदास धन पड़ी जी महाराज।
हां जी साहेबा थारा नाई का असल गँवार
मेरी घुंघरी बांट न जाने जी महाराज।
भूला मेरा सारा परिवार बीबी के झाड़ा टोकरा जी महाराज।
हां जी राजा तुम उलटे जाओ मेरी उलटी लाओ घुंगरी जी महाराज।
हां जी गारी उठो न करो न सिंगार उलटी लाऊं घुंगरी जी महाराज।
हां जी राजा होके घोड़े असवार बहन के भाई पहुंचा जी महाराज।
हां रे बीरा देखूं थी नाई के की बाट, तेरा आना किस विध हो गया जी
महाराज।
हां ए बेब्बे ! तेरी भाभी ओछे घर की वा उलटी मांगे घुंगरी जी महाराज।
हां रे बीरा हलवे हलवे[2] बोल मेरी देवरानी जिठानी सब सुनें जी महाराज।
हां रे बीरा तैं अपने घर जा तेरी उलटी लाऊँ घुंगरी जी महाराज।
हां जी बहन अपने महल जाय आसनपाटी ले पड़ी जी महाराज।
हां जी बाहर से आया गोरी का नाथ उदास धन क्यूं पड़ी जी महाराज।
हां जी साहेबा मेरे घर भाबो उलटी मांगे घुंगरी जी महाराज।
हां ए धन सोने चांदी के टोकरे मंगा
मोतियों की लाऊं घुंगरी जी महाराज।
हां जी साहेबा धन का डोला साथ दिया जी महाराज।
हां जी साहेबा चाले समुज्जल रात[3]
दिन निकाला धन के देश में जी महाराज।
हां जी ऊपर से तो नीचे उतर आ तेरी उलटी लाई घुंगरी जी महाराज।

---

१. द्वार, २. धीरे-धीरे, ३. सारी रात।

हां री भाबों लेलो पल्ला पसार, पीछे नै मुखड़ा मोड़ के जी महाराज
हां री भाबो हम तो कहिएं सहा[1] पुरुषों की नार।
सोने की लाई घुंगरी जो महाराज।
मोतियों की लाई घुंगरी जी महाराज ॥

यह गीत बूआ बच्चे के जन्म के अवसर पर गवाती है।

नोट :—बच्चे के जन्म की सूचना देने के लिये जब नाई बूआ और नाना के यहाँ जाते हैं तो शुभ सूचना के प्रतीक स्वरूप कुछ न कुछ लेकर जाते हैं। कहीं पर चावल, बताशे और रुपये जाते हैं, तो कहीं मिठाई जाती है और कहीं गेहूं जाते हैं। उसे घुंगरी ले जाना कहते हैं।

१. धनाढ्य पुरुष।

: ५ :

विवाह-सम्बन्धी गीत

विवाह आत्मा का आत्मा से, हृदय का हृदय से और शरीर का शरीर से चिर-मिलन है। हमारी संस्कृति ने कभी Love marriages को आदर की दृष्टि से नहीं देखा। भावावेश में किया गया कोई भी काम स्थायी नहीं होता। गुरुजनों के अनुभव और आशीर्वाद से बिना लाभ उठाये अन्य देश के अधिकांश युवक और युवतीगण कोर्टशिप करके क्षणिक प्रेम के ज्वारभाटे में विवाह करते हैं। इसलिये वहाँ पर विवाह-विच्छेद भी अधिक होते हैं।

विवाह-विच्छेद कुछ विशेष परिस्थितियों में भले ही मान्य हो सकता है, अन्यथा तो यह मनुष्यत्व से पशुत्व की ओर ले जाता है। योरोपीय देशों में प्रणय शरीर के साथ क्रीड़ा करता है, परन्तु हमारे देश में—कवि के भावमय शब्दों में—

मेरा धर्म्म विवाह बन्धन को नाता अमर बनाता है।
जन्म जन्म में भी जो बन्धन नहीं टूटने पाता है॥
यह दैहिक संसर्ग न केवल, सौदों का है नहीं करार।
हर्जा देकर तज देने का, यहाँ नहीं कोई व्यापार॥
यहाँ धर्म्म का बन्धन है, है दो प्राणों का सम्मेलन।
एक धार में मिल जाते हैं, होकर एक युगल तन मन॥

—'नूरजहाँ' से उद्धृत

यही कारण है कि कितनी ही बहिनें पति-वियोग से अधिक चिता की वह्नि को शीतल समझती रही हैं।

आर्य-दम्पति जिस प्रेम की अग्नि को विवाह के मण्डप के नीचे प्रज्वलित करते हैं, वह निरंतर जलती रहती है। मेरु-पर्वत और हिमालय के सदृश

निश्चल और ध्रुव की नाईं अटल-प्रेम के बन्धन में बँध कर वह विश्व का कल्याण करने को कटिबद्ध हो जाते हैं। उनका जीवन अपना न होकर देश और राष्ट्र का जीवन है। गृहस्थ के ऊपर ही तीनों आश्रम निर्भर करते हैं।

आज के दिन हमारी सामाजिक व्यवस्था विशृंखल होने के कारण हमारे वैवाहिक नियमों में भी अन्तर आ गया है, परन्तु जो जातियाँ अपना आदर्श ऊँचा रखती हैं, उनका कभी न कभी उत्थान हो ही जाता है।

हमारे देश में विवाह की धूमधाम बहुत पहले से प्रारम्भ हो जाती है। उस समय हमारे यहाँ बहुत से गीत गाये जाते हैं। कन्या के विवाह के गीत लड़के के विवाह के गीतों से पृथक् होते हैं। कन्या के विवाह के गीतों में 'सुहाग' और 'विदा के गीत' होते हैं। लड़के के विवाह के गीतों में 'घोड़ी', 'बन्ना', 'सेहरा' आदि गाये जाते हैं। 'भात' 'बधावा' और 'जकड़ी' लड़के और लड़की दोनों के ही विवाह में कुछ अवसरों पर गाये जाते हैं।

गीतों से यह ज्ञात होता है कि विवाह अधिकतर तरुणावस्था में ही होते थे। लड़के और लड़की की सम्मति का भी पूरा मूल्य होता था।

आइये, विवाह-सम्बन्धी कुछ लोक-गीतों का रसास्वादन कीजिये।

शिव-पार्वती जी का विवाह

(१)

कैलासवासी, सदा निवासी, संग लिये दौलत दासी।
कैलास पर्वत तपै महादेव, पलक झूल धरनी लागे।
गौरी एक जवाब करै हर सों, जनम जनम हर की दासी।
मैं दासी तुम पुरुष हमारे, हम तुम भोग विलास करैं।
बार बार बहकाई नाथ मैं, अब बहकन की नाय भोला
राजा दच्छ के तूने बहकाय दई, पैंडा ऋषि के तूने बहकाय दई
अब बहकन की नाय भोला।
भूल गवरजा वर मत मांगें या युग में तुम्हें नाय वरैं।
जे जुग जाय और जुग आवै, वा जुग में ब्याहन आवैं।
तुमसे जोगी डोलैं बहुतेरे, डोलैं घनेरे।
क्या चिर[1] ना पहिचानूंगी।
पांय पदम, माथे चंदनवा, मुख में बिजली लाल झमारे।

---

१. चिह्न।

नेत्तर ज्योति बरै शिव के
जेहि चिरना भूलि जाओ तो, अहै नदिया अहै मृगछाला।
उड़े हंस[1], काया कुम्हलाय गई, हेमंचल घर जनम लियो
जाई शिला पै पैदा कीन्ही ताही पै नापैद भई
उड़े हंस काया कुम्हलाय गई, पड़ी रही माटी ढेरी।
नौ दस मास गरभ जै खेली, तेरस लौं कन्या जन्मी।
औरन के घर पुत्र बधाई, पुत्र बधाई।
राजा हिमाचल के घर बेटी की बधाई
बेटी की बधाई बाजन लागी।
बुरज बुरज पै नौबत बाजै, भर भर बोरी दाम[2] लटावें।
गहरे दान करै राजा।
आगे कलजुग बुरे जमाने, अनुजा, तनुजा भेद न रहिहै।
होहि काम वश सब लोगा।
आगे कलजुग बुरे जमाने माय बहन का मान न रहिहै।
तामस धरम ग्रसै दुनिया
आगे कलजुग बुरे जमाने धरम करम सब चूल्हे डारें।
बारहिं बार दुकाल परै।

× × ×

सात बरस की ब्याह करोगे, जीत लेओ ठाकुर गरबी[3]
आठवीं से जब नवमी लागी, दसई से जब ग्यारहीं लागी
बारह बरस की ब्याह करोगे, सिला टाल दई मेरे राजा
वचन के बाण लगे राजा के, घर के बिरमा[4] बोल लिये
चन्दन की चौकी आन दई, तुम बठ जाओ पण्डित ज्ञानी।
जैसे हैं हम राजा हिमंचल तैसोई समधी देखो।
जैसी है मेरी रानी चन्दरावल, तैसोई समधिन देखो।
जैसी हैं मेरी गवर भवानी, तैसोई लड़कौ देखौ।
मत बरिओ कंगाल घरां, कंगाल घरां काऊ नीच घरां।
विष खाय मरै गौरा बेटी, देही को हुतन[5] करै गौरा॥
सात सुपारी सात नारियल, और हल्दी की गाँठ दई।
रतन जड़ाऊ सोने का कंगन, और सोने की छाप दई॥

१. प्राण, २. धन, ३. घमण्डी, ४. ब्राह्मण, ५. तिल-तिल जल कर नाश करना।

और दे दियो सोने कौ सिक्का।
बिरम[1] लकुटिया लै लई, और वर देखन बिरमा चाले।
अग्गिम[2] देखौ, पच्छिम देखौ, धुर गुजरात मालवा देखौ
पूरब अरु पटना देखौ।
सिंहल द्वीप समग्गर[3] देखा घर घर काशी मथुरा री
घर देखै तो वर नहीं पावै, वर देखै घर नाय मिलै।
जोड़ी मिलै संजोग ना पावै, उल्टो ही बगदौ[4] बिरमा
बाग झूलती, फूल बीनती, निदान ही में मिली गवर
मेरी राम राम घर के बिरमा।
कहां कौ धरन धरी नारद मुनी, कहां कौ गमन कियो तुमने
तेरी माय खंदाय[5] दियौ, पिता खंदाय दियौ
तेरो वर देखन जाऊँ गौरा।
एक मूरख मेरे माई बाप हैं ता पीछे मूरख बिरमा।
ढूंढ ढूंढ कै भटक भटक कै मरि जायगौ
हमहूँ लायक वर नाय मिलै।
अपने पती के चरण बताय देऊँ
मढ़ी[6] बताऊँ कैलासन में, तोय देख डोकरी[7] बन जायगो
तोय देख अन्धौ बन जायगौ
तोय देख कोढ़ी बन जायगौ
कई कई रूप धरै करतार।
जोगी देख डिगल[8] मत आइयो
कोढ़ी देख घिनाय मत जइयो।
अन्धौ देख बगद[9] मत आइयो
शिव तें शादी कर अइयो
दछिना का सोच मत करियो।
हाथ पांव कुण्डल डलवाय देऊँ
कानन में सच्चे मोती
मेरे पती के सात चिह्न हैं
पांव पदम माथे चन्दनवा, मुख में बिजली लाल झमारे

---

१. पंडित, २. आगे, ३. सारा, ४. लौटा, ५. भेजना, ६. कुटिया, ७. बुढ़िया, ८. लौट आना, ९. भाग आना।

नेत्तर ज्योति बरै शिव के
बाईं लटा[1] में ऋद्धि, सिद्धि हैं, दाईं में गंगा माई
गैल-घाट[2] कोई आन सतावै, शिब शिब नाम जपत जइयो।
शंकर को नाम लेत जइयो।
गौरा के समझाये बिरामन, कैलासन कौं धरन-धरी[3]।
इक वन लांघ दूजो वन लांघौ, कजरी वन में जाय परै।
और जब गौरें कोसन[4] लागैं
होत गवर तू क्यों न मरी, तोय शेर बघेरा ले न गये।
तू गौरा लंका नाय बगदी, तोय मरघट बाली लेय न गई।
मेरे क्या जी कौ जंजाल परौ।
नाम लेत माई पार्वती कौ, सिंह बिलाय[5] गये वन में
और सर्पन गैल बताय दई तुम यहै राह जइयो बिरमा
टाँक-टाँक[6] जब पर्वत छानौ, खोहन[7] में पाये सिवजी।
महादेव तारी[8] लगाय लई, रंगत बुगत नदिया डोलैं॥
कौन देस तें आये बिरमा, कहा काम ऐसो परिगो।
अरे बेऊ लगाय गये बारह बरस की
मैं ऊ लगाय जाऊं तेरह बरस की।
कबहूँ तो आगेंगे भोला।
सिव संकर की तारी लागी, बिरमा तो सेवा ठाड़े।
गिर-गिर काया गिरै गई, हाड़न में दीमक लागी।
बारह बरस से जब तेरहिं लागी, महादेव खुलि गई तारी।
मढ़ी के आगे कूड़ौ परौ है, कूड़ौ परौ माटी बिखरी है
काऊं देस कौ रमतौ बिरमा, सेवा कठिन करी वन में।
लारे नादिया मेरा गुलसफ़ा, बिरमा की काया देखौ
नाय दोष ब्रह्म हत्या लागै।
सहज-सहज[9] जब काया भारी, पवन चलै जब पुरवाई
बिरमा में श्वांसा डारी।
मांगन होय सो मांग लेय बिरमा
सेवा कठिन करी वन में।

---

१. बालों की लट, २. मार्ग का कष्ट, ३. अग्रसर हुए, ४. बुरा-भला कहना, ५. छिप जाना, ६. रत्ती-रत्ती, ७. गुफा, ८. समाधि, ९. धीरे-धीरे।

क्या माँगूं क्या देश्रोगे नाथ ! नाथन के नाथ !!
मेरे भोलानाथ !!

श्रोर काहे का टोटा[1] मेरे
जेई मतलब कै श्राया कारणै, सोई करो मेरे बाबा जी
मंजु देश एक राजा हिमाचल प्रजा बसै सुख चैन जी
श्ररु राम कौ भजन करै सिगरी दुनिया
वा घर जनमी पारवती, मैं तिलक दान लायौ तेरौ ।
मन इच्छा करि ले लौ शिवजी ।
लै कै सोटा परे महादेव, दुर[2] मुण्डी के जा भंगी के
देश मालवा सबै पजरिगौ, मैं ही कुंवर पायो वन में ।
श्राजकल की तिरिया बाँझ भई, या लरिकन के श्रक्काल परे
तूने मैं ई कुंवर पायो वन में ।
मैं जोगी श्रवधूत लाड़लौ, तूने जोग में खतरा करि पायो
वा गौरा ने वर तुम्हीं बताये, तुमही बताये मेरे बाबाजी
तेरी गौरा राजन की बेटी
रोटी करन कूं बामन माँगै, कहाँ तै ल्याय दूंगौ वन में
तेरी गौरा राजन की बेटी,
पानी भरन को धीवर माँगै, कहाँ तै ल्याय दूंगौ वन में ।
तेरी गौरा राजन की बेटी,
पंखा झलन को बाँदी मांगै कहाँ तै ल्याय दूंगौ वन में ।
तेरी गौरा राजन की बेटी,
सिंगार करन कौ गहना माँगै, कहाँ तै ल्याय दूंगौ वन में ।
गहनौ माँगै रोली माँगै, कपड़ा माँगै
बतरायवै[3] कू सखियाँ मांगै ।
पौढिवे[4] को महल दुमहले मांगै
कहाँ तै ल्याय दूंगौ वन में ।
बहन नाय है भानजी नाय है कौन रहसि मंगल गावै
भाई ना है, भतीजौ ना है, संग बराती को श्रावै ।

१. कमी, २. जा, ३. बातचीत करने के लिये, ४. सोने के लिये ।

तब उठ बोलौ डूंडौ नादियौ, आई लछमी मतना फेरो
नाई क्वारेई रह जाओ वन में ।
भली कही मेरे डूंडौ नादिया
तूई मेरे आगे तूई मेरे पीछे
तूई मेरी अन्ध लकड़िया है ।
नाचेंगे भूत परेत, नाचेंगी गंगा माई ।
गुपतेई आवें, गुप्त बजावें, डिमर डिमर डमरू बाजें
और तिमड़ तिमड़ तासे बाजें
बीच बीच बंसी धुनि बाजें
बंसी बाजें अधिकारी ।
मूरख बिरमा ख़बर नाय है, छुधा[1] लगाय दई मृग वन में
और भूखरे-भूख मरै बिरमा ।
तू जा बामन के छोरा, मो तैं सादी मती करौ ।
अन्न चून जहां नाय परबत पै, काय तै पेट भरौं तेरौ
भांग धतूरा मैं खाऊं, मेरो खाय नादिया
कहै तो घोट पियाऊं बिरमा
ऊँचौ सौ तेरौ बनौ चौतरा
चौआ[2] क्यों न खुदाय राख्यौ
आतो जातो पानी पीतो, परकम्मा दे कै जातो
कली कली जब मांग तुराई, कौंपई[3] कौंपा नीम तुरायो
बौड़ाई बौंड़ा धतूरा तुरायौ, सेर सातेक मिरचैं डारी
घोटेंगे भूत परेत छानेंगी गंगा माई
भर तौला[4] जब सिव ने चढ़ा लियौ
भर कूंडी जब नादिया दे दियौ
भर लोटा बिरमा दीन्हौ, और बिरमा तो मन में कलपै
पैल[5] गैल में लायो सगाई, भांग पिलाय मोय क्या लेइगो
दया मया कछु आय गई सिव कौ ।
तेरे भागन कौ अहै चबैना, जो निकरै या परबत में
पहली सिला[6] नारद मुनी खोलैं, भांग तमाखुन के गल्ले

१. भूख, २. कूआँ, ३. कोंपल, ४. मिट्टी का कूंडा, ५. पहली बार,
६. शिला उठाना ।

दूजी सिला जब बिरमा खोलैं, बड़े बड़े बन के भौंरा
तीजी सिला जब बिरमा खोलैं, बड़े बड़े नाग भुजंग पड़े
चौथी सिला नारद मुनी खोलैं
लाल ततैया, पीले ततैया, लिपट गये बामन के छोरा
दैया मैया करत फिरैं ।
भोजन छोड़ा, बिदा[1] तेरी छोड़ी,
घर की गैल बताय बाबा ।
हरिद्वारे के दरसन ह्वै गये
सिव द्वारे के दरसन कर ले
ता दिन बिदा करौं तेरी ।
हरिद्वारे तेरे ऐसे निकले
सिव द्वारे कैसे होंगे ?
दरसन, परसन सब तेरे छोड़े, घर की गैल बताय बाबा ।
पंचई सिला जब बिरमा खोलैं
छत्तीसों भोजन पाये ।
बासमती और सुकंदास, और हंसराज चावल पाये
खुर्मा, लड्डू और जलेबी, गरम गरम लुचई पाई ।
आलू, बैंगन, परमल, गोभी, तोरई, घीया, मूली
औ गाजर की भाजी पाई ।
खानो तो खायो बिरमा नैं, पानी को सोचै बिरमा
दया मया कछु आय गई सिव कौ, तौमा[2] तो पकराय दियौ
न्हाय लूंगौ, कै धोय लूंगौ, कै पीय लूंगौ
सेर नाय सवा सेर ना है, तीन पाव पक्को पानी ।
लै तौमा वाय नें धर दियौ ।
दया मया कछु आय गयी सिव कौ
लात मार ढरकाय दयौ
हर हर गंग बहन लागी, वो तो बहती बड़े बड़े तोड़न सैं
तब तो बिरमा मगन भये, और न्हाय लिये और धोय लिये
तब जीमत[3] जाय, और पीवत जाय और करमन को ठोकै बिरमा
भोजन तो मेरे भागन पाये दछिना को कछु नाय दीखै

---

१. बिदा का लेना देना, २. साधुओं का पानी का बर्तन, ३. खाना खाना ।

पटवारी को लड़का ना हूँ, जिमीदार को बेटा ना हूँ।
दछिना काहे की मांगै।
बीछू डंक की बनी सुमरनी
भजन करै तो जाय लै जा
भगवान भजै तो जाय लै जा, तू राम जपै तो जाय लै जा
नागदौन का बना चोलना, जाड़ौ लगै तो जाय लै जा
नाय आगे पीछे भभूत परी है, एक मुठी की छय[1] ले जा।
भर के मूठी पकराय दई, ब्रह्म गाँठ ले बाँध लई।
जोगी को भभूत गेरै राजा को बीरा।
धरै सो पालै, करै सो कीरा।
अरू बरू[2] कैसे डालौं।
घर ले जाऊँ ब्राह्मनी खोटी, चलतेइ रार करै दुखिया
सिवजी को परनाम करी, और घर कू तो चाले बिरमा।
इक परवत लांघ दूजे पै आये
वोई गाँठ वाको याद रही
धूरि में धूरि मिलावन लागे, कंचन की सगरी दुनिया
बीनत जाय बटोरत जाय और इत उत को ताकै बिरमा
मति कोई साथी बीन लेय।
और बीनत जाय बटोरत जाय, और करमन को ठोकै बिरमा
वोय मुट्ठी और न लई।
मैं ऊ खातौ मेरी खाती बिरामनी
बेटा खाते, नाती खाते, पन्थी खाते
सन्तिन लौं सामां रहती[3]
सोहगी जाऊँगौ, पठौनी जाऊँगौ, भर गठरी सिगरी ल्यूँगौ
खाय धतूरो मोह जायगौ, परवत पै लूट मचाय दूँगौ।
नागदौन को पड़ो चोलना, सोऊ मूँड[4] पै धर लूँगौ
टूटो नगारौ, पड़ौ वहाँ जो, सोऊ चाँद[5] पै धर लूँगौ
परबत पै लूट मचाय दूँगौ।
अन्तर्जामी जान गये और पहचान गये।
और पर्वतई ते बोल उठे, तू बेईमान मत हो बिरमा

---

१. राख, २. इधर उधर, ३. पीढ़ियों तक धन रहता, ४. सिर, ५. सिर।

पाँच टका तोय दये दछिना के, इतनौ ले कै घर को चालौ ।
जा दिन गौरा ब्याहन आवैं ता दिन मगन करौं बिरमा ।
गौंडे[1] में ही मिली बिरामिनी, गठरी मुठरी देय दई
आप कचहरिन को चाले ।
आवत देखे ब्रह्म देवता, ऊपर ही ते कूद पड़े ।
"सांची कहो तुम ब्रह्मदेवता, कौन देश गौरा बरनी[2]
कैसो घर है, कैसो वर है, कैसोई समधी देखो ।
ठाठ बाट और हाथी अंबारी, साँची बात कहो बिरमा ।"
"भैया ना है, भतीजौ ना है, जनमत का मुरहा[3] इकलौ
और डगर डगर वाकी नाड़ हिलै, औ' साठ हाथ लम्बी दाढ़ी
आज मरै, नहीं काल मरै, औ' परसों तो अलबत्त[4] मरै ।।"
राजा सुन कै यूँ उठ बोले, "लाओ रानी मेरा चाबुक
बिरमा को दछिना देऊं ।"
"बाह्मन दछिना हीरा, मोती, बाह्मन दछिना दरब, धोवती
क्या सोटे की है दछिना ?
बाह्मन मारे काया बिगड़ जाय, बाह्मन मारे वंश डूब जाय
असंख भार चढ़ै भारी"
"आगे से क्यों मरे जात हो दो तो प्याले करो जहर के
मैं ऊ पिऊँ और गौरी पियाऊँ, जोगी द्वारे आवेंगे ।"
वचन के बाण लगे राजा के, घर के बिरमा लये बोलाय
चन्दन की चौकी डारि दई, "यहाँ बैठ जाओ पण्डित ज्ञानी !
गौरा की तो लगन लिखौ, मैं कहता जाऊँ सो लिखते जाओ
तुम ऊक-चूक[5] मत डारो लगन में ।
गरुड चढ़े नारायण लिखदे, हंसन पै बिरमा लिख दे
राम लखन की जोड़ी लिख दे, हनुमान पायक लिख दे
राजा इंदर से आवें बराती, मेघमाल सारी लिख दे
स्यामकरण से घोड़ा लिख दे, ऐरावत हाथी लिख दे
सुक्कर और सनिच्चर लिख दे, बैमाता रथ में लिख दे
गंगाई जमुनौ गहनौ लावें जब मोरै ब्याहन आवें ।
नगरकोट की लिखो भवानी, लांगुरिया अगवानी नाथ

१. मार्ग, २. सम्बन्ध किया, ३. गाली (मरा), ४. अवश्य, ५. भूल ।

भैरों की चौकी सिग[1] लिख दे
जगन्नाथ से बदरीनाथ, केदारनाथ और झारखण्ड झरिके आवें
गोरखपुर के गोरख बाबा, सिगरे चेलों के संग आवें
चौदह सौ परगट[2] लिख दे
पैदा होय तो ब्याहन आइयो, नाय परबत पै बैठा रहियो।"
अरे लगन ले कै चले बिरामन, चार मंजल की द्वैय करी ।।
और द्वैय मंजल की एक करी, और दौरत ही पहुँचो बिरमा
डूंडौ नादियो यों उठि बोलौ, मंजु देस को आयो बिरामन
कालि सगाई तेरी लायो, आज सगाई मेरी लायो
उल्टा ही बगदो बिरमा
मौंछ[3] चीकनी करै गयौ सौ गीदौ[4] ई आयो बिरमा
जात पाँत वाने नाय पूछी, सो जात पात पूछन आयो
जात पांत में कछु नहीं पूछौं
जे चिउंटे के से गोड़[5] लिखे, तू यहै बाँच मेरे बाबा जी
धर घोंटू पै बाँचन लागे बांचत अगिनी भयी शिव के
तू कहा गजब जे ढाय आयौ, तीनों लोक लिखाय लायौ
और की तो कौन कहै, तू ठाकुर ऊ तौ लिखाय लायौ
भला वे ठाकुर काहे को आवें।
बड़ो गरबीलो राजा हिमंचल
मान मार देऊँ गरब ढाय देऊं
पानी सौ पतरौ कर दूं।
अन्न चून की वहाँ कौन, वहाँ पानिऊ पैदा नाय होइगौ
वा राजा तै न्यौं कह दीजौ।
पैर पैर पै कुआँ खुदावै, उद्दू[6] बाजार लगाय राखै
वा राजा तै न्यौं कह दीजौ
बारह कोस के गिर्द[7] में वो झाड़ू तो दिलवाय राखै
वो तम्बू तो तनवाय राखै
वा राजा से न्यौं कह दीजौ, बावन सौ हजार कोठरी
मालन सौं भरवाय राखै।

---

१. भी, २. स्पष्ट, ३. मूंछ, ४. ललचाकर, ५. टांगें, ६. जहाँ सब चीजें मुफ्त मलती हैं, ७. चारों ओर।

ले रे नादिया नौतो लेजा, सिगरे देवता वहीं होयंगे
बिन[1] ठाकुर ने जग रचो है
तू वहींय तो नौता लेजा
विन ठाकुर ते न्यौं कह दीजो
नौतो लेओ तो नौतो लेओ, नहिं लरिबे की सामां जोरो
नौतो ले के नादियो आयो, ठाकुर सिंहासन ई ते कूद परे।
नादियो तू कैसे आयो ?
ना मेरे गुरु ने यज्ञ रचो है ना मेरे गुरु ने होम रचो है
बूढ़े बैसन[2] ब्याह रचो है, न्यौतो देवै कूं आयो
वे दे रुमाल हंसन लागे, वे दे दे रुमाल हंसन लागे
अबके भात खवाय देगौ।
और विन के दिन वानै न्यौतो भेजो
कपड़ा तो धुलवाय लेते, कछु लत्ता[3] तो सिमवाय[4] लेते
वा जुगिया से न्यौं कह दीजो, दिन के दिन तूने न्यौता भेज्यो
संग बराती कोउ नहिं होयगो, गैल बराती सब होंगे।
वा जुगिया से न्यौं कह दीजो
गहनौ तो गढ़वाय राखै, कछु लत्ता तो सिमवाय राखै
न्यौतो दे कै नादियौ आयो, तारी महादेव की लागी
बाई भुजा में सींग अड़ाय लिये
अधर उठाय लिये बाबा जी।
अरे होरी नाय दिवारी ना है, तोय मसखरी का सूझी
अरे ब्याह के रहे तीन दिना, तोय तारी लगायवे की सूझी
अरु विन ठाकुर ने यों कह दई है
गहनौ तो गढ़वाय लीजौ, कछु लत्तौ तो सिमवाय लीजौ
और हरी ततैया, पीरी ततैया, सूत भरी आतिशबाजी।

× × ×

छुमन्तर[5] में लाय डारे
बारह कोस के गिर्द में, कहूँ अतुर पारौ कहूँ पतुर पारौ,

---

१. उन, २. अवस्था, ३. कपड़ा, ४. सिलवाना, ५. क्षण भर में।

इकलौ मुरहा रमड़ौ[1] डोलै, रंगत चुगत नादिया पहुँचो
कोई नादियो नौंचि भजै, और कोई नादियौ चौंटि भजै
और नादियौ तो घायल कर दीनौ।
नादियौ तो शिव पै पहुंचौ।
मेरो आरतौ होय गयो शिवजी, तेरो आरतौ कब होयगौ
सातों सखियां यौं उठ बोली गौरी की तो बरात आई
चलो सहेली देखेंगे।
सातों सखियाँ यौं उठ बोली, गौरा कू क्या गहनौ लायो
हमें दिखाय दे बाबा जी।
तौंबी लै पकराय दई।
सातों सखी हौंस[2] की मारी, मौड़ो[3] तो खोलन लागी
हरी ततैया, पीरी ततैया, बड़े बड़े बन के भौंरा
लिपट गये सातों सखियों कूँ, दैया मैया करत फिरैं।
वे नाची कूदी चिल्लाती फिरैं
वे फूल फूल कुपना ह्वै गयीं, वे मोटी ताजी ह्वै गयीं।
मेरो आरतो होय गयो सिवजी, तेरौ आरतौ कब होयगौ
सातों सखियां यौं उठ बोलीं, अपनी माया फेरौ सिवजी।
हम सातों हैं राजी बाजी
तुम तो भैना[4] मेरी धरम की बेटी
मैं तो गौरा को बांधो आयो।
अरी गौरा हमने तेरी बरात देखी
सात माघ नौ कातिक न्हाई, कोढ़ी वर पाये बहना।
कोढ़ी कोढ़ी मत कहो, सुन सुन मेरी काया लरजै।
कोढ़ी होयगौ बिजना[5] गह लूंगी, अन्धौ होयगौ उंगली गह लूंगी
सात घरों से मांग कै न्यूं रसोई कोढ़ी को भोजन दूंगी।
और यूं कह गौरा सिव पै चाली
डूंडो नादियो यूं उठ बोलौ, क्वारे मड़हे[6] गौरा आवै
कलिजुग मेंड[7] बिगरि जायगी
हर हर गंगा बहन लागी, और बादल के परवा डाले

---

१. मग्न हो, २. चाव, ३. मुकुट, ४. बहन, ५. पंखा, ६. अविवाहित ही, ७. मर्य्यादा।

तुम आये हमनै जानी, और लोक हंसाये क्या होयगौ
सुन सुन मेरी काया लरजै ।
जाओ गौरा रंगमहल में, अब देखो शंकर लीला
सिंगी नाद बजायौ है और ठाकुर को सिंहासन हालौ
चलियो रे मेरे बावरिया, किनै सतायो ।
गरुड़ चढ़े नारायण सज जांय ।
हंसन पै बिरमा सज जांय ।
राजा इंदर से सजें बराती, मेघमाल सिगरे सज जाँय
श्यामकरण से घोड़ा सज जांय, ऐरावत हाथी सज जांय
सुक्कर और सनीच्चर सज जांय, बैमाता रथ में सज जाँय
नगरकोट की सजे भवानी, लांगुरिया अगवानी नाथ
भैरों की चौकी सिगु सज जाय
गंगाई जमुना गहनौ लैके बरात कू जल्दी सज जाँय
जगन्नाथ से बदरीनाथ, केदारनाथ और
भारखण्ड भरि के सज जांय
बावन भैरों, छप्पन चेले बलिराजा से सजें बराती
सारे सारंगदेव सजि जांय
बाजन लागे, दुतारे तितारे, बीच बीच डमरू बाजै
और हाथिन पै बजे बाजे ।
और बारह बरस के बने महादेव, ठाकुर की गोदी बैठे
कारी कारी नागन नौन उतारें, नजर न लग जाये शिवजी कूं
गांव गोठ के न्यू उठ बोले
गौरा की तो बरात आई, अगवानी को साजो साज !
पांच सात लरिका लैय लये, और पांच सात घोड़ा लैय लये
और अगवानी साधन चाले ।
वो जुगिया कहूं रुंद मरौ, रुंद मरौ कऊं खुन्द मरौ
सुक्कर सनीच्चर गोदी में बैठार लये, और सिव संकर नै नोच लये
वे दोऊ रोवन लागे ।
हेमंचल तब यूं उठ बोले, जे लरिका काहे कूं रोवैं ।
घर छोड़ा, महतारी छोड़ी, दादी छोड़ी, ताई छोड़ी
भूखे हैं दोनों लरिका

हेमंचल इस्क[1] का मारा, गोदिन महं उठाय लिये
नाऊ धीमर कूं दै दिये, घर कू तो लै जाओ भैया
भूखे हैं दोनों लरिका
एकई तो जे लड्डू खावैं, एकई तो जे पेड़ा खावैं।
बड़े घरन के हैं लरिका।
रानी हेमंचल इस्क की मारी, गोदी में तो लैय लये।
गोदिन में तो लैय लये और पलकन पै बैठार दये
सुहासिन परसैं, रानी परसैं, बांदी परसैं
दाल परसैं, भात लांय, और पूरी लावैं
थारी कटोरी जेवैं[2] नाहीं, थाली कटोरी कू टूक करें।
सुक्कर सनीच्चर कोहनी मारी, बड़े बड़े कूंवा बनाय लये
बावन सै हज्जार कोठरी एक साथ ताली दे दो
देखत ही इच्छा भागै
सुक्कर सनीच्चर यूं उठ बोले
सखे की तूने जानी आ गीले की मैंने जानी।
और पूरी मिठाई की कौन गिनै
वो माल असबाब की कौन गिनै
किवारहूं तौ चाब गये और चौखटहूं तौ चाब गये
कूआँ पोखरिया पानी ना है, गंगा जमुना धूरि उठै
चार चार चना हथेली पै धर लये
लड़त जांय चबावत जांय, और शिवजी के आगे पहुंचे
वा ने खाने को कछु न दयो, वहां पानिऊ पैदा नाय भया
इतनी सुनि कै सिवजी नै राजा हिमंचल बोलि लये।
हाथ जोड़ हिमंचल आये, और बारहिं बार विनती करें
तुम अपनी माया खैंचो शिवजी।
दया मया लागी सिव को और अपनी माया खेंच लई
बेदी सजी रही आंगन में और भांवर फिरें शिव पार्वती
देव फूल बरसन लागे।

शिव पार्वती का यह विवाह पश्चिमी उत्तर-प्रदेश में जोगी चिमटे पर गाते हुए घूमते हैं और गाना सुनाकर रुपये आदि लिया करते हैं।

---

१. प्रेमवश, २. खाना खाना।

कितना मनोरंजक और स्वाभाविक वर्णन है। पाठक पढ़ कर स्वयं अनुमान लगा सकेंगे। यह बड़ी कठिनाई से हमें पूरा प्राप्त हो सका है। पार्वती का शिव के प्रति अविचल प्रेम इसमें दिखाया गया है। उनके शिव चाहे कोढ़ी हों और चाहे लंगड़े, वह सदैव ही उनकी सेवा को प्रस्तुत हैं।

रामायण में गोस्वामी तुलसीदास द्वारा लिखा हुआ शिव-पार्वती विवाह भी अवश्य पढ़िये। स्थानाभाव के कारण हम उसे यहाँ नहीं दे सके हैं।

सुहाग

(२)

ऊसर गोड़ि[1] गोड़ि कांकर बोयेऊँ, ना जानूँ तीति[2] ना मीठि।
नगर पैठि बेटी तोरा बर हेरूं, ना जानूं करम तोहार।
बाहर निसरि[3] बेटी तोरा बर हेरेऊँ, ना जानूं करम तोहार॥
बाबा बोलावई, गोद बैठावहिं, बेटी से पूंछहिं बात।
कउन कउन सुख कीन्हे बेटियवा हमसे कहहु समुझाय
खाँड चिरऊँजी के भोजन रे बाबा, सुगन्धित तेल नहाऊँ।
सेत सुपेती के डासन बाबा हो, सेजिया पे सुतलिऊं एकली।
जरइ अस नउवा रे, जरइ अस बरिया,[4] जरइ बह्मना का पूत।
जिन मोरी धेरिया[5] क अस बर हेरेसि, सेजिया पै सुतली अकेलि।
हथवा जोर कन्या बिनती करै, हाथ दूबवा तिल चाउर।
का करै नउवा रे, का करै बरिया का करै बह्मना क पूत।
हमरे करमुवा में एहि लिखा, मैया रे! सो कइसे मेटि न जाय।

माता-पिता कन्या को जन्म देकर भी उसके भविष्य के ऊपर अपना किंचित भी अधिकार नहीं पाते तो उनका हृदय व्यथा से भर उठता है।

पिता कहते हैं, प्यारी बेटी! मैंने ऊसर को खोद-खोद कर बीज डाला है। न जाने फल मीठा लगेगा अथवा चरपरा। मैंने तुम्हारे लिये नगर में, बाहर, सब जगह खोज कर अपनी समझ में अच्छा वर ढूंढा है, परन्तु मैं तुम्हारा भाग्य नहीं जानता।

कन्या के पिता के हृदय की ममता इन पंक्तियों में बिखर पड़ी है, "ऊसर गोड़ि गोड़ि कांकर बोयेऊं" में उपमा दर्शनीय है।

---

१. खोद खोदकर, २. चरपरा, ३. निकलकर, ४. पंडित, ५. कन्या।

ऐसी ही दशा में तो पार्वती जी की माता के मुख से भी अनायास ही यह निकल गया था—

विधि कत नारि सृजी जग माहीं।
पराधीन सपनेहु सुख नाहीं॥
—रामायण

कन्या ससुराल से आयी। पिता ने दुलारी बिटिया को गोदी में बिठाया और पूछा, बिटिया! ससुराल में क्या-क्या सुख पाया? ज़रा सविस्तार बतला तो सही।

माता-पिता की यह उत्कट अभिलाषा होती है कि उनकी बिटिया ससुराल में अपरिमित सुख पाये।

कन्या कहती है, "पिता! मुझे खाने के लिये मेवे और मिष्टान्न प्राप्त थे। मैं प्रतिदिन सुगन्धित तेल से स्नान करती थी। परन्तु उज्ज्वल श्वेत वर्ण शैया पर अकेली ही सोती थी।"

पिता के लिये यह आघात असह्य था। उन्होंने नाई, बारी और ब्राह्मण को दोष दिया जिन्होंने उनकी बिटिया के लिये ऐसा वर देखा था।

परन्तु कन्या उत्तर देती है, "हे पिता! नाई, ब्राह्मण का पुत्र और बारी क्या करेंगे? भाग्य में ऐसा ही लिखा था। उसे कौन मिटा सकता है?"

कन्या का धैर्य और शान्ति सराहनीय हैं।

इस उत्तर को सुनकर हिमाचल नन्दिनी गौरा का अपनी मां की गोद में बैठ कर यह कहना स्मरण हो आता है :—

"जनि लेहु मातु कलंक, करुणा परिहरेहु अवसर नहीं।
दुख सुख लिखा जो लिलार हमरे, जाव जहँ पाउब तहीं॥"

(३)

कउना गहन बाबा सांझ सबेरे, कउना गहन आधी रात।
सूरज गहन बेटी सांझ सबेरे, चन्द्र गहन आधी रात।
धेरिया गहन बेटी ठीक दुपहरिया, उगहन उगहन होय।
मिसरा से बोले कउन रामा, सुन बेटी बिनती हमारी हो।
खोरिनवां दुधवा पियाएऊं मोरी बेटी दहिया खियाएऊँ सढ़ियार।
एक गुहनवा ना मानेऊ मोरी बेटी चली परदेसिया के साथ।

कन्या ससुराल जा रही है, पिता व्याकुल हो रहे हैं। वह कहते हैं, चन्द्र-ग्रहण आधी रात में होता है और सूर्य ग्रहण प्रातः से लेकर सायंकाल तक होता

है। किन्तु कन्या का पाणिग्रहण ठीक जीवन की दुपहरी के आते ही होता है।

अन्तिम पंक्तियों में पिता का प्रेम चित्रित है—प्यारी बिटिया, गाढ़ा-गाढ़ा दूध और ताज़ी दही खिलाकर तुझे पाला, पर बिटिया! तूने मेरे प्यार को तनिक भी नहीं समझा। आज तू परदेशी के साथ जा रही है।

कन्या का जीवन दुख की करुण कहानी है। अपनों को पराया और परायों को अपना बना कर वह जीवन-पथ पर अग्रसर होती है। कभी-कभी जीवन पर्यन्त वे पराये उसके अपने नहीं बन पाते, जिनके लिये वह जीवन उत्सर्ग करती है।

(४)

लाडो पूछै भाभी से ए भाभी !
मैं किस मिस देखन जाऊं रंगीले आ उतरे बागों में।
हाथ छबड़िया[1] फूलों की, ए लाडो !
मालनिया बन के जाओ रंगीले आ उतरे बागों में ।
बोल गये बतलाय गये बागों में
मेरी साहे धरी लाडो कै नजर लगाय गये बागों में।
लाडो पूछै जीजा को, ए जीजा !
मैं किस मिस देखन जाऊँ छबीले आ उतरे तालों पै।
कांधे गठरिया कपड़ों की, ए लाडो !
धोबनिया बन के जाओ छबीले आ उतरे तालों पै !
बोल चले बतलाय चले तालों पै
मेरी नूर चढ़ी लाडो के नजर लगाय गये तालों पै।
लाडो पूछै भाई से ए भैया !
मैं मिस मिस देखन जाऊँ रंगीले आ उतरे गलियों में।
हाथ डलड़िया और झाड़ू ए लाडो !
भंगनिया बन के जाओ छबीले आ उतरे गलियों में।
देख चले दिखलाय चले गलियों में।
मेरी रंग भरी लाडो के नजर लगाय गये गलियों में।

---

१. डलिया।

कन्या की सगाई हो चुकी है। वह पूर्ण वयस्क है। उसका भावी पति पिता के नगर में आता है। कन्या मिलने को आतुर हो उठी है परन्तु वह अप्रकट रूप से मिलना चाहती है। जीजी और भाई से वह मिलने की युक्ति पूछ रही है।

पति-पत्नी के मनोविनोद का सुन्दर चित्रण है।

(५)

बाबा मति[1] के हीन तिहारी मति किसने हरी ?
गौरा रूप सरूप, जोगिरा को क्यूं बरी ?
चटक पिछौरा ओढ़, बजावै बांसुरी।
बैठे भसम रमाय बाबा जी तो चौंतरा
गुपत संदेसा गौरा भेजि बरहिं समुझाइयां
कहा रे लजावे मोहे, बरन[2] क्यूँ ना फेरि है।

पार्वती जी इतनी सुन्दर हैं फिर भी तुमने योगी से इसका विवाह क्यों कर दिया ? मति के हीन बाबा ! आज तुम्हारी बुद्धि को किसने हर लिया ?

भगवां चोला पहिन कर योगीराज बंसी बजाते भस्म शरीर में लगाये चबूतरे पर बैठे हैं।

पार्वती जी ने गुप्त संदेश भेजा—मुझे क्यों लज्जित करते हो ? दूसरा वेश क्यों नहीं धारण कर लेते ?

रामायण में पार्वती-विवाह में शिवजी के वेश का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

तनु छार व्याल कपाल भूषण नगन जटिल भयंकरा।
संग भूत, प्रेत, पिशाच, योगिनि, विकटमुख रजनीचरा॥
जो जियत रहहिं बरात देखत, पुण्य बड़ तिनकर सही।
देखहिं सो उमा विवाह घर घर, बात अस लरिकन कही॥

(६)

टीके पै लग रही चांदनी, झूमर पै लग रही चांदनी
तुम देखो जी बने हमारी बीबी लाड़ली।
बुन्दों पै लग रही चांदनी, माला पै लग रही चांदनी
तुम देखो जी बने हमारी बीबी लाड़ली

---

१. बुद्धि, २. वेश।

परिबन्द[1] पै लग रही चांदनी, मेंहदी पै लग रही चांदनी
अंगूठी पै लग रही चांदनी, बिछुओं पै लग रही चांदनी
तुम देखो जी बने ! हमारी बेटी लाड़ली।
डोले पै लग रही चांदनी, जोड़ी पै लग रही चांदनी
घर में खिल गयी चांदनी, सेजों पै हँस गयी चांदनी
तुम देखो जी बने ! हमारी बीबी लाड़ली ॥

गीत में नव-वधू की शोभा का वर्णन है। स्त्रियाँ वर से कह रही हैं, ऐ वर, देखो हमारी लाड़ली बीबी कैसी सुन्दर लग रही है। उसके सौन्दर्य के कारण मानो भूमर, टीका, माला, परिबन्द, मेंहदी, अंगूठी, चूड़ी और बिछुए सब पर चार चांद लग गये हों। कन्या का गौरवर्ण चन्द्रिका के समान है। उसके गौर-वर्ण का प्रतिबिम्ब आभूषणों पर पड़ता हुआ ऐसा प्रतीत होता है, मानो चन्द्रिका खिल रही है। तुम्हारे जोड़े पर और पालकी पर भी ज्योत्स्ना मुस्करा रही है। घर में भी मानो चाँदनी खिल गयी है और हमारी चंदा-सी बहिन के कारण सेजों पर भी चाँदनी मुस्करा रही है।

चन्द्रिका से नव-वधू की उपमा देना बहुत ही उपयुक्त है।

श्री तुलसीदास जी ने नव-वधू के रूप में सीता जी की शोभा का इस प्रकार वर्णन किया है—

सिय सोभा नहिं जाय बखानी।
जगदम्बिका रूप गुन खानी॥
सीय बरनि तेहि उपमा देई।
कुकवि कहाय अजस को लेई॥
जौं छबि सुधा पयोनिधि होई।
परम रूप मय कच्छप सोई॥
सोभा रजु मन्दर शृंगारू।
मथै पानि पंकज निज मारू॥
एहि विधि उपजै लच्छि जब, सुन्दरता सुख मूल।
तदपि सँकोच समेत कवि, कहहिं सीय समतूल॥

—तुलसीदास

---

१. हाथों का आभूषण।

(७)

सेर भर मोती, पलँग पर डारो।
राजदुलारी बीबी शृंगार पट्टी पहिनेगी ?
वह हरियाला खुशी से पहरायेगा।
राजदुलारी बीबी माँग भरायेगी ?
सुन्दर सुन्दर चुटिया गुंथायेगी ?
वह हरियाला खुशी से गूंथेगा।
प्यारी बीबी मेरी झुमके-हार चूड़ी पहिनेगी ?
चोली साढ़ी उसकी ससुराल से आयेगी।
वह सजीला उसको खुशी से सजायेगा।
फूलों की शय्या होगी, इत्र लगाया होगा।
चंदा की चाँदनी होगी, कमरा भी सजाया होगा।
वह छबीला उस पर सब कुछ लुटायेगा।

विवाह-संस्कार के समय पति के द्वारा पत्नी का शृंगार हमारे शास्त्रों में वर्णित है। पति सिन्दूर दान देता, वेणी गूंथता तथा वस्त्राभूषण प्रदान करता है। 'संस्कार-विधि' में एक श्लोक आता है जिसे बोल कर वर वधू को वस्त्र प्रदान करता है :—

ओं जरां गच्छ परिधत्स्व वासो भवा कृष्टि नाममिशस्ति पावा।
शतं च जीव शरदः सुवर्चा रयिं च पुत्रा ननुसंव्ययस्वायुमष्पतीदं
परिधत्वस्व वासः ॥ पा० का० १। कं० ४॥

(८)

ए कपड़े तो क्यों न धुलाए मेरे बाबा
पानी के भरे हैं तालाब जी।
हमारे तो कपड़े बिटिया ! उस दिन उजले
जब तुम सजन घर जाओगी।
कपड़े तो क्यों न धुलाए लक्खी चाचा, भैया, जीजा
धोबी तो बहुतेरे धोवें घाटों पे।
ए धुले धुलाए लाडो ! धरे बिलँगनी
लाग रहे तेरे ब्याह में।
हमारे तो कपड़े बेटी उस दिन उजले
जिस दिन ससुरे घर जाओगी।

पाती। माँ! मैं नहीं जानती यह कैसे हो गया। पान जैसे मुख को रंग देता है, गुलाल शरीर को रंग देता है, इसी प्रकार उनके अनूठे रंग ने मुझे रंग दिया है। माँ! मैं अबोध हूँ, मुझे सुख-सौभाग्य का आशीर्वाद दो।"

भवभूति द्वारा लिखित 'मालती माधव' नाटक में मालती को देखकर माधव उस पर मुग्ध हो जाता है। इस प्रथम-मिलन में उत्पन्न प्रेम-भावना पर माधव स्वयं आश्चर्यान्वित हो अपने मित्र मकरन्द से कहता है—

न जाने कैसा यहै विकार।
जड़ावत तावत हृदय अपार।
नहिं आवत पहिचानि में, मुख से कहत बने न।
करत ना पूरो बनै विचार। न जाने० ॥

मालती और माधव भी एक क्षण के लिए एक-दूसरे को नहीं भूल पाते। माधव कहता है—

सुनत ही प्यारी के ये बैन।
मंजुल, मधुर, सुखद वसुधा के सरस सुधा के ऐन ॥
पुलकित मो तन भयो पाइ जनु कादम्बनी फुहार।
कलित कदम्ब प्रफुल्लित अनुपम, लहरत बारम्बार ॥

(११)

कचनार बैठी लाडो पान चाब
करै बाबा जी से विनती।
बाबा देस जइयो, परदेस जइयो,
हमारी जोड़ी का वर ढूँढियो ॥
इक रैन रहियो उनका गोत पूछियो
तब मेरा वरण[1] मिलइयो।
उनका बंस देखो रीति देखो
उनके संस्कार पता लगाइयो ॥
जो हो वर गुनवान, सुन्दर,
तब ही जोड़ी मिलाइयो।
बाबा बोले सुन लाडली,
मत कर मन तू अनमना[2] ॥

---

१. रंग-रूप, २. उदास।

हूँ। खेल री मेरी सर्व-सुन्दर
ढूंढ़ा है फूल गुलाब का।

आजकल कहा जाता है कि हमारे यहाँ कन्या और वर की सम्मति के बिना ही छोटी अवस्था में विवाह हो जाते थे। गीत ऐसा कहने वालों के लिए चुनौती स्वरूप है। लड़की भी सुशिक्षिता जान पड़ती है।

(१२)

हरे हरे बाँस छवाय दई राय बटियाँ[1]।
तेरे बाबा सोवें सुख नींद दादी रानी अरज करें।
मेरी बन्नो भयी वर जोग[2], सलोनी बेटी वर माँगै।
सुन के बाबा हँसि पड़े, और घुड़ला[3] कस लिया।
ढूंढ़ा धुर गुजरात, ढूंढ़ा सारा मालवा।
शहरों में बड़ा शहर अयोध्या नजर पड़ी।
सजनों में बड़े सजन जंवाई रघुनाथ मिले॥

इसी प्रकार पिता, भाई आदि को भी कहते हैं।

(१३)

इस सागर के कारने, बाबा जी रूठा जाय दामाद रे।
देहरी बैठी दादी रानी बिनवें, सुन बेटा मेरी बात रे॥
अनमोल बेटी मैंने तुमको समर्पी
तो सागर कौन बिसात[4] रे?
सोना भी देंगे, रूपा भी देंगे वर, देंगे मोहर हजार रे।
एक ना देंगे दूल्हे! सागर अपना कुंवर करेंगे असनान रे।
पन्थी आवें हाथ मुंह धोवें
गउवें पीयें जल नीर रे॥

विवाह के नीलाम पर स्वयं को चढ़ाते हुए आजकल के युवकों को लज्जा नहीं आती। द्रौपदी के चीर की नाईं उनकी माँगें दिन-प्रति-दिन बढ़ती जाती हैं। कन्या के माता-पिता अपनी सामर्थ्यानुसार अधिक से अधिक देते हैं परन्तु शायद वर तो चाहते हैं कि वह उन्हें अपना घर-द्वार सौंपकर स्वयं भिक्षुक बन जायें। युवकों की इस कुप्रवृत्ति का इस गीत में अच्छा चित्रण है।

---

१. खपरैल की छत, २. विवाह योग्य, ३. घोड़ा, ४. मूल्य।

(१४)

लाडो सोई-सोई उठि जागियाँ ।
अपने बाबाजी से वर माँगिया ॥
या तो बाबा ! मुझे चन्दा दे दो ।
या तो फूल गुलाब का ॥
बाबा ! हमें चन्द्र सलोना दे दो ।
बाबा ! हमें साजन के घर भेजो ॥

किशोरावस्था की निद्रा से जागते ही यौवन के प्रभात में कन्या चन्द्रमा और गुलाब के सदृश वर की कामना कर रही है ।

(१५)

सुहाग माँगन दादी ताई पै गई ।
अम्मा, मौसी, चाची, भाभी, मामी पै गई ।
अम्मा ! भर दो ना माँग सिंदूर सुहाग हमें तुम्हीं दोगी जी ।
हाथ मेंहदी, बाँह चूड़ी, सीस डोरी जी ।
माथे बिन्दी, पैरों बिछुए पहनो लाल साड़ी जी ।
बीबी ! भरवाओ माँग सिंदूर सुहाग तुम्हें राम देगा जी ॥

गुरुजनों के आशीर्वाद में अनुपम शक्ति है, इसीलिये कन्या सबसे सौभाग्य का वरदान माँग रही है । सुन्दर सौभाग्य के चिन्हों से उसे सुसज्जित कर मां, ताई आदि उसे आशीर्वाद देती हैं कि ईश्वर करे तू सदैव सौभाग्यवती रहे ।

(१६)

सदा थिर रहियो जी अविचल रहियो जी
लाडो तेरी जोड़ियाँ ।
बाबा बोई हैं, ताऊ बोई हैं सुहागों की क्यारियाँ ।
चाचा बोई हैं, भय्या बोई हैं सुहागों की क्यारियाँ ।
मामा बोई हैं, जीजा बोई हैं सुहागों की क्यारियाँ ।
अम्मा सींचे री ताई सींचे री लोटा भर झारियां ।
चाची सींचे री मामी सींचे री लोटा भर झारियां ।
भाभी सींचे री, जीजी सींचे री लोटा भर झारियां ।
अविचल रहियो जी सदा थिर रहियो जी
लाडो तेरी जोड़ियाँ ॥

बाबा, ताऊ, चाचा, भाई, मामा, जीजा आदि ने प्यारी बिटिया के लिये सौभाग्य रूपी फुलवाड़ी लगायी है। उसे दादी, माँ, ताई, मामी, भाभी, बहिन आदि सबने प्रेम रूपी जल का लोटा तथा झारी लेकर सींच दिया है। कन्या की भाँवर पड़ चुकी है, इसीलिये सब कहते हैं, "प्यारी बिटिया, तेरा सुख-सौभाग्य अचल रहे।"

'संस्कार-विधि' के अनुसार भी 'ओं सौभाग्यम् अस्तु' कह कर आशीर्वाद दिया जाता है।

(१७)

लाडो खेलै लौंग के बिरवे[1] तले[2]।
तेरे दादा ने लयी है बुलाय, चलो बीबी महलों में।
तेरे बाबुल ने लयी है बुलाय, चलो बीबी महलों में।
तेरे मामा ने लई है बुलाय चलो बीबी महलों में।
तेरी सजती सी आवै बरात चलो बीबी महलों में।
तेरे बजते से आवें निसान, तेरे उड़ते से आवें गुलाल।
चलो बीबी महलों में।
तेरा घोड़े पै सज रहा दूल्हा पीछे बराती आवें साथ।
चलो बीबी महलों में।

हमारे यहां पहले परदा प्रथा न थी। इसीलिये तो जिस कन्या का विवाह है वह आनन्द से लौंग के वृक्ष के नीचे आनन्द मना रही है। बरात की शोभा का वर्णन भी स्वाभाविक है।

भयेउ कोलाहल, हय गज गाजे। ब्योम बरात बाजने बाजे॥
सुर नर नारि सुमंगल गाई। सरस राग बाजहिं शहनाई॥
घण्टि घण्ट ध्वनि बरनि न जाई। सरौ करैं पायक फहराही॥
करहिं विदूषक कौतुक नाना। हास कुसल कल गान सुजाना॥
—रामायण से उद्धृत राम की बरात का वर्णन।

(१८)

घन गरजत आवै सोहाग बिरवा।
घन उमड़त आवै सोहाग बिरवा।
ओ के बाबा के अंगना सोहाग बिरवा।
ओ के दादा के अंगना सोहाग बिरवा।

---

१. पेड़, २. नीचे।

ओ की अम्मा रानी सींचैं भर गडुवा[1]।
ओ की दादी रानी सींचैं भर गडुवा।
(इसी प्रकार अन्य सम्बन्धियों को भी)

गरजते हुए प्रेम-रूपी मेघ सौभाग्य-रूपी पौधे को सींचने के लिये आ रहे हैं। आशीर्वाद के बादल सौभाग्य-रूपी पौधे के ऊपर उमड़ रहे हैं। दादा, बाबा, चाचा, ताऊ आदि सबकी सम्मति से यह सौभाग्य-रूपी बिरवा लगाया गया है। उस नव-परिणीता की दादी, माँ, बहिन आदि इस पौधे को शुभ-कामना रूपी जल के लोटे के द्वारा सींच रही हैं।

(१६)

बीबी की दादी रानी बाबा जी से अरज करैं।
बिटिया की अम्मा रानी बाबुल जी से अरज करैं।
बिटिया ऐसे घर दीजो जी, पलंग बैठी राज करैं॥
सोने का पलका जी, बैठी हुकम करैं।
सोने की झारी जी चौकी बैठी दातुन करैं॥
छोटे देवर नन्दें जी 'भाभी' 'भाभी' नित ही करैं।
बन्ना राजकुँवर सा जी, सब कुछ न्यौछावर करैं॥
बीबी की चाची, ताई, भाभी, जीजी अरज करैं।
लाडो ऐसे घर दीजो जी रानी बनी हुक्म करैं॥
ससुर राजा दशरथ से औ' कौशल्या सास मिलैं।
वर तो कुँवर कन्हैया जी, 'रानी' 'रानी' नित ही करैं॥

माता-पिता, इष्ट मित्र, सम्बन्धी सभी की यह उत्कट अभिलाषा होती है कि उनकी प्यारी बिटिया अनिर्वचनीय सुख की अधिकारिणी बने। गीत में इन भावों का अच्छा चित्रण है।

(२०)

मेरी बीबी सोवै अटारिया, पहने है झुमके बालियाँ।
बीबी सोई सोई उठ जागियां, अपने बाबा, दादा से वर मांगिया
बाबुल ! एक कहा मोरा कीजियो, मुझे रायरतन वर दीजियो।
बेटी रायरतन सिर सेहरा, जैसे बागों में खिल रहा केवड़ा।
बेटी ! मत कर मन पछतावड़ा, तेरी अम्मा गोरी बाबल सांवला।
बेटी ! आप किशन भी सांवले, रुक्मण का रंग ऊजला॥

---

१. लोटा।

कन्या कहती है, "ऐ पिता ! मेरे लिये रत्नों के सम्राट् अर्थात् हीरे के सदृश कान्ति वाला वर ढूंढ़ना।" पिता उत्तर देते हैं, "बिटिया, तू मन में किसी प्रकार का भी पछतावा न कर। हमने तेरे लिये कान्तिवान वर ढूंढ़ा है। उसके सिर पर सेहरा सुशोभित है। जैसे बाग़ में केवड़े की सुगन्धि फैल जाती है वैसे ही तेरे पति के गुणों की सुगन्धि फैल रही है। यदि वह सांवला भी है तो क्या हुआ ? रुक्मिणी गोरी थी और कृष्ण साँवले। तेरी अम्मा गोरी है, और पिता साँवले।"

पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगा हुआ हमारा सुशिक्षित समाज इस भारत के दर्शन करे।

कन्या की विदा के गीत

(२१)

जिह्नि लाडो तेरा जनम हुआ है जनम हुआ है
हुई हैं बजर की रात।
पहरे वाले लाडो सो गये, लग गए चंदन किवाड़॥
टूटे झटोले[1] तेरी अम्मा वो पौढ़े, बाबल गहर गंभीर।
गुड़ की पात[2] तेरी अम्मा वह पीवैं,
टका भी खरचा न जाय।
सौ सठ दिवले बिटिया बाल धरे हैं तब भी तो गहन अंधेर।
जिस दिन लल्ला तेरा जन्म हुआ है, हुई है स्वर्ण की रात।
सूतों के पलंग लल्ला अम्मा भी पौढ़े सुरभि का घृत मंगाय।
बूरे की पात तेरी अम्मा तो पीवै बाबल लुटावै दाम।
एक दिवला रे लल्ला बाल धरा है, चारों ही खूंट उजाला
जिह्नि लल्ला तेरा जन्म हुआ है, हुई है स्वर्ण की रात।
घर भी सूना, आँगन भी सूना लाडो चली पिता घर त्याग
घर में तो उसके बाबल रोवें, अम्मां बहिन उदास
कोठे के नीचे से निकली पलकिया, निकली पलकिया
आम नीचे से निकला डोला भय्या ने खाई है पछाड़
कोयल शब्द सुनाय।
खेल क्यूं ना ले लाडो ! कौले[3] की गुड़िया
मिल क्यों ना ले संग की सहेली।

---

१. खाट, २. एक प्रकार का प्रसूता का भोजन, ३. कोना।

कैसे खेलूँ रे बाबा कौले की गुड़िया
अब कैसे मिल लूँ संग की सहेली ?
सासू के जाये ने झगड़ा है डाला
अब नहीं मिलने हार जी।
माय कहै मेरी नित उठ आइयो, बाबल कहै छठे मास।
भय्या कहै जीजी ! काज परोजन या भतीजे के भये।
क्या आऊं रे बाबा काज परोजन या भाभी के जाये।
क्या आऊँ रे बाबा सावन की तीजों
क्या रे भतीजों के ब्याह।
डोले के पीछे बाबा भी चलिया रथ का पकड़ा है डांड।
मेरी तो बेटी रे समधी महलों की बाँदी हम तेरे बन्द गुलाम
ऐसा बोल ना बोल मेरे लायक समधी !
तुम्हारी तो बेटी मेरे महलों की रानी तुम हमारे सिर के ताज।

कन्या की विदा का समय निकट देख सभी का मन व्याकुल हो उठा है। एक स्त्री के मुख से अनायास ही निकल जाता है—"हे बेटी ! जिस दिन तेरा जन्म हुआ था, वह मानो सब के लिये वज्र की रात थी। निराशा के कारण सब पहरेदार सो गये थे और चन्दन के किवाड़ बन्द हो गये थे; अर्थात् सबको तूने बन्धन में बाँध दिया था। तेरी माँ को टूटा खटोला सोने को मिला और पीने को गुड़ की पात। बिटिया ! सैंकड़ों दीपक जलाकर रखे, परन्तु फिर भी घर में सघन अन्धकार फैला रहा। परन्तु ऐ वर ! जिस दिन तुम उत्पन्न हुए थे, वह स्वर्ण-घड़ी थी। तुम्हारी माँ के लिये सूत से बना सुन्दर पलंग बिछाया गया और उसे खाने को स्वादिष्ट भोजन मिले। तुम्हारे पिता ने तुम पर मन भर कर धन न्यौछावर किया। ऐ लाल ! एक दीपक ही जलाया गया किन्तु सर्वत्र प्रकाश फैल गया।

इन थोड़ी सी पंक्तियों में गीत की रचयित्रा ने कन्या और पुत्र के जन्म का भेद प्रकट कर दिया है—

"सौ सठ दिवले लाडो बाल धरे हैं फिर भी गहन अंधेर।"
और—"एक दिवला रे लल्ला बाल धरा है चारो खूँट उजाला।"

घर में सूना हो गया है और आँगन भी सूना हो गया है। पिता का घर छोड़कर बिटिया जा रही है। घर में पिता रो रहे हैं। माँ उदास फिर रही है।

कोठे के नीचे से पालकी चली। कोयल ने कुहू-कुहू की। उसी समय पिता कहते हैं—"बिटिया! कोने में रखी गुड़िया तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। सखियों से भी भेंट कर लो।

इस पंक्ति को सुनते ही कण्व के यह शब्द स्मरण हो आते हैं—

पाछे पीवति नीर जो, पहिले तुमको प्याय।
फूल-पात तोरत नहीं, गहने हूं के चाय॥
जब तुम फूलन के दिवस, आवत हे सुखदान।
फूली अंग समाति नहीं, उत्सव करत महान्॥
सो यह जात शकुन्तला, आज पिया के गेह।
आज्ञा देहु प्रयाण की, तुम सब सहित सनेह॥

माँ कहती है—मेरी दुलारी बेटी! तुम नित्य प्रति आना। पिता कहते हैं—कम से कम छः महीने में तो अवश्य आना।

भैया कहते हैं—प्यारी बहिन! कम से कम खुशी के अवसरों पर तो तुम अवश्य ही आना। भैया सोचता है, बहिन के बिना उत्सवों की शोभा ही क्या होगी।

डोला चल पड़ता है। चलते-चलते रथ का डण्डा पकड़कर कन्या का पिता वर के पिता से कहता है—"हमारी कन्या तुम्हारे महलों की दासी होगी। हम भी तुम्हारे सेवक हैं।" सीताजी को विदा करते समय जनक जी के पक्ष के सभी परिजनों ने भी यह कहा था :—

ये दारिका परिचारिका करि पालबी करुनामई।
अपराध छमियो, बोल पठये, बहुत हौं डीठी कई॥
परिवार पुरजन मोहिं राजहिं, प्राणप्रिय सिय जानवी।
'तुलसी' सुशील सनेह लखि निज किंकरी कर मानवी॥

—तुलसीदास

गीत में योग्य समधी का उत्तर बहुत मधुर है—"ऐ मेरे योग्य समधी! तुम मेरे सिर के मुकुट हो, तुम्हारी कन्या मेरे गृह की रानी होगी।"

(२२)

परियल की ऐ लाडो परियल छोड़ कहाँ चली?
मेरे बाबल ने बोले हैं बोल, पति के घर हम चलीं।

दादा, बाबा अबकी घड़ीन्ह में राखो,
यह घर अम्मा, भैया छोड़े न जायं।
नाना, मामा, फूफा, मौसा, चाचा
सब अब की बिरियां[1] हमें राखो।
हमारा मन उमड़ा उमड़ा आय। परियल ॥
लाडो ! अबकी तो राखी ना जाय
घुड़ले असवार बरात ठाढ़ी चम्पे बाग में।
बेटी ! जल्दी लेंगे बुलाय
मति कर तू मन ऊना[2]। परियल० ॥

(२३)

बीबी ! बोलो क्यों ना बनड़े से ?
तेरा टीका उलझा बालों से
तेरा बन्ना ए री हरियाला ए री शहजादा
संवारे दोनों हाथों से बड़े अरमानों से
बड़ी बड़ी आशा से
तेरे चकफुल उलझे बुन्दों से
बीबी बोलो ना हरियाले से
तेरी माला उलझी रानीहारों में
तेरी साड़ी उलझी चूड़ी में
तेरे नूपुर उलझे चप्पल में
तेरे बाल बिखर रहे आंखों पै।
तेरा बन्ना संवारे दोनों हाथों से।
सखी ! बोलो क्यों ना बन्ने से ?

प्रथम मिलन पर लज्जावनित बाला की दशा विचित्र है। उसके सब वस्त्राभूषण अस्त-व्यस्त हो रहे हैं। और 'गिरा अलिन मुख-पंकज रोकी' अथवा प्रेमाधिक्य के कारण वह कुछ भी कह सकने में असमर्थ है।

चतुर सखी अपनी सखी के स्वभाव से परिचित होने के कारण यह कहती हुई आ उपस्थित होती है 'तू बोलती क्यों नहीं, यह क्या अस्त-व्यस्त दशा बना रखी है।' सखी के आकस्मिक प्रवेश से क्या वह और भी अधिक लज्जित न हुई होगी ?

---

१. बार, २. थोड़ा।

(२४)

आले गीले चन्दन कटाय मेरे बाबा, दादा
और जाय धरे धर्मशाला जी।
नयी बनायी अट्टालिका जी
जिस चढ़ देखे बीबी का बाबा
कितनी आई है बरात जी।
देख डरा बीबी का दादा यह दल कहाँ समाय जी
नौ लख घोड़े, सवा लख हाथी,
गाड़ियों की लगी है कतार जी।
तुम क्यों लरजो मेरे भोले से बाबा
राम करैं बेड़ा पार जी
वह आवें मेरे ताऊ, चाचा, जीजा, भैया
वह आवें मेरे नाना, मामा, फूफा, मौसा
हंस हंस लेंगे बरात जी
मत घबरा मत घबरा मेरे बाबा
वही लगावें पार जी॥

गीले चन्दन को कटाकर धर्मशाला में बरात के ठहरने के लिये अट्टालिका बनायी गयी। उस पर चढ़कर कन्या का पिता बहुत बड़ी बरात देखकर घबरा गया। कन्या ने पिता को सान्त्वना दी। वह कहने लगी, "ईश्वर कृपा करेगा, चाचा, ताऊ, भैया आदि सभी प्रियजन बरात को सम्भाल लेंगे।"

(२५)

छज्जे तो बैठी लाडो कुँवर निरखै
यो वर बाबा जी साँवला।
गाड़ियों के अलके दलके गरद उड़ति है
गरद उड़ति वर सांवले।
रास्ते में बाबा ताल खुदाओः
न्हायें धोयें वर ऊजले
कस्तूरी मंगाओ वर के अंग लगाओ
केसर पिलाओ, वर को घोट कै।
चन्दन मंगाओ, उबटन मंगाओ
न्हायें धोयें वर ऊजले॥

छज्जे पर बैठी हुई कन्या ने देखा कि वर सांवला है। वह अपने पिताजी से बोली, "पिताजी ! यह वर तो काला है।"

पिता ने उत्तर दिया—"बहुत सी गाड़ियों के एक साथ चलने से धूल उड़ रही है। इसीलिये धूल में भरे होने के कारण वर साँवला हो रहा है।"

कन्या यह नहीं चाहती कि उसकी सखियाँ सांवला वर मिलने के कारण उसकी हँसी उड़ाएँ। इसलिये वह कहती है—"रास्ते में ही पिताजी एक तालाब बनवा दो। उबटन, चन्दन और कस्तूरी मंगवा कर रखवा दो। वर को केसर पीने के लिये दो जिससे जब वह यहाँ पर आयें तो स्नान करके गौरवर्ण होकर आयें।"

(२६)

मामा जो दीहेन सोने के धमेल[1] नहा, बापा धियोरी[2] हमारव[3]
सागर ए पनिया जिन जाऊ बेटी, माती हथिनिया है ठाढी
गगरी तो धर लई कगारे[4] लट छोरि बैठी नहाय
पिछवा चितई जब चितई बिटिया, माती हथिनिया है ठाढी
हथियाई के चढ़इया रे भैया ! तू लग भैया हमार रे,
तनि ए हथिनी पछारो[5] मोरे भैया, तू लग भैया हमार रे
भैया-भैया जनि कहौ रनिया, तू लगै रनिया हमार रे,
ए ई हथिनिया पै तोको चढाउबे, ले चलें बजना बजार रे
धोबिया तो धोवै झीनी-झीनी कपड़े, अहीरा चरावें गाय
एहि रे नगर के अमरुख[6] लोगवा, कोउ ना लगत गुहार[7]
का करै भाई का करै बाबा, का रे नगरिया के लोग
जो करि एहि बेटी बारि[8] बिहाई, ओ ही लिये तोहि जाय ॥

माँ ने कन्या से कहा कि तूने बहुत से स्वर्ण के आभूषण पहिन रखे हैं। पिता ने भी मान किया परन्तु कन्या न मानी और सागर पर पानी भरने को चली गई। उसने मटका किनारे पर रख दिया और बाल खोल कर वह स्नान करने लगी। मस्त हथिनी ने मार्ग रोक लिया। वह हथिनी के स्वामी से बोली, "भैया ! इस हथिनी को ज़रा हटा लो। तुम मेरे भैया हो।" कन्या का विवाह बाल्यकाल में ही हथिनी के स्वामी से हो गया था। कन्या उसे न पहिचानती थी। परन्तु वह उसे भली प्रकार पहिचानता था। उसने कहा—"भैया, भैया

१. एक आभूषण, २. कन्या, ३. हमारी, ४. किनारे पर, ५. ज़रा हथिनी को पीछे करो, ६. शुष्क, ७. समीप, ८. बचपन में।

मत कहो। मेरी रानी ! तुम मेरी रानी हो। मैं तुम्हें हथिनी पर चढ़ा कर ले जाऊंगा।"

कन्या को फिर भी विश्वास नहीं हुआ। उसने करुण स्वर में कहा, "इस नगर के निवासी कितने निष्ठुर हैं ! कोई भी मेरी पुकार नहीं सुनता। निकट ही धोबी बारीक कपड़े धो रहे है। अहीर गायें चरा रहे हैं, पर कोई मेरी सहायता नहीं करता।"

लोगों ने उत्तर दिया—"बेटी ! माता-पिता और घर के लोग क्या करें। जिससे तुम्हारा बचपन में ब्याह हुआ था, वही तुम्हें लिये जा रहा है।" कन्या का भोलापन करुणाजनक है।

(२७)

हरे हरे बांसों का बँगला छवा दो जी
जिस चढ़ सोवै लाडली का बाबा
कहो लाडो कहो बिटिया
कैसा वर ढूंढें जी
चन्दा नहीं, सूरज नहीं, नहीं रैन अँधेरी
नदी किनारे महादेव तपस्या करें।
वही परमानन्द हमारे मन भाये जी ॥

(२८)

तू देख बीबी राधिके ! यह कैसे वर आये।
चाँद नहीं आये सूरज नहीं आये
हाथी के हौदे आहा हाथी के हौदे
ये तो श्री कृष्ण वर आये। तू देख० ॥
शीश मुकुट उनके सोहै
मुख पै सोहै सेहरा
साथ उनके चार दल आये
ढमढम बजती बरात भी लाये। तू देख० ॥
अपने बाबा के खड़ी चबूतरे
रूप देख बर आये
मैं तुझे पूछूं ए मेरी लाडो !
यहां क्यों राव बुलाये।

अपने बाबा की मैं लाख सौगन्ध खाऊं
मैं नहीं कुंवर बुलाये
बाबा ! रूप देख वर आये।

(२९)

आंगन बरसै सोहाग बदरी भीतर दुलारी न्हाय
दादी ने सोहाग दीन्हा भर मांगों के बीच०।
बदरिया बरसै। अरे बरसै० ॥
पोस्त बोया बन्ने के बाबा, दादी बोवै लाल मेंहदी
आज यहीं रहो रे बन्ने, बरसती है सोहाग बदरी
बदरिया बरसै। अरे बरसै० ॥
अम्मा चाची ने भर दिया गुलाल, मामी भाभी ने गूंथे फूल
बीबी हमारी सजी राधा सी, बरसती है सोहाग बदरी
बदरिया बरसै। अरे बरसै० ॥
लाडो ! बाबा तो खड़े हाथ जोड़ राम रथ हांक दिया
बीबी दादा, ताऊ, चाचा खड़े हथ जोड़ राम रथ हांक दिया।
लाडो ! माँगना होय सो माँग मांगन की आई बिरियां[1]
मैं तो वर मांगूं श्रीराम, देवर छोटे लक्ष्मण से।
मैं तो मांगूं कौशल्या सी सास, ससुर राजा दशरथ से
मैं तो मांगूं अयोध्या का राज, पलंग बैठी हुकम करूं ॥

हमारे यहाँ कन्या को गौरी और सरस्वती का रूप माना जाता है। उसे बड़े भी प्रणाम करते हैं क्योंकि कन्या सब के लिये पूजनीय है।

वर ढूंढने जाने के लिये रथ तैयार है। पिता आदि सब पूछते हैं, 'तेरे लिये कैसा वर ढूंढें।'

कन्या राम के समान पति, कौशल्या के सदृश सास, दशरथ के समान श्वसुर और अयोध्या नगरी के राज्य के समान सुख-ऐश्वर्य-सम्पन्न घर ढूंढने की इच्छा प्रकट करती है।

(३०)

मेरे दादा के पछवाड़े आले[2] आले बांस खड़े।
समधी का लड़का नादान, आंगन मोरे तप करे।

---

१. बारी, २. गीला, यहाँ पर हरा।

अन्दर से निकली भर मोती का थाल ले ।
ले रे सज्जन के लड़के, अंगना मोरा छोड़ दे ॥
क्या करने तेरे मोती, क्या करनी ये थालियां ।
तुम्हारे घर कन्या कुमारी, हमें परणाय दो ॥

एक दिन वह था जब हिन्दू समाज में भी वर को कन्या के संरक्षकों से विवाह के लिये प्रार्थना करनी पड़ती थी, परन्तु आज के दिन तो यह व्यवस्था बिल्कुल उलट गई है । इसका कुछ न कुछ उत्तरदायित्व लड़की के अभिभावकों पर भी है । यदि वह अपने आत्म सम्मान की रक्षा करें तो पुनः समाज में पहली व्यवस्था स्थापित हो सकती है ।

(३१)

हुई है सुनहली रात सजन आये हरे हरे
सजन आये मोरे अंगना ।
आओ दादी बाबा आओ अम्मा बाबुल ।
सजन आये मोरे अंगना ॥
आओ चाची चाचा आओ सब मंगल गाओ
सजन आये मोरे अंगना ।
आओ भैया भाभी, अब ना देर लगाओ
सजन आये मोरे अंगना ॥
आओ सखियो, आओ मामी मामा सब उत्सव रचाओ
सजन आये मोरे अंगना ।
पीले हाथ करो लाडो के पीले हाथ करो लाडो के
आज भाग अपना
हुई है सुनहरी रात, सजन आये हरे हरे
सजन आये मोरे अंगना ॥
दूधों नहाये पूतों फले सुख सौभाग्य इसे दिन दूना
सजन आये मोरे अंगना ॥

बन्ने (लड़के) के विवाह के गीत

(३२)

बन्ना ! बाबा की फुलवाड़ियाँ फूल बीनन को जइयो
मेरा लाल बना ।
बन्ना ! कच्ची पक्की कलियाँ मरोड़ के
सुई सुई पगियाँ[1] रँगाइयो, मेरे लाल बना ।
बन्ना ! सुई सुई पगियाँ रँगाय के
सौहरे घर जाइयो, मेरे लाल बना ।
बन्ना ! सासू है तेरी चावली,
ज़रा हँस बतलाइयो मेरे लाल बना ।
बन्ना ! साली है तेरी लड़बावली,
ज़रा नखरे ना दिखाइयो मेरे लाल बना ॥

(३३)

सासू मत कर मेरा मेरा यह अब बन्ना मेरा ।
जब यह बन्ना हग हग भरता तब यह सासू तेरा
अब यह लाता भर भर थैली अब यह बन्ना मेरा ।
जब यह माँगे रो रो रोटी तब यह सासू तेरा
अब यह लावे भर भर दौना, अब यह बन्ना मेरा ।
जब यह लड़ लड़ घर को आता, तब यह सासू तेरा
अब यह ऊँची पदवी पाता अब यह बन्ना मेरा ।
जब यह रोज़ उलहने लाता, तब यह सासू तेरा
अब यह पढ़ लिख पण्डित बन गया, अब यह बन्ना मेरा ।
सासू मत कर मेरा मेरा, अब यह रहा नहीं है तेरा ॥

किसी-किसी स्थान पर यह गीत निम्न प्रकार से गाया जाता है:—

मेरा री हरियाला बन्ना लाख करोड़ी ।
बाग़ बेच बागीचे बेचूँ अरु बेचूँगी अंबिया
अंबिया में की गुठली बेचूँ, तो बाबुल की जाई ।
मेरा री० ॥
महल बेचूँ दुमहले बेचूँ और बेचूँ अटारी

---

१. पगड़ी

अटारी में की खिड़की बेचूं तो बाबुल की जाई ।
मेरा री० ॥
क्या सासू तू अड़कै मड़कै क्या मड़कावै कूल्हा
डोले में से जब उतरूँगी अलग धरूँगी चूल्हा ।
मेरा री० ॥
जब यह माँगै रो रो पैसा तब यह सासू तेरा
अब यह लाता भर भर थैली अब यह बन्ना मेरा ।
मेरा री० ॥
जब यह माँगै रो रो रोटी, जब यह सासू तेरा
अब यह लावे भर-भर दौने अब यह बन्ना मेरा ।
मेरा री० ॥
जब यह पहने कुर्ता टोपी, जब यह सासू तेरा
अब यह पहने नीची धोती, अब यह बालम मेरा ।
मेरा री० ॥
देवी धाई दुर्गा धाई, जब यह बेटा पाला
अब बहू विधाता ऐसी आई, अपना कर बैठाला ।
मेरा री० ॥
क्यों सासू तू देवी धाई, क्यों धाई तू दुर्गा ।
पंचों दीन्हा हमने लीन्हा, तूने क्या कर दीन्हा ।
मेरा री० ॥

गीत की ग्रामीण रचयित्री ने वास्तविकता का अच्छा चित्र अंकित किया है। अधिकांश युवकगण विवाह होते ही माता-पिता के प्रति कर्त्तव्य पूर्ति में बिल्कुल उदासीन हो जाते हैं ।

(३४)

सीस तेरे चीरा बना हरियाले बन्ने पेची अजब बहार ।
कान तेरे मोती बन्ने, चुन्नी अजब बहार ।।
किसियो पोता ब्याहियो, किसिये चढ़ा दहेज ।
श्याम नन्द विवाहिये जनु पूनो का चाँद
दिल्ली का सुल्तान
ब्याह बहू ले आइये हरियाले बन्ने उतरो राज द्वार ।
बहू उतारो ओबरे[1] सोभा[2] यह धमसाल

---

१. चौबारे, २. दहेज ।

सोभा का क्या देखना जो बहू कुल की होय
जो मन मेलू होय ।
सास बहू जब लड़ पड़ी, बन्ना किस की ओर ।
बाहर से भीतर गया, हुआ बहू की ओर ।।
एक दिना एक रात में जाय सराही ससुराल ।
नौ दस मास गरभ में बीते तब न सराही माय ।
आधा सोभा बांट दे जाय बसूँ ससुराल ।
जब तेरी अंखियाँ दुक्खें ही बन्ने खड़ी डुलाऊँ सारी रात !
सूखे तुझे सुलावती गीले रहती सोय,
रे हरियाले बन्ने ।
मांह पूस के जाड़े में करवट लेती नाय
जो मैं ऐसा जानती रे हरियाले बन्ने क्यों रखती तेरी आस ।
तू क्या पाला संत में मेरी भोली अम्मा तूने ठगा मेरा बाप ।
हमीं बिना आदर नहीं बापू जी ने दी बिसराय
हमीं हुए आदर हुआ पीहर से ली बुलवाय
गडुवा[1] से लडुवा[2] खाये खाई चरपरी सौंठ
खाया करकरा गौंद
मूँग चावल की खीचड़ी, मेरी भोली अम्मा, सुरही गऊ का घीय
कोने घुस घुस खावती
हम से एक जो गस्सा गिर पड़ा मेरी भोली अम्मा
नानी सी मर जाय, बंदर सी गुर्राय, मेरी भोली अम्मा।

(३५)

हरियाले बन्ने ! चीरा तो ले दूं तेरी मौज का ।
पलंग चढ़ बांधता क्यूँ ना रे ?
शहजादे बन्ने ! कच्ची कली ना तोड़ियो
हरियाले बन्ने ! मालन देगी गालियां हो तेरे ताईं[3] ।
रंगीले बन्ने ! पाकन दे रस होन दे
झुका दूंगी डालियां, हो तेरे ताईं
हरियाले बन्ने० ।।

इसी प्रकार बन्ने की अन्य वेश-भूषा की वस्तुओं को भी बारी-बारी से गाते

---

१. लोटा, २. लड्डू, ३. लिये ।

जाते हैं। वधू अभी किशोरावस्था की है। नवयुवक पति के लिये गीत में दिया हुआ उपदेश बहुत ही उचित जान पड़ता है।

महाकवि बिहारी ने भी तो इसी भाव को लेकर निम्नलिखित दोहा लिखा था, जिसके कारण साहित्य-क्षेत्र में उनकी प्रसिद्धि भी बहुत हुई :—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास एहि काल।
अली कली ही तें बंध्यौ, आगें कौन हवाल॥

(३६)

हरे हरे बांस कटाये राजा दशरथ
पानों का बंगला छवाये।
आज मोरे राम का उमड़ा है ब्याह॥
कै लखियों का लगन लिखाया,
कै लखियों का है ब्याह।
नौ लखियों का लगन लिखाया,
दस लखियों का है ब्याह।
ब्याह चले दशरथ के वह लड़के
ले गये रथ में बैठाय।
जाय उतारी अयोध्या की नगरी
ना वा के माई ना बाप।
ना मेरे सासू ना मेरे नन्दी,
किसके लागूँगी पांय।
घर घर सासू घर घर नन्दल,
नित उठ लागूँगी पांय॥

गीत बड़ा ही भावपूर्ण है। पुत्र का विवाह है। यशस्वी पिता उत्सव में निमग्न है। बहू आती है। उसका हृदय सूने श्वसुरालय को देख कर व्याकुल हो उठता है। वह सोचती है, हाय ! न मेरे सास है, न नन्द। मैं किसकी सेवा करूंगी ? परन्तु शीघ्र ही वह अपने मन को यह कह कर संतोष दे लेती है कि घर-घर सास नन्द हैं, मैं उन्हीं के पैर छू कर आशीर्वाद ग्रहण कर लूंगी। कैसी महानता है ! हिन्दू संस्कृति में गुरुजनों का आसन देवता के तुल्य माना गया है।

श्रीराम ने भी सीता जी से कहा था :—

एहि ते अधिक धर्म्म नहीं दूजा।
सादर सास ससुर पद पूजा॥

(३७)

बन्ना तो हांडे[1] अपने बाबाजी की गलियों।
दादी तो फिरै रहसी रहसी रे महल में ॥
सेर मोती वारूं जी बने पै
मोती भी वारूं मैं तो हीरे भी वारूं।
सेर मोती० ॥
बन्ना तो घूमै अपने बाबुल की गलियों,
अपने ताऊ चाचा की गलियों।
अम्मा, चाची फिरें रहसी रहसी रे।
सेर मोती० ॥
बन्ना तो आया अपने मामा की गलियों
मौसा, फूफा, नाना की गलियों
मामी, मौसी, बूआ, नानी फिरें हुलसी हुलसी रे
सेर माणिक वारें जी बने पै
चुन्नी भी वारें, नीलम भी वारें
फूल, महल, बगीचे वारें
सेर मोती वारें जी बने पै ॥

(३८)

पड़ें बुंदियां भरें क्यारी, समय वर्षा लगे प्यारी।
बने के शीश पै मौड़ा, तेरे गजरों पै मैं वारी ॥
बने की सास, साली, सभी झरोखे झांकती देखीं।
बना घोड़े चढ़ा जाता, छबि उसकी पै सब वारीं ॥
पड़ें बुंदियां० ॥
बने के अंग पर जामा, तेरे सेहरे पै मैं वारी।
बने के हाथ की अंगूठी, तेरी घड़ियों[2] पै मैं वारी ॥
बने के पैर में जूता, तेरी चाली पै मैं वारी।
बने के संग में बनड़ी, तेरी जोड़ी लगे प्यारी ॥
पड़ें बुंदियां० ॥

जैसे समय की वर्षा क्यारियों को जल से परिपूर्ण कर अन्न की उत्पत्ति करती है, और बहुत ही अच्छी लगती है, इसी प्रकार ठीक समय पर अर्थात्

१. घूमता है, २. घड़ी।

तरुणावस्था में विवाह भी शोभा देता है ।

दूल्हे की शोभा का गीत में अच्छा चित्रण है ।

(३६)

मेरी बैठक तेरा सामना रे बनड़े
गलियों का आना जाना छोड़ दे ।। गलियों० ।
शीश बने के चीरा, बने के चीरा ।
तेरी पेची पै नाच रहे मोर, हरियाले,
मोर शहजादे, गलियों का० ।।
कान बने के मोती, बने के मोती,
तेरे सच्चों पै नाच रहे मोर, हरियाले,
मोर शहजादे, गलियों का० ।।
हाथ बने के कंगना, बने के कंगना,
तेरे कंगने पै नाच रहे मोर, हरियाले,
मोर शहजादे, गलियों का० ।।
अंग बने के पटका, बने के पटका,
तेरे जामे पै नाच रहे मोर, हरियाले,
मोर शहजादे, गलियों का० ।।
पैर बने के जूता, बने के जूता,
तेरी चाली पै नाच रहे मोर, हरियाले,
मोर शहजादे, गलियों का० ।।
संग बने के डोला, बने का डोला,
तेरी जोड़ी पै नाच रहे मोर, हरियाले,
मोर शहजादे, गलियों का० ।।

(४०)

बना मेरे चाँद पूनो का,
निकल आया निकल आया ।
बने के शीश पर चीरा,
बने के मुखड़े पर सेहरा,
सिहाया[1] देख मन मेरा । बना० ।।

---

१. उमंग से भर उठा ।

बने की छाती है चौड़ी
बना है तेज से शोभित
सिहाया देख मन मेरा । बना० ॥
बना पढ़ लिख बना पण्डित
बना तो है बड़ा हंसमुख
सिहाया देख मन मेरा । बना० ॥
बना तो छैल छबीला सा,
बने की चितवन बड़ी प्यारी
सिहाया देख मन मेरा । बना० ॥
बने के साथ में बन्नो,
लगे जोड़ी बड़ी प्यारी
सिहाया देख मन मेरा ॥ बना० ॥

(४१)

हाथों जरी का रुमाल, बना री मेरा मेवा लाया ।
आया तो आया नीलगरनी[1] की गलियों ।
नीलगरनी हुई कुर्बान बना मेरा साड़ी लाया ॥ बना री० ॥
आया तो आया बना मोची की गलियों ।
मोचन हुई कुर्बान, बना मेरा साड़ी लाया । बना री० ॥
आया तो आया बना दरजी की गलियों ।
दरजन हुई कुर्बान, बना मेरा जोड़ा लाया ॥ बना री० ॥
आया तो आया बना ससुरे के अंगना ।
सासू हुई कुर्बान, बना मेरा ब्याहवन आया ॥ बना री० ॥
आया तो आया बन्ना, चौंरी[2] ढिग बैठा ।
बन्नो तो हुई कुर्बान, बना मेरा सुन्दर आया ॥ बना री० ॥
आया तो आया बन्ना, श्लोक सुनाने आया ।
सब ही हुए कुर्बान, बना मेरा पण्डित आया ॥ बना री० ॥

बन्ना रंगरेजन के यहाँ साड़ी लेने गया, दर्जी के यहाँ जोड़ा लेने और मोची के यहाँ जूता लेने गया । बन्ने के सौन्दर्य को देखकर रंगरेजन, दर्जन और मोचिन सभी मुग्ध हो गये ।

यह पढ़कर चौंकना नहीं चाहिये । नगरनिवासियों को अन्य स्त्रियों की

---
१. रंगरेजन, २. वेदी ।

प्रशंसा भले ही विस्मयजनक जान पड़े, परन्तु ग्रामीणों के लिये यह असाधारण बात नहीं है। बन्ना अपनी माँ के समान सभी ग्रामीण स्त्रियों का पुत्र है, फिर वह उसकी शोभा पर क्यों न मुग्ध हों। सास ऐसा जामाता पाकर, नव-वधू ऐसा सुन्दर पति पाकर, और सब सम्बन्धी उसकी योग्यता को देखकर उस पर न्यौछावर हो गये।

सेहरे

(४२)

बने के शीश का चीरा तेरी पेंची पे मन मेरा।
बने को फूल का मालन ! गुंथा ला बाग़ से सेहरा।
बेला, जूही, गुलाब, चमेली का गुँथा ला बाग़ से सेहरा।
हारसिंगार, मोतियों से सजा ले देख तू सेहरा।
पहना दे हार फूलों के बांध दे लाजवाब सेहरा।
बने के अंग पर कुर्ता तेरी धोती पै मन मेरा।
बने के हाथ में अंगूठी तेरे कंगने पै मन मेरा।
बने के पैर में जूता, तेरी चलगत पै मन मेरा।
बने के हेठ[1] की लीली, तेरे चाबुक पै मन मेरा।
बने के साथ में बन्नो, तेरी जोड़ी पै मन मेरा।
बने का चांद सा मुखड़ा, सजा है जिस पै यह सेहरा।
चतुर सी खूब यह मालन गूंथ लायी बाग़ से सेहरा॥

(४३)

मोतियन बेला चमेली का गुंथाया सेहरा
बाबा ने ताऊ ने खड़े होके गुंथाया सेहरा
दादी ने ताई ने कलेजे से लगाया सेहरा
बाबुल चाचा ने खड़े होके गुंथाया सेहरा
मोतियन बेला चमेली का गुंथाया सेहरा
अम्मा ने चाची ने इत्र में डुबाया सेहरा
भैया, जीजा ने खड़े होके गुंथाया सेहरा
मामा फूफा ने खड़े हो के पहनाया सेहरा
मामी बूआ ने सराहा बन्ने का सेहरा
मोतियन बेला चमेली का गुंथाया सेहरा

---

१. साथ की घोड़ी।

सास सलहज ने उठाया मुख से सेहरा
निकल आया चांद सा मुखड़ा सिहाया देख मन मेरा ।।

(४४)

मेरी मालन रंगीली गूंथ लायी री, सेहरा गूंथ लायी री
कहां तो बोया गुलाब री, कहां तो बोया केवड़ा री ।
किनारे किनारे बोया केवड़ा री, क्यारी में बोया गुलाब ।
किन ये डाल झुकाइयां री और किन ये बीने हैं फूल
मेरी मालन छबीली गूंथ लायी री० ।।
माली ने डाल झुकाइयां री, और मालन ने बीने हैं फूल
गूंथा ए गूंथा वारी ला धरा री हां धरा री चंगेरी[1] के बीच
मेरी मालन० ।।
सिर धर मालन निसरी री मेरठ के तखत बज़ार री
लोग महाजन पूछिया, अरी कर सेहरे का मोल
मेरी मालन० ।।
यौं तो लगे या में डेढ़ सौ री, और लाल लगे लख चार री
उड़ने तो लगी चिड़कली जी, कूकन लागे मोर
मेरी मालन० ।।
किन यह सेहरा मंगाइयां री, और किसके घर में जाय री
......[2]बेटा ब्याहियां......[3]का पोता ब्याहियां
अरे उन घर यह जाये री
मेरी मालन० ।।

(४५)

यह सेहरा बेचूं नहीं री......[4] के सिर जोग री
नौ लख सेहरे का मोल है दस लख बाबा ताऊ दे रहे री
नौ लख सेहरे का मोल है दस लख बाबुल चाचा दे रहे री
अरी कर सेहरे का मोल दस लाख भैया जीजा दे रहे री
अरी नाना, मामा, मौसा, फूफा दे रहे री ।
मेरी मालन० ।।
बने के मुख पै सजता री, अरी बने के योग यह सेहरा री
बूआ दादी मौसी भाभी करें इसकी रखवाली री
चार जनी रखवाल, बहिन चन्द्रा साथ री मेरी ।

---

१. डलिया । २. यहाँ लड़के के पिता का नाम लिया जाता है । ३. यहाँ लड़के के बाबा का नाम लिया जाता है । ४. दूल्हे का नाम लिया जाता है ।

बांध बूंध सेहरा बढ़िया री, मेरा मुख चांद सा री
मेरी मालन० ॥
बांध सेहरा बना घोड़ी चढ़ा री और साजन की गलियों में जाय री
मेरे बने की साली चावली री, सेहरे पै वारी जाय री।
ब्याह ब्यूह घर आइयां और गलियों में पड़ गई धूम री।
मेरी मालन० ॥
कहां उतारूं दादी दायजा जी कहां उतारूं अम्मा बड़नार जी
अंगना उतारो दायजा जी, महलों उतारो बड़नार जी
कहां चाची, ताई, भाभी, जीजी उतारें दायजा जी
कहां उतारें कहो कुल की बहू जी
आओ भैया ! महलों आओ लाडो महल की रानी जी
मेरी मालन०॥
दोनों की जोड़ी वाह ! खूब बनी री
अरी रहसा सब परिवार री
नाई डूम सब मांगते, मालन अड़ी दरबार री
चुनरी उढ़ाई बेटा बादशाह, और गल में पहनाया उन हार री
बेटे तो जियो···राव के
पोते तो जियो···राव के
भतीजे तो जियो···राव के,
भैया तो जियो···राव के
दोहते तो जियो···राव के मेरी मालन० ॥

नोट :—जो स्थान रिक्त छोड़े गए हैं वहाँ अमुक-अमुक नाम लिये जाते हैं।

वैदिक काल में हमारे यहाँ प्रत्येक घर में वाटिका का होना आवश्यक था। भारत में फूलों का प्रेम प्राचीन काल से चला आता है। यही कारण है कि आज के दिन भी वर-वधू को फूलों से सुसज्जित करने की प्रथा है।

घोड़ी

(४६)

एक वृन्दावन के बजार नवल घोड़ी आइयाँ।
घोड़ी ! किन तुझे बोली है बोल, कौन तुझे लाइयां ॥
लक्खी बाबा ने बोली है बोल, सौदागर लाइयां।
घोड़ी बांधूंगी बंके दरबार, सरों के थम्ब से ॥

घोड़ी नीरू की नागर बेल, कटोरा भर दूध का।
मेरा धमक हुआ असवार ले चाबुक जीन पै।।
हरियाला बना लावेगा जिताय, सजनों की पौल से।।

यह गीत बहुत प्राचीन है। एक समय था जब माता-पिता अपनी कन्या का विवाह करना अपमानजनक समझते थे। वर सेना सजाकर कन्या के पिता पर आक्रमण करते थे और उन्हें जीतकर कन्या को बरबस ले जाते थे। कन्याएँ भी इस प्रथा की आदी हो गई थीं और उन्हें इसमें कुछ भी अपमानजनक प्रतीत न होता था। कृष्ण जी को रुक्मणी ने पत्र लिखकर बुलाया था।

जगनिक का 'आल्हा' ग्रन्थ इस प्रकार के युद्धों से भरा पड़ा है।

आल्हा ऊदल कहा करते थे:—

सगुन बिचारें बनिया बाह्मन, सिर धर मौर ब्याहवन जांय।
सगुन बिचारें हम का छत्री, जो रण चढ़ के लोह चबायं।।

गीत की नायिका अपने भावी पति की घोड़ी नीरू को नागर बेल खाने को और कटोरा भर दूध पीने को देती है। उसे विश्वास है कि इस घोड़ी पर सवार होकर वर उसके पिता को पराजित करके उसे ले जायेगा।

(४७)

घोड़ी बने की आ गयी देखो कैसी सजे।
सीस बने के चीरा सोहै, पेंची पै हीरे जड़े।।
अंग बने के जामा सोहै, कुण्डल पै लाल जड़े।
गले बने के माला सोहै, देखो फूल कैसे सजे।।
हाथ बने के कँगना शोभित, बन्ने राजा कैसे सजे।
उंगली बने के अंगूठी सोहै, अंगूठी में नीलम जड़े।।
पैर बने के जूता सोहै, जूते तो चुन्नी जड़े।
संग बने के बन्नी सोहै, पुष्पों की झड़ी लगे।।

इस गीत में वर की शोभा का वर्णन है। तुलसी जी ने राम के वर वेश की शोभा का इस प्रकार वर्णन किया है:—

पीत चौतनी सिरन सुहाई, कुसुम कली बिच बीच बनाई।।
रेखा रुचिर कम्बु कलग्रीवा, जनु त्रिभुवन सुषमा की सीवा।।
कुंजर मणि कण्ठा ललित, उर तुलसी की माल।
वृषभ कन्ध, केहरि गवनि, बल निधि बाहु विशाल।।

कटि तूनीर, पीत पट बांधे । कर सर धनुस वाम वर कांधे ॥
पीत यज्ञ उपवीत सुहाई । नख सिख मंजु महा छवि छाई ॥

(४८)

ठुमक चलती चाल घोड़ी ।
अजब चलती चाल घोड़ी ॥
आगे घोड़ी तुम चलो री ।
पीछे से बाबा हुशियार, घोड़ी । ठुमक० ॥
ऊदी व पीली बादामी सफेद रंग घोड़ी ।
चार रंग दे रही बहार, घोड़ी । ठुमक० ॥
आगे घोड़ी तुम चलो री ।
पीछे से ताऊ हुशियार, घोड़ी ॥ ठुमक० ॥
ऊदी व पीली बादामी सफ़ेद रंग घोड़ी ।
चार रंग दे रही बहार घोड़ी ।
ठुमक चलती चाल घोड़ी ।

(इसी प्रकार नाना, मामा, चाचा आदि कहकर पद गाए जाते हैं ।)

(४९)

चंचल घोड़ी चाँदनी मथुरा से आयी ।
ले मेरे बाबा मोल ले मेरे बाबुल मोल ले ।
तुम्हारी होगी बड़ाई ।
कितना लीली[1] का मोल है कितने में चुकाई ।
नौ सौ घोड़ी का मोल है, दस सौ में चुकाई ।
चढ़ हमारे लल्ला एड़ दे देखें चतुराई ।
आप चतुर बन्ना लाड़ला पीछे सब भाई ।
दामों की बोरी सब खरचें भाई ।

पहले न मोटर थी न रेल । वर घोड़े पर सवार होकर विवाह के लिये प्रस्थान करता था । उस समय सब अश्वारोहण में निपुण होते थे । उस समय की प्रथा आज भी भग्न रूप में अवशिष्ट है, जो अब व्यर्थ ही सी है । वर डरता, कांपता घोड़े पर चढ़ता है, देख कर भी दया आती है ।

---

१. घोड़ी ।

भात के गीत

(५०)

उठ पिया आधी सी रात, कोई ढूँढो राजा अपने भातइये ।
ढूँढा धुर गुजरात, पाये ताऊ-जाये पूत ।
हम तो री बहना अपनी बहना के बीर,
अपना भैया ढूँढ लो ।
हिरदय अँगीठी रे राजा जल रही, उठ पिया आधी सी रात
सारा ढूँढा पिया ! मारवाड़, सगला ढूँढ डाला गंगा पार
पाये चाचा जाये पूत,
हम तो अपनी बहना के बीर, अपना भैया ढूँढ लो ।
सारा ढूँढा पिया मालवा, ढूँढा कलिंग देश ।
अम्मा का जाया रे राजा ना मिला, मिला बूआ-जाया पूत
हम तो अपनी बहना के बीर, अपना अम्मा-जाया ढूँढ लो ।
हिवड़े अंगीठी मेरे जल रही, मिला न मैया-जाया बीर ।
सारा ढूँढा पिया मगध रे, ढूँढा गौड़ बंगाल ।
अपना भैया ना मिला, मिल गया मामा-जाया पूत ।
हम तो अपनी बहना के भैया, अपना भैया ढूँढ लो ।
आगे चली ढूँढती, मिल गये मैया-जाये बीर ।
किन्नै री जीजी ! तुझे बोले हैं बोल
किन तुझे दिया है उलाहना ?
ताऊ-जाये बोले हैं बोल, चाचा-जाये दिया उलाहना ।
बुआ-जाये बोले हैं बोल, मामा-जाये दिया है उलाहना ।
ली बहना गले लगाय, आँसू पौंछे बहना शालू से
कोई कै दसिया[1] कै तेरा मढ़हा, कोई कै दसिया कै तेरा ब्याह
जाओ जीजी ! घर आपने, लाऊँगा दो दल जोड़ ।
गये वह बजाज की दुकान, शालू बिसावै[2] अपनी बहन को
गये हैं कसेरे की दुकान, बर्तन बिसावें अपनी बहन को
गये हैं पंसारी की हाट, गोले मेवा मंगावें बहन को ।
गये हैं सर्राफ़ की दुकान, गहने मंगावें अपनी बहन को ।
लाद-लूद सामान चल पड़े, आये बहन दरबार ।

---

१. तिथि, २. मंगाना ।

किसियो ने आंगन लिपाइयां, किसने उलदा[1] है भात जी।
बहन सुभद्रा ने आंगन लिपाइयां, भैया ने उलदा है भात जी
सूना आंगन भर गया, मेरा आया माई-जाया बीर।
सूना आंगन भर गया, मेरे आये भतीजे चार ॥

यह गीत उस समय का है जब रेल के इंजन का आविष्कार नहीं हुआ था। पत्र भी बहुत कम आते जाते थे। बहिन के पुत्र का विवाह है। उसे अपने दुलारे भैया की याद आयी। उसके बिना भला विवाह की क्या शोभा होगी। वह देश-देशांतरों में ढूंढती फिरी, परन्तु चचेरे, ममेरे भाई मिले, उसे अपना भय्या नहीं मिला बल्कि उसने भाई के सदृश ही उनसे कहा, "भैया! तुम्हारे भानजे का विवाह है। चलो अपनी बहन के घर की शोभा बढ़ाओ।" किन्तु चचेरे भाई ने शुष्क उत्तर दिया, "हम तुम्हारे भाई नहीं हैं। तुम अपना भाई ढूंढ लाओ।"

स्त्री का हृदय शोक से भर उठा। हृदय में अंगीठी-सी जलने लगी। अगले दिन वह फिर अपने भैया की खोज में चल पड़ी।

जा पर जा कर सत्य सनेहू।
सो तेहि मिलै न कछु सन्देहू ॥

अन्त में बहिन को अपना दुलारा भैया मिल गया। बहिन को अत्यन्त हर्ष हुआ, परन्तु साथ ही चचेरे भाइयों के कटु शब्द स्मरण हो आये। हर्ष और दुख के सम्मिश्रण से उसके नेत्रों में अश्रु उमड़ आये। भैया ने बहिन को गले से लगा लिया। उसके आँसू पौंछे। उसके अधीर मन को शान्त किया। फिर विवाह की तिथि पूछी और आने का वचन दिया। भाई-बहिन का प्रेम अपरिमित होता है। बधाई है उन बहिनों को जिन्हें भाई प्राप्त हैं और बधाई है उन भाइयों को जिन्हें बहिन मिली हैं।

(५१)

झूमर तो पिया! तुम गढ़वाओ,
बिन्दी लावें मेरे भातइये।
चल चुप रह नार! देखे तेरे भातइये।
पांच का लावें पच्चीस ले जांय,
ब्याज मूल में तुझे ले जांय,
देखे तेरे भातइये।

---

१. उतारा।

हस्ती को ईख देम्रो, घोड़ों को दाना देम्रो
बैलों को कुट्टी देम्रो मोटर में तेल देम्रो जी
ए बरातियों को पंच पकवान बरातियों को पूरी पकवान
कुठाट समधी मांड़ पीम्रो जी
मंढ़े पै दो दल जुड़ गये जी
एजी एक ससुरा दूजा बाप का, साजन का बेटा रूंस भागा जी
हमारी कौनसी गुनाह तकसीर
हमारा राय बाबुल बांध गेरा जी
मोती पुराने लाया, गहना पुराना लाया
नाले पुराने लाया, मेंहदी पुरानी लाया
मेवा पुरानी लाया जी
हमारी लाडो का रंग बिरंग
तेरा राय बाबुल ऐसे बांधा जी
मोती सजा कै लाऊँ, गहना गढ़ा कै लाऊं
नाले रंगा के लाऊं, मेवा काबुल की लाऊं
हां थारी लाडो का रंग सुरंग
हमारा राय बाबुल खोल दीजो जी
म्रागे म्रागे दान जावै, पीछे पीछे मान जावै
बीच में हमारी लाड़ली का डोला
कुठाट समधी जीत चला जी
बाबा राजा नंगे पैरों ताऊ राजा नंगे पैरों
ए जी हाथ जोड़ बिनती करें
जरा साजन डोला डाट दीजो जी
एजी हम थारे बन्द गुलाम,
हमारी बेटी थारी बांदी कहिये जी
पीछे से ससुरा बोला जी
एजी तुम सिर के सिरताज
तुम्हारी बेटी हमारे महलों की रानी जी।

सीठने

सीठने हमारे लोक-साहित्य में विशेष प्रकार के गीत हैं। इस प्रकार की रचना हमें साहित्य-संसार में नहीं मिलती। रामायण में भी इसका वर्णन आया है :—

जेंवत देंहि मधुर धुनि गारी। लइ लइ नाम पुरुष अरु नारी।
पंच कौर करि जेंवन लागे। गारि गान सुनि अति अनुरागे।

इनमें हास्यरस लिये व्यंगोक्ति होती है। परन्तु इनमें इतनी अधिक अश्लील गालियाँ आदि दी जाने लगीं कि समाज-सुधारकों ने इनका बहुत विरोध किया और इन्हीं के कारण सभ्य संसार लोक-साहित्य से विमुख हो गया।

एक दो अच्छे सीठनों के उदाहरण देखिये :—

(५५)

तू तो——[1] पतला तेरी जोरू मोटी
आप खावै घी चूरमा तुझे जौ की रोटी
आप सोवैं सुख सेज पै तुझे टूटी खटोली
ऐसा काला तू बना रे——[1] जैसी उड़द की दाल
दाल होय तो धोय लूँ तेरा रंग न धोया जाय रे॥

बरातियों पर व्यङ्गोक्ति

(५६)

हमने बुलाये सुथरे सुथरे भूंडे भूंडे आये री।
हमने बुलाये लम्बे लम्बे मोटे नाटे आये री।
हमने बुलाये बड़े घरों के, ओछे ओछे आये री।
हमने बुलाये गोरे गोरे, काले काले आये री।
हमने बुलाये हाथी के हौदे, गधे चढ़ के आये री।
छाज का है चंवर डुलाया, झाड़ू का है सेहरा री॥

बारात के खाना खाते समय के गीत

(५७)

कन्यापक्ष के व्यक्ति—"परोस दिये भाजी लड्डू पूरी पकवान जी।
जीमो जीमो समधी पंच पकवान जी॥
बताओ बताओ समधी अपनी बात जी।"

बरपक्ष का—माँ हमारी चाँदनी और बाबुल पूनो का चाँद जी।

---

१. नोट—जिसे सीठना देना हो उसका नाम लिया जाता है।

उत्तर—हमारे सारे भाई राज कुंवर, बहन रानी राधिका जी
बहू हमारी चम्पा की कली, शोभा है रनिवास की।

कन्यापक्ष—माँ तुम्हारी नटनी और बाप तुम्हारा नटुआ जी
तुम सारे भाई बनजारे, बहन तुम्हारी बाँदियों सी जी।

बधावे

नोट :—कन्या की विदा के पश्चात् तथा बहू के श्वसुरालय से प्रथम बार जाने पर बधावे गाये जाते हैं।

(५८)

ढोला[1] मारूनी दोनों बातां नी लागे
थारे पीहर में गोरी धन ! कौन पियारा ?
नींबू पाकन लागे।
एक पियारा अपना बाबुल भी कहिये।
दूजी तो पियारी मेरी लाड़-लड़न्ती[2] माय
एक पियारा मुझे अपना बीरन लागे
दूजी दुलारी हमें लाल भवजिया
नींबू पाकन लागे।
इन रे बातों गोरी धन खारी[3] भी लागी
देंगे तुम्हें मन से बिसार[4]।
फूल फूलन लागे।
ढोला मारूनी दोनों बाताँ नी लागे।
ससुराल में गोरी धन कौन पियारा ?
नींबू पाकन लागे।
एक पियारा हमें सौहरा[5] जो कहिये
दूजी पियारी हमें सास सपूती जी
फूल फूलन लागे।
एक प्यारी हमें अपनी नन्दल लागे।
दूजा प्यारा हमें नन्दी का बीर ॥
फूल फूलन लागे।

---

१. पति-पत्नी, २. प्रेम करने वाली, ३. बुरी, ४. त्याग ५. श्वसुर।

इन बातों में गोरी हमें प्यारी भी लागो।
देंगे तुम्हें अगड़[1] घड़ाय ॥
फूल फूलन लागे।

कन्या का अपने पितृ-गृह के लिये अधिक प्रेम प्रदर्शित करना कभी भी श्वसुरालय वालों को सहन नहीं होता। उनकी सदैव यही उत्कट अभिलाषा रहती है कि वह सदैव हमारी ही प्रशंसा करे। हमारे घर में ही सब से अधिक सुख का अनुभव करे और हमारे प्रेम में सबको विस्मृत कर दे।

(५६)

...[2]पूछे अपनी गोरड़ी कैसा रानी जी थारा भाग
बधावा हमारे नित नया।
हमारा नहीं जी तुम्हारी माय का
जिन जाये हैं गिरदां[3] वाले पूत
जिन जाये हैं अर्जुन जैसे पूत
बधावा जी हमारे नित नया ॥

यहां पर बहू का उत्तर बहुत ही माधुर्य्य से पूर्ण है। पत्नी पति को उत्तर देती है, "यह भाग्य मेरा नहीं है जिससे नित्य नवीन उत्सव मनाये जाते हैं। यह तो तुम्हारी अम्मा का भाग्य है जिन्होंने अर्जुन के समान यशस्वी पुत्रों को जन्म दिया है। इसलिये हमारे यहां नित्य नवीन उत्सव मनाये जाते हैं।" यदि सभी बहुएँ यह समझने लगें तो गृह सुख-शान्ति के निकेतन बन जाएं।

(६०)

सखी री मेरे उमड़ आये बदरा
आये आये री मेरे घर की तलवटी।
पहिला बधावा मेरे बाबुल बार[4], दूजा बधावा मेरे
माई जाये बार।
बाप बधावे री सखी जन्म पाया
बीर बधावे नौरंग चूंदड़ी।
तीजा बधावा सखी री मेरे ससुरे के बार।
चौथा बधावा मेरे लखपत जेठ के।
ससुर बधावे सखी री मैंने यह घर पाया
जेठ बधावे मुझे आधा धन मिल गया

१. आभूषण, २. यहां नाम लिया जाता है, ३. यशस्वी, ४. घर।

पांचवां बधावा मेरे राजड़े[1] के बार
उसी बधावे मेरा मन रहसिया।
राजड़े बधावे सखी मैंने यह घर पाया
अन्न धन पाया, दूध पूत पाया
इसी बधावे मेरा मन रहसिया।

यहां पर गीत की नायिका सबके प्रेम की तुलना कर रही है। पिता के यहां जब उत्सव मनाया गया था, तब उसने जन्म लिया था। भाई ने उत्सव के समय उसे चूंदड़ी दी। श्वसुर के यहां जब उत्सव हुआ तो वह उस घर की स्वामिनी बन गयी। ज्येष्ठ के यहाँ जब बधाई बँटी तो उसे आधी सम्पत्ति मिल गयी। परन्तु जब उसके प्रियतम के यहां उत्सव मनाया गया तो उसके फलस्वरूप उसे घर, अतुलनीय धन-वैभव, पुत्र आदि सभी सुख प्राप्त हो गये। तभी तो आज सुख रूपी बदली उसके गृह पर उमड़ रही है। तुलसी जी ने सत्य ही कहा है:—

अमित दानी भर्त्ता वैदेही।

(६१)

क्या कहूँ रानी ! तुम्हारा भाग
तुम्हीं हमारा वंश बधाया[2] जी
धन्य बहूरानी जिन जाया···[3] ज्ञानी
धन्य धन्य हमारा भाग जो मिली तुम बहूरानी
क्या कहूँ रानी ! तुम्हारा भाग०॥
धन्य···[4] बहूरानी जिन जाया हमारा होलर लाल ज्ञानी
क्या कहूँ रानी ! तुम्हारा भाग०॥

सभ्य संसार में सन्तान का परिचय कभी भी माँ के नाम से नहीं कराया जाता किन्तु लोक-गीतों में स्त्री का गौरव ज्यों का त्यों अन्तर्निहित है। चीन में किसी न किसी रूप में यह प्रथा अब भी विद्यमान है। पितृ-गृह को हमारे ग्रामों में 'मायका' कहते हैं।

---

१. पति, २. बढ़ाया, ३. यहाँ पुत्र का नाम लिया जाता है, ४. यहाँ बहू का नाम लिया जाता है।

जकड़ी

(६२)

नायनें गाना समाप्त करके नित्य यह गीत आशीर्वाद के रूप में गाती हैं:—

इन घर की मैंड़ी ऊँचे बंके बार।
जम जम[1] शादी सोहिले हम गावें मंगल चार।
मंगल करै बधावड़ा, इस रे सुहावने बार।
मोतियन चौक पुराय कै, सुवरण सतिये देय
रंगमहल तै उतरी सिर सालू चक[2] डोर
हाथ कसीदा रंग ला गोद जडूलें पूत
गल सोहै मोतियन की माल
बिछुए तुम्हारे बाजने बेटियों घड़े सुघड़ सुनार
बाबुल बीर घड़ाइयाँ तुम पहिनो मन चित्त लाय
पायल तुम्हारी बाजनी, बहुओं घड़ी सुनार।
ससुर बैठ घड़ाइयां, तुम पहनो मन चित्त लाय।
सारे भाई चौधरी नीके, सारे बरकतदार।
सारे खरचें बोरियाँ तुम्हारी धन्य धन्य है माय।
मखमल जूता पहर के घूमों बागों बीच।
या सोओ दरबार में या भाइयों के बीच।
तुम्हारे बार लाला नीम झलोरे[3] ले
आंगन तख्त बिछा हुआ तुम्हें बेटों का सुख
जंवाई का सुख, पोते, नाती, भाई, भतीजे का सुख
ऊँचे तुम्हारे चौंतरे लाला, ऊंचे तुम्हारे नाम।
मोती तुलें तराजुओं तुम्हारे हस्ती घोड़े घूमें बार
बाहें हरी हरी चूड़ियाँ बहुओं ! अचल रहे सुहाग।
नाक की बेसर यों लसै, ज्यों तारों में चांद।
नौ दरवाजे अगलेनी[4] के चांदी के बड़े किवाड़।
पोते बेटे लाड़ले तेरे खेलें चौंपड़ बार॥

---

१. युग-युग, २. चारों ओर गोटा लगा हुआ, ३. लहलहाना। ४. घर के सम्मुख।

आशीर्वाद के गीत

(६३)

मिलि देत असीस सखी सगरी[1],
चिर होय सुहाग तेरा बनड़ी ।
पिय के चित्त में नित तुम्हीं बसो,
तुम्हरे मन पति की पूजा री । मिलि० ॥
सास ससुर की सेवा करियो,
ननद और जेठानी से हित री ।
बालक, धन, जोबन पाय सखी,
मत करियो गर्व कभी तुम री । मिलि० ॥

(६४)

तुम्हें शुभ होयेंगे मारग,
तुम्हें अन्न-जल सदा शुभ हो ।
दूधों नहाओ, फलो पूतों,
तुम्हें पल-पल सदा शुभ हो ॥
तुम हो बूढ़ सोहागिन,
तुम पीली-पटियों[2] सुख भोगो ।
तुम पर सुख की हो वर्षा,
तुम्हें नया घर सदा शुभ हो ॥
अरी लाडो ! चलो धीमी,
बापू आये मिलने को ।
मिलो तुम प्रेम से सबसे,
तुम्हें सब कुछ सदा शुभ हो ॥
चाचा, ताऊ, बहन, भाभी,
सभी परिवार से मिल लो ।
वहां भी रहना मिल-जुलकर,
तुम्हें पिय बल सदा शुभ हो ॥

कन्या विदा होने को प्रस्तुत है । सभी उस पर अपने हार्दिक आशीर्वादों की वर्षा कर रहे हैं ।

---

१. सभी, २. अनन्त काल तक सुख पाती रहो ।

खण्ड ३

नृत्य के गीत

तथा

हास्य-रस और व्यंग के गीत

· ९ ·

नृत्य के गीत

नाटक के मुख्य चार अंग हैं—कथनोपकथन, संगीत, वेश-भूषा तथा नृत्य। नृत्य के बिना नाटक अपूर्ण है। इस प्रकार नृत्य कला का एक विशेष अंग है। भरत मुनि ने एक बहुत बड़ा नाट्य ग्रन्थ लिखा है। नाटक की सृष्टि ही नट् धातु से हुई है। इसका अर्थ है नृत्य। बड़े-बड़े लेखकों ने नाटक लिखे हैं। शैक्सपीयर, कालीदास, भवभूति, द्विजेन्द्रलाल राय, टैगोर, बर्नार्ड शॉ आदि प्रसिद्ध नाटककारों के नाम उल्लेखनीय हैं। परन्तु नाटक में नृत्य का समावेश होने पर भी एक कला के रूप में नृत्य के प्रत्यक्ष दर्शन नहीं होते। चलचित्रों में भी प्रायः नृत्य दिखलाया जाता है। गौहरजान, उदयशंकर आदि आधुनिक समय में भी अच्छा नृत्य करते हैं। वेश्याओं के पास अब भी यह कला सुरक्षित है, परन्तु उनका समाज में मान नहीं है। अतः कोई कुलवधू अथवा कन्या उनसे नृत्य सीखना पसन्द नहीं करती। उदयशंकर की तो विदेशों तक में बहुत प्रसिद्धि है। परन्तु अभी तक भी हमारे समाज में नर्तकों का पद प्रतिष्ठित नहीं समझा जाता।

चरित्र का हमारे देश में सदा से बहुत अधिक महत्व रहा है। पति-पत्नी के अतिरिक्त इस प्रकार के कटाक्ष और हाव-भाव प्रदर्शित करना हमारे देश में बुरी दृष्टि से देखा जाता है। कदाचित मध्यकाल में नृत्यकला के ह्रास का यही एक मुख्य कारण हो। परन्तु मुगलों के समय में भी नीला और बूंदी की रानी ने अपने नृत्य के द्वारा अपने सतीत्व और पति की रक्षा की थी।

हमारे पूर्व साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि हमारे यहाँ नृत्य बहुत प्राचीन काल से प्रचलित है तथा उस समय भी वह बहुत उन्नत दशा में था। नृत्य कन्या की शिक्षा का मुख्य अंग था। शिवजी का ताण्डव-नृत्य, सावित्री-सत्यवान नृत्य, बृहन्नला के वेश में अर्जुन का उत्तरा को नृत्य सिखाना प्रसिद्ध

है। अजन्ता की गुफा में अब भी नृत्य के अच्छे चित्र बने हुए हैं। कृष्ण गोपियों के साथ नाचा करते थे। इन्द्र के दरबार की उर्वशी प्रसिद्ध नर्तकी थी।

फ़सल कट चुकने पर हमारे यहाँ कृषक उत्सव मनाया करते थे, उनमें नृत्य का विशेष स्थान होता था।

पाषाण युग के मनुष्य ने रात्रि-दिन के होने को, सूर्य चन्द्र ग्रहण, वर्षा आदि का कारण देव-कृपा एवं कोप समझा। वे देवताओं को प्रसन्न करने के लिये नृत्य करते थे। जब विज्ञान के द्वारा दिन रात आदि के कारण को मनुष्य ने समझ लिया तो देव मन्दिरों में उत्सवों के समय नृत्य का प्रचार बढ़ा।

हमारे यहाँ की प्रचलित परियों की लोक-कथाओं में नृत्य का विशेष वर्णन पाया जाता है।

वीर-पूजा के रूप में भी हमारे यहाँ नृत्य प्रचलित था। विजयी होकर जब वीर समरभूमि से लौटते थे तो उनके स्वागत में नृत्य हुआ करता था।

भक्ति के आवेश में मीरा कृष्ण की मूर्ति के सम्मुख नाचा करती थी।

नृत्य का प्रचार सभ्य और असभ्य सभी देशों में समान रूप से पाया जाता है। पाश्चात्य जातियों में अतिथि के स्वागत में नृत्य प्रचलित है। कहते हैं हज़रत दाऊद ईसा-मसीह के सम्मुख नाचे थे।

नृत्य की सृष्टि भावावेश के कारण होती है। कभी-कभी मनुष्य अपने भावों को अपने तक ही सीमित नहीं रख पाता, उस समय उसके कण्ठ से जो संगीत फूट निकलता है तथा अपने हाव-भाव जिस ढंग से वह प्रदर्शित करता है, वही नृत्य का आदि रूप है।

पहले हमारे यहाँ कठपुतलियों के नृत्य की भी प्रथा थी। वे देखने में बिल्कुल प्रत्यक्ष सुन्दरी-सी जान पड़ती थीं। बोल भी सकती थीं। हम ग्रामों में इस प्रथा के ध्वंसावशेष भद्दी पुतलियों के नृत्य में पाते हैं। नटों का नृत्य अब भी टूटे-फूटे रूप में ग्रामों में प्रचलित है।

जावा, बर्मा, जापान, चीन आदि अनेक देशों में नाना प्रकार के वेश धारण करके नृत्य किया जाता है। हमारे यहाँ अधिकतर लहंगा-दुपट्टा नृत्य के अवसर पर पहना जाता है। स्वधर्म्मार्थं प्राणत्यागी तथा वीर-स्मृति को देशवासियों के हृदय में अमर बनाने के लिये जापान, चीन आदि में नृत्य का प्रचार है। जापान में पुजारी भी नृत्य में भाग लेते हैं।

नृत्य मनुष्य के लिये प्राकृतिक है। मेघों को आता देखकर मोर नृत्य करने लगता है।

जंगली जातियों में सभ्य जातियों से भी अधिक नृत्य का प्रचार है।

इसका एक प्रत्यक्ष प्रमाण कम्बोडिया की रंगशाला में मिलता है। उसका नाम ही रंगरम है जिसका अर्थ है नृत्यशाला।

मैकडानल और कीथ आदि विद्वानों के अनुसार भारत में नाटक की उत्पत्ति सबसे पूर्व हुई। अतः नृत्य भी नाटक के जन्म के समय ही अवश्य पूर्ण कला का रूप धारण कर चुका होगा।

नृत्य एक शारीरिक व्यायाम भी है। हमारे देश में मध्य-युग में पराधीनता, परदा प्रथा, शिक्षा का अभाव, प्रति समय युद्ध का भय आदि अनेकों ऐसे कारण थे जिनके कारण नृत्य-कला का प्रचार कम हो गया था। परन्तु फिर भी हमारी बहिनों ने इस कला की रक्षा की। गुजरात के गरबा नृत्य पर आज भी सब मुग्ध हैं। हमारी ग्राम्य बहिनों ने तो इस कला की अवहेलना कभी की ही नहीं। बच्चे के जन्म, विवाह आदि शुभ अवसरों पर अब भी प्रायः घरों में नृत्य होते हैं।

पंजाब का भंगड़ा नृत्य, गुजरात का गरबा नृत्य, दक्षिणी भारत का देवदासी नृत्य, कथाकली नृत्य, महाराष्ट्र में तमाशे में नृत्य, शैव-मतावलम्बियों में गम्भीरा नामक मञ्च का नृत्य तथा कृष्ण-रासलीला में राधा-कृष्ण नृत्य, राधा नृत्य, मणीपुरी नृत्य हमारे यहाँ बहुत प्राचीन काल से प्रचलित हैं। संपेरा नृत्य, भिरड़, बिच्छु कलिहर का नृत्य, कृषक नृत्य और सामूहिक नृत्य भी हमारे यहाँ होते हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि भारत में आर्य्यों के आगमन से पूर्व आर्य्येतर जातियाँ भी नृत्य करती थीं। ऋग्वेद में तथा रामायण से प्रेरणा ग्रहण करके बर्मा, जावा, कम्बोडिया, मलाया, स्याम आदि में भी नाटक का आदि रूप हमें मिलता है। नाटक नृत्य के बिना अपूर्ण है। अतएव नृत्य का प्रचार भी तभी हो गया होगा।

आज सौभाग्य से हमारा भारत स्वतन्त्र है। आशा है, स्वतन्त्र भारत में नृत्य-कला की उन्नति की ओर विशेष ध्यान दिया जायेगा।

विवाह आदि शुभ अवसरों पर नृत्य करते हुए स्त्रियां जो गीत गाती हैं, उनमें से कुछ गीत दिये जाते हैं।

(१)

अंधेरिया है रात सनम ! आइयो कि जाइयो ।
तत्ता सा पानी साबुन की टिकिया
अंधेरिया है रात सनम ! नहाइयो कि रहियो । अंधेरिया ० ।।
तत्ती सी पूरी और गुलदाना,
अंधेरिया है रात सनम ! खाइयो कि रहियो । अंधेरिया ० ।।
तेरी मोहब्बत का बीड़ा लगाया,
अंधेरिया है रात सनम ! रचियो कि रहियो । अंधेरिया ० ।।
फूलों की सेज मोती झालर के तकिये
अंधेरिया है रात सनम ! सोइयो कि रहियो । अंधेरिया ० ।।

गीत की नायिका का अपने प्रियतम के प्रति प्रेम असीम है। अन्धकारमयी रजनी में गर्म पानी और साबुन स्नान के लिये, गर्म-गर्म पूरी और गुलदाना भोजन के लिये, प्रेम का बीड़ा खाने के लिये तथा पुष्प-शय्या सोने के लिये तैयार किये वह प्रतीक्षा कर रही है। परन्तु वह अपनी इच्छा को अपने प्यारे पर लादना नहीं चाहती। उसका प्रेम किसी बात की अपेक्षा नहीं करता:—

"मालिक ! तेरी रजा रहे, और तू ही तू रहे ।
बाकी न मैं रहूँ न मेरी आरजू रहे ।।"

× × ×

"जब मैं था तब तू नहीं, जब तू था मैं नाहिं ।
प्रेम गली अति सांकरी या में दो न समाहिँ ।।"

(२)

तिलड़ी[1] हमारा नाम, बालम ।
अपने ससुर की मैं ऐसी लाड़ली,
जैसे पूनों का चाँद, बालम ।
अपने जेठ की मैं ऐसी लाड़ली,
जैसे कमल का फूल, बालम ।
अपने देवर की मैं ऐसी लाड़ली,
जैसे जेब का रूमाल, बालम ।

---

१. तीन लड़ की माला ।

अपने पिया की मैं ऐसी लाड़ली,
जैसे गले का हार, बालम ।

गीत में प्रेम-गर्विता रमणी के उद्गार हैं। उपमाएं सुन्दर और उपयुक्त हैं। हमारे साहित्य में तो पति के अतिरिक्त अन्य पारिवारिक जनों के प्रेम का वर्णन बहुत ही कम मिलता है। केवल तुलसी जी ने पारिवारिक प्रेम के कहीं-कहीं सुन्दर चित्र अंकित किये हैं।

बिहारी जी ने पति के प्रेम के विषय में निम्नलिखित दोहे लिखे हैं:—

तो पर वारौं उरबसी, सुन राधिके सुजान।
तू मोहन के उर बसी, ह्वै उरबसी समान॥
तू मोहन मन गड़ि रही, गाढ़ी गढ़नि गुवालि।
उठै सदा नॅटसाल लौं, सौतिन के उर साल॥

परन्तु यह भाव एक सखी के हैं; स्वयं प्रेम-गर्विता नारी के नहीं।

(३)

चांदनी पिया बिना मोरे किस काम।
जब रे चांदनी बागों पै आयी
गजरों का गुथइया परदेस॥ चांदनी०॥
जब रे चांदनी तालों पै आई,
साड़ी का धुलइया[1] परदेस॥ चांदनी०॥
जब रे चांदनी कूओं पै आई,
झारी का भरइया परदेस॥ चाँदनी०॥
जब रे चाँदनी गलियों पै आई,
झाड़ू का दिलइया परदेस॥ चांदनी०॥
जब रे चांदनी अंगना में आयी,
चौपड़ का खिलइया परदेस॥ चांदनी०॥
जब रे चांदनी रसोइयों पै आयी,
पूरी का खिलइया परदेस॥ चांदनी०॥
जब रे चांदनी सेजों पै आयी,
सेजों का सुलइया परदेस॥ चांदनी०॥

धवल कौमुदी में स्नान करती हुई वसुन्धरा को देखकर बेचारी प्रोषित-पतिका का हृदय अपने प्रिय की स्मृतियों से भर उठता है। उसे उन सब बातों की स्मृति

---

१. धुलाने वाला।

आती है, जिन्हें वह नित्य ही अपने प्रियतम के लिये अथवा कभी-कभी अपने प्रियतम के साथ किया करती थी। गीत की स्वाभाविकता हृदय पर प्रभाव डालती है।

उसका विरह बिहारी की नायिका के समान नहीं है :—

मरिवे को साहस ककै, बढ़े विरह की पीर।
दौरति है समुहे ससी, सरसिज सुरभि समीर॥

इस प्रकार पगलों की नाईं भागते हुए देख कर सम्भव है दर्शकगण भयभीत हो पागलखाने का ही आयोजन कर बैठें। न वह विरहातुर होकर यही कह सकी—

हौं ही बौरी बिरह बस, कै बौरो सब गाँव।
कहा जानि ए कहत है, ससिहि सीतकर नांव॥

(४)

मेरे जी का जंजाल राजा क्यों लाये सौकनिया[१]।
जो मैं होती गंजी गबरी, जब लाते सौकनिया।
मेरे लम्बे-लम्बे केश, राजा क्यों लाये सौकनिया।
मेरे जी का जंजाल० ॥
जो मैं होती अन्धी कानी, जब लाते सौकनिया।
मेरे मृगी जैसे नैन, राजा क्यों लाये सौकनिया॥
मेरे जी का जंजाल० ॥
जो मैं होती नकटी सकटी, जब लाते सौकनिया।
मेरा सूए जैसा नाक, राजा क्यों लाये सौकनिया।
मेरे चावल जैसे दांत, राजा क्यों लाये सौकनिया।
मेरे जी का जंलाल० ॥
जो मैं होती ठिगनी मोटी, जब लाते सौकनिया।
मैं केले की सी गोभ, राजा क्यों लाये सौकनिया॥
मेरे जी का जंजाल० ॥
जो मैं होती बाँझ बँझौटी, जब लाते सौकनिया।
मेरे अर्जुन, सर्जुन पूत, राजा क्यों लाये सौकनिया॥
मेरे जी का जंजाल० ॥

---

१. सपत्नी।

पति ने दूसरा विवाह कर लिया। पत्नी इसका कारण समझने का प्रयास करती है, किन्तु समझ नहीं पाती। यदि उसके सौंदर्य में कोई कमी होती, यदि उसके अर्जुन, सर्जुन जैसे लाल न होते तो सम्भव था कि वह इस अपमान के हलाहल को पी लेती। परन्तु सर्वगुण-सम्पन्ना होते हुए भी वह यह निरादर क्यों सहन करे? उसकी भर्त्सना भी स्वाभिमान से पूर्ण है।

नोट—अब बहु-विवाह की प्रथा बन्द हो गई है।

(५)

मेरा मन[1] तें रपटा पैर फूट गई झारी।
मेरा फट गया दखिनी चीर उलझ गई सारी॥
मेरी सखी! पड़ी बिमार, मेरी ड्योढ़ी में।
एक बड़ा है गोपाल वैद बनवारी॥
जंगल की बूटी डाल फिरे झोली में।
अरी बुलाओ गोपाल वैद बनवारी॥
राधा ने घूँघट काढ़, नबज दिखलायी।
तेरे ताप नहीं, नाहीं कोई बिमारी
तू करवाले अपना ब्याह, दूर होय बिमारी।
राधा हो गई आग, यह बात सही नहीं जाई।
वह बोली झट से, सत्य तुम कान्ह सुनाई।
तुम्हारे पतले पतले हाथ, चाँद सा मुखड़ा।
करवालो तुम्हीं ब्याह, बाँध के सेहरा॥

राधा मोहन पर रीझ गई। आते ही विरह की पीड़ा के कारण अस्वस्थ हो गई। जैसे-तैसे सखी के द्वारा गोपाल को बुलवाया। परन्तु नटखट श्याम यहाँ भी नटखटी किये बिना क्यों मानते? झट से कह ही जो दिया, 'इसे प्रेम की बीमारी के अतिरिक्त अन्य कोई बीमारी नहीं है।' राधा सब के सम्मुख लज्जा से गड़ गई। वह रोष में भर कर बोली "तुम्हारे ही पतले-पतले हाथ हैं और मुख चन्द्रमा के समान है। यदि तुम्हें शौक़ चर्राया है, तो तुम्हीं सेहरा बाँध कर ब्याह करा लो।"

यही भाव निम्नलिखित दोहे में भी है—

---

१. कुएं की मेंड।

मैं लखि नारी ज्ञान, करि राख्यो निरधार यह।
वह ही रोग निदान, वहै रोग औषध वहै ॥

(६)

मेरी नाजुक नरम कलाई रे, पनियां कैसे जाऊँ ?
अपने ससुर की मैं ऐसी लाडली,
आंगन में कुंई खुदवाई रे, पनियां कैसे जाऊँ ? मेरी० ॥
अपने जेठ की मैं ऐसी लाडली,
रेशम की डोर बँटवाई रे, पनियां कैसे जाऊँ ? मेरी० ॥
अपने देवर की मैं ऐसी लाडली,
सोने की झारी मंगवाई रे, पनियां कैसे जाऊँ ? मेरी० ॥
अपने पिया की मैं ऐसी लाडली,
दो दो पनिहारी रखवाई रे, पनिया कैसे जाऊँ ? मेरी० ॥
सास ननद मेरी जनम की बैरन,
आंगन की कुइं मुंदवाई रे, पनियां कैसे जाऊँ ? मेरी० ॥
दौरानी जेठानी मेरी जनम की बैरन,
लगी पनिहारी हटवाई रे, पनियां कैसे जाऊँ ? मेरी० ॥

ग्रामीण बाला ने सब के प्रेम का अच्छा तुलनात्मक चित्रण किया है। सब का प्रेम सराहनीय है, परन्तु पति का प्रेम अतुलनीय है।

कवि के भावमय शब्दों में—

उनको हित उनही बने, कोऊ करो अनेक।
फिरत काग गोलक भयो, दुहूँ देह ज्यों एक॥ —बिहारी

(७)

हमारे कंकरिया किसने मारी ?
कंकरिया के मारे, कंकरिया के मारे
हमारी गगरी फूट जायेगी।
गगरिया के फूटे, गगरिया के फूटे,
हमारी चुनड़ी भीग जायेगी॥
चुनरिया के भीगे, चुनरिया के भीगे,
हमारी सासरिया[1] गाली देगी।
सासरिया की गाली से, सासरिया की गाली से,
हमारे नैनों से नीर जारी॥

---

१. सास।

नीर जारी होने से, नीर जारी होने से,
हमारा सिंगार, सुरमा बिगड़ जायेंगे।
सिंगार सुरमे के बिगड़े, सिंगार सुरमे के बिगड़े,
हमारे राजा जी रूठ जायेंगे॥
राजा जी के रूठे, राजा जी के रूठे
हमारी सेजरिया सूनी हो जायेगी॥

पानी भरने जाती हुई पत्नी को देखकर मनोविनोद करने के लिए पति ने पीछे कंकरी मारी। बिचारी विचार-मग्न हो उठी। उसी समय उसके पति ने आकर उसे और भी लज्जित कर दिया होगा।

महाकवि बिहारी ने भी पति की नटखटी पर एक दोहा इस प्रकार लिखा है :—

लरिका लैवे के मिसहिं, लंगर मो ढिग आय।
गयो अचानक आंगुरी, छाती छैल छुवाय॥

(८)

ठण्डी सड़क का आना री जाना,
शालुड़ा उड़ उड़ जाय।
चलोगी कैसे, चलोगी कैसे,
हमारा पनिया भरोगी कैसे ?
तत्ती सी पूरी और गुलदाना,
खाने वाले परदेस खाओगी कैसे ?
खाओगी कैसे ?
ठण्डा पानी भरा सरोवर,
नहाने वाले परदेस, नहाओगी कैसे ?
नहाओगी कैसे ?
पूरी कचौड़ी हलुआ मिठाई,
खाने वाले परदेस, खाओगी कैसे ?
खाओगी कैसे ?
शीशे की बोतल मीने के प्याले,
पीने वाले परदेस, पियोगी कैसे ?
पियोगी कैसे ?

चन्दा की चांदनी में चौपड़ बिछायी,
खेलन वाले परदेस, खेलोगी कैसे ?
खेलोगी कैसे ?
फूलों की सेज, मोती झालर के तकिये,
सोने वाले परदेस, सोग्रोगी कैसे ?
सोग्रोगी कैसे ?

विरहिणी की ग्रस्त-व्यस्त दशा देखकर सखी युक्ति से काम लेती है। वह अपने परिहास के द्वारा उसको लज्जित करके उसके मन की व्यथा को कम करने की चेष्टा कर रही है। लज्जित होकर उस विरह-विधुरा को अवश्य ही स्नान करना, खाना खाना, तथा चौपड़ खेलनी पड़ी होगी।

(६)

दिलों से लाग रहा मेरे दिल जानी।
मैं वारी मेरे सइयां के काले काले पट्ठे।
दिल वालों में रम गया मेरे दिल जानी।।
मैं वारी मेरे पिया की बड़ी-बड़ी अँखियाँ।
मन ग्राँखों में बस गया, मेरे दिल जानी।।
मैं वारी मेरे राजा का चौड़ा-चौड़ा सीना।
छवि मन में बस गई मेरे दिल जानी।।
मैं वारी मेरे पिया की टसरी की धोती।
मैं चलगत पै बलिहारी मेरे दिल जानी।।

ग्राम्य बाला अपने प्रियतम के सौन्दर्य पर रीझ उठती है।

हरि-रूप-विमुग्धा गोपियों के भावों का वर्णन महाकवि सूर ने इस प्रकार किया है:—

देखि री हरि के चंचल नैन।
खंजन मीन, मृगज चपलाई, नहीं पटतर एक सैन।
राजिव दल, इन्दीवर, सतदल, कमल कुसेसय जाति।
निसि मुद्रित प्रातहि वे विकसित, ये विकसित दिन राति।
ग्ररुन सेत सिति झलक पलक प्रति, को बरनै उपमाइ।
मनु सुरसरी गंग जमुना मिलि, संगम कीन्हो ग्राइ।
ग्रवलोकन जलधार तेज ग्रति, तहाँ न मन ठहरात।
सूर स्याम लोचन ग्रपार छवि, उपमा सुनि सरमात।।

यहां पर केवल नेत्रों का ही वर्णन है। एक मुसलमान हिन्दी-कवि ने भी नेत्रों का क्या सुन्दर वर्णन किया है:—

अमिय हलाहल मद भरे, सेत स्याम रतनार।
जियत मरत झुकि झुकि परत, जेहि चितवत इक बार॥

(१०)

जाली की टुपिया ओढ़ो मोरे रसिया।
कहां गये री बलम छलबलिया॥
नैनों में सुरमा सारो मोरे रसिया।
शोभा तुम्हारी अजब है रसिया॥
जाली का कुर्ता पहरो मोरे रसिया।
गोरा है बदन तुम्हारा रसिया॥
टसरी की धोती पहनो मोरे रसिया।
पतली सी कमर तुम्हारी रसिया॥
काला सा जूता पहनो मोरे रसिया।
चलगत मधुर तुम्हारी रसिया॥

स्त्री का पति से शृंगार के विषय में कहना हमारे साहित्य में एकदम नयी बात है। यद्यपि पति की ओर से इस प्रकार के भाव अनेकों बार प्रकट किये जाते हैं। यथा:—

अहे! दहेड़ी जिन धरै, जिन तू लेहि उतारि।
नीके हैं छींके छुए, ठाड़ी रह तू नारि॥ —बिहारी

(११)

कोठे नी कोठे फिरै गुजरिया तो कान्हा ने कंकरी चलाई बाई जी।
ओहो म्हारे थारे नैन मिले बाई जी॥
जब रे गुजरिया पानी को चाली
तो कान्हा ने डोल फाँसा बाई जी।
ओहो म्हारे थारे० ॥
जब रे गुजरिया ने घड़ा उठाया
तो कान्हा मलमल न्हावें बाई जी।
ओहो म्हारे थारे० ॥
जब रे गुजरिया के आये मुकलावले[1]
अरे कान्हा तो टस टस रोवें बाई जी।

---

१. गौना कराने वाले।

जब रे गुजरिया ने सीस गुंथाया,
कान्हा सीसा दिखावें बाई जी।
जब रे गुजरिया गड्डी[1] में बैठी
तो कान्हा घोड़े असवार बाई जी।
जब रे गुजरिया की गड्डी अटकी
तो कान्हा खिड़खिड़ हँसें बाई जी।
बहू को उतारो महल में जी
और कान्हा को पास उतारो बाई जी।
अन्दर आ के ससुरा पूछे,
यह तेरे साथ घोड़े वाला कौन बहू री ?
अन्दर आके जेठा भी पूछे,
यह तेरे साथ घोड़े वाला कौन बहू री ?
अन्दर आके राजा भी पूछें,
यह तेरे साथ घोड़े वाला कौन गोरी जी ?
अन्दर आके देवर भी पूछे,
थारे साथ कौन बताओ भाभी जी ?
चाहे राजा मारो चाहे राजा छोड़ो,
म्हारे साथ कृष्ण मुरारी राजा जी।
ओहो म्हारे थारे० ॥

यह गीत बहुत कुछ डा० धनीराम प्रेम की 'लालारुख' कहानी के कथानक से मिलता है। केवल थोड़ा-सा अन्तर है। वहाँ राजकुमार ही फरामरोज बना था। परन्तु अन्त में वही बात है—न लालारुख ने फरामरोज के प्रति अपने प्रेम को छुपाया था, और न गीत की नायिका ही अपने प्रेमी के प्रति अपने प्रेम को छुपाती है। इस गीत पर नृत्य बड़ा मनहर होता है।

(१२)

पतली पतली चूंदड़ी पड़े है पाला।
छुट्टी ले के आया छैल चीरे वाला॥
मां तै भी बोला, बहिन तै भी बोला।
हमते नहीं बोला री शरम का मारा॥
सास घर जायेगी, ननद घर जायेगी।
रहेंगे दोनों जने, शरम खुल जायेगी॥

---

१. गाड़ी।

हम चलें चाकरी रोओ मत गोरी।
लाल पलँग अटारी सोइयो गोरी॥
आँख नहीं लगती, रात नहीं कटती।
तुम्हारे बिना छैल जवानी नहीं डटती॥

पति बहुत दिनों में परदेश से लौटा, परन्तु लज्जावश पत्नी से नहीं बोला। उसने अपने निराश मन को समझा लिया। जाते हुए पति को ध्यान आया। वह पत्नी से धैर्य रखने को कह गया, परन्तु पत्नी के लिये पति के अभाव में सर्वत्र सूनापन है।

(१३)

कुरड़ी पै कूड़ा गेरन में गयी, कुरड़ी लागी है आग पियारे।
यौवन झिरवे मां एकला रे।
नाड़ा जल गया मां रेशमी, शरीर लगी है आग पियारे।
धोती आयी मां सूखती ब्राह्मण आया लेनिहार[1] पियारे।
ना जावां ना जावां इस पण्डित के साथ पियारे।
लाठी आयी माँ बाजती, ससुर आया लेनिहार पियारे।
ना जावाँ ना जावाँ इस बुरढ़े के साथ पियारे।
बहली[2] आयी मां बाजती जेठा आया नैहर[3] पियारे।
ना जावाँ ना जावाँ इस जेठा के साथ पियारे।
वंशी आयी मां बाजती, देवर आया नैहर पियारे।
ना जावाँ ना जावाँ सास रे इस पाली[4] के साथ पियारे।
हाथी आये मां झूमते पिया आये नैहर पियारे।
अब जाँ अब जाँ सासरे इन कन्ता के साथ पियारे॥

पति के बिना विरहिणी को सर्वत्र अग्नि जलती प्रतीत होती है। कृष्ण-वियोगाकुल गोपियों को भी कृष्ण के बिना मधुवन के हरे-भरे रहने पर आश्चर्य हुआ था।

मधुवन ! तुम कत रहत हरे।
बिरह बियोग स्यामसुन्दर के, ठाड़े क्यों न जरे ?
तुम हौ निलज लाज नहिं तुमको, फिर सिर पुहुप धरे।
ससा सियार और वन के पखेरू धिकधिक सबनि करे।
कौन काज ठाड़े रहे बन में, काहे न उकठि पड़े॥

---

१. लेने वाला, २. बैलगाड़ी, ३. पितृगृह, ४. गाय चराने वाला।

स्त्री को लेने के लिये ससुराल से ब्राह्मण, श्वसुर, देवर, जेठ आदि सभी आये परन्तु पति नहीं आया। पत्नी नैहर में ऐसी अनुरक्त हो रही थी कि उसने सब को टरका दिया। अन्त में जब पति लेने आया, तब पत्नी ने अपने को उसके हाथों में समर्पित कर दिया। यह पति को एक बार फिर ससुराल में बुलाने का बहाना भी था।

(१४)

चलो सखी मरुवे के फूल तोड़ लायें।
फूल तोड़ लायें हारें बनायें॥
चलो सखी कृष्ण के गल में पहनायें। चलो सखी०॥
फूल तोड़ लायें गजरे गुथायें।
चलो सखी कृष्ण के हाथ में पहनायें। चलो सखी०॥
फूल तोड़ लायें पैंजनियाँ बनायें।
चलो सखी कृष्ण के पग में पहनायें। चलो सखी०॥
फूल तोड़ लायें सेजें बिछायें।
चलो सखी कृष्ण को सेजों सुलायें। चलो सखी०॥

कृष्ण का रूप धारण करके एक बालिका कृष्ण बन जाती है। तथा अन्य बालिकाएं पुष्प चयन करके कृष्ण को सजाने के लिये पुष्पाभरण बनाती हैं। इस गीत पर नृत्य प्रायः दो कन्याएं करती हैं।

(१५)

गोरी ! देख चाँदनी क्या लसकी।
प्यारी ! तुम तो बनी सुरमे की डली।
मेरे हरदम रहती नैनों में बसी॥
प्यारी ! तुम तो बनी मिश्री की डली।
मेरे हरदम रहती मुख में पड़ी॥
प्यारी ! तुम तो सदा मेरे दिल में बसी।
मेरे दिल की बनी हो तुम ही घड़ी॥
प्यारी ! तुम तो बनी पतली सी छड़ी।
मेरे हरदम रहती हाथों खड़ी॥

प्रेम की व्यापकता एवं एकात्म-भाव का गीत में अच्छा वर्णन है।

(१६)

पवन झड़ लागी हो धीरे धीरे ।
सो राजा मोरे किधर से उठी है बदरिया ।
पूरब पछिमइयो हो धीरे-धीरे ॥
सो गोरी मोरी पूरब से उठी है बदरिया ।
पच्छिम में झड़ लागी हो धीरे धीरे ॥
सो राजा मोरे खोलो न अजड़ किवड़िया ।
कलेजा पड़ा काँपे हो धीरे धीरे ॥
सो राजा मेरे ले लो न तुम करवटिया ।
ललन पड़ा रोवै हो धीरे धीरे ॥
अरे गोरी मेरी हम नहीं लें करवटिया ।
ललन पड़ा रोओ हो धीरे धीरे ॥
पवन झड़ लागी हो धीरे धीरे ।

हवा ज़ोर से चल रही है । वर्षा भी हो रही है । पति पत्नी को हृदय से चिपकाये सो रहा है । अलग सोया हुआ बच्चा रो रहा है । पत्नी माता हो चुकी है । वह पुत्र-स्नेह और पति-प्रेम दोनों के मध्य में हैं । पति से वह कहती है कि तुम जरा करवट ले लो, उठकर किवाड़ खोल दो, मैं बच्चे को चुप करा लूँ । पति अपने सुख में मस्त है, वह ना कर देता है । पत्नी जब माता बन जाती है, तब उसके प्रेम का प्रवाह पुत्र की ओर अधिक वेग से बहने लगता है ।

(१७)

जमुना जल बरसें कोई धीरे धीरें
ससुरा मेरा मारै सास मेरी कोसे
कदी[1] तो माँ के जाऊँगी,
बहिन छरछन्दी जीजा पिटवाये
लाज मोहे आवै, हो धीरे धीरे ।
नन्दोइया मेरा मारे ननद पिटवाये
कदी तो माँ के जाऊँगी, हो धीरे धीरे
राजा मोरा मारे सौकन मेरी कोसे
कड़ी से बँधवा दूँगी, धीरे धीरे ॥

---

१. कभी ।

बालिका-वधू ससुराल आयी है। ससुराल में सास, ससुर, ननद, नन्दोई तथा पति और सपत्नी सब का व्यवहार उसके प्रति अत्यन्त कटु है। दुःख से विह्वल वधू को मां का स्नेह स्मरण हो आता है और वह सोचती है कि जब मायके में जाऊँगी तो इन सब को दण्ड दिलवाऊंगी, परन्तु साथ ही अपनी बहिन के द्वारा जीजा को पिटवाने की स्मृति उसे हो आती है। वह सोचती है, यह बात तो अच्छी नहीं है। इस दुख के आवेग में भी वह अपनी उदार प्रकृति को छोड़ नहीं पाती।

गृहस्थी के जंजाल में ग्रस्त विह्वल वधू की करुण मूर्ति गीत को सुनते ही नेत्रों के समक्ष आ जाती है।

(१८)

मेरा गिरा कान का बाला गिरा री अंगना में।
मेरी सासु है जल्लाद सुनेगी देगी गाली।
मेरे ससुरे बड़े महाराज हमें समझावें।
बहू ! क्या बाले सी चीज इतना घबरावै।
बहू ! बाला दें मंगवाय हीरे लाल जड़वा दें।
मेरा गिरा० ॥
मेरी जिठानी बड़ी जल्लाद सुनेगी देगी गाली।
मेरे जेठ बड़े री उदार मुझे समुझावें।
बहू ! क्या बाले की बात मत इतना घबरावै।
बहू ! बाला देऊं मँगवाय, मोती नीलम जड़वाके ॥ मेरा० ॥

सम्मिलित परिवारों में बहू को सास, ननद और जेठानी की अधीनता में रहना पड़ता है। कभी-कभी उनका स्वभाव कठोर होता है और बहुओं का जीवन नारकीय यन्त्रणा से पूर्ण हो जाता है।

गीत की नायिका की सास, जेठानी का स्वभाव अच्छा नहीं है। बहू कान का बाला गिरने पर इसीलिये बहुत घबरा रही है, परन्तु सौभाग्य से श्वसुर और जेठ उदार स्वभाव के हैं। वे बहू को नई बाली लाने का विश्वास दिला-कर ढाढ़स बँधा देते हैं।

(१९)

गए पिया परदेस छोड़ सूने उपवन में।
सोने की थाली में भोजन परोसा

तुम जीमो लोगो जीमो, मेरे जिमइया लश्कर[1] में ॥
ढाके के दौने में मगद के लड्डू
तुम चक्खो भाई चक्खो, हमारे चखइया लश्कर में ॥
आधी सी रात चटक रहे तारे
तुम खेलो भाइयो खेलो, मेरा खिलइया लश्कर में ॥
फूलों की सेज, मोती झालर के तकिये
तुम सोओ लोगो सोओ, मेरा सुलइया लश्कर में ॥

गीत की नायिका का पति लड़ाई में गया हुआ है। घर पर किसी उत्सव के उपलक्ष्य में भोज दिया गया है। ऐसे अवसर पर स्त्री को अपने परदेशी प्रियतम की स्मृति विह्वल बना रही है। अतिथि-सत्कार में निमग्न होते हुए भी रह-रहकर उसके हृदय में एक कसक-सी उठती है। सुख और दुःख के विशेष अवसरों पर अपने प्रियजनों की स्मृति आना अत्यन्त स्वाभाविक है।

(२०)

मेरे सीस गगरिया भारी, जरा उतार दो गिरधारी।
तुम तो कहिये कान्हा गउएँ चरैया,
हम हैं हेरन हारी, ज़रा उतार दो गिरधारी ॥
तुम तो कहिये कान्हा माखन चुरैया,
हम हैं बेचन हारी। ज़रा० ॥
तुम तो कहिये कान्हा बंसी बजैया,
हम हैं नाचन हारी। ज़रा० ॥
तुम तो ओढ़ो कान्हा काली कमलिया,
हम बसन्ती साड़ी। ज़रा० ॥
तुम तो कहिये कान्हा कृष्ण कन्हैया,
हम हैं राधा प्यारी। ज़रा० ॥

(२१)

ले लो बिहारी नन्द लाल जी, दहिया मोरि ले लो।
कोरी कोरी मटकी में दहिया जमाई,
पानी ना डाला इक बूंद रे, दहिया मोरी ले लो। ले लो बिहारी० ॥
तेरी दही का कुछ मोल नहीं है,
तेरी सुरतिया का मोल रे, दहिया मोरी ले लो। ले लो बिहारी० ॥

---

१. फ़ौज।

मोरी सुरतिया का नाम न लीजो,
मोरा गुजर लठमार रे, दहिया मोरी ले लो। ले लो बिहारी० ॥

इस गीत पर जब एक लड़की कृष्ण और दूसरी गूजरी का वेश बनाकर नृत्य करती है तो नृत्य देखते ही बनता है। गीत में दही वाली की सूरत पर रीझने वाले नँदलाल को दहीवाली ने कैसा मुँह तोड़ जवाब दिया है !

(२२)

लिख लिख चिठियां ससुर जी पै भेजूँ।
यह चिठियां बंचवाइयो बहू जी के गौने की,
जोबन उमगा जाय रे सजन तोरे मिलने को।
ससुर हमारे ने यौं लिख भेजा,
अब का साल बचाइयो खरच नहीं गौने को।
जोबन उमंगा० ॥
लिख लिख चिठियां जेठ जी पै भेजूँ,
यह चिठियां बंचवाओ बहू जी के गौने की।
जेठ हमारे ने यौं लिख भेजा,
अब का साल बचाइयो महल नहीं सोने को।
जोबन उमगा० ॥
लिख लिख चिठियां देवर जी पै भेजूँ,
यह चिठियां बंचवाइयो भाभी जी गौने की।
देवर हमारे ने यौं लिख भेजा,
अब का साल बचाइयो, पलँग मसहरी नहीं सोने को।
जोबन उमगा० ॥
लिख लिख चिठियाँ कन्ता जी पै भेजूँ,
यह चिठियां बंचवाइयो प्यारे हमारे गौनें की।
कन्ता हमारे ने यूँ लिख भेजा,
अब का साल बचाइयो, उमर नहीं आने की।
जोबन उमगा० ॥

पहले संयुक्त परिवारों में प्रेम रहता था; नव-वधू के आगमन से पहले उसके रहने का सब समुचित प्रबन्ध कर दिया जाता था। आजकल सम्मिलित परिवारों में कलह मचने लग गयी है, क्योंकि सास-ससुर स्वयं कुछ प्रबन्ध करते नहीं और पति के करने पर उन्हें अपमान जान पड़ता है। इसके

अतिरिक्त गीत को पढ़ने से पता चलता है कि बाल-विवाह होने पर भी गौना देर में करके इस दोष का परिहार कर दिया जाता था।

(२३)

हमें तगड़ी ला दो हम प्यारी तुम्हारी।
मैं बागों गयी थी सनम भी गये थे।
सनम के गये से चमन खिल गये थे।
मैं बोली ना चाली गले लग बैठी।
गले के लगे से हिरदय मिल गये थे।
हमें तगड़ी ला दो हम रानी तुम्हारी॥

प्रेमिका अपने प्रियतम की खोज में वाटिका में गई। वहाँ प्रियतम के दर्शन पाकर उसे सारा उद्यान लहलहाता हुआ दृष्टिगोचर होने लगा। उसकी प्रसन्नता ही मानो प्रकृति में व्याप्त हो उठी।

(२४)

अरे पुरवइया ठण्डी हवा चले
सखी ! जिया घबराए सूनी अटरिया में।
चलो सखी कोई बागों में मिलना होय,
बागों में मेरे माली खड़े,
मेरा वहां भी न मिलना होय।
चलो सखी तालों पै मिलना होय,
सखी ! तालों पै नहाने वाले खड़े,
सखी तालों पै धोबी खड़े,
मेरा वहाँ भी न मिलना होय।
चलो सखी सड़कों पै मिलना होय,
सखी ! सड़कों पै नातेदार खड़े,
सखी ! सड़कों पै आने जाने वाले खड़े,
मेरा वहाँ भी न मिलना होय।
चलो सखी, चौके[1] में मिलना होय,
सखी ! चौके में खाना खाने वाले रहे,
सखी ! खाना तो ब्राह्मण बनाते रहे,
मेरा वहाँ भी न मिलना होय।

---

१. रसोई।

चलो सखी, महलों में मिलना होय,
महलों में मेरे सौकन अड़ी री,
मेरी सूनी सेजरिया पड़ी री,
मेरा वहाँ भी न मिलना होय।
अरे पुरवइया ठण्डी हवा चले
सखी ! जिया घबराए सूनी अटरिया में ॥

प्राचीन समय में बहु-विवाह की प्रथा थी। पति कभी किसी स्त्री से प्रेम करते थे, तो कभी किसी से। अन्य सब स्त्रियाँ पति को पाने के लिए तरसा करती थीं। चित्तौड़ के राजा रत्नसेन के पद्मावती से विवाह कर लेने पर जायसी ने रानी नागमती का जंगलों में भटकते घूमने का बड़ा ही करुण चित्र अंकित किया है।

गीत की प्रेम-योगिनी भी पति-दर्शन के हेतु बाग़-तालाब आदि सब स्थानों पर जाती है; परन्तु कहीं भी पति को एकान्त में नहीं पा सकती। एक हृदय एक समय में एक का ही होकर रह सकता है। जो पुरुष भ्रमर की नाईं रस-लोलुप होते हैं, उनकी अभागिनी नारियों के रुदन से हमारा काव्य परिपूर्ण है।

(२५)

सइयां ने मोरी ना मानी ना मानी रे
राजा ने मोरी ना मानी ना मानी रे।
जो मोरे राजा तुझे प्यास लगेगी,
तो आजा, सुराहियों के बीच,
पिलाऊँ तुझे ठण्डा पानी, ठण्डा पानी रे।
सइयां ने० ॥
जो मोरे राजा को भूख लगेगी
तो आजा रसोइयों के बीच
खिलाऊँ तुझे पूड़ी मनमानी, मनमानी रे।
सइयां ने० ॥
जो मेरे राजा को चौपड़ की लगेगी,
तो आजा चाँदनी रात,
करूँ तेरी अगवानी, अगवानी रे।
सइयां ने० ॥

जो मोरे बलमा को घूमने की लगेगी,
तो आजा बगीचों के बीच,
गूंथूं गजरे दूं प्रेम-निशानी, प्रेम निशानी रे।
सइयां ने० ॥

जो मोरे राजा को नींद लगेगी,
तो आजा सेजरियों के बीच,
छकाऊँ तुझे मदमाती, मदमाती जवानी रे।
सइयां ने० ॥

(२६)

आठ कुएँ नौ पाड़छे, कोई सोलह सौ पनिहारी
अंगूठा पैर का भीजा।
तत्ता तो पानी ठण्डा हो गया जी,
अजी उठ म्हारी भाभी नहाय।
हम नहीं नहावें हमारी ननद री,
हमारे मन बिच पड़ा री अंधेर।
करी तो रसोई ठण्डी हो गई,
अरी ! उठ मेरी भाभी ! जीम।
अंगूठा पैर का भीजा।
हम नहीं जीमें हमारी ननद री,
हमारे मन की ले गये भूख।
दूध कटोरा ठण्डा हो गया री,
उठ प्यारी भाभी पीय।
हम नहीं पीते हमारी ननद री,
हमारे मन में पड़ा है अंधेर।
बिछी सेजरियां मैली हो गयीं,
अरी उठ मेरी भाभी सोय।
हम नहीं सोयें हमारी ननद री,
हमारी ले गये आंखों की नींद।
अंगूठा पैर का भीजा ॥

प्रेम-योगिनी कूएँ, तालाब, पनिहारी सब को पीछे छोड़ती हुई पति के साथ-साथ चली। पैर चलते-चलते रक्त से भीग गये। परन्तु वह निर्मोही वर्षों

के लिये उसे छोड़कर चला गया। ननद भाभी का मन शान्त करने का यत्न कर रही है, परन्तु जब शोक का प्रबल उच्छ्वास उठता है तो समस्त सान्त्वनाएं उसमें विलीन हो जाती हैं।

(२७)

जामनिया तोड़न जाऊँ री बाग़ में कैसे।
सखि ससुर हमारे ऐसे,
रस्ते में बिछा लयी खाट चतुर वे ऐसे।
जामनिया० ॥
सखि जेठ हमारे ऐंसे,
चलती की परखें चाल, परखिया ऐंसे।
जामनिया० ॥
सखि देवर हमारे ऐंसे
चलती के मारें गेंद खिलाड़ी ऐंसे।
जामनिया० ॥
सखि कन्त हमारे ऐंसे,
चलती की रोकें गैल कन्हैया ऐंसे।
जामनिया० ॥

परदा-प्रथा से अकुलाई हुई तथा संयुक्त-परिवार के भार से दबी हुई बालिका-वधू के मनोद्‌गारों का अच्छा चित्रण है।

(२८)

नागनिया बनकर डस गई, मोहन तेरी बाँसुरिया।
हाँ, गई कलेजा चीर मोहन तेरी बाँसुरिया॥
मैं तो चली जमुना जल भरने, मिल गये सांवरिया।
पीछे से मारी कंकर मोरी फोड़ी गागरिया। नागनिया० ॥
रिमझिम रिमझिम मेघा बरसे, चमके बीजलिया।
मैं कैसे आऊँ श्याम, मेरी तो भीगे चूनरिया। नागनिया० ॥
बाहर सोवे सास हमारी, अन्दर नन्दलिया।
मैं कैसे आऊँ श्याम मोरी तो बाजे पायलिया॥
नागनिया बनकर डस गई मोहन तेरी बाँसुरिया॥

गीत सरस और भावपूर्ण है।

(२९)

मेरे छोटे देवरिया बोली मत मारो।
सास कहे बहू ! खाना बनालो,
सइयाँ जी कहें जर जायेंगी अँगुरिया। मेरे छोटे० ॥
जिठानी कहे बहू ! पानी भर लाम्रो,
सइयाँ जी कहें दुख जायेगी कमरिया। मेरे छोटे० ॥
देवर कहे भाभी ! घूंघट उघाड़ो,
सइयाँ जी कहें लग जायेगी नजरिया। मेरे छोटे० ॥

इस गीत का नृत्य भी बड़ा मनमोहक होता है।

(३०)

श्याम तोरा पनिया हमसे न भरा जायेगा।
घर तो तेरा दूर कान्हा, सिर पै गागर भारी।
ऊँची नीची सीढ़ियां हमसे ना चढ़ी जायेंगी।
श्याम तोरा० ॥
राधे तो गोरी मिजाज बड़ा उनका।
ये रात दिन के ताने हमसे ना सहे जायेंगे।
श्याम तोरा० ॥
चाहे तो रुठो श्याम तुम हमसे।
यह तेरी मनचीती हमसे न हो पायेगी।
श्याम तोरा० ॥

इस गीत पर जब दो लड़कियाँ पनिहारी ग्रौर कृष्ण बनकर नृत्य करती हैं, तो देखते ही बनता है।

(३१)

अरे मेरे घूंघर वाले बाल, चुटीला लम्बा लाइयो।
तुम शहर बनारस जाइयो, अच्छी-सी साड़ी लाइयो,
पहनाइयो अपने हाथ, चुटीला लम्बा लाइयो।
अरे मेरे घूंघर वाले०॥
तुम शहर मथुरा जाइयो, अच्छा सा पेड़ा लाइयो,
खिलाइयो अपने हाथ, चुटीला लम्बा लाइयो।
अरे मेरे घूंघर वाले०॥

तुम शहर कलकत्ते जाइयो, अच्छी सी नैक्लेस लाइयो।
पहनाइयो अपने हाथ, चुटीला लम्बा लाइयो।
अरे मेरे घूंघर वाले०॥
तुम शहर बरेली जाइयो, अच्छा सा सुरमा लाइयो।
लगाइयो अपने हाथ, चुटीला लम्बा लाइयो।
अरे मेरे घूंघर वाले०॥
तुम शहर लखनऊ जाइयो, अच्छा सा इत्र लाइयो।
सुँघाइयो अपने हाथ, चुटीला लम्बा लाइयो।
अरे मेरे घूंघर वाले०॥
तुम शहर बम्बई जाइयो, अच्छी सी घड़ी लाइयो।
पहनाइयो अपने हाथ, चुटीला लम्बा लाइयो।
अरे मेरे घूंघर वाले०॥
तुम शहर आगरे जाइयो, अच्छा सा जूता लाइयो।
पहनाइयो अपने हाथ, चुटीला लम्बा लाइयो।
अरे मेरे घूंघर वाले०॥
तुम शहर महोबा जाइयो, अच्छा सा बीड़ा लाइयो।
खिलाइयो अपने हाथ, चुटीला लम्बा लाइयो।
अरे मेरे घूंघर वाले०॥

(३२)

जमना पे आ जा रे कन्हैया।
जमना किनारे तुलसी का बिरवा,
पूजा करा जा रे कन्हैया॥ जमना०॥
जमना किनारे गउएं बहुत हैं,
गउएं चरा जा रे कन्हैया॥ जमना०॥
जमना किनारे ग्वाले बहुत हैं,
माखन लुटा जा रे कन्हैया॥ जमना०॥
जमना किनारे सखियाँ बहुत हैं,
रास रचा जा रे कन्हैया॥ जमना०॥

(३३)

पनियाँ भरन चली बांकी रसीली।
सिर पर घड़ा, घड़े पर झारी,
पतली कमरिया बल खाए रसीली। पनियां०॥

घड़े को उतार गोरी कूएं पै रख दो,
हम से करो दोए बातें रसीली । पनियां०॥
बातें तो राजा कैसे करूँ मैं ?
छोटी ननदिया मोरे संग में रसीली । पनियां०॥
ननदी को काट गोरी कूएं में डालो,
हम से करो दोए बातें रसीली । पनियां०॥
मोटे-मोटे नैन बरेली का सुरमा,
नैनों से नैन मिला जा रसीली । पनियां०॥

स्त्री पनघट पर जाती है, वहाँ उसका पति मिल जाता है। वह उसके सौंदर्य पर विमुग्ध होकर उससे कुछ वार्त्तालाप करने को उत्सुक हो उठता है। परन्तु छोटी ननद के सम्मुख वह कैसे प्रेमवार्त्ता करती। पति की अभिलाषा अपूर्ण ही रह जाती है।

(३४)

हए तोता मैना उड़ाइयो लश्कर में।
तोता मैना, हरा दुपट्टा, पीला पट्टा,
ताक छिनाछिन, मार सड़ासड़, बल्ले-ही बल्ले । हए०॥
सिर पर घड़ा घड़े पर झारी,
हए तोता मैना न्हिलइयो लश्कर में। हए०॥
सोने की गागर गँगा-जल पानी।
हए तोता मैना पिलइयो लश्कर में। हए०॥
सोने की थलिया में भोजन परोसा।
हए तोता मैना खिलाइयो लश्कर में। हए०॥
पाँच-पचीसी के बीड़े लगाए।
हए तोता मैना चबवइयो लश्कर में। हए०॥
चंदा की चाँदनी में चौपड़ बिछाई।
हए तोता मैना खिलाइयो लश्कर में। हए०॥
फूलों की सेज, मोती झालर के तकिये।
हए तोता मैना सुलाइयो लश्कर में। हए०॥

विरहिणी का पति युद्ध-क्षेत्र में गया हुआ है। वह तोता और मैना को अपने सन्देश-वाहक के रूप में रणभूमि में भेज रही है।

वह पहले अपने पति की पहचान बतलाती है कि वह हरा दुपट्टा पहिने होगा, पीला पट्टा लगा होगा। वहाँ पर घमासान युद्ध में मारकाट मची होगी।

फिर वह कहती है, ऐ तोता ! मैना !! तुम युद्ध-भूमि में जाना और पहले उन्हें स्नान कराना, जल पिलाना, सोने की थाली में परोसकर खाना खिलाना, पान खिलाना और फिर चन्दा की शीतल चाँदनी में चौपड़ खिलाकर उनका मन बहलाना ।"

आज विरह-विधुरा प्रियतम-मय हो उठी है। उसे उन सभी कामों का ध्यान आ रहा है, जिन्हें कभी वह अपने प्रिय के लिए नित्य ही किया करती थी।

अपनी अनुपस्थिति में वह तोता-मैना को उन सभी कामों के करने का आदेश दे रही है, जिन्हें आज स्वयं करने में असमर्थ है। कितनी विवशता है ! तोता-मैना उसके अन्तरंग सखा और सखी हैं, इसी से वे उसकी मनोव्यथा को भली प्रकार समझते हैं। इस गीत पर नृत्य देखते ही बनता है।

(३५)

तनिक ठहरो न लेऊँ सुलझाय पायल[1] अटक रही।
नन्द महल घर पुत्र भयो है, मुद-मंगल आनंद भयो है,
ऋषि-मुनि रहे हर्षाय, पायल अटक रही। तनिक०।।
फूल-माल पकवान मिठाई, सुन्दर-सुन्दर थाल सजाई,
जावें भेंट लिवाय, पायल अटक रही। तनिक०।।
दूध-दही की झारी भर भर, चली गवालन सिर पर धर कर,
नाचें, मंगल गांय, पायल अटक रही। तनिक०।।
चन्द्र सखी भजो बालकृष्ण छब,
हर के चरण चित लाय, पायल अटक रही। तनिक०।।

कृष्ण-जन्म के अवसर पर बधाई ले जाने का सुन्दर चित्रण है।

(३६)

मनिहारी बन आए, आप गिरधारी मोरे रामा।
कौन देश की तू रहने वाली ?
कौन देश ससुराल तुम्हारी ?
क्या है तुम्हारा नाम, सुनो जी मनिहारी, मोरे रामा। आप०।।
वृन्दावन की मैं रहने वाली।
बरसाने ससुराल हमारी।
राधा हमारा नाम, सुनो जी बनवारी, मोरे रामा। आप०।।

१. पैरों का आभूषण।

अरी मनिहारी ! तू मेरे ढिग[1] आ री।
अच्छी नीकी[2] चूड़ियाँ मोहे पहना री।
कृष्णा को लगें प्यारी, मोरे रामा। आप०॥
बहियाँ पकड़कर चूड़ी पहनाई।
नेह लगाकर सब सखी मोही।
राधा कहे कृष्णा से सखी सब मोही, मोरे रामा। आप०॥

राधा और मोहन का प्रेम सचमुच निराला है। कृष्ण राधा को मनिहारी बनकर चूड़ियाँ पहनाने जाते हैं। राधा कृष्ण को पहचान नहीं पाती और कहती है—"मुझे ऐसी चूड़ियाँ पहनाओ जो मेरे कृष्ण को अच्छी लगें।"

क्या कृष्ण राधा के ये शब्द सुनकर राधा पर न्यौछावर न हो गये होंगे ?

इस गीत का वास्तविक रसास्वादन तो तभी किया जा सकता है जब ढोलक मजीरे और पायल की मधुर-ध्वनि के साथ-साथ मधुर संगीत और उसकी स्वर-लहरी में खोई हुई बाला नृत्य करती है। एक बार दर्शक विमुग्ध होकर रह जाते हैं।

(३७)

रसीले नैन गोरी के रे।
चली एक नार पानी को रे,
मिला एक छैल गबरू[3] सा रे।
किसे तुम देख मचले हो रे,
किसे तुम देख अटके हो रे।
सुरत तेरी देख मचला हूँ रे,
जोबन तेरा देख अटका हूँ रे।
कहाँ तेरे चोट लागी है रे,
कहाँ तेरे घाव भारी है रे।
हिवड़े में मेरे चोट लागी है रे,
कलेजे मेरे घाव भारी है रे।
आओ ना मेरी सेज पर गोरी रे,
भरूंगा तेरा घाव नस-नस का रे।
रसीले नैन गोरी के रे॥

पनघट पर एक ग्रामीण-बाला पानी भरने जाती है। वहाँ पर एक सुन्दर

१. समीप, २. सुन्दर, ३. सुन्दर नवयुवक।

नव-युवक से भेंट हो जाती है। प्रथम-दृष्टि में ही दोनों एक दूसरे पर न्यौछावर हो जाते हैं।

'प्रथम दृष्टि में प्रेम' का वर्णन हमारे लोक-गीतों में पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

(३८)

कैसे धारूँ मन में धीर,
पिया मेरे जाय लड़े रण में।
कर कर ख्याल फटै मेरा हीया,
बारी उमर में रंडापा दीया।
प्राणनाथ प्रियतम बिन मैं,
कैसे सबर करूँ मन में। कैसे०।
बाले होते गोद खिलाती,
वा ही ते मैं मन बहलाती।
खाली गोद फटै मेरी छाती,
बाल[1] चलै मेरे तन में। कैसे०।
क्या करनी मैंने खोटी कीन्ही,
विपदा कहा राम ने दीन्ही।
मार कटारी मर जाऊँ,
प्राण अब खोय दऊँ छन में। कैसे०।

गीत में विरह-विधुरा के स्वाभाविक भावों का सुन्दर चित्रण है।

---

१. अन्धड़।

: ७ :

हास्य-रस तथा व्यंग के गीत

हास्य मनुष्यों को ईश्वर की एक अमूल्य देन है जो किसी अन्य प्राणधारी को नहीं मिली है। प्रसन्नता में संजीवनी शक्ति है, जादू है, आकर्षण है। प्रसन्न-वदन व्यक्ति पर सदैव प्रेम-पुष्पों की बौछारें होती रहती हैं।

आनन्द से शून्य जीवन जीवन नहीं है। सच तो यह है—

ज़िन्दगी ज़िन्दा-दिली का नाम है।
मुर्दा दिल खाक जिया करते हैं।।

प्रसन्न-वदन व्यक्ति आनन्द का अविरल फव्वारा है, जिससे निकल-निकल कर हर्ष रूपी वारि के सीकर औरों को भी आनन्द-मग्न बनाते रहते हैं।

प्रसन्नता के लिये धन, ऐश्वर्य की अधिक आवश्यकता नहीं, सबसे अधिक आवश्यकता है मानसिक सन्तोप एवं ईश-निष्ठा की, जो केवल निष्काम कर्म से ही प्राप्त हो सकती है। जिसे इस सम्पत्ति ने वैभवशाली बनाया है, वह एक सम्राट् से भी बढ़कर है।

जब मनुष्य अपनी प्रसन्नता को अपने हृदय में रोकने में असमर्थ हो जाता है उस समय उसका अनिर्वचनीय उल्लास उसकी मुस्कराहट को हास्य-प्रधान-काव्य का रूप दे देता है।

हास्य-वर्णन के कितने ही ढंग हो सकते हैं—किसी का उपहास ऐसे ढंग से करना, जिससे सुनते ही हँसी आ जाये, अथवा किसी कुरीति की खिल्ली उड़ाना, आदि।

हास्य-रस व्यंजना-शक्ति के समावेश से अत्यधिक सरस हो जाता है। हास्य-रूपी वीणा में व्यंग-मय कटाक्ष तान भरने का काम करते हैं।

हमारे हिन्दी-साहित्य में हास्य-रस पर नवीन लेखकों ने बहुत कम ही लेखनी उठायी है। थोड़ा बहुत श्री जे० पी० श्रीवास्तव आदि ने लिखा है।

परन्तु हमारी ग्राम्य बहनों ने इस मकरन्द का रसास्वादन भी खूब किया है। पाठक गीत पढ़कर स्वयं अनुमान लगा सकेंगे। हास्य-रस के अधिकांश गीतों पर नृत्य हो सकता है। इन गीतों के द्वारा उन्होंने सभ्यता के बवण्डर और अनमेल विवाह पर अच्छी फबतियाँ कसी हैं—

(१)

ढूँढा ढूँढा री बैंगनियाँ से छोटा।
पानी को जाऊं मेरे साथ साथ जावै,
रोवै रोवै री वह तो नेजू पकड़ कै।
रोग्रो मत बाले सैयां, भींको मत बाले सइयाँ,
दूँगी दूँगी जी तुम्हें कुल्हिया मंगाय कै।
खेतों को जाऊं मेरे साथ साथ जावै,
रोवै रोवै री वह तो पल्ला पकड़ कै।
रोवो मत बाले सइयाँ, भींको मत वाले सइयाँ,
दूंगी दूंगी जी तुम्हें जामुन तुड़ाय कै।
पीसन को जाऊँ, मेरे साथ साथ जावै,
रोवै रोवै री वह तो हत्था पकड़ कै।
रोग्रो मत बाले सइयाँ, भींको मत बाले सइयाँ,
दूंगी दूंगी जी तुम्हें हलुग्रा बनाय कै।
सोने को जाऊँ मेरे साथ साथ जावै,
रोवै रोवै री 'ग्रम्मा ग्रम्मा' करके।
रोवो मत बाले सैयाँ, भींको मत बाले सइयाँ,
दूंगी दूंगी जी तुम्हें गुड़िया मंगाय कै।

यह नृत्य-गीत है।

हिन्दू-समाज में अनमेल विवाह की प्रथा ग्रभिशाप बन रही है। ग्रामों में ग्रब भी क्रान्ति की लहर पूरी तरह नहीं पहुँच पायी है। शारदा ऐक्ट हुग्रा न हुग्रा बराबर हो रहा है। एक युवती की शिशु-पति के पाने पर जो दशा होती है, उसका गीत में ग्रत्यन्त सुन्दर चित्रण है।

(२)

हम काले से ब्याहे री ननदिया।
मेरे पिछोक्कड़[1] बाजार लगत है,
काले को बेचन जाऊँ री ननदिया। हम काले० ॥

---

१. पीछे

ककड़ी भी बिक गयी, खीरे भी बिक गये,
काले को कोई भी ना लेवै, ननदिया।
हम काले० ॥
मेरे पिछोक्कड़ गंगा बहत है,
मैं काले को डोबन जाऊँ री ननदिया।
डोब-डाब मैं घर में आयी,
पीछे काला मटकता आया री, ननदिया।
हम काले० ॥
कोठे अन्दर सात कोठरी,
काले को मूँदन[1] जाऊँ री ननदिया।
बरसों पीछे मिला बालमा,
काले से गोरा हो गया री ननदिया।
हम काले० ॥

अभाव में ही किसी वस्तु का ठीक मूल्य आंका जाता है। विरह की अग्नि में तप कर, प्रेम के उज्ज्वल स्वरूप में रंग कर, गीत की नायिका को युवावस्था आने पर काला पति भी गोरा दिखलाई पड़ने लग गया।

(३)

चारों सखी चारों ही पनियाँ को जायें।
कुएं पर चढ़ के चारों करें विचार।
अरी सखी ! तुझे कैसे मिले भर्तार।
ए री पतली कमर कुँवर कन्हैया हम पाये भर्तार।
सखी बीस वर्ष के हैं वे सचमुच राजकुमार।
सखी ! फूटा पर भाग्य हमारा।
अस्सी बरस के हमें मिले भर्तार।
वे ज्यों ही उठते, गड़गड़ हिलती नाड़[2]।
सूनी अटरिया, बिछी सेजरिया हमें बुलावें पास।
सखी ! बाबा सा लागै री, हमें सेज लगे उदास।
सखी ! ताऊ सा लागै री, हमें दिया शरम ने मार।
भाग्य में लिखा हमारे था, अरी नहीं किसी का दोष ॥

१. बन्द करने, २. गर्दन।

वृद्ध-विवाह की बलिदेवी पर आज भी कितनी ही भारतीय कुमारियां बलि हो रही हैं। उनकी वेदना, उनका करुण-क्रन्दन निःसीम है। परन्तु धन्य है तू भारतीय नारी! चाहे जिस किसी के भी गले तुझे मढ़ दिया जाये उसकी ही तू पूजा करती है, क्योंकि तेरा प्रेम भौतिक नहीं आध्यात्मिक रहा है।

वृद्ध, रोगबस, जड़, धन-हीना।
अन्ध बधिर, क्रोधी अति दीना।।
ऐसेहु पति कर किय अपमाना।
नारि पाव जमपुर दुख नाना।।

गोस्वामी तुलसीदास की इन पँक्तियों में तेरा अटल विश्वास है।

"अरी कर्म में लिखा हमारे था, नहीं किसी का दोष—"में तेरे हृदय की उदारता और क्षमा साकार हो उठी है। परन्तु इस भाग्य की अटल निष्ठा का पुरस्कार उसे मिलेगा वैधव्य की तीक्ष्ण अग्नि में तिल-तिल कर जलना।

(४)

आज मोरा राजा बिकै है कोई ले लो।
दो सौ में ले लो, सौ में ले लो,
जिया मोरा जर जाय, पचासई में ले लो।
पचास में ले लो, पच्चीसई में ले लो,
जिया मोरा जर जाय, पन्द्रह में ले लो।
पन्द्रह में ले लो, पांच में ले लो,
जिया मोरा जर जाय, ढाई में ले लो।
अठन्नी में ले लो, चवन्नी में ले लो,
जिया मोरा जर जाय, दुवन्नी में ले लो।
दुवन्नी में ले लो, इकन्नी में ले लो।
जिया मोरा जर जाय, मुफ्त में ले लो।
आज मोरा राजा बिकै री कोई ले लो।

यह नृत्य-गीत है।

पति निखट्टू है, न प्रेम करना उसने कभी जाना है, न कभी अपनी स्त्री के हृदय को ही जानने की उसने चेष्टा की है। परन्तु उसकी स्त्री बड़ी नटखट है। गीत की एक-एक पंक्ति में उसका तीव्र व्यंग और हँसी दर्शनीय है।

(५)

यानें[1] से हमारे बालमा री,
छोटे से हमारा ब्याह किया री।
पहली बार में ब्याहली आयी,
पलने में खिलाए बालमा री। याने० ॥
दूजी बार में गौने में आयी,
गोदी में खिलाए बालमा री। याने० ॥
तीजी बार में रहने को आयी,
गलियों में खेलें बालमा री। याने० ॥
सिर पै गठरिया घास की री,
गोदी में उठा लिये बालमा री। याने० ॥
चलता मुसाफिर यूं कहै री,
गोदी का तुम्हारा क्या लगै री। याने० ॥
चल बे मुसाफिर क्या पड़ी,
गोदी में हमारे बालमा री। याने० ॥
सिर से गठरिया फेंक दई रे,
गोदी से पटक दिये बालमा री। याने० ॥
पीछे तो फिर के देखिया,
हुलहुलियों[2] से रोवें बालमा री। याने० ॥
सिर पर गठरिया रख लयी री,
गोदी में उठा लिये बालमा री। याने० ॥
छोटे से हमारा ब्याह किया री,
याने से हमारा ब्याह किया री। याने० ॥

धन्य है हिन्दू समाज तेरी इस सुन्दर प्रथा को ! ठीक ही तो है "बड़ी बहू बड़े भाग", यही तो हैं पतिदेव, सात प्रतिज्ञाओं में आबद्ध अटूट जीवन-संगी ! शिशु के समान गोदी में खिलाकर और भी अधिक नूतन प्रेम की सृष्टि होगी ! वर्षों तपस्या करनी पड़ेगी तो क्या ? तपस्या से ही तो प्रेम चिरस्थायी होता है। फिर वैधव्य की कठिन समस्या के निराकरण की चिन्ता की भी आवश्यकता नहीं। दोनों हाथ पौबारह हैं !!

नोट :—इस गीत पर नृत्य करती हुई बाला अपूर्व शोभा पाती है।

---

१. बच्चे, २. फूट-फूट कर।

(६)

पहनी गले में सुन्दर माला सनम अंगना में खड़े।
अंगना में खड़े, अंगना में खड़े। पहनी गले० ॥
पहने वो गोटे की टोपी सनम अम्मा के गए।
अम्मा ने दिये दो लड्डू सनम खड़े खाया करें ॥
पहनी गले में० ॥
पहने वो जाली का कुर्ता सनम बहना के गए।
बहना ने दिये दो पैसे सनम मुस्काया करें।
पहनी गले में० ॥
पहनी वो टसरी की धोती सनम गोरी के गए।
गोरी ने दिये दो धक्के सनम खड़े रोया करें।
पहनी गले में० ॥

(७)

आओ मोरी गोरी मैं डालूं गल-बहियाँ।
तत्ता सा पानी साबुन की टिकिया,
नहाओ मेरी जान ! पडूं तोरे पइयाँ।
पूरी, मेवा, कचौरी, मिठाई,
खाओ तुम जान ! पडूं तोरे पइयाँ।
चन्दा की चांदनी में चौपड़ बिछाई ॥
खेलो मेरी प्यारी, मैं पडूं तोरे पइयाँ।
चुन चुन फूल सेजें सजाई।
आओ मेरी जान ! डालो गल-बहियां ॥

(८)

बचाइयो लोगो घरवाली ने मारा।
आप तो न्हावै बेगम इतर के पानी,
मुझे दिया पानी खारा।
मैं मर गया लोगो, घरवाली ने मारा ॥
आप तो खाती रानी तत्ती पूरी, मेवा गुलदाना।
मुझे खिलाती बासी खाना।
मैं मर गया लोगो० ॥

आप तो सोती रानी फूलों की सेजों,
हमें देती है टूटा खटोला।
मैं मर गया मैया० ॥
आप घूमती फिरती मजे में,
हमें सौंपे रे बच्चे, टट्टी उठाना।
मैं मर गया मैया० ॥

(९)

तिल्ली[1] बिना लौंग मेरी किसने गढ़ी थी ?
ऐसे बलम से मैं क्वारी भली थी।
तत्ता सा पानी साबुन की टिकिया,
नहाने क्यों नहीं आये, क्या तुमसे लड़ी थी ?
तत्ती तत्ती पूरी और तरकारी,
खाने नहीं आये, क्या तुमको पड़ी थी ?
चुन चुन कलियां सेजें बिछाई,
सोनें नहीं आये, क्या हमारी पड़ी थी ?
ऐसे बलम से मैं क्वारी भली थी।

तिल्ली बिना लौंग न जाने मेरी किसने बना दी ? वह मेरे लिये निरर्थक ही है। इसी प्रकार ऐसे हृदय-शून्य पति को पाकर जीवन व्यर्थ ही है। इससे तो कौमार्य जीवन ही अच्छा था। प्रतीक्षा करते-करते पानी ठण्डा हो गया, खाना भी ठंडा हो चला, शैया के पुष्प मुरझाने लगे, परन्तु पति-देवता का कहीं पता नहीं। प्रतीक्षा से ऊबी हुई पत्नी के प्रेम-मिश्रित रोष का स्वाभाविक चित्रण किया गया है।

(१०)

दुर गोरी लानत की मारी क्यों काले पै नाम धरै।
काला डोल कुएं में फांसा, जिसका पानी जगत पिये।
काली भैंसें, काली झोटी[2], जिसका दूध सभी पियें।
काली आँखें, काला सुरमा, जिसकी शोभा मन को हरै।
काले बादल मेह बरसावैं, जिससे गेहूँ खूब उगै।
दुर गोरी० ॥

पति के सांवलेपन के कारण पत्नी पति की उपेक्षा करती है। किन्तु सांवले-

---

१. पेच, २. छोटी भैंस।

पन ने पति का मस्तिष्क भी काला नहीं कर दिया है। उसका आत्माभिमान से पूर्ण तर्क दर्शनीय है।

भारतवासियों के कालेपन पर महाकवि वियोगी हरि ने भी लिखा है—

"केहि काम के श्वेत घन, नीरस निपट निसार।
काले ही घन श्याम लौं, बरसावत रस धार॥
उन गोरे गोरेनु को, गाहक सब संसार।
हम काले कालेनु को, कालो कान्ह अधार॥"

(११)

मुझे पानी को जाने दो।
सास पै मटकी, ननद पै करुवा,
हमने लिया है गिलास, गिलास, मुझे पानी को जाने दो।
फूट गई मटकी, तिड़क गया करुआ,
मजे उड़ावै गिलास, गिलास, मुझे०॥
सास लिया लड्डू, ननद लिया पेड़ा,
हमने लिया है अनार, अनार, मुझे०॥
फूट गया लड्डू, बिखर गया पेड़ा,
मजे उड़ावै अनार, अनार, मुझे०॥
सास लिया बूढ़ा, ननद लिया बालक,
हमने लिया है गंवार, गंवार, मुझे०॥
रूस गया बुड्ढा, भाग गया बालक,
कहने में चलता गंवार, गंवार, मुझे०॥

गीत में नायिका ने अपने भाग्य पर सन्तोष किया हुआ है। यद्यपि किसी ने भी उसके साथ न्याय न किया, और उसे एक गँवार पति मिला, परन्तु वही सबसे अधिक उसकी इच्छा-पूर्ति करता है। वृद्ध-विवाह और बाल-विवाह की भी इस गीत में हँसी की गई है।

(१२)

देखो रे लोगो, मैं दो जोरू वाला।
एक कहै मुझे झूमर गढ़ा दे,
दूसरी ने टीके का शोर कर डाला। देखो०॥
एक कहै मुझे बुंदे गढ़ा दे,
दूसरी ने काँटों का शोर कर डाला। देखो०॥

एक कहै मुझे चूड़ियां बनवा दे,
दूसरी ने कड़ों का शोर कर डाला। देखो०॥
एक कहै मुझे साड़ी मंगवा दे,
दूसरी ने दुपट्टे का शोर कर डाला। देखो०॥
दोनों ने लड़कर खटोले में डाला।
देखो रे लोगो, मैं दो जोरू वाला॥

(१३)

तातक तय्या तातक तय्या।
सास बहू से बोली पेठा चूल्हे पै रख दो,
हम अलबेले यह जाने जेठा चूल्हे पै रख दो। तातक तय्या०॥
सास बहू से बोली, घेवर छींके पै रख दो,
हम अलबेले यह जाने कि देवर छींके पै रख दो। तातक तय्या०॥
सास बहू से बोली घास घोड़े को डालो,
हम अलबेले यह जाने कि सास घोड़े पर डालो। तातक तय्या०॥
सास बहू से बोली, कूड़ा कूड़े पर डालो।
हम अलबेले यह जाने दूल्हा कूड़े पर डालो। तातक तय्या०॥
सास नाचै घोड़े पै, दूल्हा नाचै कूड़े पै।
देवर नाचै छींके पै, जेठा नाचै चूल्हे पै।
हम अलबेले यह जानैं हम तो नाचैं सेजों पै॥

(१४)

मोरे अंगना में तुम्हारा क्या काम है।
जिसके घर में लम्बी औरत, उसके भी बड़े भाग हैं।
छप्पर में लगा लो, बल्ली का क्या काम है। मोरे०॥
जिसके घर में मोटी औरत, उसके भी बड़े भाग हैं।
तकिये की जगह लगा लो, तकिये का क्या काम है। मोरे०॥
जिसके घर में गोरी औरत, उसके भी बड़े भाग हैं।
अंधेरे में बैठा लो, बत्ती[1] का क्या काम है। मोरे०॥
जिसके घर में काली औरत, उसके भी बड़े भाग हैं।
चूल्हे पर बैठा दो, तवे का क्या काम है। मोरे०॥

१. दीपक।

खण्ड ४

सावन के गीत

: ८ :

सावन के गीत

"प्रेम ! केवल एक शब्द का यह कैसा वृहद् ग्रन्थ है ! एक ही आँसू में विशाल सागर, एक ही दृष्टि में सातवाँ स्वर्ग, एक ही आह में बवण्डर, एक ही स्पर्श में विद्युत्, एक क्षण में लाखों युग, अहा ! इसी में तो आनन्द और वेदना का केन्द्रीयकरण हुआ है।" एक महाकवि ने इस वाक्य-समूह में प्रेम की कैसी सुन्दर व्याख्या की है—"प्रेम एक अमर संगीत है। इसका स्थान उषा की आभा-मयी उस किरण में है, जो शनैः शनैः प्रकृति के हृदय पर प्रकाश की रेखाएँ अंकित करती है। प्रेम आदान नहीं किन्तु प्रदान है। वह न तो भोग-विलास का सम्मोहक स्वप्न है, न वासनाओं का उन्माद। परहित-चिन्तन, सदाचार और शान्ति ही प्रेम है। एक छोटे से वाक्यांश में प्रेम ही ईश्वर है।"

रामनरेश त्रिपाठी ने कहा है :—

प्रेम स्वर्ग है, स्वर्ग प्रेम है, प्रेम अभेद अशोक।
ईश्वर का प्रतिबिम्ब प्रेम है, प्रेम हृदय-आलोक ॥

प्रेम जैसे महान् व्रत के व्रती बिरले ही होते हैं। प्रेम एक कठिन तपस्या है और प्रेम-मूर्ति स्रष्टा तक पहुँचने का यही सरल उपाय है। सच्चा प्रेम चाहे किसी के भी प्रति क्यों न हो, मनुष्य को धन्य और गण्य बनाता है। प्रेम-योगियों का ध्यान करते ही अतीत की वह करुण मधुमयी स्मृति हृदय में उदित हो जाती है जब कि रेलें, मोटरें आदि नहीं थीं, जीविकोपार्जन के लिए मनुष्य अनेक बार वर्षों तक के लिए अन्यत्र चले जाते थे और उनकी नवयुवती वधुएँ अपने प्रियतम की स्मृति में योगिनी बन जीवन की सूनी घड़ियाँ बिताती थीं। कितनी ही बार वे अपने पति को पहचानने में भी असमर्थ हो जाती थीं। इन विरहिणी सरला ग्राम वधुओं ने अपनी सीधी-सादी भाषा में भावुक हृदय का जो चित्र चित्रित किया है, वह बड़ा मर्मस्पर्शी है। ये गीत हमें कोमल-हृदय शिशु की बाह्याडम्बरहीन तुतली बोली के समान प्रिय लगते हैं। जब श्रावण की रिम-

झिम वर्षा में बालिकाएँ अपने कोमल कण्ठ से मधुर स्वर में धीरे-धीरे इन गीतों को अलापती हैं, तो दिशाएँ मानो स्वर में स्वर मिलाकर विश्व के प्रांगण में करुणा बिखेर देती हैं। कुछ गीत नीचे दिये जाते हैं :—

(१)

सात जनी का झूमटा[१] मेरी सास्सड़ रानी, कोई सातों ही पानी को जाएं।
छः जनी घर बाहुड़ी मेरी बहुअड़ रानी, तैं कित लाई बार[२] ?
छैहों के बालम घर रहे मेरी सास्सड़ रानी, हमरे गए परदेस।
राहे मुसाफिर मिल गया मेरी सास्सड़ रानी, कोई झगड़ों में ला दयी बार॥
कैसे थे वे गाभरू[३] मेरी बहुअड़ रानी, कोई कैसी उमर उनिहार[४]।
अंग गोरा, मुख पातला मेरी सास्सड़ रानी, कोई बड़ेरे जेठा उनिहार॥
वे तो थे थारे बालमा मेरी बहुअड़ रानी, कोई कस कै तो क्यूं ना पकड़ी बाँह।
जो मैं ऐसा जानती मेरी सास्सड़ रानी, तो आयों को जान न दूं।
पकड़ दुपट्टा रोक लूं मेरी सास्सड़ रानी, कोई घोड़े की पकड़ूं बाग।
कांधे डारो बागली[५] मेरी बहुअड़ रानी, कोई नगर ढिंढोरा फेर।
पहले ढूंढा मालवा मेरी सास्सड़ रानी, कोई फिर ढूंढा गुजरात।
ढूंढ-ढांढ़ घर बाहुड़ी मेरी सास्सड़ रानी, कोई कहींय न पाए थारे पूत।
पैरों में छाले पड़ गए मेरी सास्सड़ रानी, कोई नैनों में आया जल नीर।
पैरों में मेंहदी लाय ले मेरी बहुअड़ रानी, कोई नैनों में सुरमा सार[६]।
किस पर मेंहदी लाय लूं मेरी सास्सड़ रानी, कोई किस पर सुरमा सारूँ।
मन पर मेंहदी लाय ले मेरी बहुअड़ रानी, कोई रोक लूं सुरमा सार।

सात सखियां पानी भरने जाती हैं। छः सखियां घर लौट आती हैं, सातवीं देर से पहुँचती है। सास बहू से पूछती है—"छः जनी तो लौट आईं, बहूरानी! तुमने कहाँ देर लगा दी।"

बहू उत्तर देती है—"छैहों के पति तो घर पर ही हैं, किन्तु मेरे पति परदेश गए हुए हैं। मार्ग में एक यात्री मिल गया था। उससे कुछ झगड़ा हो गया। इसी कारण से देर हो गई।"

सास को अपने परदेशी पुत्र का स्मरण हो आता है। उसने बहू से उस यात्री की सूरत और छवि के विषय में पूछा। बहू उत्तर देती है—"उनका शरीर गौर-वर्ण था, किन्तु मुख पतला था। बड़े जेठ की सी छवि थी।"

सास कहती है—"प्यारी बहू! वही तो तुम्हारे प्रियतम पति थे। तुमने

---

१. समूह, २. देर, ३. नवयुवक, ४. आकृति ५. झोली, ६. लगाना।

दृढ़ता से बाँह पकड़कर रोक क्यों नहीं लिया ?"

बेचारी बहू अपनी असमर्थता प्रकट करती हुई कहती है—"पूजनीया सास जी ! यदि मैं ऐसा जानती तो उन्हें एक पग भी आगे न बढ़ने देती ।"

बहू के इन शब्दों में कितनी करुणा भरी हुई है ! प्रियतम आकर लौट गए; किन्तु वह उन्हें पहचान भी न सकी । परन्तु प्यारे के प्रेम में मतवाली वह निराश होकर नहीं बैठ गई । वह कहती है—"सास जी ! मैं कन्धे पर झोली डालकर नगर-नगर उन्हें ढूँढूंगी ।"

फिर वह प्रेम-योगिनी कन्धे पर झोली डाल कर जीवन-सर्वस्व को खोजने निकलती है । पहले मालवा ढूंढा, फिर सारा गुजरात ढूँढ डाला, किन्तु प्यारे का चिह्न भी न पा सकी । पैरों में छाले पड़ गए, नेत्रों से सलिल प्रवाहित होने लगा । धन्य है इस प्रेम को, और धन्य है वह भाग्यशाली जिसे ऐसी पत्नी मिली । कण्टकाकीर्ण दुर्गम पथ पर जाते हुए प्रेम ही तो पथिक के मार्ग को फूल-सा सुकोमल बना देता है । सचमुच सच्चा प्रेम एक अनूठी देन है । कवीन्द्र रवीन्द्र ने 'राजरानी' नाटक में कुमारसेन के प्रति इला के प्रेम के विषय में विक्रम देव के मुख से कहलाया है—

गृह-हीन और भागे हुए
तुम कुमार हो सचमुच ही मुझसे सुखी ।
तुम जाओगे जहां कहीं संसार में,
सदा तुम्हारे साथ रहेगा यह अटल
रमणी का रमणीय प्रेम, ज्यों देवता को
रहती अनुकूल और स्थिर दृष्टि है ।
भाग्यवान् पर सदा उसी शुभ प्रेम का
अति पवित्र नव किरणों सा आपत्ति का
मेघ चमकता, स्वर्णमयी सम्पत्ति सा ।।

एक दिन वियोगाकुल राधा भी अपनी ही प्रतिध्वनि से धोखा खाकर कह उठी थी—

कौन, कौन युवती सी तुम, श्याम श्याम कर रही पुकार ।
जैसे करती अभागिनी राधा, करके हिय में हाहाकार ।।
कोई भी हो इस विजन विपिन में, कह जाओ मुझसे सब हाल ।
किसे बांधता नहीं जगत में, श्याम प्रेम रस का यह जाल ।।

किन्तु 'सूर' की राधा के पास एक आधार तो था । वह उस कदम्ब के नीचे,

जहाँ नन्द-नन्दन के साथ क्रीड़ा की थी, घड़ी भर बैठकर और उसके सलोने रूप का स्मरण कर अपना मनोरंजन कर सकती थी।

तुलसीदास जी के राम बन-विहंगों से सीता के विषय में पूछते हैं—

हे खग मृग ! हे मधुकर स्रेनी।
तुम देखी सीता मृग नैनी ॥

राम चिरकाल तक साथ रहने के कारण अपनी प्रणयिनी के अंग-प्रत्यंगों की शोभा का वर्णन कर सकते हैं, किन्तु वह ग्राम्य-बाला तो इस सुयोग से भी वंचित है। फिर भी वह तपस्विनी अकेली ही पहाड़ों, उपत्यकाओं में प्यारे की खोज के लिए निकल पड़ती है। अन्त में सास का उपदेश तो और भी सुन्दर है। बहू निराशा भरे स्वर में सास से कहती है—"मैं उन्हें नहीं पा सकी। हे सास ! मेरे पैरों में छाले पड़ गए हैं, और नैन नीर बहा रहे हैं।"

सास उत्तर देती है—"बहू रानी, पैरों में मेंहदी लगा लो और नैनों में सुरमा लगा लो।"

पर बहू प्रेमोन्माद में कुछ समझ नहीं पाती। वह फिर कहती है—"कहाँ मेंहदी लगाऊँ और कहाँ सुरमा लगाऊँ ?" सास उसे धैर्य बँधाते हुए क्या ही सुन्दर उपदेश देती है—"मेरी प्यारी बहू रानी ! अपने मन को प्रियतम की प्रेम-रूपी मेंहदी में रंग लो और हृदय में सुरमा लगा लो।"

वियोगिनी के लिए अमूल्य सम्मति है। प्रेमी मंझन ने भी तो विरह की प्रशंसा में कहा है—

विरह कि जगत अंबिरथा जाही। विरह रूप यह सृष्टि सबाही ॥
नैन विरह अंजन जिन सारा। विरह रूप दरषन संसारा ॥
कोटि मांहि बिरला जग कोई। जाहि सरीर विरह दुख होई ॥
रतन कि सागर सागरहि, गज-मुक्ता गज कोई।
चन्दन कि बन बन ऊपजै, विरह कि तन तन होई ॥

(२)

ठाड़ी थी मेरे पिया बगड़ मंझार, सुसरे की नजरों पड़ गई।
अब क्यों री बहू तेरा मैला है भेस, क्या तेरे आये बीरा फिर गए।
अब ना रे ससुर मेरा मैला है भेस, ना मेरे आए बीरा फिर गए ॥
अब सासू का जाया ननद का है बीर, वे ही सिधारें लोभी चाकरी।
तू ही बहू मोटी मूरख गंवार, चलते हाकिम ना रोकियो जी ॥

अब आओ तो मेरे पिया, असाढ़ ज मास असाढ़ में चुंदरी रंगाइयां ।
अब आओ तो मोरे पिया सावन मास, सावन में झूल बटाऊं जी ।
अब आओ तो मोरे पिया भादों मास, भादों में बिजली झमारियां ।
अब आओ तो मोरे पिया क्वार ज मास, क्वार में पितर समोकिये ।
अब आओ तो मोरे पिया कातिक मास, कातिक में लछमी पुजाऊं जी ।
अब आओ तो मोरे पिया अगहन मास, अगहन में अघड़ घड़ाइयां ।
अब आओ तो मोरे पिया पूस ज मास, पूस में बंगला छ्वाइयां ।
अब आओ तो मोरे पिया माघ ज मास, माघ में मैके जाऊं जी ।
अब आओ तो मोरे पिया फागुन मास, फागुन में फगुआ खेलियां ।
अब आओ तो मोरे पिया चैत ज मास, चैत में फूल गुंथाइयां ।
अब आओ तो मोरे पिया बैसाख मास, बैसाख में फसल कटाइयां ।
अब आओ तो मोरे पिया जेठ ज मास, जेठ में खस महकाइयां ।
अब तू धण री म्हारी द्यो हो असीस, जहां रे लगै म्हारी चाकरी ।
अब जाइयो तो मोरे पिया वा ही देस, जहां पै लगै थारी चाकरी ।
अब आइयो तो मोरे पिया ब्याह रचाय, हाथ कंगन सिर सेहरा ।

बहू चौक में खड़ी हुई थी, ससुर की दृष्टि उस पर पड़ गई । उन्होंने उससे पूछा कि तुम्हारा वेश ऐसा मलीन क्यों हो रहा है ? क्या तुम्हारे भाई आए थे, जिनके लौट जाने से तुम उदास हो रही हो ? बहू ने उत्तर दिया, मेरे भाई आकर नहीं लौट गए, सास जी के सुपुत्र और ननद के प्यारे भैया, मेरे लोभी प्रियतम, परदेश जा रहे हैं ।

ससुर ने कहा—बहू रानी ! तुम भी कैसी अजान हो । कर्त्तव्य पथ पर अग्रसर होते हुए पति को नहीं रोकना चाहिए । ससुर की समयोचित शिक्षा से प्रोत्साहित होकर बहू पति को जाने की अनुमति दे देती है । अपना प्रत्येक मास का कार्यक्रम वह अपने पति को बताकर कहती है कि मैं अपने दिन तुम्हारी स्मृति में बिता दूँगी । अन्त की पंक्तियाँ तो गीत की शोभा को और भी अधिक बढ़ा देती हैं—

अब तुम धण री म्हारी द्यो हो असीस, जहाँ रे लगै म्हारी चाकरी ।
अब आइयो तो मोरे पिया वाही देस, जहां पै लगै थारी चाकरी ।
अब आइयो तो मोरे पिया ब्याह रचाय, हाथ कंगन सिर सेहरा ।।

पति कहता है—आशीर्वाद दो, कि जिससे मेरी नौकरी लग जाये ।

बहू सहर्ष आशीर्वाद देकर प्रियतम को बिदा करती है, किन्तु साथ ही

अपनी एक छोटी-सी अभिलाषा व्यक्त करते हुए कहती है—"मेरे प्यारे ! हाथ में कंकण और सिर पर सेहरा बाँधे हुए अपने उसी मनमोहक वैवाहिक वेश में आना।"

कैसी भावुकतापूर्ण अभिलाषा है। एक रीतिकाल के कवि ने इस दृश्य का वर्णन इस प्रकार किया है कि सास ने परदेश जाते हुए पुत्र के टीका करने के लिए बहू से रोली, चावल और नारियल मँगाया, किन्तु बहू का शरीर तो विरहाग्नि से भट्टी की तरह जल रहा है, प्रस्वेद बह रहा है, चावल हाथ में लेते ही भात बन गए, नारियल तिड़क गया, मोहर सोने की टिकियाँ हो गईं। इस बिदा में और उस बिदा में कितना अन्तर है। एक ओर अतिशयोक्ति है और दूसरी ओर स्वभावोक्ति। हमें कवि की वियोगिनी से सहानुभूति नहीं होती, किन्तु गीत की वियोगिनी ग्राम्य ललना की भोली सूरत आँखों के सम्मुख घूमने लगती है।

(३)

कौं घट की घटा पनामारू ऊमड़ी।
कौं घट बरसण हार, झुक जा री बदली बरस क्यूँ ना जाय।
चार टके दूँगी गाँठ के जे कोई लस्कर[1] जाय। झुक० ॥
उस लस्करिये से यूँ कहो, घर है बहन का रे ब्याह।
काले तो पीले गोरी कापड़े, कन्या नै दो परणाय ॥ झुक० ॥
चार टके दूँगी गाँठ के जे कोई लस्कर जाय।
उस लस्करिये से यूँ कहो, माय मरी घर आय ॥ झुक० ॥
माय मरी मर जाण दो, पहुँची सुरग में जाय।
आले गीले चन्दन कटाय के अम्मा ने दो जलवाय ॥ झुक० ॥
चार टके दूंगी गाँठ के जे कोई लस्कर जाय।
उस लस्करिये[2] से यूँ कहो, जोय[3] मरी घर आय ॥ झुक० ॥
जोय मरी घर खो गयी, बालक बारह बाट[4]।
हाथ के कागज हाथ रहे, कलम कान के बीच ॥ झुक० ॥
ये लो राजा अपनी नौकरी, ये लो अपना देस।
जोय मरी छोड़ी नौकरी, जोय मरी छोड़ा देस ॥ झुक० ॥
पूछी हैं कुएं की पनिहारियां, घर की कुसल बताओ।
बालक खेलें राजा चौंतरे, बहन भतीजन मांहि। झुक० ॥

१. सेना, २. सैनिक, ३. स्त्री, ४. कहीं के न रहना।

माय अटेरै कूकड़ी, जोय रसोइयां के बीच ।
उस छलियाई ने छल किया, छल कर लियो बुलाय ।
नेड़े[1] की कीजियो राजा नौकरी, सांझ पड़े घर आय । झुक० ॥

उपरोक्त गीत श्रावण में मल्हार रागिनी में गाया जाता है । स्त्रियाँ हरे-भरे वृक्षों की शाखाओं पर झूले डालकर रंग-बिरंगे वस्त्र धारण किए कल कण्ठ से इसे गाती हैं । उस समय वे ऐसी प्रतीत होती हैं, मानो स्वर्गीय अप्सराएं भूमि पर उतर आई हैं । विरहिणी घनघोर घटा को उमड़ते हुए देखती है, उसे अपने प्राणनाथ का स्मरण हो आता है, उसका हृदय व्याकुल हो उठता है, वह कहती है—

किधर से काली काली मेघावलि उमड़ रही है ?
न जाने यह किधर की ओर बरसेगी ?
अरे पयोद ! तू बरस क्यों नहीं जाता ?
जो कुछ मेरे पास है, वही मैं तुझे दे दूँगी,
यदि तू एक बार मेरे प्रियतम के पास मेरा सन्देश ले जाये ॥

मेघदूत में यक्ष ने अपनी प्रियतमा विरह में मेघों के द्वारा ही सन्देश भेजा था । मालती-माधव में माधव ने भी कहा है—

पर कारज देस विदेस फिरो, यदि देखो कहूँ मम मालति प्यारी ।
हिय धीरज ताहि बंधाय, दसा यह माधव की कह दीजियो सारी ॥
अरु देखियो आस का तन्तु न तोरियो, राखियो सो मृदु मंजु संवारी ।
बस वाहि के एक सहारे अहो घन ! जीवत आयत लोचन वारी ॥

परन्तु जब वह निर्मम न आया तो उसे चाल चलनी पड़ी । उसने सन्देश भेजा—"तुम्हारी बहिन का विवाह है, अतः घर आओ ।" किन्तु उस निर्मोही ने कहला दिया—"काले-पीले वस्त्र देकर कन्या का विवाह कर दो ।" उसने फिर कहा, "हे वारि दल, तुम कहना कि तुम्हारी माता की मृत्यु हो गई, अतः आओ ।" परन्तु फिर भी वह निर्मम कहला भेजता है कि माँ की मृत्यु हो गई तो ऐसी कौनसी बात है, चन्दन कटा कर मेरी अम्माँ का अन्तिम संस्कार कर दो ।

वियोगिनी के दोनों उपाय निष्फल जाते हैं, दर्शेच्छुक नैन तरस कर रह जाते हैं । अन्त में उसे केवल एक ही उपाय सूझ पड़ता है "जाओ मेरी प्यारी सहचरी बदली ! मेरे हृदयेश से कहना कि तुम्हारी स्त्री की मृत्यु हो गई है, क्या अब भी तुम घर न जाओगे ?"

---

१. निकट स्थान ।

पति जब यह सुनता है, तो उसका हृदय विदीर्ण हो जाता है। वह कहता है, "यदि स्त्री की मृत्यु हो गई है, तो घर का नाश हो गया, बेचारे बच्चे धूल में मिल गए।" स्त्री की मृत्यु का समाचार पाकर वह चित्रस्थ-सा रह जाता है, हाथ के कागज और लेखनी ज्यों की त्यों रह जाती है। उसने उसी समय नौकरी और स्थान छोड़ दिया और अपने घर की राह ली, किन्तु मन न रुका और कुएँ पर खड़ी हुई पनिहारियों से घर का कुशल-समाचार पूछा। यद्यपि घर बहुत ही समीप आ गया था, किन्तु जिस प्रकार पथिक को सारा रास्ता तय करने पर भी अन्त का थोड़ा-सा मार्ग बहुत लम्बा प्रतीत होने लगता है, वही दशा उसकी हुई। घर का कुशल समाचार जानने को वह विह्वल हो उठा।

घर पहुँचा तो सबको कुशलपूर्वक देखकर वह बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने कहा "तुम बड़ी छलिया हो, छल करके मुझे बुला लिया।"

स्त्री ने उत्तर दिया—"प्रियतम ! समीप ही काम कर लो, जो सन्ध्या समय घर आ सको।"

स्त्रियों का 'बादल' के स्थान पर 'बदली' कहना भी साभिप्राय है, क्योंकि स्त्री ही स्त्री के मन की व्यथा को भली प्रकार समझ सकती है।

(४)

इब का तो जाऊं छलो बाप कै जे लाऊंगी चीने का बीज,
सावण रुत आ गई जी।
इब का तो जाऊं छलो बाप कै जे लाऊंगी खुरपे की जोट। सावण० ॥
चीना तो गुरपण छलो मैं चली, खाई थी काले से नाग। सावण० ॥
मां मेरी से छलो[1] ना कहियो जी, रोवैंगी बुगचे[2] को देख। सावण० ॥
बाप मेरे से छलो ना कहियो जी, रोवैगा रस्तों नै देख। सावण० ॥
भाभी मेरी से छलो ना कहियो जी, रोवैंगी तीजन को देख। सावण० ॥
बहनों मेरी से छलो ना कहियो जी, रोवैंगी बगिया के बीच। सावण० ॥
साथिनों मेरी से छलो ना कहियो जी, छोड़ैंगी गुड़ियों का खेल। सावण० ॥
भाइयों मेरे से छलो ना कहियो जी, रोवैंगे हर त्यौहार। सावण० ॥

गीत बड़ा ही करुणापूर्ण है। बालिका अपने पिता के यहाँ से चीने के चावलों के बीज लाई और दो खुरपियाँ लाई। खेत में चावल बोते हुए उसे सर्प ने डस लिया। अपनी मृत्यु निकट आई हुई देखकर उसने अपने पति से कहा, हे रसिया ! मेरी मृत्यु का समाचार इस सुहावनी सावन की ऋतु में मेरे पिता

---

१. रसिया, २. सन्दूक।

के घर न भेजना। मेरी माँ सुन्दर वस्त्रों को देख-देखकर रोयेगी कि इन्हें मैं अपनी कन्या को पहनाती। पिता मेरे आने का मार्ग देख-देखकर रोयेंगे। मेरी भाभी चरखा कातती हुई रोयेंगी, उनके साथ चरखा काता करती थी। मेरी बहनें वाटिका में रोयेंगी, हम सब गले में बाँहें डाले वहाँ इधर से उधर घूमा करती थीं। मेरी सखियाँ गुड़ियाँ खेलना छोड़ देंगी, मेरे भैया प्रत्येक त्यौहार पर मुझे याद कर-करके आँसू बहायेंगे।

(५)

जउन सुगनवा के दुधवा से पाले, अरे भतवा से पालेऊ ना।
उड़त उड़त सुगना गए मधुबना, अरे मधुबना ना।
मुरहा झाड़ि पौंछि मुरहा जंघा बैठाइये ना।
पूँछइ लागे अपने घरइ के हवलिया रे ना।
तोहरी तो माय रोवै रामा मचियवा चढ़ि ना।
तोहरा तो दादा रोवै, सभवा बइठि सभवा बइठि हो ना।
तोहरी तो बहिनी रोवै, ए मुरहा अपनी तो सासू के ना।
भइया खेलता रोवइं रे बँसवा की कोठरिया रे ना।
तोहरी तो धनां रोवै रामा रसोइयाँ करिकै ना।
सेजिया तो उलारती जइहैं तोरी धनाँ रोवई हो ना॥

जिस तोते को स्त्री ने दूध-भात खिलाकर पाला था वह उसके परदेशी पति के पास उसका सन्देशा लेकर गया। पक्षियों द्वारा पत्र भेजने का हमारे प्राचीन साहित्य में बहुत वर्णन है। कबूतर इस काम के लिए बहुत अधिक व्यवहार में आते थे। नल के पास दमयन्ती ने भी हंस के द्वारा पत्र भेजा था। आजकल जापान में कबूतरों द्वारा बहुत काम लिया जाता है। नवीन संसार के लिए यह जापान की आविष्कृत बात मालूम होती है। पर भारत के लिए यह नई नहीं है।

प्रस्तुत गीत में तोता पत्र नहीं ले गया; बल्कि उसने स्वयं परदेशी को उस के घर के लोगों की दशा सुनाई है। तोता शिक्षित करने से मनुष्य की बोली बोल सकता है। उस विरहिणी के सिखाने से यदि उसने गीत में वर्णित बातें कही हैं, तो क्या आश्चर्य है? विरहिणी का सन्देश सुनकर उसका प्रवासी पति भी क्या धैर्य रख सका होगा!

(६)

मेरी सास्सड़ रानी तैंने क्या कहूँ, कहते आवै लाज।
कछु ना किया म्हारा बिचार, पूत भेजा परदेश जी॥

काबुल काबुल बारी कर रही, जो कोई काबुल जाय
उस मूरख से यूँ कहियो जी, कनक[1] पकी घर आय ।।
कनक पकी पक जान दे, लावे[2] से लियो कटवाय ।
हम ठाढ़े की नौकरी म्हारा आवण नाय ।।
काबुल काबुल वारी कर रही जो कोई काबुल जाय ।
उस मूरख से यूँ कहियो जी, माय मरी घर आय ।।
माय मरी मर जाण दो, ब्राह्मण दियो करवाय ।
हम ठाढ़े की नौकरी, म्हारा आवण नाय ।।
काबुल काबुल वारी कर रही, जो कोई काबुल जाय ।
उस पापी से यूँ कहियो जी, पूत जमा[3] घर आय ।।
पूत जमा जम जाण दो जी, दूबां दियो बंटवाय ।
हम ठाढ़े की नौकरी, म्हारा आवण नाय ।।
काबुल काबुल वारी कर रही, जो कोई काबुल जाय ।
उस मूरख से यूँ कहियो जी, नार मरी घर आय ।।
नार मरी घर बुरी हुई जी, घर का गया जी सिंगार ।
सजे से बाजार माँह को काढ़ियो जी, रोयां सहर के लोग ।
हम ठाढ़े की नौकरी म्हारा आवण नाँहि ।।

स्त्री का पति १२ वर्ष की नौकरी के लिए काबुल गया था, बहुत दिन हो गए, फिर भी वह न लौटा । उसकी स्त्री ने किसी यात्री से उसके पास कहलाया कि गेहूँ पक रही है, हे प्रवासी ! आओ और उसे काटो । पति ने कहला दिया कि मजदूर रखकर गेहूँ कटवा लो । फिर स्त्री ने कहलाया कि तुम्हारी मां मर गई हैं, आकर मां का क्रिया-कर्म करो । उसने फिर भी कुछ ध्यान नहीं दिया और कहला दिया कि मां की मृत्यु पर ब्रह्मभोज कर देना । स्त्री फिर भी प्रयत्न करती ही रही । अब की बार उसने अपनी मृत्यु का समाचार कहला भेजा; किन्तु वह निष्ठुर फिर भी न लौटा ।

(७)

चढ़ते तो सावन मेरा भइया तो आया, आई रुत सावन की ।
कहो ना भेजने की बात, सखी री रुत सावन की ।।
टेरन तो टेरती मैंने सास जी पूछी,
कहो ना भेजने की बात, सखी री रुत सावन की ।।

१. गेहूँ, २. मजदूर, ३. उत्पन्न हुआ है ।

हमको क्या पूछो मेरी बावली बहू, रुत सावन की,
पूछो ना सौहरा जी से जाय, सखी री रुत सावन की ।।
कचहरी में बैठे अपने ससुरा जी से पूछा,
भैया तो आए हम को लेन, आई रुत सावन की ।।
हमको क्या पूछो बहू रानी, आई रुत सावन की,
पूछो ना जेठाणी से जाय, आई रुत सावन की ।।
कहो ना जिठाणी जी भेजने की बात, सखी री रुत सावन की ।।
हमको क्या पूछो म्हारी भोली सी देवरानी ।
पूछो देवरा जी से जाय, आई रुत सावन की ।।
डंगर[1] तो चुगांदा मैंने देवरजी पूछा,
कहो ना भेजने की बात, आई रुत सावन की ।।
हमको क्या पूछो म्हारी बावली सी भाभी,
पूछो ना अपनी देवरानी से बात, सखी री रुत सावन की ।।

स्त्री का भाई उसे लेने आया है, वह अपने माता-पिता, बहन-भाई, एवं सभी सम्बन्धियों, सखियों, आदि से भेंटने के लिए आतुर है । किन्तु वह तब तक जाने के लिए उद्यत नहीं है, जब तक कि परिवार का बच्चा-बच्चा उसे जाने की सहर्ष आज्ञा न दे दे । वह बेचारी सब से जा-जाकर पूछती है, पर सब एक दूसरे पर टाल रहे हैं । सम्मिलित परिवारों में वधू की दशा का अच्छा चित्रण है ।

(८)

मैंने री मां मेरी तमाशे का चाव, देश तमाशा री मां हो रहा ।
तैंने री शीला मारू तमाशे का चाव, चढ़ चौबारे धीयड़ देख ले ।
देख्या री मां म्हारी सारा संसार, एक रसीला ढोला[2] ना देख्या ।
नाई के रे बीरा ! चतुर सुजान, इसमें रसीला ढोला कौनसा ।
वो खड़ा ए शीला मारू घोड़े असवार, लाल दुशाले वाला वो खड़ा ।
सो गयी ए शीला मारू चादर तान, आया बम्बी का काला डस गया ।
ढोलीड़ा रे बीरा ढोल बजाय, जाय सुनाओ मेरे पीहर सासरे ।
तैंने ए शीला मारू रोवेगा कौन ? पीहर मरी ना सासरे ।
सासरे में रोवै बीरा मेरी रे सास, जिसके उल्टे री डोले मुड़ गए ।
पीहर में बीरा रोवै मेरी माय, जिसके तीजन सूने हो गए ।।

---

१. पशु, २. पति ।

सुन्दरी शीला का बाल्यकाल में विवाह हो गया था। उसने अपने पति को देखा तक न था। एक दिन गांव में कोई उत्सव था, उसका पति भी उसमें आया हुआ था। उसने अपने नाई से कहा, "भैया ! इसमें मेरा पति कौन सा है ?"

नाई ने बतलाया घोड़े पर लाल दुशाले वाला जो सामने ही खड़ा है, बहिन, वही तुम्हारा पति है।

उसका यह पति-दर्शन प्रथम और अन्तिम था। साँप ने उसे काट लिया। मृत्यु समय उसने ढोलक बजाने वाले से कहा—मेरे भैया ! ढोलक बजाकर मेरे पिता के घर और मेरी सुसराल में मेरी मृत्यु की सूचना तो दे आओ।

ढोलक वाले ने उत्तर दिया—बहिन ! तुम्हारे लिए कौन शोक मनायेगा ? न तुम ससुराल में मरीं, न पिता के घर।

उसने सगर्व उत्तर दिया—भैया ! मेरे लिए मेरी सास रोयेगी, जिसका महल सूना हो गया और मेरी मां रोयेगी जिसका चरखा कातने का स्थान सूना हो गया।

मां का प्रेम तो अगाध होता ही है। ससुराल में पति का प्रेम सबसे अधिक होना चाहिए; किन्तु बाल्यकाल में विवाह होने के कारण पति-पत्नी कभी साथ में नहीं रहते थे। सास की वात्सल्यमयी गोद में ही बहुएँ सुसराल में जीवन बिताती थीं। इसीलिए सुसराल वालों में उसने सास के प्रेम को ही सर्वाधिक समझा है।

(६)

बागों बंगला चिना दो म्हारे स्वामी जी।
रखा दो न राज चाँद सूरज सौंही[1] बारना[2] जी॥
बागों बंगला ना चिनै मोरी गोरी है।
नहीं रह चांद सूरज सौंही बारना जी।
मेरा सुसर मनावन आया मोरे मारू जी,
चलो क्यूँ ना राज, चाल बहू घर आपने जी।
अपने सुसरे नै राज दिवा दूँ मेरे राजा जी।
नहीं चलें राज, थारे बेटे सेती ओलना[3] जी।
मेरा जेठ मनावन आया मेरे मारू जी,
चलो क्यूँ ना राज, चाल बहू घर आपणे जी।
अपने जेठां नै घुड़लै चढ़ा दूँ मेरे राजा जी।
नहीं चलें राज, थारे भैया सेती ओलना जी।

---

१. सम्मुख २. मुख्य द्वार, ३. रुष्ट होना।

मेरा देवर मनावन आया मेरे राजा जी ।
चलो क्यूँ ना राज, चाल भावज घर आपणे जी ।
अपने देवरां को बहिन विवाह दूं मेरे देवर जी ।
नहीं चालूँ राज थारे भैया सेती ओलना जी ।।
मेरे राजा जी मनावन आए मेरे राजा जी,
चलो क्यूँ ना राज ! चाल प्यारी घर आपणे जी ।
बागों बँगला चिना दें मेरी गोरी हे,
रखा देंगे चांद सूरज सौंही बारना जी ।

पत्नी की इच्छा बाग में बंगला बनवाने की है; जिस पर सूर्य की सुनहरी किरणें और चन्द्र-ज्योत्सना बिना किसी रुकावट के आ सकें । पति ने एक बार अस्वीकृत कर दिया तो पत्नी ने मान ठान लिया । किसी के समझाये न मानी । अन्त में पति को उसकी बात रखनी ही पड़ी । पारस्परिक मान का सुन्दर और स्वाभाविक वर्णन है ।

(१०)

तैं क्यूँ हवेली बैरन डिगमिगी हे,
हां जी कोई धरी है धरम की नींव ।
इक दिन राजा लड़े चिनावते जी ।।
लीपन चढ़ी ए भंवर[1] थारी रावटी[2] जी ।
हां जी कोई पोतन चढ़ी ए किवाड़ ।
सूनी ए पड़ी है भंवर थारी रावटी जी ।।
कहो तो ननद री महल से गिर पड़ूँ री,
हाँ जी कोई कहो तो जहर विष खाएं ।
थारे तो भैया लस्कर उठ गए जी ।।
काँहें नै भावज री महल से गिर पड़ो री,
हाँ जी कोई काँहें नै जहर विष खाओ ।
म्हारे तो भैया लस्कर बाहुड़े जी ।।
किसके तो बाजैं ननद री बाजनें री,
हां जी कोई किसके चमकैं हथियार ।
किसकी तो हिनसी[3] लीली[4] बाग में जी ।।

---

१. पति, २ अट्टालिका, ३. घोड़े का शब्द, ४. घोड़ी ।

म्हारे ए बीरन के बाजें बाजनें री,
म्हारे ए बीरन के हथियार।
म्हारे ए बीरा की लीली हिनसी बाग में जी ॥
टग टग महलों भंवर जी चढ़ गए जी,
हां जी कोई धरा है पिलंग पर पैर।
हाथ पकड़ धण बैठी कर लई जी ॥
धण की तो चोरी भंवर जी हो गई जी,
हां जी कोई लुटा है लखीना माल।
छन्न पछेली गजरिये रह गये जी ॥
चरखा तो ला दो भंवर जी रांगला[1] जी,
हां जी कोई पीढ़ी लाल गुलाल।
तकवे तो ला दो भंवर जी लोहे सार का जी ॥
मोहर मोहर की मेरे पिया कूकड़ी जी,
हां जी कोई अस्सीये मोहर का तार।
म्हारी तो कमाई राजा खायेंगे जी ॥
गोरी की कमाई खायेंगे राँडिया जी।
हां जी कोई गँधी या मनियार।
हम तो बेटे हैं साहूकार के जी,
ओजी म्हारी धणी ए पियारी नार।
गोरी की कमाई पार ना पड़े जी।

पति परदेश गया, पत्नी अपने प्राणाधार के वियोग में विह्वल हो गई। पति जब लौटकर आया तो उसने कहा—मेरे सर्वस्व ! तुम अब परदेश न जाना। मुझे सुन्दर रंगीला चरखा मँगवा दो, मैं एक-एक तार सोने के तार जैसा कातूँगी; मेरी काती हुई एक-एक नीचली एक-एक मुहर में बिकेगी। अतीत काल में भारत की युवतियाँ चरखा कातने में कितनी निपुण होती थीं, इसकी झलक इस गीत की पँक्तियों में मिलती है।

पति का उत्तर भी सुनने योग्य है। वह कहता है—प्राणेश्वरी ! धनार्जन करना पुरुष का ही काम है, मैं बनिये का बेटा हूँ, स्त्री की कमाई से पूरा नहीं पड़ेगा।

---

१. रंग-रंगीला।

(११)

राजा जी ऊंचे नीचे महल चिनाय,
बारी रखा दो जी पूरी डेढ़ सौ जी।
राजा जी लम्बे लम्बे खरड़ बिछाय,
राजा तो रानी चौपड़ माँडिया जी ॥

राजा जी एक पासा डाला दोय चार,
तीजे तो पासे राजा लड़ पड़े जी।
राजा जी जो तुम ऐसे खिलार,
बेटी तो ब्याहो जी हंसा राव की जी ॥

रानी ए ! ऐसे बोल न बोल,
सौत बुरी है जी कच्चे चून की जी।
बाँदी ए ! लाओ म्हारे पाँचों हथियार,
पाँचों तो लाओ जी म्हारे कापड़े जी ॥

राजा जी ! क्या रे करोगे हथियार,
क्या रे करोगे जी पाँचों कापड़े जी।
बाँदी ए ! ले चलेंगे जी हथियार,
पहन चलेंगे जी पाँचों कापड़े जी ॥

बाँदी ए ! रानी ने बोले हैं बोल,
बेटी तो ब्याहो जी हंसा राव की जी।
राजा जी ! बालक थी नादान,
नींद उनींद में राजा कह गई जी ॥

बाँदी ए ! ऊपर चढ़ कै देख,
राजा गए कि उल्टे बाहुड़े जी।
रानी ए ! गए गए कोस पचास,
घोड़ा तो हिनसा जी चम्पे बाग में जी ॥

राजा जी पूछें हैं बागों वाले लोग,
महल बता दो जी हंसाराव का जी।
राजा जी ! वे दीखें हंसा जी के महल,
नौकर तो ड्योढी पै खड़ा जी ॥

राजा जी पूछें हैं महलों वाले लोग,
धीय बता दो जी हंसा राव की जी।
राजा जी ! वो दीखै हंसा जी की धीय,
गउएँ चरावै जी बन में एकली जी ॥

हंसा जी की ! तू तो रूप सरूप,
औड़ कंवारी हे गजबण[1] ! क्यूं रही जी ।
वारी के ढूँढा था गढ़ गुजरात,
म्हारी जोड़ी का जी जग में ना मिला जी ॥

वारी के ! तूं भी गजब सरूप,
औड़ कंवारा रे गजबी क्यूं रहा रे ।
हंसा की ! याणों के मर गए माइ अर बाप,
भाइयों भरोसे री गजबण ! रह गया जी ॥

हंसा की ! तैं तो मायड़ समझाय,
म्हारी तो जोड़ी का जी चम्पे बाग में जी ।
अम्मां मेरी ! तैं तो बाबल समझाय,
मेरी जोड़ी का जी चम्पे बाग में जी ॥

बेटी मेरी ! तैं तो असल गंवार,
चलते मुसाफिर कैसी दोसती जी ।
अम्मां मेरी ! मरूंगी जहर-विष खाय,
फेरे तो होंगे चम्पे बाग में जी ॥

राजा जी एक फेरा लिया दोय चार
तीजे तो फेरे राजा रो पड़े जी ।
राजा जी, कै याद आये माई अर बाप
कै याद आया अपना देसड़ा जी ॥

हंसा जी की, म्हारे मन आयी बड़ नार,
महलों में बैठी सुन्दर एकली जी ।
अम्मां मेरी, मरूंगी जहर-विष खाय,
राजा कै कहिये रानी दूसरी जी ॥

बेटी मेरी, तेरी मरेगी बलाय,
राजा की मरियो जी रानी दूसरी जी ।
रानी ए, गए गए कोस पचास,
घोड़ा तो हिनसा जी चम्पे बाग में जी ॥

बांदी ए, ऊपर चढ़कर देख,
घोड़ा तो हिनसा जी चम्पे बाग में जी ।
रानी ए, कहां रे उतारूँ छोटी नार,
कहां रे उतारूँ जी सारा दायजा जी ॥

---

१. ग़ज़ब की सुन्दर ।

राजा जी, चूल्हे में डालो छोटी नार,
नदियों में डालो जी सारा दायजा जी ।
रानी ए, सेजों उतारूँ छोटी नार,
महलों उतारूँ जी सारा दायजा जी ।।
रानी ए, मन क्यों करो हो उदास,
हंसा की बेटी तो थारी बांदियाँ जी ।।

कभी-कभी हंसी में भी बड़े-बड़े अनर्थ हो जाते हैं। परिहास कभी कटु न होना चाहिए। मुख्य शिक्षा इस गीत से यही मिलती है। पति-पत्नी को परस्पर छोटी-छोटी बातों को लेकर कलह नहीं करनी चाहिए। एक दूसरे की अच्छी-बुरी सुनने और सहन करने की क्षमता रखनी चाहिए।

दूसरी शिक्षा जो यह गीत हमें देता है, वह यह है कि पूर्ण परिचय प्राप्त किए बिना कभी शादी नहीं करनी चाहिए। जो विवाह केवल रूपलावण्य पर मोहित होकर किये जाते हैं, उनका परिणाम कभी अच्छा नहीं होता। आज पाश्चात्य देश इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

"तीजे तो फेरे जी राजा रो पड़े जी"—यहां पर गीत में मनोगत भावों का कितना सजीव चित्रण हुआ है। हृदय का सच्चा प्रेम कभी विघटित नहीं होता। क्षणिक आवेश के वशीभूत होकर की गई भूलें बाद में शूल के समान चुभती हैं, यह तथ्य इस गीत में स्पष्ट लक्षित होता है।

(१२)

सींचूँ केले दूध और खांड, लगर लगर केला बध गया जी महाराज।
छोटी ननद बूझे मन की बात,
पट्टी ये झुकाले सच्चे मोम की जी[1] महाराज।
न्हाले धोले कर ले सिंगार, जब बरसेंगे रिमझिम मेघ,
बाहर भीजेगी गोरड़ी जी महाराज।
खोलो राजा बजर किवाड़,
सांकल तो खोलो लोहे सार की जी महाराज।
खुलेंगे बजर किवाड़,
साँकल खुलेगी लोहे सार की जी महाराज।

---

१. पहले समय में स्त्रियाँ अपने बालों की पट्टियां बनाकर उनपर मोम लगाती थीं जिससे वे जमी रहें।

जीओ ननदल तेरे री बीर,

रूसे-रूसे हाकिम मन गये जी महाराज।

दूंगी ननदल बुगचे की तील[1],

छटे महीने कोथली[2] जी महाराज॥

इस गीत में ननद-भाभी के प्रेम का वर्णन है। पत्नी से उसके पति रुष्ट हो गए और किवाड़ बन्द करके कमरे में लेट गए। पत्नि के लाख प्रयत्न करने पर भी किवाड़ नहीं खोले। तब उसकी ननद युक्ति बताती है, वह कहती है—"मेरी प्यारी भाभी! अपने सुन्दर सुनहरे बालों को संवार कर स्नान शृंगार करके इस प्रकार सज-धजकर भैया को मनाने जाओ, तब देखना, वे अपने हृदय-मेघ से प्रेम-नीर की रिमझिम-रिमझिम वर्षा कर उसमें तुम्हें सराबोर कर देंगे।"

आदर्श गृहिणी अपनी ननद की सम्मति के अनुसार ही कार्य करती है। वह जब वेणी सँवार, सुन्दर वस्त्राभूषणों से अलंकृत हो, अपने पति को मनाने जाती है, तो पत्नी की सौन्दर्यमयी मूर्ति के दर्शन कर पति के हृदय-सागर में प्रेम-नीर हिलोरें मारने लगता है। भाव-तरंगें तरंगित होने लग जाती हैं और वह समस्त रोष को अनायास ही भूल जाता है।

अपनी ननद की युक्ति को सफल हुई देखकर भाभी उससे बहुत प्रसन्न होती है और वह उसे आशीर्वाद देती है—"मेरी छोटी सी ननद! ईश्वर तुम्हारे भैया को आयुष्मान करें. मैं तुम्हें अनेकों उपहार दूँगी। तुम्हारी युक्ति से मेरे रूठे पति प्रसन्न हो गये।"

(१३)

आया तो री मेरी सास्सड़ सावन मास।
बेड़[3] बटा दे पीले पाट[4] की।
म्हारै तो ए लच्छो बेड़े की आण[5],
जाय बटाइयो अपने बाप कै।
जो री कि सास्सड़ थारे बेड़े की आण,
पूत कंवारे री क्यूँ ना रख लिया।
सुण सुण रे कि बेटा लच्छो के बोल,
लच्छो तो बोलै हम को बोलियां।

---

१. स्त्री के वस्त्रों का जोड़ा, २. थैला जिसमें भेंट का सामान रखकर भेजा जाता था, ३. रस्सी, ४. रेशम, ५. मनाही।

झूठे तो री कि अम्मां मेरी झूठे हैं बोल,
लच्छो न बोलै हम को बोलियाँ।
जो तो रे कि बेटा नहीं एतबार,
चढ़ कै चौबारे रे बेटा देख ले।
उठ-उठ तो ए कि लच्छो पिसना संजोय,
चक्की पै धरा जी तेरा पीसना।
फोड़ूँ तो री कि सास्सड़ चक्की के पाट,
बगड़[1] बखेरूँ री तेरा पीसना।
सच्चे तो री कि अम्मां मेरी सच्चे हैं बोल,
लच्छो तो बोलै हम को बोलियाँ।
कहो तो री कि अम्मां मोरी मन से बिसारूं,
कहो तो भेजूँ इसको अपने बाप कै।
काहे को तो रे बेटा मन से बिसार,
तड़कै नै भेजो इसके बाप कै।
उठ-उठ तो री कि लच्छो कर ले सिंगार,
तड़कै नै जाइयो अपने बाप कै।
कौण तो री कि सास्सड़ आया लेनेहार,
कौण तो वादा[2] तुम से कर गया।
बह्मना तो री कि बहुअड़ आया लेनेहार,
नउवा-तलौवा[3] वादा कर गया।
किस का तो री कि सास्सड़ मिस[4] और काज[5],
किस कै तो जन्मे उनके छोकरे।
छोटे भैया का तो बहुअड़ मिस और काज,
बड़े कै जन्मे उन कै छोकरे।
खोल-खोल री कि अम्मा चंदन किवाड़,
लच्छो तो आई तेरे बारनै[6]।
कौण तो री कि बेटी गया लेनेहार,
कौण तो वादा तुम से कर आया।
बह्मना तो री कि अम्मां गया लनेहार,
नउवा-तलौवा वादा कर आया।

---

१. आंगन, २. वायदा, ३. नाई, ४. अवसर, ५. कार्य, ६. द्वार पर।

किस कै तो ए कि बेटी मिस ग्रौर काज,
किस कै तो जन्मे म्हारै छोकरे।
छोटे भैया कै ग्रम्मां मेरी मिस ग्रौर काज,
बड़े कै जन्मे म्हारै छोकरे।
झूठे तो हैं कि बेटी झूठे हैं बोल,
कोई न म्हारे मिस ग्रौर काज जी।
किस के बिना तो ग्रम्माँ मेरी घोर ग्रंधेर।
किस के बिना तो ग्रांगन भिनभिना[1]।
ल.च्छो बिना तो मेरे बेटा घोर ग्रंधेर,
बच्चों बिना तो ग्रांगन भिनभिना।
कातूँ तो री कि ग्रम्मां मेरी तीजन के बीच,
कि वे परदेसी म्हारै कब ग्रावें।
कोठे तो री कि ग्रम्माँ मेरी चढ़कर देख,
घोड़ा तो हिंसै चिट्टे[2] बड़ तलै[3]।

सावन मास ग्राया देखकर लच्छो सास से रेशम की रस्सी बटवाने को कहती है जिससे वह झूल सके। सास ने कहा—"हमारे यहाँ रस्सी बांटने की परम्परागत रूप से मनाही है, तुम ग्रपने बाप के घर जाकर रस्सी बटवा लाना।" यह उत्तर सुनकर लच्छो को क्रोध ग्रा जाता है ग्रौर वह कह उठती है कि यदि मेरी इतनी-सी इच्छा भी पूरी नहीं करनी थी तो ग्रपने बेटे को कंवारा ही रख लेना चाहिए था।

सास बहू के बोल सुनकर रुष्ट हो जाती है ग्रौर बेटे से उसकी शिकायत कर देती है। बेटा ग्रापे से बाहर हो जाता है ग्रौर बहू को उसके पिता के यहाँ छोड़ ग्राने का या मन से बिसार देने का दण्ड देने को तैयार हो जाता है। किन्तु सास का कोई ऐसा ग्रभिप्राय नहीं था, उसका तो रोष ऐसा ही था, जैसा मां का बच्चे पर होता है। उसने कहा—बेटा इसे इसके बाप के यहां छोड़ ग्राग्रो।

पति लच्छो को ग्रगले दिन कहता है कि ग्रपने पिता के यहाँ चलने के लिए तैयार हो जाग्रो। वह झूठ बोल देता है कि "तुम्हारे घर से नाई ब्राह्मण ग्राए थे, तुम्हारे छोटे भाई के यहाँ शुभ कार्य है ग्रौर बड़े भाई के यहाँ लड़का हुग्रा है।" लच्छो पिता के घर पहुँच जाती है। माता उसे देखकर चकित रह जाती है।

---

१. सूना, २. सफ़ेद, ३. नीचे।

बात का अब भेद खुलता है। लच्छो अपनी माँ के पास ठहर जाती है। उधर लच्छो का पति उसकी अनुपस्थिति में उदास हो जाता है। वह अपनी माँ से पूछता है—"माँ, किसके बिना यहाँ घोर अंधकार छाया हुआ है और किसके बिना आँगन सूना-सूना लग रहा है।"

लच्छो की सास का रोष भी अब तक दूर हो चुका होता है। वह भी बहू के बिना उदास और विह्वल है। वह कहती है—"लच्छो के बिना यहाँ घोर अन्धकार छाया हुआ है और बच्चों के बिना आँगन सूना लग रहा है।"

मां का इतना संकेत पाकर पति घोड़े पर सवार होकर अपने ससुर के गाँव पहुँच जाता है। किन्तु उसने लच्छो के साथ अकारण दुर्व्यवहार किया था, इस लज्जा से वह अभिभूत हैं, इसलिये उसे ससुर के घर में जाने का साहस नहीं होता। वह गाँव से बाहर बड़ के पेड़ के नीचे ठहर जाता है।

लच्छो को यद्यपि पति के आने की आशा नहीं थी और उसने अपनी माता से कह दिया था—"मेरी अम्माँ! मैं यहाँ चरखा कातकर दिन व्यतीत कर लूंगी, क्योंकि उस परदेशी (अर्थात् पति) के आने की अब कोई आशा नहीं" किन्तु फिर भी उसके मन के अन्तस्तल में पति के आने की आशा दुबकी बैठी थी। उसके कान घोड़े की आवाज़ सुनने के लिये बेचैन थे। अन्ततः हृदय को हृदय खींचने में सफल हो ही गया। उसे घोड़े की हिनहिनाहट सुनाई दी। अब वह अधीर हो उठी और माँ से बोली—'मेरी अम्माँ! ज़रा कोठे पर चढ़कर देख तो सही; सफेद बड़ के नीचे घोड़ा हिनहिना रहा है। हो न हो वही आए होंगे।"

(१४)

सावण मास जो आया सखी री, सावण में झूल बटावती।
हम तो बैठि रही मन मारि कै,
सखी री ऐसा खत गिरवाइयो,
सुनते ही आवें गढ़ सुलतान से।
मेरे मारू[1] को बुलवाइयो, रोय रोय कह रही कुंवरि निहाल दे
सती हो रही कुंवरि निहाल दे।
ईं घट चढ़ रहे नद्दी नाले, कैसे उतरैं उतरन वाले।
कैसे जावैं जावन वाले, रो रो कह रही कुंवरि निहाल दे॥
राजा भले बखत पै आये, सिर के केस जलन नहिं पाये।
माथे का बिन्दा छुटन नहिं पाया, रो रो कह रही कुंवरि निहाल दे॥

१. प्रियतम।

कैसी करुणा फूटी पड़ती है ? बेचारी निहाल देवी मुगलों के फंदे में फंस गई। अन्य किसी प्रकार अपने धर्म की रक्षा न होती देख वह चिता में भस्म होने के लिए उद्यत हो गई। चारों ओर से आग की लपटें निकल रही हैं, सती निहाल दे (देवी) जल रही है। ऐसे समय में उसे अपने परदेशी प्रियतम याद आते हैं, वह चाहती है कि कम से कम एक बार अन्तिम समय में अपने प्रियतम के दर्शन तो कर ले। हाय रे नारी हृदय ! वह जल रही है, किन्तु अपनी सखियों से कहती है—"सखियो ! मेरे पति के पास पत्र लिख दो। वह सुनते ही तत्काल सुलतान गढ़ से आयेंगे," परन्तु फिर उसे ध्यान आता है कि नदियों में बाढ़ आ रही है, मार्ग बन्द है। फिर कोई कैसे पत्र लेकर जा सकता है और कैसे मेरे पति आ सकते हैं ? उसकी आँखों में आंसू छलछला आये। हाय ! वह अन्तिम समय भी पति दर्शन से वंचित है। पत्र नहीं पहुँच सकता किन्तु मन के तार को रोकने की शक्ति किस में है ? उसके पति आ गये, उस समय उसका सारा शरीर ज्वालमाल से आवृत्त था। वह हर्षित होकर बोली—मेरे राजा ! तुम कैसे अच्छे समय पर आ गए, अभी तक मेरे सौभाग्य के चिन्ह ज्यों के त्यों हैं। सिर के केश अभी नहीं जले हैं और मेरे मस्तक का लाल बिन्दु अभी नहीं मिट पाया है। यह कह कर वह सन्तोषपूर्वक प्राण त्याग देती है। कैसा हृदय-द्रावक चित्र है ?

(१५)

अलिन गलिन मनरा फिरै, अरी बीबी मनरा को लाइयो बुलाय,
चूड़ा तो मेरी जान, चूड़ा तो हाथी दांत का।

हरीय जंगाली री चूड़ा पहन ले,
हरी रे जंगाली मनरा ना पहनूँ,
हरे मेरे राजा जी के बाग।
चूड़ा तो मेरी जान, चूड़ा तो हाथी दांत का।

काली जंगाली री बीबी पहन ले,
काली जंगाली रे मनरा ना पहनूँ,
काले मेरे राजा जी के केस। चूड़ा तो मेरी०॥

लाल जंगाली री बीबी पहन ले,
लाल जंगाली रे मनरा ना पहनूँ,
लाल मेरे राजा जी के होंठ। चूड़ा तो मेरी०॥

सफेद जंगाली री बीबी पहन ले,
सफेद जंगाली रे मनरा ना पहनूँ,
सफेद मेरे राजा जी के दांत। चूड़ा तो मेरी०॥

पीली जंगाली री बीबी पहन ले,
पीली जंगाली रे मनरा ना पहनूँ,
पीला मेरे राजा जी का भेस। चूड़ा तो मेरी०॥
ऐसी जंगाली रे मनरा पहरिये,
अरे मनरा झिलमिल करै रे शरीर। चूड़ा तो मेरी०॥
पहर-ओढ़ ठाड़ी हुई रे,
अरे मनरा ने मारी है सैन। चूड़ा तो मेरी०॥
सासू ने ससुरा सिखाइया,
ए राजा थारी बहू चकचाल, मनरा से लाई दोसती।
सुसरे ने बेटा सिखाइया,
बेटा तेरी बहू चकचाल, मनरा से लाई दोसती॥
पहली कटारी रे राजा मारियां,
मेरे राजा, ली मैंने घूंघटे की ओट। चूड़ा तो मेरी०॥
दूजी कटारी रे राजा मारियां,
मेरे राजा, ली मैंने हिवड़े के बीच। चूड़ा तो मेरी०॥
तीजी कटारी रे राजा मारियां,
मेरे राजा चौथी में तजे हैं पिरान[1]। चूड़ा तो मेरी०॥
मार-मूर राजा चल पड़े,
अरी अम्मा घर आंगन लागे उदास। चूड़ा तो मेरी०॥
घर घर चक्की री अम्मां चल रही,
अरी अम्मां रंडुए की छलनी में नाज। चूड़ा तो मेरी०॥
घर-घर चौका बासन हो रहे,
अरी अम्मां रंडुए के चूल्हे में राख। चूड़ा तो मेरी०॥
घर घर फूलों की सेजां अम्मां बिछ रही,
अरी अम्मां रंडुए की सड़कों पै खाट। चूड़ा तो मेरी०॥
घर घर में तोसक अम्मां लग रही,
रंडुए की फटीय गुदड़िया। चूड़ा तो मेरी०॥
घर घर में पलका[2] री अम्मां बिछ रहे,
रंडुए का टूटा झटोला[3]। चूड़ा तो मेरी०॥

---

१. प्राण, २. पलंग, ३. ढीली टूटी पुरानी चारपाई।

घर घर में गोरी अम्मां सो रही,
रंडुए कै घर है अंधेर। चूड़ा तो मेरी०॥
घर घर में बालक अम्मां रो रहे,
रंडुए कै पिल्ले चिल्लाएं। चूड़ा तो मेरी०॥
चढ़ क कोठे पै राजा रोइया,
अरे लोगो कोई मत मानो मां की सीख,
अम्मां ने तो घर खो दिया। चूड़ा तो मेरी०॥

स्त्री मनिहार से चूड़ा मांगती है। वह लाल, पीले, हरे, नीले, सफेद आदि विभिन्न रंगों की चूड़ियां दिखाकर कहता है—इन्हें पहन लो! स्त्री कहती है—इन रंगों की वस्तुएँ तो मेरे पति के पास हैं। मैं तो हाथी दांत का ही चूड़ा पहनूँगी। इस वार्तालाप में कुछ देर हो गई।

सास को बहू पर सन्देह हुआ, उसने अपने पति से कहा कि तुम्हारी पुत्र-वधू तो बड़ी चाल-बाज़ है। उसने मनिहार से प्रेम कर लिया है। ससुर ने भी कुछ जांच की आवश्यकता न समझी और अपने पुत्र से वधू की बुराई की। पुत्र को इतना धैर्य कहां? होता भी तो कैसे? उसने झट से कटारी खेंच ली और अपनी पत्नी को मार डाला।

झूठे सन्देह-वश पति ने पत्नी की हत्या कर दी। किन्तु उसकी मृत्यु पर उसका विलाप कितना मर्म-स्पर्शी हो उठा है। 'विधवा' शब्द में जितना परिताप छिपा है, उतना ही 'रंडुए' शब्द में भी है। स्त्री के बिना गृह की क्या शोभा? विद्वान रस्किन ने अपनी एक पुस्तक में लिखा है—"गृह को सुखमय बनाने के लिए हमें सुसज्जित भवनों की आवश्यकता नहीं। जहां स्त्री है, वहीं घर है—चाहे उसके सिर पर सुविस्तीर्ण गगन और पैरों तले नव दूर्वादल के अतिरिक्त और कुछ भी न हो।"

(१६)

चार चौमासे बारहमासे हम पै रहा ना जाय।
कहियो हमारे बाबा जी से लेंगे बुलाय।
बाबाजी ने भेजी हैं मोहर पचास,
कहियो हमारी पोतीजी से खरचै बारह मास। चार० ॥
कहियो हमारी दादीजी से लेंगी बुलाय,
दादीजी ने भेजी हैं तीयल पचास,
कहियो हमारी पोती जी से पहरै बारह मास। चार० ॥

कहियो हमारे बाबल जी से लेंगे बुलाय,
बाबल जी ने भेजे हैं हीरे माणिक पचास,
कहियो हमारी बेटी जी से बरतै बारह मास। चार० ॥
कहियो हमारी अम्माजी से लेंगी बुलाय,
अम्माजी तो सुनते ही हुई हैं उदास,
बहुत रुपये देकै भैया जी को भेजा है पास। चार० ॥
कहियो मेरे भैया जी से लेंगे बुलाय,
भैया ने भेजे हैं मोती पचास,
कहियो मेरी जीजी से वह खरचै बारह मास। चार० ॥
कहियो हमारी भाभी जी लेंगी बुलाय,
भाभी जी नें भेजी है विष की गांठ,
कहियो हमारी नन्दल जी से खाय मर जाय। चार० ॥

बेचारी कन्या श्रावण को देखकर पितृगृह में जाने को आतुर हो उठी है। परन्तु सब केवल उपहार भर भेज कर चुप रह जाते है। मां भैया को भेज देती है। और भाभी तो इतनी रुष्ट है कि उसने तो विष की गांठ ही भेज दी कि आने का प्रश्न ही न रह जाये।

यह उन दिनों का गीत है जिन दिनों रेल मोटर आदि न थीं। बेचारी बालिका-वधुओं का मन अपने पितृगृह की मधुर स्मृति में तरस-तरस कर रह जाता था। माता-पिता के लिये भी बुलाना कठिन था, क्योंकि बुलाने में खर्च करना पड़ता था। इसके अतिरिक्त कठिन वन के दुर्गम मार्गों में डाकुओं आदि का भय बना रहता था।

(१७)

बाग में पपीहा बोलै,
मैं जानूं मेरा भैया बोले।
कौनसा भैया बोलें है,
मेरा—[1] भैया बोले है।
क्या क्या सोहा[2] लाया है,
आपका घोड़ा बाप का जोड़ा
मां की तीयल लाया है।

---

१. यहां भाई का नाम लिया जाता है, २. प्रेमभरी भेंट।

बड़ी बहन की पायल लाया,
छोटी बहन की चुंदरी भूल आया री।
सौ सौ नाम धरावं है,
हट कै[1] घोड़ा दौड़ाया है।

भाई विवाह करने गया हुआ है। पपीहा का शब्द सुना तो बहन को अपने भैया की स्मृति आ गई। उसी समय ससुराल से अनेकों उपहार लेकर भैया आ गया। वह अपने लिये घोड़ा, पिता तथा माता के लिये वस्त्रों के जोड़े तथा बड़ी बहन के लिये पायल लाया, किन्तु छोटी बहन की चुंदड़ी भूल आया। सबने उस पर व्यंग कसे। उसे अपनी छोटी बहिन से बड़ा स्नेह था, इस लिए वह तुरन्त दोबारा घोड़े पर चढ़कर अपनी छोटी बहिन के लिये उपहार लेने चल दिया।

(१८)

कुएं के औरे-धौरे काली कोयल बोलै लाल।
बोलै बुलावै रानी शबद सुनावै लाल। कूएं०॥
क्यों रे—[2] भैया नींदड़िया क्यों आवै लाल।
तेरी, तेरी मां की जाई दूर बसै परदेसी लाल।
कहां के चिड़ी-चौंगले, कहां के बनजारे लाल।
अगम के चिड़ी-चौंगले, पचछम के बनजारे लाल।
जाए मिलूंगा जीजी—[3] के चौबारे लाल।
सोती थी रंगमहल में शालू चद्दर ओढ़े लाल।
उट्ठी थी वीर मिलन को टूटा गल का हार लाल।
टूटा तो टूट जान दे, बीरन से कब मिलूं लाल।
थाली में आम्बू नींबू, दातुन करती पाई लाल।
थाली में सात सुहाली, भोजन करती पाई लाल।
थाली में कंघी डोर, सीस गुंथवाती पाई लाल।
हाथों में हरी-हरी चूड़ियां, पैरों पड़ती पाई लाल।
पैरों में अनवट बिछवे, छमछम करती पाई लाल।
कूएं के औरे-धौरे०॥

नोट :—जितने भाई हों, प्रत्येक का नाम लेकर ये सारी पंक्तियां दोहराई जाती हैं।

---

१. दोबारा, २. भाई का नाम लिया जाता है, ३. बहिन का नाम लिया जाता है।

(१९)

उठ उठ बीबी तावली[1] तेरे बीर खड़े दरबार जी।
कैसे उट्ठूं तावली मेरे बिछुओं की झंकार जी।
बिछुओं ऊपर धरा नगीना, चुन्नी ठप्पेदारजी।
चल चल बीबी तावली तेरी भाभी हेरैं बाट जी।
चल चल जीजी तावली तेरी अम्मा हेरैं बाट जी।
उठ भैय्या जीजा से पूछ ले मैं हेरूं कब की बाट जी।
भैया रे बाग पपीहा बोला मैं जानूं वीरा तू ही बोला।
आ गई हरियाली तीज जी, रुत सावन की।
अरे बीरा तू आया रे मेरा घर आंगन भर उट्ठा जी।

(२०)

गीले गीले जौ का पीसना री।
नीका पीसूं उड़ उड़ जाय, मोटा पीसूं कोई ना खाय।
चौमासा सावण आ गया री।
अरी मेरी मां री,
इतना आटा मैं पीसा री, जितना नदियों रेत,
री चौमासा सावण आ गया री।
अरी मेरी मां री,
इतनी रोटी मैं पोई री, जितने पीपल पात री।
चौमासा सावण आ गया री।
अरी मेरी मां री,
इतने चावल मैं कुट्टे री, जितने समुन्दर मोतियां,
चैमासा सावण आ गया री।
अरी मेरी मां री,
रोटी रोटी बंटा ली री, रह गई रोटी एक री।
चैमासा सावण आ गया री।
अरी मेरी मां री,
छोटा देवर लाडला री, वह भी ले गया खोस[2] री,
चैमासा सावण आ गया री।

---

१. जल्दी, २. छीनकर।

अरी मेरी मां री,
कलछी कलछी चावल बँटा लिये री, रह गये कलछी एक री,
चैमासा सावण आ गया री ।
अरी मेरी मां री,
छोटी नन्दल लाडली री, वह भी ले गई खोस री,
चैमासा सावण आ गया री ।।

कन्या मां से ससुराल का हाल कह रही है। उस बेचारी की दशा कैसी दयनीय है। नदियों के रेत के समान अतोल आटा पीस कर और पीपल के पत्तों के समान अगणित रोटियां बनाकर भी वह अपने खाने के लिये एक भी रोटी न पा सकी। समुद्र के मोतियों के समान अगणित चावल कूट कर भी उसे खाने के लिये एक कलछी भर चावल भी न मिले। वह भूखी ही रही। ससुराल वालों ने बहू की ओर इतना भी ध्यान देने की आवश्यकता न समझी कि खाना भी खाती है कि नहीं। सावन की रिमझिम में जब किशोरियां अपने कोमल कण्ठ से इस गीत को अलापती हैं, तो बड़ा ही अच्छा लगता है। इस गीत की लय बड़ी ही प्रभावोत्पादक है।

(२१)

गोपीचंद के पांच बहुरिया, पांचों ही पनियां कूँ जायं हो राम ।
जब रे नवलदे नै गागर फांसी, बाएं बोला है काग हो राम ।।
क्या रे कागा मेरी गागर फूटै, क्या मेरे जिवड़े का जान हो राम ।
ना री नवलदे तेरी गागर फूटै, ना तेरे जिवड़े का जान हो राम ।।
थारे तो घर में कन्या जो कहिये, उसकी लेंगे सगाई हो राम ।
जब रे नवलदे गागर उतारी, बाएँ बोला काग हो राम ।।
ज्यों ही नवलदे देखन लागी, बाहर खड़े मुगलान हो राम ।
क्या रे मुगल के तुम लड़ोगे, क्या रे चढ़ोगे चढ़ाई हो राम ।।
ना री नवलदे हम लड़ें लड़ाई, ना री चढ़ेंगे चढ़ाई हो राम ।
थारे तो घर में कन्या जो कहिये, उसकी लेंगे सगाई हो राम ।।
क्या री बेटी तुम राज रजोगी, और बनो मुगलानी हो राम ।
ना रे बाबा हम राज रजेंगी, ना रे बनें मुगलानी हो राम ।।

गहरा सा झंझर[1] खुदा मेरे बाबा, उसमें ठीक समाइयाँ हो राम।
हाथी समाय बेटी घोड़ा समा जाय, बेटी नायं समाए हो राम ॥
आले गीले चन्दन कटाओ, मेरे बाबा, उनमें ठीक जलाइयो हो राम॥

इस गीत में मुगल-कालीन विशृंखलता का चित्र अंकित है। हिन्दू नारी का सतीत्व उस समय कैसे संकट में पड़ा हुआ था, यह इस गीत में सुन्दरता से वर्णित है। मुसलमान आकर नवल देवी से कहते हैं, "अपनी प्यारी ननद हमें दे दो।" सब शोक से व्याकुल हो गए। मुगलों से लड़ने का किसी में भी साहस न था। कन्या के पिता उससे पूछते हैं—"प्यारी बेटी, क्या तुम मुसलमान से विवाह करके रानी बनोगी ?" कैसी दारुण वेदना है ? किन्तु धर्म-परायणा हिन्दू बाला उत्तर देती है—"हे पिता, मुझे राज्य की आवश्यकता नहीं है। मैं मुसलमान से विवाह नहीं करूंगी। गहरा-सा गड्ढा खुदवा दो और मुझे उसमें गाड़ देना।" पिता विह्वल हो उठते हैं। हाय ! जिस बेटी को रक्त से सींच-सींचकर पाला, उसे जीवितावस्था में कैसे जमीन में गाड़ दें। वे व्यथित हृदय से कहते हैं— "मेरी लाड़ली बेटी ! गड्ढे में हाथी भी समा सकते हैं और घोड़े भी गाड़े जा सकते हैं। हाय ! पर अपनी लाड़ली बिटिया को कैसे गाड़ दूं ?"

साहसी कन्या फिर कहती है—"हे पिता ! चन्दन की शाखाएँ कटा कर इकट्ठी करो। मेरे प्यारे पिता ! मैं उसी में जल कर भस्म हो जाऊँगी।"

हिन्दू नारी ने सदैव ही सतीत्व को प्राणों से बढ़कर माना है। अपना आत्म-सम्मान और पितृ-कुल की लज्जा को रखने के लिये न जाने कितनी कृष्णा-कुमारियों ने अपने प्राण उत्सर्ग किये हैं।

(२२)

मेरी मेंहदी के चौड़े चौड़े पात, री बीबी वारी वारी जाऊं।
मैं तो पीसूंगी चकले के पाट, री बीबी वारी वारी जाऊं।
मैं तो घोलूंगी हिरनी के दूध, री बीबी वारी वारी जाऊँ।
मैं तो छानूंगी पगिया के पेच, री बीबी वारी वारी जाऊं ॥
मैं तो लाऊंगी भय्या के हाथ, री बीबी वारी वारी जाऊं।
वे तो लाय चले सुसराल, री बीबी वारी वारी जाऊं॥
उन की सालियां पूछें बात, री बीबी वारी वारी जाऊं।
जीजा किन्नै रचाये थारे हाथ, री बीबी वारी वारी जाऊं॥
म्हारी बहनड़ रचाये म्हारे हाथ, री बीबी वारी वारी जाऊँ॥

---

१. गहरा गड्ढा।

इस गीत में बालिका के अपने प्यारे भैया के लिए उद्गार वर्णित हैं। बहन कल्पना कर रही है कि मैं मेंहदी को हिरनी के दूध में घोल कर जब अपने भैया के हाथों पर लगाऊंगी, तो कैसे सुन्दर हाथ लगेंगे। मेरा भैया उस मेंहदी को रचाकर सुसराल जायेगा तो उसकी सालियां पूछेंगी—"जीजा जी, ऐसे सुन्दर हाथ किसने रचाये हैं?" तब भैया कहेगा, "मेरी बहन ने मेरे हाथ रचाये हैं।" अहा! तब कैसा आनन्द आयेगा? इसी कल्पना में निमग्न होकर वह फूली नहीं समाती।

(२३)

आमों की ठंडी छांह री, आमों के नीचे क्यों खड़ी।
क्या मां जाये हैं तेरे दूर, कै तेरे घर सास बुरी॥
चुपचाप चला जा रे काग, तुझे मेरी क्या पड़ी?
ना मेरे मां के जाये दूर, ना मेरी सास बुरी॥
उड़ जा रे काले काग, बुरे, तेरी चोंच बुरी।
पिया गये परदेस, मैं शकुन बिचारती॥
जमुना के परले पार बसें दो गूजरी।
कोरी कोरी गगरी री जान, मैं उसमें दही जमावती॥ पिया०

यहाँ कौवे के रूप में अन्योक्ति है। आमों की शीतल छाया में खड़ी हुई स्त्री अपने पति की प्रतीक्षा कर रही है। किसी कौवे को उसे इस प्रकार खड़े देखकर सन्देह हुआ कि शायद वह पिता के घर जाने को उत्सुक है, या उसकी सास का उसके प्रति प्रेममय व्यवहार नहीं है। उसने यही बात स्त्री से पूछी। स्त्री ने क्रोध से उत्तर दिया—"हे काग! जाओ। जाओ, तुम्हें मेरी चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। मेरे पति परदेश गए हैं, मैं उनकी प्रतीक्षा कर रही हूँ। न मेरी सास बुरी है, न नैहर दूर है। आज मेरे प्रियतम आयेंगे। मैं उनके लिए यमुना पार से दो गगरी लाकर दही जमाऊँगी।"

(२४)

सुन सुन जी मेरे दलपत जेठ, थारे भैया जी ने छाया परदेस,
गोरी को छोड़ बणिज चले।
कहो तो म्हारी बहू हम उठं[1] जांय, कहो तो भेजें दो चिठियां लिखवाय।
भेजो तो भेजो घर का मीसरा,
ना पावें पड़ि हाठ बाजार, ना पावें पनवाड़ी दुकान।

---

१. वहाँ।

जा पाये माली बाग में,
आओ पंडित जी लागूं थारै पांय।
क्या रे कुसल मेरे माई अर बाप, क्या रे कुसल म्हारा सब परिवार,
क्या री कुसल बाली कामिनी।
क्या कुछ खावें मेरे माई अर बाप, क्या कुछ खावै म्हारा सब परिवार,
क्या रे खावै बाली कामिनी।
लड्डू तो पेड़ें थारे माई अर बाप, गेहूँ और चना थारा सब परिवार,
छाणस की टिकिया बाली कामिनी।
क्या कुछ पहरैं मेरे माई अर बाप, क्या कुछ पहरै म्हारा सब परिवार,
क्या रे पहरै बाली कामिनी।
साल दुसाले थारे माई अर बाप, नैनू और लट्ठा थारा सब परिवार,
फटे से वस्तर बाली कामिनी।
कहाँ जी सोवें मेरे माई अर बाप, कहां जी सोवै मेरा सब परिवार,
कहां जी सोवै बाली कामिनी।
तख्तों गलीचों थारे माई अर बाप, पलंग और मंजे थारा सब परिवार,
टूटी सी मंजड़ी[1] बाली कामिनी।
काहे में रहैं म्हारे माई अर बाप, काहे में रहै म्हारा सब परिवार,
काहे में रहे बाली कामिनी।
महलों में रहे थारे माई अर बाप, कमरों में रहै थारा सब परिवार,
फूटी सी झूंपड़ी बाली कामिनी।
अन्न नहीं खाती पिवै जल नीर, फाटे से वस्तर पुराना सा चीर,
बहुत दुखी बाली कामिनी।
दस रुपये मेरे माई अर बाप, पांच रुपये म्हारा सब परिवार,
हस्ती लदाऊँ बाली कामिनी।
अब तो खाओ पीयो जल नीर, खोलो बुगचा ओढ़ो दखणी चीर,
म्हारा आवण है नाहीं।

ब्राह्मण ने इसमें विरहिणी की दशा का कैसा करुणामय चित्रण किया है। बेचारी न उज्ज्वल वस्त्र धारण करती है, न शैया पर सोती है, टूटी-सी झोंपड़ी में रहती है, और छानस की रोटी खाती है। सो भी कभी-कभी। अधिकतर पानी पीकर ही रहती है। कैसी प्रेम-तपस्या है?

---

१. छोटी चारपाई।

(२५)

कातन तूम्बन बहनो मैं चली जी,
एजी कोई सुन आई नई बात,
सुनो मेरी सखियों में क्या करूँ जी ।।
कौन-सी को राजा मँढ़ा चढ़ेगा,
एजी कोई कब रे चढ़ेगी बरात । सुनो० ।।
एक अचम्भा बहनो मैं सुना जी,
एजी कोई कंत करावें दूजा ब्याह । सुनो० ।।
तीजी को गोरी मँढ़ा चढ़ेगा,
एजी कोई चौथ को चढ़ेगी बरात । सुनो० ।।
कौन तो कूटे तेरी जीरी जी राजा,
एजी कोई कौन दलै तेरी दाल । सुनो० ।।
कौन गायेगा राजा घोड़ियां[1] जी,
एजी कोई कौन चढ़ेगा बरात । सुनो० ।।
भावज तो कूटेंगी जीरी गोरी,
एजी कोई नायन दलेगी दाल । सुनो० ।।
बहनें तो गायें मेरी घोड़ियाँ,
एजी कोई भाई भतीजे बरात । सुनो० ।।
कोठे तो चढ़कै देख लो जी,
एजी कोई कैसी सजी है बरात । सुनो० ।।
अन्धे तो लूले बहनो डेढ़ सौ जी,
एजी कोई लंगड़ों का ओड़ न छोड़ । सुनो० ।।
सौकन आई मैं सुनी जी,
एजी कोई चढ़ गये हल हल[2] ताप । सुनो० ।।
सौकन उतारन मैं चली जी,
एजी कोई गज का घूँघट काढ़ । सुनो० ।।
सौकन देखन मैं चली जी,
एजी कोई खोटा रुपैया मेरे हाथ । सुनो० ।।
सौकन मर गई बहनो मैं सुनी जी,
एजी कोई मन तो हुआ है उदास । सुनो० ।।

---

१. लड़के के विवाह में गाये जाने वाले गीत, २. जोर का ज्वर ।

सौकन रोवन बहनो में चली जी,
एजी कोई गज का घूंघट काढ़। सुनो० ॥
घूंघट रोवै बहनो मन हँसै जी,
एजी कोई जिवड़ा[1] करै है कलोल। सुनो० ॥

सारे विश्व को खोकर नारी अपने प्रियतम में नये विश्व की रचना करती है। वह अपने समस्त उत्सर्ग का प्रतिकार चाहती है—केवल सच्चा प्यार। प्रेम-पराजिता रमणी का हृदय टूट जाता है। पुरुषों ने बहु-विवाह की प्रथा द्वारा स्त्री पर घोर अन्याय किया है। नारी हृदय ने इस अन्याय को समझा है, भले ही वह चुप रही हो। गीत की नायिका के पति ने दूसरा विवाह कर लिया है। वह विवाह की सब मंगल सामग्री और शुभ अवसरों की कल्पना करती है। अन्त में उसका हृदय रो उठता है। फिर भी उसे देखने की बलवती लालसा को वह न रोक सकी।

चाहे कितना ही कहा जाय कि प्रेम इच्छा और आशाओं से परे है, परन्तु साधारणतः देखने में तो यही आता है कि जिससे जितना अधिक प्यार होता है, उससे मनुष्य की उतनी ही अधिक आशायें होती हैं। सीता ने भी पंचवटी में जब श्रीराम के मुख से सुना था कि अश्वमेध यज्ञ के लिए मेरी भी एक सहधर्मिणी है, तो सीता भी व्याकुल हो उठी थीं। परन्तु "सीता की स्वर्णमयी मूर्ति है" यह सुनकर सीता ने कहा—"यथार्थ में आप स्वनाम-धन्य हैं, आर्यपुत्र !" फिर सीता तो रमणी-रत्न थीं। किसी साधारण स्त्री के हृदय से पूछिये, जिसे बहु-विवाह की भट्टी में जलना पड़ा हो।

(सीता जी वाल्मीकि आश्रम में थीं। रामचन्द्र जी को पञ्चवटी में देखकर वह परोक्ष रूप से उनके साथ-साथ घूम रही थीं।')

(२६)

बेटी मेरी साँचे हैं साँचे बोल
बारह बरस के बिछुड़े अब मिले।
उठ उठ री अम्मां गेहूँ ए पिसाय,
जमाई तो आये तेरे पाहुने।
उठ उठ री बीबी हँसी ए कराय,
जीजा तो आए तेरे पाहुने।

---

१. हृदय

उठ उठ री भाभी पलंग बिछाय,
नन्दोई आये तेरे पाहुने।
उठ रे कहार के डुलिया सजाय,
मरवण तो जायगी अपने सासरे[1]।
मिल ले री अम्मां कलेजे लगाय,
अबकी बिछड़ी मरवण कब मिलै।
मरवण री पहुँची कोस पचास,
डेरा तो दीन्हा चम्पे बाग में।
मरवण री तेरी काटूँगा नाड़[2],
बहुत दिना रही बाप कै।
राजा जी मेरी क्यों काटोगे नाड़,
कब लेने आये, कब फिर गये।
मरवण री सोई है चादर तान,
धरती के बासक[3] राजा डस गये।
ग्वालिया रे गाय परै को चराय,
सोती है मरवण औंध[4] के।
राजा जी तुम तो मूरख गँवार,
मरे आदमी कहीं जी सकैं।
राजा जी मुखड़ा उघाड़ के देख,
मुख पर जरदाई[5] छा रही।
मरवण जिस मुख चाबे हैं पान,
उन मुख चींटा-चींटी चढ़ रहीं।
मरवण तुमको रोवेगा कौन,
पीहर मरी ना सासरे।
राजा जी हमको रोवेंगी माय,
जिनके कलेजे में घाव हो गया।
राजा जी हमको रोवेंगे बीर[6],
जिनके माथे सूने हो गये।
राजा जी हम को रोवेंगे आप,
जिनकी सेजें सूनी हो गईं।

---

१. ससुराल, २. गर्दन, ३. सर्प, ४. गहरी नींद में, ५. पीलापन, ६. भाई।

मरवण कहो तो जोगी हो जाऊँ,
कहो तो डालूँ जंगल झौंपड़ी जी।
राजा जी जाइयो हमारी प्योसार[1],
हमसे छोटी बहन दूसरी।

यह गीत श्रावण में झूलते हुए मलार राग में गाया जाता है। इसकी टोन बड़ी ही करुण होती है। मरवण ससुराल जाती हुई माता-पिता आदि से आलिंगन करती है। न जाने कब फिर मिलने का सौभाग्य प्राप्त हो ? बारह वर्ष तक अहर्निश प्रतीक्षा करके मरवण ने अपने प्यारे को पाया, परन्तु उसके मुख से दो प्यार के शब्द न सुन सकी। अपितु वह उस पर रोष करने लगा—बारह वर्ष पिता के यहाँ रहना मानो जघन्य अपराध था ! परन्तु अकेले छोड़ कर जाना कुछ भी अन्याय न था।

मरवण सो गई और साँप ने उसे डस लिया। "ऐ ग्वालो! मरवण सो रही है, तुम दूर को गायें चराओ।" मरवण अभी कुछ होश में थी, वह कहने लगी—"प्यारे ! कहीं मृतक भी जीवित होते हैं ? तुम मेरा मुँह तो देखो, बिल्कुल पीला पड़ गया है।" "हाय प्रिये ! तुम इस बन के बीच अकेली चल बसी। यहाँ तुम्हारे लिए कौन दो बूँद आँसू गिरायेगा ?" "प्यारे ! मेरे लिए मेरी माँ रोयेगी, जिसके कलेजे में घाव हो गया है। मेरे लिए मेरे भैया रोयेंगे। बहन के बिना कौन प्यार की लालिमा से भरा हुआ तिलक उनके माथे पर लगायेगा, प्यारे ! मेरे लिए तुम रोओगे, मेरे बिना तुम्हारी शैया सूनी हो गई।"

सच्चा प्रेम कभी रोके नहीं रुकता। मरवण का पति कभी यह नहीं जानता था कि उसकी मरवण उसको यों छोड़कर चल देगी। "प्रिये ! मैं जंगल में झौंपड़ी डालकर संन्यासी बन जाऊँगा।" "प्यारे ! तुम क्यों संन्यासी बनते हो ? मेरे पिता के यहाँ जाना, मेरी छोटी बहन से विवाह कर लेना।" मरवण स्वयं मर रही है, परन्तु अपने प्राणाधार को व्यथित छोड़कर क्या वह सुख से मर सकेगी ? प्रेम का व्रत असि-धारा से भी कठिन है। वह अपनी दुलारी बहन को अपने प्यारे को सौंप रही है, क्योंकि वे दोनों एक ही डाली की दो कलिकाएँ हैं; एक ही सीप के दो मोती हैं; एक ही रक्त से बनी हैं; इसीलिये वह उसकी प्रतिमूर्ति है। कितना सच्चा प्रेम है ! सच्चे प्रेम में अपहरण नहीं होता।

---

१. पितृगृह।

इक-रंगी बिनु कारन ही, इक रस सदा समान ।
गनै प्रिय सर्वस्व जो, सोई प्रेम महान् ।।

(२७)

ननद-भावज पानी चली रे, मल-मल धोवैं री पांय ।
रगड़-रगड़ दातुन करें री, मुगला री बुरी बलाय ।
अब रुत आई बाली बीजना[1] रे, बीजने की बहार ।
लाल-लाल-तंबुआ तन रहे री, रेशम खिंच रही डोर ।
आवै तो फ़ौज पठान की, दे लयी तंबुओं के बीच । अब०
जांदे रे जांदे बटेवड़ा[2] रे, एक सन्देशा ले जाय ।
बाप म्हारे से यूँ कहो जी, थारी बेटी तंबुओं के बीच । अब०
जांदे रे जांदे बटेवड़ा रे, एक संदेशा ले जाय ।
म्हारे भैया से यूँ कहो जी, थारी बहना रे तंबुओं के बीच । अब०
जांदे रे जांदे बटेवड़ा रे, एक संदेशा ले जाय ।
म्हारे राजा से यूँ कहो, जी, थारी धन[3] तंबुओं के बीच । अब०
बाप हमारे हस्तों पर रे बीरा घोड़े असवार ।
राजा हमारे पालकी रे, चाबें नागर पान । अब०
ओ रे मुग़ल के छोकरे रे, कर मेरे हस्ती का मोल ।
मेरी सांवल बेटी छोड़ दे रे, करले अपना ब्याह । अब०
ओ रे मुग़ल के छोकरे रे, कर मेरे घुड़ले का मोल ।
मेरी चन्द्रावल बहना छोड़ दे रे, करले अपना ब्याह । अब०
ओ रे मुग़ल के छोकरे रे, कर मेरी पालकी का मोल ।
मेरी सांवल गोरी छोड़ दे रे, करले अपना ब्याह । अब०
ना चहिए तेरा हस्ती रे, ना चहिए लख चार ।
तेरी सांवल बेटी ना छुटै रे, ना करूँ अपना ब्याह । अब०
ना चहिए तेरी घोड़ली रे, ना चहिए लख चार ।
तेरी चन्द्रावल बहना ना छुटै रे, ना करूँ अपना ब्याह । अब०
ना चहिए तेरी पालकी रे, ना चहिए लख चार ।
तेरी सांवल गोरी ना छुटै रे, ना करूँ अपना ब्याह । अब०
बाप हमारे रो दिये रे, भैया खाई है पछाड़ ।
सैयां हमारे हंस दिये रे, ऐसी लाऊँ दो चार । अब०

---

१. पंखा, २. यात्री, ३. पत्नी ।

जाओ बाबल घर आपनें, राखूँगी पगिया[1] की लाज ।
रोटी ना खाऊँ तुरक की रे, बैठूँगी आसन मार ।। अब०
जाओ भैया घर आपने रे, राखूँगी कुल की लाज ।
पानी ना पीऊँ मैं तुरक का रे, बैठूँगी आसन मार । अब०
जाओ सैयां घर आपने जी, राखूँगी फेरों की लाज ।
सेज न सोऊँ तुरक की रे, बैठूँगी आसन मार । अब०
जाओ मुग़ल के छोकरे रे, जल भर गडुआ[2] तो लाय ।
प्यासी मरे चन्द्रावली रे, जाके भाई है न बाप । अब०
मुग़ल के ने पीछा फेरिया रे, दे लयी तम्बुओं में आग ।
ठाड़ी जलै चन्द्रावली रे, जाके भाई है न बाप । अब०
तोबा-तोबा मुग़ल करै रे, मुल्ला पढ़ें रे कुरान ।
देखी ही पर चाखी नहीं रे, कैसी हुई करतार । अब०
दाँत जलैं जैसे कौड़ियाँ रे, जीभ कमल का सा पात ।
हाड़ जलैं जैसे लाकड़ी रे, केश जलैं जैसे दाभ । अब०
ठाड़ी जलै चन्द्रावली रे, जैसे पूनों का चाँद । अब० ।।

इस गीत में एक ऐतिहासिक घटना का वर्णन है । चन्द्रावली के बहुत से गीत उत्तरी भारत में प्रचलित हैं । चन्द्रावली आन पर प्राण देने वाली थी । स्त्री पर दो कुलों की लज्जा का भार है । चन्द्रावली का चरित्र समुज्ज्वल नक्षत्र के समान विमल, सुरसरी के समान पवित्र और श्वेत वस्त्र की नाईं कालिमा-रहित है । जब हम इन गीतों को सुनते हैं, पग-पग पर अतीत के गौरव से हमारा हृदय भर उठता है । चन्द्रावली ने किस आत्म-विश्वास के साथ सब को यह विश्वास दिलाया है कि वह कुल की लज्जा पर आँच न आने देगी । चन्द्रावली की चतुरता क्या वीरांगना पद्मिनी से कम कही जा सकती है ? वियोगी हरि ने ठीक ही लिखा है—

"रमि हैं सिंह किसोर ही, सिंह किसोरी संग ।"

डेरों के बीच में अग्नि धाँय-धाँय करके प्रज्वलित हो रही है । चन्द्रावली जो बिल्कुल निस्सहाय है, जल रही है । उसके दाँत कौड़ियों के समान, जीभ कमल-पत्र के समान, हड्डियाँ लकड़ी की भाँति और बाल दूब के सदृश जल रहे हैं । अनाथ चन्द्रावली जल रही है ।

इन पंक्तियों को पढ़कर हृदय उमड़ने लगता है । यहाँ पर पति की कायरता

---

१. पगड़ी, २. लोटा ।

खटकती है। चन्द्रावली का बार-बार यह कहना "जाके भाई है न बाप" हृदय पर कठोर आघात करता है।

(२८)

तीजन चर्चा एरी चन्दना चल रही जी,
एजी कोई पड़ा है शहर में शोर,
सिर बदनामी चन्दना ने क्यों लई री।
राजा से रानी एरी चंदना यूँ कहै जी,
एजी कोई सुन राजा मेरी बात,
चिट्ठियां तो डालो चंदना के सासरे जी।
धौले[1] पै काला राजा जी ने लिख दिया जी,
एजी कोई दियो है साँड़ियो[2] के हाथ,
दीप उगायो चंदना के सासरे जी।
चिट्ठियां तो ले कै साँडिया चल दिया जी,
एजी जाको चलत न लागी बार,
चांद उगाया चंदना के सासरे जी।
भरी कचहरी राजा बिसालू बैठिया जी,
एजी कोई लाग रहा दरबार,
चिट्ठियां तो दीनी राजा जी के हाथ में जी।
देख के चिट्ठियां राजा जी हँस पड़े जी,
एजी कोई बांचत भए दिलगीर[3],
तड़के तो जाओ बेटा अपने सासरे जी।
पांचों तो लाओ अम्मा मेरे कापड़े जी,
एजी कोई पांचों तो लाओ हथियार,
तड़के तो जाएँगे अम्मा मेरी सासरे जी।
कै बेटा तेरी सास बुलाइयाँ जी,
एजी कोई क्या साले का ब्याह,
किस गुन जाओगे बेटा मेरे सासरे जी।
ना अम्मा मेरी सास बुलाइयां जी,
एजी कोई ना साले का ब्याह,

---

१. सफेद (कागज), २. साँडनी-सवार, जो प्राचीन काल में डाक ले जाते थे, ३. दुखी।

चंदना तो जाए जी शमला सुनार कै जी।
दही बिगाड़ी अम्मां मेरी काग ने जी,
एजी कोई चंदना तो शमला कैजाय,
इस गुन जाएँगे अम्मा मेरी सासरे जी।
सारी तो सारी बेटा मेरे मत कहो जी,
एजी कोई पर्दा तो लीजो राख,
चंदना ले घर आइयो आपने जी।
आधी सी रात कंवर जी चल दिये जी,
एजी कोई धर घोड़े पर ज़ीन,
दीप उगायो चंदना के बाप कै जी।
चन्दन चौकी जमाई राजा बैठियो जी,
एजी कोई दूध पखारूँ पाँव,
आज घर आए जमाई लाला पाहुने जी।
चावल राँधूँ जमाई लाला ऊजले जी,
एजी कोई हरीए मूँगाँ धोई दाल,
आज घर आए जमाई लाला पाहुने जी।
माँडे[1] तो झोलूँ[2] जमाई लाला रबरबे[3] जी,
एजी कोई तीसम तीस बत्तीस[4],
आज घर आए जमाई लाला पाहुने जी।
दही जमाऊं जमाई लाला भैंस की जी,
एजी कोई सेर पुड़ा भर खाँड,
आज घर आए जमाई लाला पाहुने जी।
गड़वा तो काढूँ जमाई लाला मोम का जी,
एजी कोई गढ़ मथुरा का थाल,
आज घर आए जमाई लाला पाहुने जी।
बीजापुर का जमाई लाला बीजना[5] जी,
एजी कोई झमक परोसूंगी थाल,
आज घर आए जमाई लाला पाहुने जी।

---

१. फुलके, २. पकाऊँ, ३. पतले-पतले, ४. थोड़े से आटे के ही तीस-बत्तीस फुलके बना दिये, ५. पंखा।

चावल थारे अम्मां मेरी कचकचे जी,
एजी कोई दाल में आवे गंदी बांस,
हमको पुआ दो अम्मां मेरी पूरियां जी।
जीमे तो जूठे जमाई लाला रसभरे जी,
एजी कोई पौढ़न[1] ठौर बताओ,
आज घर आए जमाई लाला पाहुनें जी।
ऊंची अटारी जमाई लाला ईंट की जी,
एजी कोई दिवले बलें सौ साठ,
नौरंग पलका[2] जमाई लाला बिछ रहा जी।
चढ़ते तो दुखै अम्मां मेरी पींडली जी,
एजी को चढ़ कै उतरा ना जाए,
डाल खटोला अंगना में पड़ रहे जी
आधी-सी रात में चन्दना चल दई जी,
एजी कोई कर सोलह सिंगार,
जाय जगाया शमला सुनार को जी।
चौबारे से चन्दना की भावज ऊतरी जी,
एजी कोई सुन नन्दोई मेरी बात,
चन्दना तो गई है शमला सुनार कै जी।
पाँचों तो रंग लो जमाई लाला कापड़े जी,
एजी कोई भर जोगी का भेस,
अलख जगाइयो शमला सुनार कै जी।
मोती मरासे चन्दना ने ले लिये जी,
एजी कोई ले जोगी के लाल,
खैर मनाओ शमला सुनार की जी।
मोती मरासे एरी चन्दना घर घने जी,
एजी कोई हमको तो देओ नौलख हार,
खैर मनाऊं शमला सुनार की जी।
हार उतार के चन्दना ने दे दिया जी,
एजी कोई ले जोगी के लाल,

---

१. सोने के लिये स्थान, २. पलंग

खैर मनाओ शमला सुनार की जी।
हार तो लेकर जोगी का चल दिया जी,
एजी कोई पहुँचा है महलों के बीच,
खैर मनाऊँ शमला सुनार की जी।
मिलना होय तो अम्मा मेरी मिल लेओ जी।
एजी कोई मिल लेओ हिवड़ा हिलोर,
अब की तो बिछड़ी चन्दना कब मिलै जी।
मिलना हो तो भाभी मेरी मिल लेओ जी,
एजी कोई मिल लेओ बहियाँ पसार,
अब की तो बिछड़ी चन्दना ना मिलै जी।
वहाँ से तो चन्दना सासरे चल पड़ जी,
एजी कोई पहुँची बागों के बीच,
झाड़ बिछाया राजा जी ने साँथरा[1] जी।
क्या कुछ दीना माई और बाप ने जी,
एजी कोई क्या दिया माई जाए बीर
क्या कुछ दीना शमला सुनार ने जी।
सब कुछ दीना माई और बाप ने जी,
एजी कोई सब कुछ माई-जाए बीर,
हम क्या जाने शमला सुनार को जी"।
हार काढ़ के राजा जी ने दे दिया जी,
"एजी कोई ले जोगी के लाल,
खैर मनाओ शमला सुनार की जी।
पहली कटारी राजा जी ने मारियां जी,
एजी कोई ले लई घूँघटे की ओट,
"खैर मनाओ शमला सुनार की जी"।
दूजी कटारी राजा जी ने मारियां जी,
एजी कोई ले लई नैनों की ओट,
"खैर मनाओ शमला सुनार की जी"।
तीजी कटारी राजा जी ने मारियां जी,
एजी कोई ले लई छतियों की ओट,

१. चबूतरे पर।

"खैर मनाश्रो शमला सुनार की जी" ।
चौथी कटारी राजा जी ने मारियां जी,
एजी कोई ले लई करवट की श्रोट,
"खैर मनाश्रो शमला सुनार की जी" ।
पंचवीं कटारी राजा जी ने मारियां जी,
एजी कोई ले लई बहियां की श्रोट,
"खैर मनाश्रो शमला सुनार की जी"
छठी कटारी राजा जी ने मारियां जी,
एजी कोई ले लई पेडू की श्रोट,
"खैर मनाश्रो शमला सुनार की जी" ।
सतवीं कटारी राजा जी ने मारियां जी,
एजी कोई सातवीं पै तजे हैं पिरान[1],
खैर मनाई शमला सुनार की जी ।

---

१. प्राण ।

बारहमासे

(२६)

असाढ़ मास घनघोरै बिजली मत चमकै चमकोरे ।
प्रीतम ना हैं मोरे धोरै[1], मैं तो मर जाऊं दहसत खायकै ।।
मेरे स्याम कन्हैया प्यारे, हो गए पटरानी से न्यारे ।
जाकर घर पर काज संवारे, सौकन सोवै गले लगायकै ।।
और बैरन मुस्किल रैन कटै है, तन में दूनी आग उठै है ।
नाहक सूना माल लुटै है, इस को रक्खूं कहां संगवायकै ।।
सुनो सुनो बख्श कहै राधा प्यारी पी बिन भटकै,
सौकन कुबजा हिरदै खटकै ।
कान्हा सखियों को रिझावै, मेरी सुध ना लीनी आय कै ।
कहै जसोदा मैया, तुझ से प्यारा मुझे कन्हैया ।
जिसकी लेती रोज बलैया, नित उठ कच्चे दूध पिलावती ।।
मेरा इकलौती का लाला, मैंने बड़े दुखों से पाला ।
मेरा है वो चन्द्र उजाला, जिसको गोदी रोज खिलावती ।।
और रक्खा प्राणों से भी प्यारा, उसको मन से नहीं बिसारा ।।
अब वो हो गया मुझ से न्यारा मेरी कछु ना पार बसावती ।
सोच करै मत ज्यादा, तन में हो जायगी कुछ बाधा ।
कहती सुन तू प्यारी राधा, मन में काहे को घबरावती ।।
सावन सारा कूकें कोयल, रातों मारै हूकें ।
इक पल भर को ना चूकै, सोती चौंक पड़ी घबरा कै ।।
पी पी पी पी करै पपीहा, जोबन जारे देय धमैया ।
मेरे घर ना हैं पिया कन्हैया, मद की घटा उठी लहराय कै ।।
और कामिनी सब करके सिंगार, जाती तीज झूलने बार बार ।
मेरा जीवन है धिक्कार, किस पै रक्खूं मन समझाय कै ।।
लागा सावन यो मनभावन, ए बहू रंग ले सूआ दामन ।
टंगवा सांचे मोती लामन[2], कामिनी सब सिंगार बनावती ।।
जिनके प्रीतम हैं परदेस, वे रखती नहीं मैला भेस ।
दिल में रखती नहीं कलेस, अच्छे राग रसीले गावती ।।

---

१. समीप, २. नीचे की ओर ।

मन में रहसी फूली रहना, ऐ बहु ! पहर जड़ाऊ गहना ।
ऐ बहु ! मानो मेरा कहना, क्यों नहीं मेंहदी हाथ रचावती ।।
सावन बरषा कर रही जोर, बन में बोल रहे हैं मोर ।
अबहुं ना आये कुंवर कन्हैया, उनको लावै कौन मनाय कै ।।
कल-कल कर रहे नद्दी नाले, कैसे उतरें उतरन वाले ।
बैरन कुबजा ने घर घाले, हरि को रक्खा कहां बिलमाय कै[1] ।।
बैरन सुख रहो रैन अंधेरी, सूनी सेज पड़ी है मोरी ।
मुझको बिरह ज्वाल ने घेरी, त्यागन करि गए नेह लगायकै ।।
भादों उदास न होत राधे ! हारी बात न मुझसे कहिये ।
तुझको जो कुछ न्यामत चहिए, सो ही मैं अब मोल मंगावती ।।
कभी नहीं तरसाई, मैंनें सुत से ज्यादा चाही ।
जब से इस कुल में तू आई, अच्छो भोजन रोज़ जिमांवती ।।
तेरी सुध लेंगे गिरधारी, आवे मोहन गिरवर धारी ।
तैंने यूं क्या हिम्मत हारी, क्यूँ तू रो रो नैन बहावती ।।
लागा चौथा मास आसौज, मुझ पै चढ़ी बिरह की फौज ।
प्रीतम करते घर घर मौज, मुझको यों तरसाया ब्याह कराय कै ।।
जो मैं बाबल के घर होती, तो क्यों रो रो नैना खोती ।
सुख की नींद छमाछम सोती, चित्त सो जाती पैर फैलाय कै ।।
मेरी दिन दिन फुंक रही छाती, लिखकर भेजूंगी इक पाती ।
सौकन मुझे मौत ना आती, कर ले ऐश मौज मन भाइ कै ।।
अब लगा आसौज महीना, तुझको खोटी बात कही ना ।।
भूखी नंगी कभी रही ना, क्यों तू नाहक लोग हँसावती ।
ए बहू पिहर पिहर क्या करती, बतला यहां दुःख क्या भरती ।
बहु ! ससुराल बिना ना सरता[2], दुनियां सौ सौ ऐब लगावती ।
तेरे कमी नहीं है धन की, अरी तू रानी है अपने मन की ।।
बातें छोड़ो बालेपन की, रानी कान्हा की कहलावती ।।
लागा कातिक मास कठोर, जाड़ा आया करके जोर ।
पी की लगी जोर से डोर, रीझे फूहड़ पै लुभाइ कै ।।
मुझको दिया दुहाग, ऐसे ओछे मेरे भाग ।
बैठी दिनों उड़ाऊं काग, यूँ ही खोया जनम गंवाइ कै ।।

---

१. प्रेम के भ्रम में फंसाकर, २. निर्वाह होना ।

जिनके घर हैं प्रीतम आली, वो ही पूजेंगी दीवाली ।
होगी घर-घर में खुशियाली, कामिनी गावें गीत रिझाय कै ।।
लागा कातिक सरदी रमकी, आसा छोड़ो ना तुम मन की ।
कुबड़ी होगी जालिम, जिसने मोरा कान्ह लिया भरमाय कै ।
उसको बुरा कहैं सब आलम, वो तो है बालम या जालम ।
जल रही बिरह आग में गोरी, वो तो चल दिए आग लगाय कै ।।
वह तो करी हुई कहलावै, तेरे ओहदे को ना आवै ।
रानी समझे ना समझावै, मन मैं क्यूं दिलगीरी ल्यावती ।।
अब लागा मंगसिर का महीना, हरि ने घर से मोह न कीन्हा ।
मुझको यह क्या दुःख दे दीन्हा, जोगिन हूंगी भस्म रमाय कै ।।
देखी बाट भतेरी, पिव नै और नार जो घेरी ।
कैसे उमर कटेगी मेरी, किससे विथा कहूं समझाय कै ।।
बैठी दिनों झुरूं मैं मन में, बाकी ना है मेरे तन में ।
ए फिर आग लगो इस घर में, बोलो मत घबराय कै ।।
कहै यशुमति सुन राधा, मन में काहे को घबरावती ।
चलती हवा अगहन में रस की, जग में जिंदगानी दिन दस की ।
पै कछु बात न मेरे बस की, नातर जल्दी उसे बुलावती ।।
अरि तू मत कर भगवां बाना, दुनियां मारेगी सब ताना ।
टुकड़ा खाना है बिराना, घर घर फिरोगी अलख जगावती ।।
तेरे बांके ठाट अमीरी, तू किस कारण लेत फकीरी ।
रख तो चार टुक तू धीरी, क्यों परिवार को नार लजावती ।।
सोच करै मत ज्यादा, तन में हो जायगी कुछ बाधा ।
कहै यशोदा सुन राधा, मन में काहै को घबरावती ।।
कैसे धरूं पूस में धीर, जाड़ा पड़ता गहिर गंभीर ।
मेरा व्याकुल हुआ शरीर, क्या कुछ कीजें जतन बनाय कै ।।
कन्त गए परदेश, जोबन रहता नहीं हमेश ।
सारे विरूपा पड़ गए केश, प्रभु जी रहे द्वारिका छाय कै ।।
और संदेशा भेजा, कोई जिगरी चाहे ऐसा ।
सखियों खोटा अपना पैसा, मन देखा परखाइ कै ।।
लागा पूस महीना खासा, रख तो मन में धीर दिलासा ।
ब्रज में हरि का नित्य निवासा, जिनको नर नारी सब ध्यावती ।।

एक लाख हा ग्वालन, चिर जिनकी हरि करते प्रतिपालन।
तू लगा खोटा बचन निकालन, मेरे लाल को बुरा बतावती ॥
राज बिरखभान की प्यारी, रानी राधे राज दुलारी।
तैंनें यों क्या हिम्मत हारी, तुझ को सब तरियों समझावती।
लागा री सखी माघ मास, दूती कर दें घर का नास ।
लेवें पुरुष पराया फाँस, झटपट मोहनी जाल फैलाइ कै ॥
चंचल नयन नचावै, ठाडी घूंघट में मुसकावै।
नर को सैनों में बिरमोहै, तिरछी कर दे अन्धा बनाइ कै ॥
अरे करम हीन की खेती, पड़े दोनों फसल पछेती।
फल नहीं आता निरफल रहती, पति बिन सूख गई कुम्हलाय कै ॥
मत ना माघ मास में तरस अब तो हेत लगा लें हरिसैं।
आखिर इक दिन इन्दर बरसै, कामिनी पति बिन क्यों कुम्हलावती ॥
चंचल चातुर तरुनी, तैनें सुफल करी कोई करनी।
लाल मोहन संग परीती, आगे दिया सोइ अब पावती ॥
लग गई चतुर नार कोई दूती, तुझको बहका गई निपूती।
कर गई सब तरियों मजबूती, आकर खोटी बात बनावती ॥
लागा रंग रंगीला फागुन, मोहन कर गए मुझ को त्यागन।
होली खेलें सब बड़भागी, बिरज में गहरी धूम मचाय कै ॥
गावैं और बजावैं, खुशी साजन की मनावैं।
कौली भरें अबीर उड़ावें, सोवें सजनी सेज बिछाय कै ॥
जो घर होते जी गोपाल, मैं भी लाती रंग गुलाल।
कपड़े करती सब रंग लाल, अब क्या होवै मन पछताइ कै ॥
लागा फागुन यह रुत खासी, अब रंग खिलें सुरखू अब्बासी।
तैं क्यों दिल पर धरी उदासी, पी पी करके रौल मचावती ॥
बिरज की भूमी चौरासी, हरि के दरशन की सब प्यासी।
आवें कान्ह द्वारिका वासी, अब तू क्यों ना खुशी मनावती ॥
अरी भरले केसर रंग की झोली, बुलवा संग सहेली सारी।
बिरज में धूम मचाई भारी, कामिनी सभी गुलाल उड़ावती ॥
लागा चैत्तर गर्मी आई, बिदा हुई, सब शीतलताई,
मेरे करम लिखा सोइ होय, यह दुख लेगा कौन बटाय कै।
किधर गये यदुराई, अब लौं खबर नहीं भिजवाई।
ऐसे हो गए बेपरवाही, मुझको छोड़ गए कलपाय कै ॥

अरी तुम सुनो बिरज की नारी, कुबजा है पापिन हत्यारी।
उसने मोह लिए गिरधारी, उनको रखा कहाँ बिरमाय कै॥
लागा चैत्र बदल गया सम्वत् मौसम बहुत है यह बे कीमत।
राधा मत न हिम्मत हारो, दिल को जरा न धीर बंधावती॥
शीलवन्त शीलवन्ती, पूरे कुल की तू लजवन्ती।
अब कुछ फिकर किए ना बनती, रानी काहे को बिरमावती॥
अरि चातुर कहना मानें, सास ननद की माने।
नारी तकती नहीं बिगाने, अपने पति पर सत्य निभावती॥
लागा कठिन मास बैसाख, हो गया बदन फिकर में खाक।
जलकर हुई जिगर की राख, हड्डी हुई सभी घुन खाय कै॥
अरी मैं बोलूं हूँ तो क्या है? मेरा सांसे ही में जी है।
खाय माल बुकला है चलती, अधर चाल इतराय कै॥
और ताने लिख लिख कै भिजवावै, मुझको जली को और जलावै।
सौकन चाम के दाम चलावै, यों ही नाहक राड़ मचावै।
मत क्या मोल बिसाइ कै॥
लगा बैसाख मास मन मोहन, मेरे आवें आँगन मोहन।
तू लगी भर भर आँसू रोवन, यो क्या ओछी बुध उपजावती॥
बोले वचन बियोग कहोगी, तू सच्चे ही जोगन होगी।
आगे क्या कुछ शब्द कहोगी, क्यों नहिं इसका भेद बतावती॥
और मोर मुकुट छबि धारी, जिनकी हो तुम सुन्दर नारी।
तुमने यों क्यों हिम्मत हारी, तुमको सब तरियों समझावती॥
लगा जेठ मास लू चलती, मेरे उन बिन अगनी जलती।
कुन्दन कंच की भट्टी जलती, प्रीतम ना गए तपत बुझाय कै॥
जब तक थी मैं भोली यानी, मैंने कुछ भी ना गर्दानी।
अब मेरी उमर हुई है स्यानी, जोबन जोर करै रुत पाइ कै॥
और बारह बरस हुए हैं आखिर, बैठी है इन नाम परस कर।
दरसन दीज्यो ब्रज के ठाकुर, मुझको सब तरियों तुम चाहि कै॥
लागा जेठ मास सुख देवा, कर तू उसी नाम की सेवा।
तेरा पार लगा दे खेवा, तू क्यों नाहक लोग हंसावती॥
मत रोवो बड़भागिन, नाजो गोरी बूढ़ सुहागिन।
कर दे सोच फिकर सब त्यागन, जोबन काहे को छीजावती॥

ग्रौर दे दो कासिद को परवाना, उसमें लिख दो जिगरी ताना ।
सुनतेइ ग्रावें प्रीतम कान्हा, पाती क्यूं नाहीं भिजवावती ॥
लागा साढ़ महीना राम, पूरन हो गया साल तमाम ।
मेरी रटना ग्राठौं याम, मुझे यो लीजो राम निभाय कै ॥
श्री गिरधारी गोपाल, कीजो दासी की प्रतिपाल ।
लिखती रो रो के सब हाल, कागज कोरा सा मंगवाइ कै ॥
ग्रौर लाल उन्हें बुलाय, कहती ऊधौ से समझाय ।
मेरी पाती दीजौ जाय, हरि को लाग्रो संग लिवाय कै ॥
लेकर के परवाना, ऊधौ द्वारिका नगरी जाना ।
जाकर करी खुशामद नाना, हरि को लाये संग लिवाय कै ॥

(३०)

ग्राया है जेठ ज मास, सूखे हैं सरवर ताल, सूखे हैं जल कूवटी ।
ग्राया है साढ़ ज मास ग्राये हैं घन घोरटे ।
भर गए सरवर ताल ग्रौर भर गई कूवटी ।
ग्राया है सावन मास, हिंडोले घड़वावती ।
जो घर होते श्याम तो मैं पेड़ बंधावती ।
ऊपर दखनी चीर, नीचे ऊदी दामिनी ।
तुम पिया झोटे दोय, झूलेगी बाली कामिनी ।
ग्राया है भादों मास, चमकैगी बैरन बीजली ।
चमकेंगी चारों खूंट डरेगी बाली कामिनी ।
ग्राया है क्वार ज मास मैं ग्रास मनावती ।
जो घर होते श्याम मैं विप्र जिमावती ।
ग्राया है कातिक मास, मैं काग उड़ावती ।
उड़ जा रे काले काग, बलम घर ग्रावते ।
ग्राया है मंगसिर मास मैं मांग भरावती ।
मांग भरी सिस फूल, मैं हार गुंथावती ।
ग्राया है पोह ज मास, सियाला जाड़ा है घना ।
घी खिचड़ी का मेल, मैं तपूं ए ग्रंगीठियां ।
ग्राया है माह ज मास महाजन लोग हैं ।
कूने में पिलंग बिछाय, महल बिच सोवती ।
ग्राया है फागुन मास, मैं फगुवा खेलती ।

जो घर होते मेरे श्याम, गुलाल उड़ावती ।
आया है चैत ज मास, तो चिन्ता मिटावती ।
जो घर होते गिरधारी, मैं चिन्ता मिटावती ।
आया है मास बैसाख, केसू खिल रहे ।
जो घर होते मेरे श्याम, चुँदड़ी रंगावती ।।
पूरे हुए बारह मास, आज भी ना बाहुड़े ।
छाय रहे परदेस दामों के लोभी लालची ।।

(३१)

रह जाओ ना मोरे पिया ये दो मास, इक सावन दूजा भादवा ।
सावन में मोरे पिया बरसेंगे मेह, भादुड़ै कड़कै बैरन बीजली ।।
रह जाओ ना म्हारे पिया ये दो मास, इक आसौज दूजा कार्तिक ।
आसौज में मोरे पिया आस मनाऊं कार्तिक में रचेंगी दिवालियां ।।
रह जाओ ना मेरे पिया ये दो मास, एक मंगसिर दूजा पोह जी ।
मंगसिर में मेरे पिया मांग भराय, पोह सियाला जाड़ा आ गया ।।
रह जाओ ना मोरे पिया ये दो मास, एक माह दूजा फागुण जी ।
माघ में मेरे पिया गंगा जल न्हाय, फागुण में फगुआ खेलियां ।।
रह जाओ ना मेरे पिया ये दो मास एक चैत दूजा बैसाखियां ।
चैत में मेरे पिया चिन्ता जो होय, भरै ए बैसाखी के सर फूलियां ।।
रह जाओ ना मोरे पिया ये दो मास, एक जेठ दूजा साढ़िया जी ।
जेठ में मेरे पिया तपत पड़ै साढ़ में हाली हल जोतिया जी ।।
उठो न म्हारी धण दो न असीस अब रे सिधारैं लोभी चाकरी ।
जाइयो तुम म्हारे पिया उस परदेस, कदे न लागै थारी चाकरी ।।
तुम भी तो म्हारी धण जनमोगी धीय, लड्डू तो भेजें बालू रेत के ।
जाइयो तुम म्हारे पिया उस परदेस, जहां ए लगैगी थारी नौकरी ।।
तुम तो जनमोगी गोरी ए पूत, लड्डू तो भेजें घी अर खांड के ।
खरचो ना म्हारी गोरी बुगचे की तील, नाम करो अपनी माय का ।।
खरचो ना म्हारे पिया बोरी के दाम, नाम करो ना लक्खी बाप का ।।

(३२)

आसाढ पीताम्बर बरसन लागे, परवा पौन चलै सीली ।
खन बोलै, खन गागर डोलै, सन्मुख आन लगैं झोले ।
सखि सन्मुख आन लगैं झोले ।।

सावन आवन के दिन चार, सजनी नहीं आये स्वामी मेरे ।
घर-घर सखियें तीज मनावें हम झिरवें[1] अपने मन में ।
सखि हम झिरवें अपने मन में ।।
भादों में मैं फिरूं भटकती, पिया पिया पापी करती ।
काली रैन महा डर लागै, तपत पड़ै जिया नहिं लगता ।
सखि तपत पड़ै जिया नहिं लगता ।।
क्वार करार कर गए सजनी, नहिं आए मेरे स्वामी ।
सखि नहीं आए मेरे स्वामी ।।
सब सब सखियां गंगा नहावें, हम तो बैठ रहे री मन मार क ।
कातिक में मैं कन्या कुमारी जैसे चन्द्र चकोर भए ।
चकवी से चकवा हुआ न्यारा, हम से राम कठोर हुए ।
सखि हमसे राम कठोर हुए ।।
मंगसिर में मैं मांग भराती, सब गहना है मेरा अनोखा ।
सब सखियों नै पहर दिखाऊं, राम बिना लागै फीका ।
कुबजा के बोल सहे नहिं जाते, हम पर तो फूलों का गहना
सखि हम पर तो फूलों का गहना ।।
आया पूस रूस गए हम से नहिं आए प्रियतम मेरे ।
कैसे कहूं कहां जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी ।
सखि सभी बात से मैं हारी ।।
आया माह आह करूं सजनी, अति पड़ती है सीत घनी ।
पड़ता पाला, गलै हिवाला, मेरे जी का है गाला ।
सखि मेरे जी का है गाला ।।
फागुए में मैं फगुआ खेलूँ, जो घर होते मेरे स्वामी ।
चोवा चन्दन और इतर की फूलों से भरती क्यारी ।
जो घर होते मेरे स्वामी सन्मुख मारें पिचकारी ।
सखि सन्मुख मारें पिचकारी ।।
चैत मास में चिन्ता करती नहिं आए नन्द के लाला ।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री सभी बात से मैं हारी ।
सखि सभी बात से मैं हारी ।।
भर बैसाख लाल भए केसू, श्याम बरन घर कूं घूरैं ।

१. दुखी होना, अग्नि की तरह तिल-तिल करके जलना ।

सभी जो नारी चूँदड़ ओढ़ें हम बन में पहरें साड़ी।
सखि हम बन में पहरें साड़ी ॥
आया जेठ कहा करूं सजनी, अति आए अंगार घने।
ग्यारह मास कटे जैसे काढे जेठ में प्राण तजे सारे।
सखि जेठ में प्राण तजे सारे ॥

(३३)

रिमझिम रिमझिम मेघ बरसें, पनघट ऊपर लगी री झड़ी।
सखि पनघट ऊपर लगी री झड़ी ॥
पहला महीना सावन का लगिया, सावन में तीज मनावें री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी झूले डलावें री सखी ॥
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
दूजा महीना भादों का लगिया, भादों में रैन अंधेरी री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी दिया जलावें री सखी ॥
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी,सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
तीजा महीना क्वार का लगिया, क्वार में दुसहरा मनावें री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी दुसहरा मनावें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
चौथा महीना कातिक का लगिया, कातिक में दिवाली मनावें री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी दिवाली मनावें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
पांचवां महीना मंगसिर का लगिया, मगसिर में मांग भरावें री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी मांग भरावें री सखी।
आज भी नहीं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अंदेशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियाँ सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
छठा महीना पोह का लगिया, पोह में सेज सजावें री सखी
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी सेज सजावें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥

सातवां महीना माह का लगिया, माह में बसन्त मनावें री सखी।
जो घर होते सखि श्याम हमारे, हम भी बसन्त मनावें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
आठवां महीना फागुन का लगिया, फागुन में होली खेलें री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी होली खेलें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
नौवां महीना चैत का लगिया, चैत में चिन्ता मिटावें री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी चिन्ता मिटावें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
दसवां महीना बैसाख का लगिया, बैसाख बैसाखी टेसू फूलें री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी चुनरी रंगावें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
ग्यारहवां महीना जेठ का लगिया, जेठ में तड़कें लूएं री सखी।
जो घर होते सखि श्याम हमारे, हम भी पंखा डुलावें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥
बारहवां महीना असाढ़ का लगिया, असाढ़ में आए घनघोर री सखी।
जो घर होते सखी श्याम हमारे, हम भी बंगला चिनवावें री सखी।
आज भी नहिं आए, किन भरमाए, सखी बड़ा अन्देशा बाले प्रीतम का।
सैयां हमारे फूल गुलाबी, सखी हम कलियां सुखदर्शन की। रिमझिम० ॥

(३४)

नमो नमो गुरुदेव सरस्वती अमृत बोलो।
तुम हो चतुर सुजान ज्ञान की पुस्तक खोलो।
पुस्तक खोलो ज्ञान की, प्रभु शनैः शनैः समझाय।
किशन पधारे द्वारिका, थारी घर घर हो रही बात।

सदा सुख पाओगे।

ऊधो बृज भौन महाराज कब जाओगे ?
पांचों का त्यौहार सांवले किया पियाना कुब्जा ने।
होत परभात आपने गरुड़ पियाना गरुड़ पियाना।
सांवला यो पीले प्रभात, किशन पधारे द्वारिका।
सावन महीने तीज, ग्वालिन कैसे खेलैं,
अमृत प्याला पी, जहर कैसे झेलैं।
सलूनों तो सावन भली, सब कोई मानै सौन।
हिन्दू के त्यौहार को मानैं सातौं पौन, सदा सुख से रहो।
भादूड़े में नन्द भला घर आओ कान्हा।
तुम गए द्वारिका ऊठ, श्याम मैं न्यूँ नां जाना।
महल महल गोपी फिरैं, देखी आवैं ध्याय।
बृज भौन को छोड़ के तुम बसे द्वारिका जाय। सदा सुख पाओगे।
घन गरजैं, अम्बर लरजैं, बन में मोरा बोलैं।
ढक्या उघारैं शूल, पपीहा छाती छोलैं।
मछ मेंढक और माछरी, गहरे जल के मांहि।
महल महल में गोपी फिरैं, झीकैं कुबजा यों करलाय। सदा०
आसोजां में आस मनाऊं, मोहन मन की।
बिसरूँ ना पल एक, ढूँढती हांडूं दिन की॥
दिन की हांडूं सोचती, करती सोच विचार।
आठ व्रत नौ न्योरते, दशहरा है त्यौहार। सदा सुख से रहो।
लागियां आसोज नन्द घर आओ ख्याली,
भली करी महाराज कूबरी घर में घाली॥
घर में घाली कूबरी, गोपियन को क्या शूल।
मान बिहूनी कर गया, जनु बेल बिहूना फूल॥ सदा सुख पाओगे।
लागा कातिक मास, महीना सरदी भरती।
अरी गए द्वारिका ऊठ सखी, घनश्याम बेदरदी।
बेदरदी का दरद ना कुबजा राखा घेर।
वृन्दाबन में आवती, तेरी बन्सी की टेर॥ सदा सुख पाओगे।
हो राधा के नाथ आन घर करो दिवाली।
भली करी महाराज, प्रीति कुबजा से पाली॥
कुबजा चेरी कंस की, कहैं बिरज के लोग।
क्यों छोड़ा म्हारे सांवले, रस गोरस का भोग॥ सदा सुख पाओगे।

जाड़ो बरसा जोर, मंगसिर लगा महीना,
भली करी महाराज, साथ कुबजा का लीन्हा।
कुबजा चेरी कंस की, रहो किसन के संग,
घिस घिस चन्दन लावती कंस राजा के अंग ॥ सदा सुख पाओगे।
दीपक जोय मन्दिर में मेलूं, सेज बिछाऊँ।
तुम्हरी पूछूं बात, अपनी कह सुनाऊं ॥
सौड़-रजाई, तकिया, तोषक धरूं रंगाय,
गलीचा मोहन के ताईं जिसमें रुई डलाय।
सीली चलै बयार, पोह में जाड़ा लागै,
अपने अपने महल गोपियां सो सो जागैं ॥
सो सो जागैं गोपियां अपने-अपने महल,
रुदन करैं ग्वालिनी, तुम्हारी सुनै बाजती बीन ॥ सदा सुख० ॥
मेथी और अजवायन प्रमदा गोंद सजाएं,
काया में सुख चैन, बाय का जोर हटावैं।
हो राधा के नाथ, माघ में सेज संभालो,
कब की जोहूं बाट बाहुड़ो[1] बंसी वालो ॥
बंसी वाले बाहुड़ो वृन्दावन की ओर।
ब्रज भौन को छोड़ के तुम निष्ठुर भये कठोर ॥ सदा सुख० ॥
पांचों का त्यौहार, सांवला बाहुड़ आवै,
गोपी करैं सिंगार, सांवला सब्ज रंगावै।
सब्ज रंगावै सांवला, गोपियन के मन सोज[2]।
ब्रज भौन को छोड़ के, तुम बसे सात सौ कोस ॥ सदा सुख० ॥
बागों खिल रही कली डाल चम्पे की लहरी,
खिल रहे दाड़िम दाख, पौख में लपट घनेरी।
कुंजे महुआ केतकी, रहा बाग में छाय।
माली बैठा द्वारिका, यह बिन सींचा कुम्हलाय ॥
फागुन रचा हिंडोल, प्रमदा देखन आवैं।
बाजे ताल मृदंग, श्यामल शंख बजावैं।
शंख बजावै सांवला, और कितने गए बजाय।
कितने आन बजाइयो, तुम अपने पहरे आय ॥ सदा सुख० ॥

---

१. लौट आना, २. उत्साह।

गोपी चिन्ता करें, चैत में आय सरैगा।
बृन्दाबन की सैर, सांवला आय करैगा।
आय करैगा साँवला, बृन्दावन की सैर।
खुशी हुई ग्वालिनी, अपने अपने महल ॥ सदा सुख० ॥
जल जमुना का नीर, आय बैसाख नहाओ।
ऊधो से तुम कहो, द्वारिका तक तो जाओ ॥
परवाना लिखवाय के, दिया ऊधो के हाथ।
चला दिन और रात, बाट में कभी न हारा।
परवाना ले जाय के, कही प्रेम कुशलात।
हंस हंस पूछै सांवला, वह ब्रज भौन की बात । सदा सुख० ॥
कैसे बाबा नन्द, कैसी यशोदा माई।
कैसी हमरी गऊ, कैसे हलधर भाई।
कैसी दुनियां ब्रज की, अरु कदम्ब वृक्ष की छाँह।
कैसी तो वह गोपी कहिए, बसें कौन की बांह ॥ सदा सुख० ॥
अच्छे बाबा नन्द, अच्छी यशोदा माई।
अच्छी तुम्हारी गऊ, अच्छे हलधर भाई।
अच्छी दुनियां ब्रज की, अरु कदम्ब वृक्ष की छांह।
गोपी तो वह भटकत डोलैं, बसैं कृष्ण की बांह ॥ सदा सुख० ॥
परवाना ले जाय, ऊधो ने जब रे सुनाया।
तुम्हरा मन चाहे सो करो, सांवलो जोग बताया।
ऊधो के घर हुई इकट्ठी गोपी सारी।
हंस हंस पूछें बात, कहो कैसे गिरधारी।
कैसे कुबजा कूबरी, घर में रक्खा डाल।
मालन के संग रम रहा, हमें दहै सोक का सूल ॥
कैसी कुबजा कूबरी, घर में रक्खा जोड़।
बनजारे की आग ज्यों गया सिलगती छोड़ ॥ सदा सुख० ।'
जोग बताया सांवले और कहलाया चतुर सुजान।
गोरे अंग में भस्म रमा लो करो तीर्थों का नहान।
जोग बताया सांवले, मैं चौड़े देऊं बगाय।
जो दिल में है मिलन की, मिलै द्वारका जाय ॥ सदा सुख० ॥
ऊधो के घर हुई इकट्ठी, सखी सहेली।
बाली बारस नहीं द्वारका चली अकेली ॥

(३५)

चैत में चिन्ता मैं करूँ, धीर ना धरूँ ना उन बिन सरै।
जिया नित तरसै, महाराज जिया नित तरसै।
क्यूंकर मिलना होय, श्याम सुन्दर से।
मैंने सुनी गुरू की बैन, पड़े ना चैन, हमें दिन रैन।
प्रीत लगी हर से महाराज प्रीति लगी हर से॥
देखियो खबर लेंगे, आन उधर से।
आया मौसम बैसाख, हमारी लाख, तुम्हारी साख।
सभी कोई जानें, महाराज सभी कोई जानें।
मैं कहां तक कहूँ अगम, लगन विचारो।
मेटो जी हमरी पीड़, जरा नहिं धीर, मेरा दिल नहीं ठिकानै।
मैं सुमरण तुम्हारा जपूं जीव मेरा जानै।
कुछ कहूँ मरम की बात, कही ना जात, नींद ना आत।
रहूँ हैरानी, महाराज रहूँ हैरानी।
देखो जी आया जेठ, हुई ना भेंट, लगी अलसेट।
कहां बनवारी, महाराज कहाँ बनवारी।
मेरा हो रहा हाल बेहाल तुम्हारे मारी।
एक बूढ़ा सा विप्र बुलाय, पास बैठाय।
कहे समझाऊँ, तुम जाओ द्वारिका, जहाँ वह बंसी वाले।
इतना ना पौरुष मेरा, मैं जाऊँ कारज तोरे।
मारग में सिंह बघेरा, प्राण बचै ना मेरा॥
कोई मार अकेला गेरै, तड़पैगी ब्राह्मणी डेरै।
तैंने दूँगी द्रव्य-माल, मति घबराओ।
निकट मोरे आओ, निकट मोरे आओ महाराज।
मैंने जबर अन्देशा बड़ा लगा उनका रे।
देखो जी आया साढ़, लगा क्या झार, गए कहां छोड़।
मेरे मनभावन, मैं दासी हो के लगूं तुम्हारे दामन।
आपका नाम सुना घनश्याम, पार ना पावन।
मेरी नौका होगी तुमको पार लगावन।
अब मैं लिखूं प्रेम की पाती, कर कंपे लिखी न जाती॥
मन मेरे यह आती, मंगाय जहर ले खाती।
प्रभु तुम बिन कोई ना संघाती, मैं निपट घनी घबराती।

कारज करना महाराज, आय ब्रज राज,
आपने लाज मेरी सारी, महाराज लाज मेरी सारी।
सावन में संग शिशुपाल ले के गोपाल कुंदन बन आए,
महाराज कुंदन बन आए।
जमड़े तो समझ के लगें, काल चढ़ आए,
घेरी थी सिंह ने गाय, करूँ जैसे हाय।
तजूं अब काया, महाराज तजूं अब काया।
मेरे बालम इतनी अमर देर कहां लाई
जैसे ग्राह गजराज जाल में धंसे, विवस हो धंसे।
आय शरमाए, मेरी भक्ति जान कर पहुँचे।
बेग छुटाओ, महाराज को छुटाओ।
अब बीता है सावन महीना, हरि आओ निकट परवीना।
मुश्किल है मेरा जीना, यह विचार मैंने कीन्हा।
भादों में भरोसा मुझे, तपत ना बुझे, उठत है तन में।
फरजन्द नन्द के बसे हमारे मन में, महाराज हमारे मन में ॥
शिशुपाल पड़ा है ख्याल, जाऊँ ना नह्याल।
द्रोपदी का उतारा चीर, नंगे सिर हुई रघुबीर।
याद किए मन में, महाराज याद किए मन में।
बंसी बट बैठे बजाज हो गए क्षण में।
दुःशासन खेंचत हारा, ऐसा बड़ा नाम तुम्हारा।
द्रोपदी की ओर निहारो, मेरा भी करो गुजारा।
देख या घड़ी, बिपत में पड़ी, बिपत बड़ी भारी।
देखियो खबर कब लेंगे आन उधर से, महाराज आन उधर से।
देखो जी आया क्वार, करे करार चले द्वारिका या मन में ठहराई।
साढ़े सात सौ कोस, करै अब सोच,
अकल घबराई, सो गए तले तरवर के, नींद जहां आई।
अन्तर्यामी गए जान, लिए पहचान, करी सहाई,।
सोते को ले गए पल में आन कन्हाई।
द्विज ढूंढत डोलै सारै, कहां बसैं द्वारिका वाले।
आय ही दीनानाथ, पकड़ कर हाथ, ले गए साथ।
भवन बनवारी, महाराज भवन बनवारी ॥

वर देंगे नारद मुनि तो मिलें कन्हाई ।
कार्तिक करुश्रा स्नान, किया पकवान ।
बहुत सामान, अधिक बनवारी, महाराज अधिक बनवारी ।
मोदक मेवा घी दाल, सबक सुहाल, मधुर पकवाके
ब्राह्मण के संग परोसे इकन्त बैठाके ।
खुरचन, खोश्रा, साबूत मलाई, दूध मखन मंगवाके ।
ब्राह्मण के संग परोसे, इकन्त बैठाके ।
पापड़ तर कचरी, सूंठ पकौड़ी सूँठ करी पिसवाके ।
अब खुशी हुए ब्राह्मण, अपनै खाके ।
अब झारी जल की लाश्रो, तुम हरि हाथ धुलाश्रो ।
तुम लायक ने समझाश्रो, ये बारम्बार सुनाश्रो ।
द्विज मन हुश्रा मगन, लगी है लगन, दई दछिना री ॥
वर देंगे नारद मुनि मिलैं कन्हाई ।
मंगसिर में मन लगा आपसे, सहा बिरह ना जाय ।
शिशुपाल नहीं दे ठण्डा पानी पीने ।
यो बेमुख होके लड़ै, टला ना टलै, निडर नहिं डरै ।
करै मनमानी, बरजोरी सेती मांग तुम्हारी छीनै ।
तुम रथ बेग लाश्रो, ना जाके देर लगाश्रो ।
रुक्मण नै मुश्किल है जबर, करी है खबर ।
विप्र भेजा है, वर देंगे नारद···
पोह में पूछैं बलराम, कहां गए घनश्याम ।
कौन से धाम हमारे भाई, महराज हमारे भाई ।
जब इतनी सुनकर हाल बतावैं ग्वाल ।
कहैं समझाई, एक ब्राह्मण ले गया लहर कन्हाई ।
हल मूसल सुधां जाश्रो, चल कुँदना पर चढ़ श्राश्रो ।
हस्ती घुड़ले सब लाश्रो, करी लाख गिना ना जावे ।
रुक्मणी नै दिखावैं बरात, सब नारी साथ अटारी चढ़ी ।
उसी घड़ी वर देंगे नारद···
एक माह का नीका मास, हुई मन की श्रास ।
मैं हुई उनकी दासी, किशन मन श्राए । महाराज···
छवि देख सांवरे, सब के मन में भाए ।

फागुन में फूली अंग, अदब से ढंग, रुकमणि बाई ।
अम्बिका का पूजन मंगल करती आई ।।
शिशुपाल मचावे शोर, खड़े सिपाही ।
चौकस रहियो ना आवन पावे कन्हाई ।।
अब रुकमण मांगे वरदान, मिलै पति कान्ह,
सत्यभगवान करैं सहाई, अम्बिका पूजन करके बाहर नै आई
महाराज बाहर नै आई···
अब रथ में रुकमण गोपाला, ले गए नन्द के लाला ।
अब युद्ध रुकमैया मतवाला, तब हर नै भी बाण सम्भाला ।
अब रुकमण के दीनदयाला, मत मारो तुम्हारा साला ।।

(३६)

सुन सुन्दर बैसाख, बैसाखी बिर[1] ! वे दो जनें ।
जोबन लहरे ले कि, पिया प्यारे ना मिले ।
है कोई चतुर सुजान, मिलावे बाली जीवड़े
सास का जाया पूत, ननदिया का बीर जी ।
वे पिया चतुर सुजान, मिलावे बाली जीवड़े ।
आया है सावन मास, गड़े हैं हिंडोलवे ।
रेशम डोर मंगाय, मैं सखियों संग झूलती ।
आया है भादों मास, होई है रैन अंधेरिया
तेल और बाती मंगाय, मैं दिवले जगावती ।
आया है क्वार ज मास, करार किससे करे ।
जो पिया होते मेरे पास, दुसहरा मनावती ।
आया है कातिक मास, मैं कन्या कुमारियां ।
हूं मैं ऐसी कि जैसी चन्द्र चकोरियां ।
आया है मंगसिर मास, कि मांग भरावती ।
जो पिया हुए मेरे पास, मैं पहर दिखावती ।
आया है पोह ज मास, सिवाला जाड़ा है घना ।
जो पिया होते ना विदेस, मैं तपूं ए अंगीठियाँ ।
आया है माह ज मास, बन बन फूले हैं बसन्त ।
जो होते घर पिया हमारे हम भी फूल गुंथावती ।

---

१. भाई अथवा एक प्रेममय सम्बोधन ।

आया है फागुण मास, मैं होली मनावती ।
लाल गुलाल ले हाथ, मैं फगुआ खेलती ।
आया है चैत ज मास, चैत चिन्ता है घणी ।
जो पिया होते न बिदेस, चिन्ता मिटावती ।
क्या थारे स्याही का टोटा, लिखने वाला है नहीं ।
न हमारे स्याही का टोटा, लिखने वाला चाकरी ।
शक्कर भरी परात, ऊपर से गेरी आरसी ।
छोटा देवर चकचाल, हमसे बोले फारसी ।
तोडूँ गजरा मोडूँ बाजूबन्द जी ।
चालूंगी भंवरा थारे साथ, ना बोलूंगी फारसी ।
आया बैसाख ज मास, तो टेसू खिल रहे ।
देख टेसू का फूल, तो साड़ी रंगावती ।
आया है जेठ ज मास, जेठ चलै है अति लू घनी ।
खस के पंखे लगाए, हवा तो बैठी खावती ॥

(३७)

राधा ए राधा तेरा नाम, गली बिच क्यों खड़ी ।
क्या तेरा पिया परदेश, क्या तेरी सास बुरी ॥
चला जा रे असत्र गंवार, तुझे मेरी क्या पड़ी ।
ना मेरा पिया परदेस, ना मेरी सास बुरी ॥
कोरी कोरी कुलिया में दही जमावती ।
राजा चले परदेस, मैं शकुन मनावती ॥
उड़ जा रे काले काग, दही जूठी कर गया ।
गोरी के मन में चाव, सगुन झूठा पड़ गया ॥
आया है सावण मास, हिंडोले गड़ावती ।
जो घर होते मेरे श्याम, मैं सखियों संग झूलती ॥
ऊपर दखनी चीर, नीचे उषा कामिनी ।
तुम पिया झोटे दो, झूलेगी बाली कामिनी ॥
आया है भादों मास, के कड़कै बीजली ।
कड़क रही चारों खूंट[1] डरेगी बाली कामिनी ॥
आया है आसौज मास, मैं आस मनावती ।
करके पूरी पकवान, बम्हना जिमावती ॥

---

१. ओर, दिशा ।

आया है कातिक मास, के रचें हैं दिवालियां ।
जो घर होते मेरे श्याम, तो दिवले जलावती ।।
आया है मंगसिर मास, मैं मांग भरावती ।
मांग भरी सिसफूल, मैं हार गुँथावती ।।
हार गले का सिंगार, के गल बिच सोहता ।
जो घर होते मेरे श्याम, मैं पहर दिखावती ।।
आया है पोह ज मास, सिवाला जाड़ा पड़ रहा ।
जो घर होते मेरे नाथ, मैं तोषक भरावती ।।
आया है माह ज मास, महाजन लोग हैं ।
घी खिचड़ी का मेल, मैं दान करावती ।।
आया है फागुण मास, मैं फगुआ खेलती ।
जो घर होते मेरे श्याम, भर पिचकारी मारती ।।
आया है चैत ज मास, तो चिन्ता है घणी ।
कब आयेंगे मेरे श्याम, मैं पतरा दिखावती ।।
आया है बैसाख ज मास, बैसाखी केसर ढुल रही ।
जो घर होते मेरे श्याम, मैं चुँदड़ी रंगावती ।।
आया है जेठ ज मास, के चल रही लूँएटी ।
सूखे हैं सरवर ताल, सूखे हैं जल कूएं री ।।
आया है साढ़ ज मास, के आये घनघोर हैं ।
भर गए सरवर ताल, झिगारें जल कूबटी ।।

(३८)

अरे पतिए, किसी गरीब का बुरा न तकिये ।
बैसाख के महीने बासुदेव आए, गोपियाँ नन्द सारे जगमोहे । अरे०
जेठ के महीने चलें लुएं, छोड़ के ना जाइयो खड़ी रोवें । अरे० ।।
साढ़ के महीने तेरी विनती करती, छोड़ के ना जाइयो तेरी नार बलती ।
सावन के महीने पपीहा बोलें, सूनी मेरी सेज हिया डोले । अरे० ।।
भादों में बादल आए गरज के, रैन अंधेरी, पिया मर जाऊं डरके ।...
आसौज के महीने तेरी आस करती, छोड़ के ना जाइयो तेरी नार बलती ।
कातिक के महीने दिवाली आई, जूआ मत खेल, मैंने नथ पायी । अरे० ।।
मंगसिर के महीने मैं मांग भरावती, हार सिंगार माथे बिंदी लावती ।...
पोह के महीने नरम बिनती, छोड़ के ना जाइयो महापातकी । अरे० ।।

माह के महीने तेरे नाल तुरना, निक्का जेहा बिगड़ा तू सीधा करना।
फागुन के महीने मैंने खेली होरी, भर पिचकारी मेरे प्रीतम डारी।
चैत के महीने वे तुलैं नागरा, खट्टा मिट्ठा, मट्ठा वे तू सारी खा गया।
बैसाख के महीने बासुदेव आए, गोपियाँ नन्द सारे जगमोहे। अरे० ॥

(३९)

तनक मनक राधे पूछें हैं बतिया, कंगण कहां बंधाया भोलेनाथ।
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
सावन में रानी सलूनों आवे, सुभद्रा ने रखड़ी बांधी भोलेनाथ। भज० ॥
तनक मनक राधे पूछें हैं बतियां०॥
भादों में रैन भयावनी ऊधो जिया मोरा घबराये जिया मोरा घबराये।
सेहरा कहां बंधाया भोलेनाथ। भज गोविन्दा श्री भगवान्
क्वार में राधे दशहरा आवै, सुभद्रा ने जौं रक्खे भोलानाथ
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
तनक मनक राधे पूछें हैं बतियां स्याही कहां जी लगाई भोलेनाथ
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
कार्तिक में राधे गोधरण आवैं, सुभद्रा ने स्याही लगाई भोलेनाथ
भज गोविन्दा श्रीं भगवान्।
तनक मनक राधे पूछें हैं बतियां, तिलक कहां जी लगाया भोलेनाथ
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
कातिक में राध भइया दूज आवे, सुभद्रा ने तिलक लगाया भोलेनाथ
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
तनक मनक राधे पूछें हैं बतियां, सगरी रैन गमाई भोलेनाथ।
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
हम तो री राधे झूठ ना बोलैं हम तुलसा परनाई भोलेनाथ।
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
जै जानूं तुलसां हरि परनावें, बिरवा गंगा में गेरूं महाराज
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
जै राधे बिरवा गंगा जी में गेरो, बनती गंगा जल झारी महाराज
भज गोविन्दा श्री भगवान्।
श्री कृष्ण जी स्नान करें महाराज। भज गोविन्दा श्री भगवान्।
जै जानूँ तुलसां हरि परनावें, बिरवा जंगल में गेरूँ महाराज,
भज गोविन्दा श्री भगवान्।

जँ राधे बिरवा जंगल में गेरो, बनती चन्दन रूख महाराज
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
श्री कृष्ण तिलक लगावें भोलेनाथ। भज गोविन्दा श्री भगवान्
एक खन तो रानी रुकमन सोवैं, एक खन सोवैं राधे ।
सिरहाने तुलसां सोवैं महाराज, भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
ऐसे क्या रानी जप-तप कीन्हें, श्रीकृष्ण जी के सिर चढ़ सोई महाराज
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
कातक री राधे, नूण न खाया, मंगसिर सिर ना धोया महाराज
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
पोह ज राधे सौड़ न ओढ़ी, माह न अंगीठी सेकी महाराज
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
फागण री राधे फाग न खेली, चैत में फूल न तोड़े महाराज,
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
बैसाख ज राधे चुनड़ी न ओढ़ी, जेठ ज पानी न पीया भोलेनाथ
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
असाढ़ में री राधे मंज्जे ना सोई, सावण में साग न खाया महाराज
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
भादवे में राधे दहीय न खाई, आसौज में दूध न पिया भोलेनाथ
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।
इतने री राधे, जप तप गाले, तो श्री कृष्ण वर पाये महाराज ।
भज गोविन्दा श्री भगवान् ।

(४०)

सखी लगा महीना साढ़ प्यारी लगा महीना साढ़ ।
चुंदड़ी रंगावैं सब नारी,
हम तो चुंदड़ी जभी जो रंगावैं जो घर आवें मेरे स्वामी ।
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी ।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी ।
अगले पिछले सब दुख भूलूं, जो घर आवें मेरे स्वामी ।।
दूजा महीना सावन का लगिया, तीज मनावैं सब नारी ।
हम तो तीजों जभी मनावैं, जो घर आवें मेरे स्वामी ।
दिन नहिं चैन रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी ।

कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुःख भूलूं, जो घर आवें मेरे स्वामी।
तीजा महीना भादों का लगिया, भादों में रैन अंधेरी री सखी।
दिवले जलावें सब नारी॥
हम तो दिवले तभी जलावें, जो घर आवें मेरे स्वामी॥
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गई।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुख भूलूं जो घर आवें मेरे स्वामी।
चौथा महीना आसोज लगिया, दशहरा मनावें सब नारी री सखी।
हम तो दशहरा तभी मनावें, जो घर आवें मेरे स्वामी।
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुःख भूलूं जो घर आवें मेरे स्वामी॥
पांचवां महीना कातिक का लागा, कातिकी नहावें सब नारी।
हम तो कातकी जभी नहावें, जो घर आवें मेरे स्वामी।
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गई।
कैसे करूं कहां जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुःख बिसरूं, जो घर आवें मेरे स्वामी।
छटवां महीना अगहन लगिया, अघड़ गढ़ावें सब नारी री सखी।
हम गहने जभी घड़ावें, जो घर आवें मेरे स्वामी।
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुःख भूलूं, जो घर आवें मेरे स्वामी॥
सातवां महीना पूस का लागिया, पूस में बंगले छवावें री सखी।
हम तो बंगले जभी छवावें, जो घर आवें मेरे स्वामी।
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुःख भूलूं जो घर आवें मेरे स्वामी॥
अठवां महीना माघ का लागा, बसन्त मनावें सब नारी।
हम तो बसन्त जभी मनावें जो घर आवें मेरे स्वामी।
दिन नहिं चैन रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी।

कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुःख भूलूं जो घर आवें मेरे स्वामी ॥
नवमां महीना फागुन का लगिया, फगुआ खेलें सब नारी।
हम तो फगुआ जब ही खेलें, जो घर आवें मेरे स्वामी।
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रात गयी।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुख भूलूं जो घर आवें मेरे स्वामी।
दसवां महीना चैत का लगिया, फूल गुँथावें सब नारी।
हम तो फुलवा जभी गुथावें, जो घर आवें मेरे स्वामी ॥
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुख भूलूं, जो घर आवें मेरे स्वामी ॥
ग्यारहवां महीना बैसाख का लगिया, बगिया में डोलें सब नारी।
हम तो बगिया तब ही जावें, जो घर आवें मेरे स्वामी।
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुःख भूलूं जो घर आवें मेरे स्वामी ॥
बारहवाँ महीना जेठ का लगिया, बिजने डुलावें सब नारी।
दिन नहिं चैन, रात नहिं निंदिया, तारे गिनते रैन गयी।
कैसे करूं कित जाऊं सखी री, सभी बात से मैं हारी।
अगले पिछले सब दुःख भूलूं जो घर आवें मेरे स्वामी।

(४१)

महीना सावन का आया पिया परदेशों में छाया,
रिमझिम रिमझिम मेघा बरसें पल भर चैन न आये,
घर घर सखियां तीज मनायें,
हम तो तीजा जभी मनायें, जो पिया आयें आज।
कभी थी रस रंग भरी बेली
सूख गया रंग, पड़ी पीली विपत मैंने बहुतेरी झेली ॥
महीना भादों का आया, पिया परदेशों में छाया
रैन भयावनी है सखी, जिया मोरा घबराये
नींद न आती, चैन नहीं, छतियां दरद उठ जाये

हमरे लिये बरसात जभी है जो पिया आयें आज।
कभी थी रस रंग भरी बेली
सूख गया रंग, पड़ी पीली, विपत मैंने बहुतेरी झेली ॥
महीना क्वार का आया, पिया परदेशों में छाया,
क्वार में मैं आश लगाती जोहूँ पिय की बाट,
पिया मोरे आवें जो सखी, हिय के खुलें कपाट,
लौट गये कर्मों के पासे, उलट गए कर्म्मों के पासे
करूं क्या सजन नहीं आते, लिख लिख भेजूं परवाना
पिया का नहीं होता आना
रूप रस रंग भरी बेली, सूख गया रंग पड़ी पीली
विपत मैंने बहुतेरी झेली
महीना कातिक का आया, पिया परदेशों में छाया
दीप जलावें वे सखी, सखि ! जिनके पिया घर होंय
हमरे पिया परदेश में री, नहीं किसी का दोष
लौट गये कर्मों के पासे, उलट गये कर्मों के पासे,
करूं क्या सजन नहीं आते
लिख लिख भेजूं परवाना, पिया का नहीं होता आना।
रूप, रस रंग भरी बेली
सूख गया रंग पड़ी पीली, विपत मैंने बहुतेरी झेली ॥
महीना अगहन का आया, पिया परदेशों में छाया
धान लहलहावें ए सखी ! हिय में उठें अंगारे
पिय बिन मैं कैसे रहूं, लगा कलेजे बान
लौट गये कर्मों के पासे, उलट गये कर्मों के पासे
करूं क्या सजन नहीं आते
लिख लिख भेजूं परवाना, पिया का नहीं होता आना।
रूप रस रंग भरी बेली
सूख गया रंग पड़ी पीली, विपत मैंने बहुतेरी झेली ॥
महीना पूस का आया, पिया परदेशों में छाया
पूस में सरदी है घनी, सखियां रूई भरांय
हमरे क्या रूई भरांय री, नहीं किसी का दोष
लौट गये कर्मों के पासे, उलट गये कर्मों के पासे

करूं क्या सजन नहीं आते
लिख लिख भेजूं परवाना, पिया का नहीं होता आना।
रूप रस रंग भरी बेली
सूख गया रंग, पड़ी पीली, विपत मैंने बहुतेरी झेली ॥
(शेष महीने भी इसी प्रकार)

(४२)

बन बन मोर पपीहा जी बोलें,
कोयल शब्द सुनावती ।
जेठ में घर आइयो जी बलमा,
अकेली झुरै बाली कामिनी ॥
सांपों ने छोड़ी काली कांचली,
नदियों ने छोड़े हैं कछार की ॥
बन बन० ॥
सावन में घर आइयो जी बलमा,
देखो बिजली कड़कती जी ।
मैं झुरूं मेरा हिवड़ा सुलगे
रो रो काटै बाली कामिनी ॥
बन बन० ॥
भादों में पिया लौट आइयो,
मेघ बरसैं दिन रैन जी ॥
तुम बिना मेरी सेज सूनी
कैसे करै बाली कामिनी ॥
बन बन० ॥
क्वार में पिया लौट आइयो
चांदनी अधिक सतावती
तुम बिना मुझे सब कुछ सूना
नींद ना निसि दिन आवती ॥
बन बन० ॥
कातिक में तुम आओ जी बलमा
हम भी गंगा नहावती ॥

तुम बिना मेरे मन्दिर सूने
दिवाली न हमको भावती ॥
बन बन० ॥
अगहन में तुम आओ न प्यारे
तेरी आश लगावती ॥
चहुं दिशि उपजा धान प्यारे
कैसे मन को समझावती ॥
बन बन० ॥
पूस में घर आओ जी बालमा
देख जुड़ें मोरी छातियाँ जी ॥
पूस में मैं कैसे सोऊं
शीत अधिक सतावती ॥
बन बन० ॥
माघ में तुम आओ न बलमा
चैन नहीं मैं पावती ॥
मैं झुरूं मेरे नैन तरसें
विरह अग्नि जलावती ॥
बन बन० ॥
फागुन में तुम आओ न प्रियतम
मन भर फगुआ खेलती ॥
हिवड़ा तड़पै, नैन तरसें
धीर न मुझ को आवती ॥
बन बन० ॥
चैत में तुम आओ न बलमा
कोयल शब्द सुनावती ॥
बन बन टेसू फूल रहे जी
बसन्त मुझे तड़पावती ॥
बन बन० ॥
बैसाख में घर आओ जी बलमा
नई अटारी सजावती ।
तेरे हिय से लगके प्रियतम
जी की जलन मिटावती ॥
बन बन० ॥

भाव, भाषा और रस की दृष्टि से गीत दर्शनीय है ।

खण्ड ५

लोक गीतों में करुण-रस

'Our sweetest songs are those
That tell of saddest thoughts'.

—महाकवि शैली

: ९ :

कन्या की विदा के गीत

कन्या की विदा का दृश्य बड़ा ही करुणाजनक होता है। जो माँ के कलेजे का टुकड़ा, पिता के नयनों की ज्योति तथा घर की श्री और शोभा थी, जिसने इसी घर में जन्म लिया था, इसी की धूल में लोट-लोटकर बड़ी हुई थी, जिसने इसी रङ्गमञ्च पर अपने शैशव का अभिनय किया था, जहाँ वह नित्य ही अपनी बहनों, सखियों तथा भाइयों के साथ आमोद-प्रमोद और मधुर वार्तालाप किया करती थी; जहाँ सरस दुलार से पूर्ण अम्माँ की वात्सल्यमयी गोदी थी, जहाँ कोई उसे पुत्रीवत् समझता था, तो कोई भगिनीवत्, सरस्वती की नाईं जहाँ उसने अपने कला-कौशल का प्रकाश किया था, जहाँ के लिए वह आनन्द का अविरल स्रोत थी, जहाँ वह पक्षी के समान स्वच्छन्द विचरण किया करती थी, जहाँ के कण-कण में वह रमी थी, जब अपनी उसी बाल्य-क्रीड़ास्थली से वह विदा होती है, तब क्या पाषाण-हृदय व्यक्ति भी द्रवित हुए बिना रह सकते हैं?

गृह जड़ होते हुए भी उसके अभाव को अनुभव करता है, उसके कण-कण में वह शून्यता मूर्तिमयी होकर विराजने लगती है। वह माँ जिसने इतने अधिक कष्ट झेलकर उसे पाला था, जिसे तनिक भी म्लान-वदना निहार कर वह अपने स्नेहाञ्चल में छुपा लेती थी, जिसकी बोली में उसके लिए कोकिल से भी अधिक मिठास था, जिसे 'बिट्टी' 'बिटिया' कहते-कहते वह कभी न थकती थी, जिसके 'अम्माँ' शब्द पर वह बलिहारी जाती थी, उसी अपनी हृदय-सितारा बेटी को एक अपरिचित के हाथों में सौंपते हुए उसके हृदय में जो टीस उठती है, उसे केवल मातृ-हृदय ही जानता है।

वह पिता, जो गृह में प्रवेश करते ही पहले उसका नाम लेकर पुकारा करते थे, उन्हें निहारते ही वह सब काम छोड़कर 'बापू', 'बापू' करती दौड़ी आती थी; वे यदि चिन्तित होते थे तो वह अपनी प्यारी-प्यारी बातों से उनके

हृदय को शान्त कर देती थी; प्रत्येक विषय पर मंत्रणा देती थी—जब वे अपनी उस प्यारी बिटिया को दूसरों की कृपा पर छोड़ते हैं, तब उनका हृदय भी एक बार मर्मान्तक पीड़ा से रो उठता है ।

जिन भाई-बहनों को वह लोरी गा-गाकर सुलाया करती थी, मल-मलकर नहलाया करती थी, खिलौनों की भाँति सजाया करती थी और कहानियाँ सुनाया करती थी, अपने हाथों से खाना खिलाया करती थी, जब वे उससे लिपट जाते हैं, "हम नहीं जाने देंगे" कहकर बार-बार रोते हैं, उसकी गाड़ी पकड़ लेते हैं, तब क्या उस प्रथम बार अपने पितृ-गृह से जाती हुई बाला के नयन रक्ताश्रु नहीं बहाते ? केवल एक के लिये वह अपना सर्वस्व उत्सर्ग कर देती है और वहाँ की वह कुछ भी नहीं रहती, जहाँ की वह सब कुछ थी ।

इस दृश्य का चित्रण करने में यदि कुछ सफलता मिली है तो महाकवि कालिदास को । जो गीत आगे दिये जायेंगे, उनकी सीधी-सादी और सरल पंक्तियाँ बड़ी ही मर्मस्पर्शिनी हैं—

(१)

काहे को ब्याही विदेश रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।
हम तो बाबुल तोरे बागों की कोयल,
कूकत पर घर जाएँ, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।
हम तो बाबुल तोरे खेतों की चिड़ियाँ,
चुग्गा चुगत उड़ जाएँ, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।
हम तो बाबुल तेरे बेले की कलियाँ,
जिधर माँगे चली जाएँ, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।
हम तो बाबुल तेरे खूंटे की गैयाँ,
जिधर हाँको हक जाएँ, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।
भैया को दीने बाबुल शाल-दुशाले,
तो हमको दिया है दहेज, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।
भैया को दीने बाबुल महल-दुमहले,
तो हमको दिया परदेश, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।
छज्जे खड़ी ताई चाची जो छोड़ी बुआ जीजो जो छोड़ी,
तो छोड़ा बाबुल तोरा देश, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।
औले तो कौले बाबुल गुड़िया जो छोड़ी,
तो छोड़ा सहेलियों का साथ, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ।।

महल तले से डोला जो निकला,
तो भैया ने खाई पछाड़, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥
आम तले से डोला जो निकला,
तो कोयल करै पुकार, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥
तू क्यों रोवै मेरी काली कोयलिया,
हम तो चले परदेश, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥
नँगे से पैरों बाबुल बीरा जो भागे, ताऊ चाचा जो भागे,
साजन डोला थाम, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥
मेरी बेटी थारे महलों की बाँदी,
तो हम थारे बन्द गुलाम, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥
थारी बेटी म्हारे महलों की रानी,
तो तुम समधी सरदार, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥
परदा उठाकर देखन जो लागी,
तो आया साजन का देश, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥
सोना भी दीना बाबुल रूपा भी दीना,
दीना है जड़त जड़ाव, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥
एक न दीनी बाबुल सिर की जो कँघी,
तो सास ननद ताना देंय, रे लक्खी बाबुल मोरे । काहे० ॥

विदा का समय है, कन्या कहती है—हे पिता ! मैं पति के देश में जा रही हूँ। इस समय पितृ-गृह से प्रथम बार जाती हुई बाला अपनी दशा का चित्रण करती है:—

"हे पिता ! तुमने मेरा विवाह परदेश में क्यों कर दिया ? हम तो कोयल के समान हैं जो कूकते ही अपना घर छोड़कर चली जाती हैं। (कहा जाता है कि कोयल अपने अंडों को कौवे के घोंसले में रख देती है और कौवी उन्हें अपने अंडे समझ कर सेती रहती है। कुछ दिन के बाद अंडों में से कोयल के बच्चे निकल आते हैं, तब भी कौवी को पता नहीं चलता और वह उन्हें अपने बच्चे समझ कर पालती रहती है। किन्तु थोड़े बड़े होने पर कोयल के बच्चे जब कूकने लगते हैं तब उन्हें अपनी वास्तविक स्थिति का ज्ञान होता है और वे कौवे के घोंसले को छोड़ कर उड़ जाते हैं। इसी तरह लड़कियाँ अपने पितृगृह में पलती रहती हैं, किन्तु जब वे सियानी हो जाती हैं तो उन्हें बतलाया जाता है कि वे तो 'पराया धन हैं।' उन्हें बड़ी होने पर अपने 'वास्तविक' घर जाना पड़ता है।) यह उपमा कितनी हृदयहारी, उपयुक्त और प्रभावोत्पादक है !

कन्या अपनी उपमा चिड़ियों से देती है और कहती हैं—हम तो खेतों में बैठी हुई चिड़ियों के समान हैं, जो चुग्गा चुप कर उड़ जाती हैं। विवाह होते ही हम पराये घर चली जाती हैं।

इसके बाद लड़की अपनी उपमा बेले की कलियों से देती है। कलियां पेड़ की मानो पुत्रियां होती हैं—वे उसकी गोद में पलती हैं; किन्तु जब वे खिलने लगती हैं तो माली उन्हें तोड़ लेता है और जो कोई व्यक्ति उन्हें माली से मांग ले, माली उसी को वे कलियां दे देता है। यही स्थिति लड़कियों की है। यह उपमा भी अत्यन्त सुन्दर और उपयुक्त है।

फिर नव-विवाहिता लड़की अपनी उपमा गाय से देती है और कहती है—"हम तो चरने जाती हुई गउओं के समान हैं, जिधर भी उन्हें ले जाओ, उधर ही उन्हें जाना पड़ता है। हमारा ग्रन्थि-बन्धन चाहे किसी से कर दो, हमें उसी के साथ जाना पड़ेगा।"

मातृ-पितृ-वियोग से पीड़ित नव-परिणीता इस समय विवाह का आनन्द भूल जाती है और कहती है—"लक्षाधीश पिता! तुमने भाइयों को दुमंज़िली अट्टालिकाएँ दीं परन्तु हमें परदेश दे दिया। आह!"

बाला का हृदय पितृ-गृह छोड़ते हुए विदीर्ण हो उठता है। उसे इस घर के एक-एक प्रियजन का स्नेह याद आता है, और बचपन में वह जिन चीजों से खेला करती थी वे भी मानो सजीव होकर इस समय उसे विह्वल कर रही हैं। वह कहती है—"मैं अपनी ताई, चाची, बूआ, बहिन—सबको छोड़कर जा रही हूँ। मैं गुड़ियों को भी यहीं छोड़ रही हूँ। हाय! आज मैं अपनी प्यारी सहेलियों का भी साथ छोड़ने के लिये बाध्य हो गई हूँ।"

डोला चल पड़ता है। घर के बाहर आम का पेड़ है जिस पर वह झूला झूला करती थी। जब डोला आम के उस पेड़ के नीचे से निकलने लगता है तो उसकी चिर-परिचिता कोयल पुकार कर पूछती है कि तुम कहाँ जा रही हो। बाला भग्न हृदय से उत्तर देती है—"मेरी प्यारी कोयल! तू क्यों रोती है? मैं तो आज परदेश जा रही हूँ।"

डोला कुछ और आगे बढ़ा। पिता, ताऊ, चाचा, भाई, जो अब तक मन को वश में करके डोले को जाता हुआ देख रहे थे, अब व्याकुल और अधीर होकर डोले के पीछे भागे। उन्होंने दूर से ही चिल्लाकर समधी को कहा—"ज़रा डोला थाम दो।" वे मन में आशंकित हैं कि न जाने हमारी बेटी ससुराल में किस तरह रहेगी। वे अत्यन्त विनीत भाव से समधी से निवेदन

करते हैं—"हमारी बेटी को तुम लोग अपने महलों की दासी समझना, हम भी तुम्हारे दास हैं।"

परन्तु समधी ने कितना शिष्ट और सुन्दर उत्तर दिया, "तुम्हारी बेटी हमारे महलों की रानी है, और तुम हमारे समधी, हमारे सरदार हो।"

डोला आगे बढ़ चलता है। कन्या अपनी पुरानी स्मृतियों में खोई हुई बैठी है। उसे यात्रा का कोई ध्यान नहीं। जब डोला रुकता है तो वह पर्दा उठाकर देखती है, तब पता चलता है कि वह पति के देश में पहुँच गई है।

वह अपने साथ दहेज में सोना-चाँदी तथा जड़ाऊ आभूषण और अन्य सब वस्तुएं लाती है। किन्तु बाल संवारने के लिये माता-पिता ने कंघी नहीं दी थी। कितनी साधारण सी वस्तु थी! किन्तु सास और नन्द कब चूकने वाली थीं। इस तनिक-सी त्रुटि पर भी वे अपने व्यंग-बाण चलाने से नहीं चूकीं।

उपरोक्त गीत में पितृ-गृह से विदा होती हुई नव-विवाहिता कन्या की मनोदशा का जैसा स्वाभाविक और सच्चा चित्रण किया गया है, वैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। जब कन्या की विदा के समय स्त्रियाँ यह गीत गाती हैं तो माता-पिता का तो कहना ही क्या, विवाह में सम्मिलित सगे सम्बन्धियों तथा अन्य स्त्री-पुरुषों की आँखों में भी आँसू उमड़ आते हैं। जिस करुण लय में स्त्रियां इस गीत को गाती हैं उसे सुनकर राह-चलते लोग भी कातर हो उठते हैं।

(२)

घर छोड़ रुक्मण बाहर चाली,
चौंरी[1] तो छाई तेरे बारनें[2]।
ओले तो कौले[3] लाडो गुड़ियां ऐ छोड़ी,
छोड़ा सहेलियों का साथ ए।
ले क्यूं ना जा लाडो ओले[4] की गुड़ियां,
छोड़ा बाबुल का देशड़ा[5]।
नंगे तो पैरों तेरा बाबा भी भागा,
साजन डोला थामियो[6]।
ए म्हारी तो बेटी थारे घर की है बाँदी,
हम थारे चिरवेदार[7] हैं।
थारी तो बेटी म्हारे घर की है रानी,
हम थारे चिरवेदार हैं॥

---

१. वेदी, २. आँगन में, ३. इधर-उधर, ४. कोने, ५. पिता का देश ६. ठहराना, ७. सेवक।

विदा के लिए बाहर आई हुई बिटिया को देखकर सब का हृदय द्रवीभूत हो उठता है। उसके सभी सम्बन्धी भी विकल हो उठते हैं और कहते हैं—बेटी कहीं तेरी गुड़िया पड़ी है, कहीं तेरे खिलौने। बेटी ! इन्हें तू अपने साथ ही क्यों नहीं ले जाती ? तूने पिता का देश भी छोड़ दिया।

कण्व के द्वारा कालिदास ने भी इस भाव को व्यक्त कराया है—निम्न-लिखित पंक्तियां कालिदास-कृत शकुन्तला नाटक के हिन्दी अनुवाद से उद्धृत की जाती है :—

दाभन ते मुख जाको छिद्‌यो जब तू दुहिता लखि पावति ही।
अपने कर ते तेहि घावन पै तुही तेल हिंगोट लगावति ही।
जेहि पालन के हित धान समाँ नित मूठहि मूठ खवावति ही।
मृग-छौना सो क्यों पग तेरे तजे जेहि पूत लों लाड़ लड़ावति ही।

तैं आगे बोए सुता, पूजा हित नीवार।
सो उपजे हैं आयके, पर्णकुटी के द्वार ।।
इन्हें लखत कैसे सकूं अपनी व्यथा मिटाय।
तव बिछुरन ते जो भयी, मेरे मन में आय ।।

कण्व ऋषि के समान जब भी अन्य माता-पिता अपनी बेटी की ओले-कौले पड़ी गुड़ियों को देखेंगे, तब क्या उसका अभाव उनके लिए भी असह्य न हो उठेगा ?

महाकवि तुलसीदास ने सीता की विदा का वर्णन इस प्रकार किया है :—

सुक सारिका जानकी ज्याये। कनक पींजरन राखि पढ़ाये ।।
व्याकुल कहहिं कहां वैदेही ? सुनी धीरज परिहरै न केही ।।
सियहिं विलोकि धीरता भागी। रहे कहावत परम बिरागी ।।
लीन्ह राउ उर लाइ जानकी। मिटी महा मर्याद ज्ञान की ।।

—महाकवि तुलसीदास।

राजा जनक ने भी सीता जी को विदा करते समय राजा दशरथ से इस प्रकार कहा था :—

यह दारिका परिचारिका करि, पालवी करुणामयी।
अपराध छमियो बोलि पठये, बहुत हौं ढीठो कई ।।

डोला चल दिया, एक बार अपनी सुधि भूल कर पिता आदि नंगे पैर ही अपनी बिटिया से मिलने को दौड़े। हृदय न माना, पिता ने कहा— 'डोला ठहरा दो, हमारी दुलारी बेटी तुम्हारे घर की अनुचरी है तथा हम तुम्हारे सेवक है।"

वह मूक-वाणी में प्रार्थना करते हैं कि उस पर तुम सब प्रकार अपनी कृपा दृष्टि रखना ।

प्राचीन समय में लड़के वाले अपने अभिमान में नहीं रहते थे । अन्त में उन्होंने क्या ही अच्छा उत्तर दिया है—"तुम्हारी लड़की हमारे घर की रानी है और हम तुम्हारे दास हैं ।"

(३)

तेरा तीजन[1] सूना होय, बाबुल तेरी धीय[2] बिना ।
मेरी बहू कातेंगी हे, कि लाडो बेटी जाम्रो घराँ ।।
तेरा पैंहडा[3] रीता[4] होय, बाबुल तेरी धीय बिना ।
मेरी पोती भरैंगी हे, कि लाडो बेटी जाम्रो घराँ ।।
मैं तो गुड़िया भूली हे, बाबुल तेरे आले में ।
मेरी पोती खेलेंगी हे, कि लाडो बेटी जाम्रो घराँ ।।
तेरे गोबर बिछ रहा हे, बाबुल तेरी धीय बिना ।
मेरी बहुएँ गेरेंगी हे, कि लाडो बेटी जाम्रो घराँ ।।
मेरा गड्डा[5] अटका रे, बाबुल तेरी गलियों में ।
दो ईंट कढ़वा दें गे, कि लाडो बेटी जाम्रो घराँ ।।
तुझे बाबुल कौन कहे, बाबुल तेरी धीय बिना ।
आंसू तो भर आये नैन, कि लाडो बेटी जाम्रो घरां ।।

"हे पिता ! अब मेरे बिना चर्खा कौन कातेगा ? चर्खा कातने का स्थान सूना पड़ा रह जायगा ।"

"प्यारी बिटिया ! अपने घर जाम्रो, मेरी पुत्र-वधू अब तुम्हारे स्थान पर काता करेगी ।"

"पिता ! मेरे बिना मटके में कौन पानी लाया करेगा ?"

"बेटी ! मेरी पोती पानी ले आया करेगी ।"

"पिता ! तुम्हारे आले में मैं अपनी गुड़ियाँ भूल गई हूँ ।"

"मेरी पोती गुड़ियाँ खेला करेंगी, बिटिया !"

"पिता ! तुम्हारे आँगन में अब गोबर बिखरा ही रह जायेगा ।"

"बेटी ! कुछ चिन्ता न कर, यह काम तेरी भाभी करेंगी ।"

"मेरी गाड़ी तुम्हारी गलियों में अटक रही है, पिता !"

"जा बेटी ! मैं मार्ग ठीक करवा दूंगा ।"

---

१. चर्खा कातने का स्थान, २. पुत्री, ३. घड़ा, ४. खाली, ५. गाड़ी ।

"पिता ! बिटिया के बिना तुम्हें पिता कहकर कौन पुकारेगा ?"

यह प्रश्न सुनते ही पिता के बलात् रोके हुये आँसुओं का बाँध टूट गया। वह अब अपनी बिटिया को अधिक ढाढ़स न बँधा सका। बेटी ! तुम अपने घर जाओ, कहते-कहते नेत्रों में आँसू उमड़ आये।

कैसा स्वाभाविक चित्रण है ? पिता के लिये पुत्री के द्वारा "पिता" सम्बोधन कितना हृदयग्राही है। बिटिया के बिना सब कुछ हो सकता है, किन्तु इस अभाव की पूर्ति तो कोई भी नहीं कर सकता।

(४)

हुआ नगर सब सूना, बनो मेरी पाहुनियाँ रे।
दादी रानी ने ऐसे पाला, जैसे घी की गागरिया रे।
ताई रानी ने ऐसे पाला, जैसे घी की गागरिया रे।
बाबा राजा ने ऐसे निकाला, जैसे जल की माछुलिया रे।
ताऊ राजा ने ऐसे निकाला, जैसे जल की माछुलिया रे।

कन्या अपने प्रिय-जनों से विदा होते हुये जल-विहीन मछली की भाँति तड़प रही है। उसके अभाव में सब नगर सूना हुआ जा रहा है। सब के स्नेह-सरोवर में वह नित्य मछली के समान डुबकियाँ लगाया करती थी, आज उसी स्नेह-सरोवर से उसे विदा लेनी पड़ रही है। जल की मछली की उपमा पढ़ते-पढ़ते कालिदास का शकुन्तला के मुख से यह कहलाना स्मरण हो आता है कि "अब मैं पिता की गोदी से अलग होकर मलयगिरि से अलग हुई चन्दन की शाखा की भाँति परदेश में कैसे रहूँगी।"

: १० :

विरह के गीत

विरह प्रेम का मुख्य अंग है। जिससे हमें प्यार होता है, तथा जो हम से प्यार करता है, उसके सामीप्य में ही हमारे लिए सबसे बड़ा सुख है। उसकी छवि में हमारे लिए मोहिनी है, आकर्षण है। जिसे पाकर हमारी हृदय-मरुस्थली में अमृत की धारा प्रवाहित होने लगती है, हमारी नीरवता में सुरीली रागनी के समान जो गा उठता है, बीहड़-विपिन के सदृश शून्य, नीरस निर्जन को जो मनोरम उद्यान में परिवर्तित कर देता है, उसका वियोग भी हमारे लिए उतना ही असह्य होता है।

वियोग एक ऐसी पीड़ा है, जो विश्व-भर में व्याप्त हो रही है। क्या कमल तथा कुमुदनी के कुम्हलाने में, पपीहे की 'पी कहां'- 'पी कहाँ' में, तथा चातक के रुदन और चकवे की आहों में, यही विरह-वेदना नहीं भरी है ? नीरव निशीथ में आहें भरता हुआ पवन अपने वियोग को दिग्दिगान्तर में व्याप्त कर देता है। मीन प्रिय-वियोग में तड़प-तड़प कर प्राण दे देती है। कवि पन्त ने ठीक कहा है—

"वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान।"

विरह वह सुन्दर फूल है, जिसका पौधा प्रेमी-हृदय में ही आरोपित होता और विकसित होता है। वह सर्वस्व खोकर अपने प्रिय में एक अनूठा विश्व पाता है। संसार में उससे बढ़कर कोई अभागा नहीं, जिसने न किसी से प्यार किया है और न किसी का प्यार पाया है। प्रिय-वियोग से बढ़कर यद्यपि कोई अभाव नहीं, परन्तु फिर भी यह वह अभाव है जो हमें उच्च और महान् बनाता है तथा हमारे मनोमालिन्य को अपनी प्रबल धारा में बहाकर प्रिय में एकाकार कर देता है। प्रिय की स्मृति दारुण होते हुए भी मधुर है, क्योंकि उसमें भी प्रियतम का प्रेम अन्तर्हित है।

ग्रीष्म में गर्मी और हेमन्त में शीत का लगना अनिवार्य है। यह हो सकता है कि कोई उसे शांति से सहन करने की शक्ति प्राप्त कर ले। विरह वर्णन सभी भाषाओं के साहित्य में बहुत विशद है; परिस्थिति, देश, समाज, जाति और नियमों के कारण उसकी वर्णन-शैली में भले ही अन्तर हो। कालिदास ने 'मेघदूत' में मेघों के द्वारा यक्ष की प्रियतमा को सन्देश भिजवाया है। भवभूति का विरह-वर्णन भी बड़ा मर्मस्पर्शी है—

पर काज देस-विदेस फिरौ, यदि देखौ कहूँ मम मालति प्यारी।
हिय धीरज ताहि बँधाय दसा, यह माधव की कह दीजियो सारी॥
अरु देखियो आस के तन्तु न तोरियो, राखियो सो मृदु मंजु संवारी।
बस वाहि के एक सहारे अहो घन, जीवति आयत लोचन बारी॥

—'मालती माधव' के हिन्दी अनुवाद से

× × ×

जो वाके तन की दशा, देख्यो चाहत आप।
तो बलि नेक बिलोकिये, चलि औचक चुपचाप॥

—बिहारी

जब तक विश्व में प्रेम का अस्तित्व है, नित्य नवीन रचनाएँ विरह पर होती ही रहेंगी।

फूलों-फलों से अलंकृत लावण्यमयी प्रकृति की शोभा, मेघों का नाद, रह-रहकर प्रिय का स्मरण दिलाते हैं। हर्ष और शोक से भरी प्रत्येक घटना और सुन्दर दृश्य देखकर हमारे भाव अपने प्रियजनों के ऊपर बिखरने को इसी प्रकार विह्वल हो उठते हैं, जैसे प्रातःकाल पाटल की पँखुड़ियाँ आलवाल में बिखर जाती हैं।

नृत्य और सावन के अधिकांश गीतों में विरह का अत्यन्त सुन्दर, सरस और स्वाभाविक वर्णन मिलता है। इस पुस्तक के छठे तथा आठवें अध्यायों में आपने विरह के विषय पर बहुत से गीतों का रसास्वादन किया होगा। नीचे विरह-सम्बन्धी कुछ और गीत दिये जाते हैं—

(१)

बड़े घरों की धीय बाजारों बिच क्यों खड़ी, हाय राम।
चल-चल असल गँवार तुझे मेरी क्या पड़ी, हाय राम।
दे गया खोटा पैसा हाथ, बंजारन करके छोड़ गया हाय राम।
दे गया हल्दी की गाँठ, पंसारन करके छोड़ गया, हाय राम।

जनु ए कुएँ बिच लाव[1] लटकती को छोड़ गया, हाय राम।
जनु ए बंजारे की आग धधकती को छोड़ गया, हाय राम।
जनु ए कड़ाही बिच तेल उबलती को छोड़ गया, हाय राम।
बोझ मरी दस मास मायड़ छोड़ी आपनी, हाय राम।
ब्याही थी मँढ़े पिछवाड़[2] बाबल छोड़्या आपना, हाय राम।
गोद जडूले[3] पूत, भावज छोड़ी आपनी, हाय राम।
जनु ए तारों बिच चाँद बीरा तो छोड़्या आपना, हाय राम।
छोड़ी है हिरनों-सी डार, साथन[4] छोड़ी आपनी हाय राम।

"बड़े घरों की कन्या होकर तुम बाजारों में क्यों खड़ी हो?"

"रहने दो, तुम्हें हमारी क्या पड़ी है?"

"हाय! प्रियतम, तुमने मुझे एक खोटा पैसा देकर वणिक् बना दिया। अपना थोड़ा-सा प्रेम देकर ही समझ लिया कि इसे अब अन्य किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं। प्यारे! एक ही हल्दी की गाँठ लेकर कोई पंसारी अपनी साख कब तक बनाये रख सकता है? उसकी दशा के ही सदृश मेरी दशा भी चिन्तनीय है। कुएँ की रस्सी न निकलती है न डूबती है, वही दशा मेरी है। प्यारे! न मैं मरती हूँ, न जीती हूँ। तुम्हारे वियोग ने न इधर का छोड़ा, न उधर का।"

पजर्‌यो आग वियोग की, बह्यो विलोचन नीर।
आठौ याम रहै हियो, उट्ठयो उसाँस समीर॥
औंधाई सीसी सु लखि विरह बरति बिललात।
बिचही सूखि गुलाब गो, छींटो छुई न गात॥—बिहारी

विरह अगिनि तनु तूल समीरा। स्वास जरै छन माहिं सरीरा॥
नैन स्रवहिं जल निज हित लागी। जरै न पाव देह विरहागी॥
—तुलसीदास

उपरोक्त पंक्तियों में हम कवियों की अनोखी सूझ की प्रशंसा कर सकते हैं, परन्तु हमारा हृदय उस विरहिणी के साथ रो नहीं सकता।

"प्रियतम, यात्री जिस अग्नि को मार्ग में छोड़ जाते हैं, उसे कोई शान्त करने वाला नहीं होता। विजन विपिन में वह अकेली रह जाती है। वह अपना काम निकाल कर चल देता है। तुम मेरे हृदय में जो अग्नि प्रज्वलित

१. रस्सी २. नीचे, ३. दो, ४. सखियाँ

कर गए हो, उसे भी उस यात्री की अग्नि के समान बुझाने वाला कोई नहीं हैं। मुझे भी तुम्हारे बिना चारों ओर अकेला ही अकेलापन लगता है।"

सुनत पथिक मुँह माह निसि, लुएँ चलत उहि गाम।
बिन बूझे बिन ही कहे, जियत बिचारी बाम॥
—बिहारी

यह ऐसी अग्नि नहीं है, वरन् यह तो हृदय में ही धधकती है और अहर्निश केवल स्वयम् को स्वयम् ही भस्म करती है। प्यारे! कड़ाही में तेल उबलता है और उबलकर रह जाता है। मेरे हृदय में भी उद्गार उठते हैं और आप ही शान्त हो जाते हैं।

प्यारी को परसि पौन गयो मानसर पै,
लागत ही औरै गति भई मानसर की।
जलचर जरे औ सेवार जरि छार भये,
जल जरि गयो पंक सूख्यो भूमि दरकी।
—महाकवि गंग

अथवा—माँ उण्हं पियसु जलं विरहणी विरहाणलेण संतत्तम।
एत्थ सरे ए पन्थिय गय पइब हुयाऊ पइब हुयाउ मज्ज विया॥

इन पंक्तियों को पढ़कर पाठक का हृदय कदाचित् ही विरहिणी के हृदय के सदृश वियोग की अग्नि का वास्तव में अनुभव कर सके, परन्तु "जनु ए कढ़ाई बिच तेल, उबलती को छोड़ गया हाय राम" में अतिशयोक्ति के स्थान पर स्वभावोक्ति है।

"हाय! भगवान्, उसके लिये मैंने अपनी प्यारी अम्माँ को छोड़ा, जिसने दस मास तक इतने कष्ट झेले। पिता के लाड़-प्यार से पृथक् हुई, जिन्होंने मण्डप के नीचे मेरा विवाह किया। जिनकी गोदी में मेरे दो सुन्दर भतीजे खेलते थे, वह भाभी भी छूट गई। तारों में चन्द्र-सम शोभित दुलारा भैया, हरिणियों की पंक्ति-सी सुहावनी सखियाँ सभी छूट गईं। हाय ईश्वर! जिसे पाने के लिये यह सब कुछ किया, उसने मेरी बात भी न पूछी।"

(२)

श्याम का सन्देशा हमारे द्वारिका से आया रे।
पाती[1] लिखी आयी पाती छाती से लगायी जी॥
अँचरा की ओट करके, घूँघट की ओट करके,
ऊधव पै बँचाई रे॥ श्याम०

---

१. पत्र

मौंहि मौंहि अँखियां बरसें, कालजे कटारी लागै
बस्ती बजाड़ दीन्ही, उजड़ी बसाय दीन्ही,
कुब्जा को राज दीन्हो, हमें न सुहायो रे ।। श्याम०
नन्द के किशोर ऊधो, माधोजी से कहियो सीधो,
जीवत पुरुष कैसी भस्मी रमाई रे ।। श्याम०

आज द्वारिका से हमारे श्याम का सन्देश आया है। कृष्ण के प्रेम में मतवाली गोपियों के लिए कृष्ण के प्रेम-पत्र में क्या-क्या नहीं है ?

विरह-विधुरा गोपियाँ पत्र को हृदय से लगा लेती हैं। अँचल की ओट करके उन्होंने उद्धव से पत्र को पढ़वाया। नेत्रों से आँसुओं की झड़ी लग गई। "निष्ठुर श्याम ! तुमने बसे हुए ब्रज को तो उजाड़ दिया और उजड़ी हुई मथुरा को बसा दिया। कुब्जा को हृदय की रानी बनाया है और हम तुम्हें भाई नहीं। उद्धव ! उन केशव से कहना, कहीं पति के रहते भी भस्म रमाकर योगिनी बना जाता है ?"

पगी प्रेम नन्दलाल के, हमें न भावत जोग।
मधुप ! राजपद पायके, भीख न माँगत लोग ।।

हम जोग को ले के करेंगी कहा, तपि ताप वियोग भई सो भई,
वहि रावरि साँवरि सूरत पै, हम चेरिह्वै वारि गईं सो गईं।
मन आपनो ह्वै न रह्यौ अपनो, विरहानल ताप तईं सो तईं।
कछु सोच नहीं पुनि ह्वै है कहा, हम प्रेम की बौरि लईं सो लईं ।।
—श्री प्रेमयोगी मुनीजी

राखौ यह सब जोग अटपटो, ऊधौ पाँय परौं।
कहँ रस रीति कहाँ तनु सोधन, सुनि सुनि लाज मरौं।
चन्दन छाँड़ि विभूति बतावत, यह दुःख क्यों न जरौं।
नासा कर गहि जोग सिखावत, बेसर कहाँ धरौं।
सगुन सरूप रहत उर अन्तर, निर्गुन कहा करौं।
मुद्रा न्यास अंग अंग भूषन पतिव्रत से न टरौं।
सूरदास या ही व्रत मेरे, हरि मिलि नहिं बिछुरौं ।।

—सूरदास

"मुद्रान्यास अंग अंग भूषण, पतिव्रत से न टरौं," और "जीवत पुरुष कैसी भस्मी रमाई रे" में अनायास ही भाव-साम्य हो गया है।

ऊधो जी सन्देशो नहीं कह्यो जाय, कहा कहैं,
जैसी करी कान्ह तैसी कोऊ न करतु है।
जीभ तो हमारै एक, कहाँ लगि कहि परै,
जी में जितनी कहौ तिति क्योंहु न सरतु है।
द्वारिका बसतु हरि सुन्दर समुद्र ही में,
ईहौ परवाह जाइ सिन्धु में परतु है।
जाने हैं वे जमुना ही में जाकी ज्वाला,
जलधि में पर्‌यो बड़वानल जरतु है
—सुन्दर कवि

कवियों की सूझ में रचना-चातुर्य तथा अनूठापन है, परन्तु यदि "मिंहिं मिंहिं अँखियाँ बरसें, कालजे कटारी लागै।" का यह सन्देश कृष्ण तक पहुँच जाता, तो क्या उनके नेत्र भी वर्षा की नाईं न बरसने लगते ? क्या उनके हृदय में भी कटारी-सी न लग जाती ? सचमुच—

जो न जुगति पिय मिलन की, धूरि मुकति मुँह दीन्ह।
जो लहिए सँग सजन तो, धरक नरक हूँ कीन्ह॥
—बिहारी

(३)

ऊधौ कहि सो फेर मत कहियो।
माधो कहि सो फेर मत कहियो॥
काया को जला भस्म कर देंगी, आन मसान जगाइयो।
जो हर हमको उबरी[1] चाहें, अनबोला चुप रहियो॥
गोपी प्रान तजें गिरधर बिन, हमें दोष न देइयो।
पूरा बैर करा हरि हमसे, उनसे यौं जा कहियो।
कुब्जा सेती[2] रास रचा है, हमें जोग लिख दीयो।
ऊधो कहि सो फेर मत कहियो,
माधो कहि सो फेर मत कहियो।
या हरि हरको आन मिलाओ, या ले चलो साथौ।
गोपी प्रान तजें गिरधर बिन, काशी में करवट लीयो।
ऊधौ कहि सो फेर मत कहियो,
माधो कहि सो फेर मत कहियो॥

१. उद्धार करना, २. साथ

"उद्धव, जो तुमने अब कहा, वह फिर कभी न कहना। तुम्हें तो यह एक परिहास-सा जान पड़ता है, परन्तु हमारे तो प्राण निकले जा रहे हैं। हम अपने शरीर को जला कर भस्म कर देंगी, तब वह निर्मोही श्मशान को आकर देख लेंगे।" रूठा भी तो उसी से जाता है जिसके प्रेम का विश्वास हो। ऐसी जली-कटी कहने से तो अच्छा था, कृष्ण चुप ही रहते। "हम उनके वियोग में प्राण त्याग देंगी, फिर हमें दोष न देना।" उनके प्राण भी तो कृष्ण की ही थाती हैं।

"कृष्ण ने हमसे तो पूरा वैर साध रखा है, कुब्जा के साथ नित्य नव प्रेम-क्रीड़ाएं करने वाले कृष्ण हमें योगिनी बनने का उपदेश देते हैं। पहले स्वयं उदाहरण तो बनें।"

"यदि सम्भव हो उद्धव ! तो हमें कृष्ण तक पहुँचा दो, अन्यथा हम काशी-करवट की छुरियों से प्राण त्याग देंगी।" सचमुच प्रिय वियोग की व्यथा ऐसी ही होती है।

प्रिय वियोग छाती फटै, आवति पै न दरार।
काया तजहि न चेतनहिं, बेसुध विकल अपार॥

—भवभूति के हिन्दी अनुवाद से

मरन भलो बरु विरह से, यह विचार जित जोय।
मरन होय दुख एक कौ, विरह दुहूँ दुख होय॥

—बिहारी

हिज्र से बढ़कर मुसीबत और आने की नहीं,
मौत को रख छोड़िये किस ज़िन्दगी के वास्ते।

—ज़ौक़

प्रेमी के लिए उसका प्रेम-देव ही योग, जप, तप, पूजा-पाठ सब कुछ है। इसलिए प्रेम-मार्ग के पथिक के लिए योग की आवश्यकता नहीं। चाहे सारे विश्व के लिये कृष्ण योग के द्वारा सुलभ हों, किन्तु हमारी गोपियों ने प्रेम-मार्ग ही अपनाया है। मन माने का ही तो सौदा है।

ऊधौ हमें न जोग सिखैये।
जे उपदेस मिलें हरि हमको, सो ब्रत नेम बतैये।
मुक्ति बैठि रहो सुख अपने, निर्गुन सुन दुख पैये॥
जो सिर केस कुसुम भरि गूँथे, तहँ किमि भस्म चढ़ैये ?
जानि-जानि सब मगन भये हैं, आपुन आप लखैये।
सूरदास प्रभु सुनत याहि विधि, बहुरि कि या ब्रज अइये।

—सूरदास

(४)

ऊधौ पाती कैसे लिखूं, लिखी ना जाए।
पाती लिखत मोरा कर कांपत है, डोबा[1] बहि-बहि जाय।
पाती लिखत दोऊ नैन बहत हैं, नदियाँ बहि-बहि जायँ।
एक-एक बात मेरी ऐसी मरम की, छतियाँ फटि-फटि जायँ।
हाड़-मांस सब खून सूखिगो, भस्म टटोलेंगे आय।

"बहि-बहि" और "फटि-फटि" में सुन्दर पुनरुक्ति प्रकाश है। "उद्धव ! पत्र कैसे लिखूं, लिख नहीं पाती। हाथ काँप रहा है। स्याही इधर-उधर गिर जाती है। नेत्रों से आँसू बरस रहे हैं। उद्धव ! तुम्हें मैं क्या बताऊँ, मेरी एक-एक ऐसी बात मर्म-भेदिनी है कि छाती फटने लगती है। केवल अस्थि-पिंजर-मात्र अवशिष्ट रह गया है। वह भी कुछ ही दिनों में समाप्त हो जायेगा।" उद्धव के द्वारा भवभूति ने 'मालती-माधव' में यह संदेश भिजवाया है :—

उमड़ि-उमड़ि अँसुवान सौं, भरि-भरि आवत नैन।
या सों भली प्रकार ये, समुँही देख सकैं न।
तासु कल्पना की रुचिर, आवत ही जिय बात।
बाँधि दियो सो होत यह, जड़ सबरो ही गात॥
हाथ पसीजत लिखन में, अँगुरि न ठिक ठहराय।
लगातार पुनि कर कँपत, किस विधि करूँ उपाय॥

—भवभूति कृत 'मालती माधव' के हिन्दी अनुवाद से

× × ×

निसि दिन बरसत नैन हमारे।
सदा रहत वर्षा-ऋतु हम कहँ, जब ते स्याम सिधारे।
नयन अंजन न रहत निसि वासर कर-कपोल भए कारे॥
कंचुकि पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे।
ऐसे सलिल सबै भई काया, पल न जात रिस टारे।
सूरदास प्रभु गोकुल बूड़त, काहे न लेत उबारे॥ —सूरदास

महाकवि सूर की अन्तिम पंक्तियों में अतिशयोक्ति है। "आँसुओं की बाढ़ गोकुल को डुबा देगी।" कृष्ण यह विश्वास कभी न कर सके होंगे। परन्तु "हाड़-मांस सब खून सूखिगो, भस्म टटोलेंगे आय" यह पढ़कर क्या कृष्ण का हृदय सचमुच ही विह्वल न हो उठा होगा ?

१. स्याही।

(५)

खोल अटारी मैं तो होऊँगी बैरागन,
बिजली कड़के, मोय डर लागे,
बरसन लागे वो तो मूसलधार ।
जाय चमक बिजली उस मधुवन में,
सोवत होंगे कहीं नन्दलाल ।
जब से गए मोरी सुधि नहिं लीन्हीं,
ऐसे कठोर भए ।
री वो तो ऐसे कठोर भये नन्दलाल ।
गोकुल ढूँढ़ा, मधुवन ढूंढ़ा,
न पाये वो तो नन्दलाल । सखी०

माधव ने बादलों और पवन के द्वारा मालती को सन्देश भेजा था, परन्तु यहाँ विरहिणी बिजली के द्वारा सन्देश भेज रही है। माधव ने बादलों के द्वारा निम्न संदेश भेजा था :—

तुम जाओ तहाँ जहँ मालति है,
नव चम्पक बेलि अकेलि दुखारी ।
अथवा मिलि वासहि जाहु कछु,
सुचि सीतल ही तल को स्रमहारी ।
अवलम्ब तुम्हीं बस एक प्रभो,
न विलम्ब करो दुख मेरो निहारी ।।

यक्ष ने भी मेघों को दूत बनाया था। माधव और यक्ष पुरुष हैं, इसलिए उन्होंने पुरुषों को अपना सहायक बनाया है। गीत की नायिका ने बिजली को सहायिका बनाने में कुशलता का परिचय दिया है। स्त्री ही स्त्री के हृदय की पीड़ा को भली प्रकार समझ सकती है।

(६)

सात जनी सात ईंडवे, सुन सास रानी जी ।
सातों ही चली पानी भरने, सुन सास रानी जी ।।
छः जनी तो भर चुकी मुझ से भरा न जाय। सुन०
लज[1] छोटी और जुगत बड़ी, सुन सास रानी जी ।।
लज बंटवा दूँ रेशमी, सुन मेरी बहू रानी ।
गड़वी[2] भी ला दूं मोल, सुन मेरी बहू रानी ।।

१. रस्सी, २. लोटा ।

जैसे-तैसे भर लिया अब घड़ा न उठाया जाय।
कुएँ के नीचे राह चलै, चला मुसाफिर आय।
मुड़के घड़ा उठवा, सुन चीरे वाले।
मैं तेरा घड़ा उठाऊँ, सुन घूँघट वाली।
मुझे दो घूंट पिला दे नीर री, सुन घूंघट वाली।
मेरा तो पानी विष भरा, सुन चीरे वाले।
पीने वाला झट मरे, सुन चीरे वाले॥
जो तेरा पानी विष भरा, सुन घूंघट वाली।
घर वालों का क्या हाल री, सुन घूंघट वाली।
मेरे तो घर वाले गारड़ू[1] सुन चीरे वाले।
पीवेंगे जहर उतार जी, सुन चीरे वाले।
औरों की शालें[2] ऊजली सुन घूँघट वाली।
तेरा क्यों मैला भेष, सुन घूँघट वाली।
औरों के बालम घर रहें, सुन चीरे वाले।
मेरा गया परदेश, सुन चीरे वाले।
जो तेरा बालम घर नहीं, सुन घूँघट वाली।
होलेना मेरे साथ, सुन घूँघट वाली।
जिस बालम की मैं गोरी, सुन चीरे वाले।
छुएँ न तेरा हाथ, सुन चीरे वाले।
घर आई को पूछै सास, सुन मेरी बहू रानी।
कहाँ लगाई बार[3] सुन मेरी बहू रानी जी।
झगड़े में हो गई बेर सुन सास रानी जी।
एक मुसाफिर लड़ पड़ा, सुन सास रानी जी।
कैसे थे उनके कापड़े, सुन मेरी बहू रानी जी।
धोबी के धोये कापड़े, सुन मेरी सास रानी जी।
जेठ बड़े की थी उनिहार[4] सुन मेरी सास रानी जी।
वही तो तेरा बालमा, सुन बहू रानी।
कस क्यों ना पकड़ी बाँह, सुन बहू रानी।
गले में डालूं झोली, सुन सास रानी जी।
देश फिराऊँ ढिढोरा, सुन सास रानी जी।

---

१. साँप का ज़हर उतारने वाला, २. वेशभूषा, ३. देर, ४. छवि।

पैरों में पड़ गये छाले, सुन सास रानी जी।
नैनों से बरसा नीर, सुन सास रानी जी।
देश ढिंढोरा दे फिरी, सुन सास रानी जी।
कहीं न पाई वाकी भाल[1], सुन सास रानी जी।

प्राचीन काल में न रेल थी न मोटर। यात्री वर्षों के लिए परदेश चले जाते थे। गीत की नायिका का पति भी विदेश चला गया है, वर्षों बीत गये, यहाँ तक कि एक-दूसरे का मुख देख कर भी दोनों एक-दूसरे को न पहचान सके। वियोग की अग्नि में तपते-तपते नायिका दुबली हो गई। बेचारी से पानी नहीं भरा जाता। सब सखियाँ पानी भर कर चली गईं किन्तु वह घड़ा न उठा सकी। इतने में एक यात्री आता हुआ दिखाई दिया। उसने कहा, "ज़रा घड़ा उठवा दो," परन्तु वह कहने लगा—पहले दो घूँट पानी पिला दे। यात्री की दृष्टि ठीक न थी। यह देखकर उसने कहा—मेरा पानी विष भरा है। यह सुनकर यात्री ने प्रश्न किया—"तेरे घर वाले जल कैसे पियेंगे ?" "वह तो विष उतारने वाले हैं, उतार कर पी लेंगे" "तुम्हारा मैला वेश क्यों है? जबकि सब के वस्त्र सुन्दर हैं।" मेरे पति परदेश गये हुए हैं।" "तो तू मेरे साथ चल।" "जिस पति की मैं पत्नी हूँ, वह तेरा स्पर्श भी नहीं कर सकता।" सती नारी को अपने पति की पवित्रता पर विश्वास है।

घर लौटी तो ज्ञात हुआ, वही उसका सर्वस्व था, जिसके लिए वर्षों से वह प्रतीक्षा कर रही थी। वह आज सामने से चल दिया। उसने देश-देशान्तरों को छान डाला। पैरों में छाले पड़ गए। नयन अश्रु-विमोचन करने लगे। पर उसका प्यारा न मिला। उसे प्रतीक्षा का चिर-उपहार दे गया। कैसी तीव्र उपेक्षा है और कितनी प्रेम-साधना! कबीर ने इस भाव को इस प्रकार लिखा है:—

पर्वत-पर्वत मैं फिरी, नैन गंवाये रोय।
वह बूटी पायी नहीं, जाते जीवन होय॥

महाकवि रवीन्द्रनाथ कहते हैं:—

Art thou abroad in stormy night, on journey of love, my friend ?

The sky groans like one in despair, I have no sleep in night. Ever and again I open my door and look out in darkness, my friend !

'मेरे मित्र ! क्या तुम भी मेरी भाँति इस तूफानी रात में प्रेम-यात्रा पर

---

१. चिह्न

निकले हुए हो ? आकाश एक निराश हृदय के समान आहें भर रहा है। मैं रात्रि भर सो नहीं सकता मेरे मित्र! मैं बार-बार द्वार खोलकर बाहर अन्धकार में झांकता रहता हूँ।"

(७)

जो तू बालम विदेसवा, दूर देसवा जायेऊ ना।
अपने हाथै की छरियवा, कोनवा धर के जायेऊ ना॥
जब हम निसरब[1] जैवना[2] कई कई ना।
तेरे हाथै की छुरियवा देख कै, बोधवा[3] करिवई ना॥
जो तू बालम विदेसवा, दूरि देसवा जायेऊ ना।
जब हम निसरब सोई के उठि कै ना।
तोरे हाथै की कितबिया, पढ़िकै बोधिवा करिवई ना॥

कैसा व्यापक प्रेम है ? पति के विदेश जाने पर पत्नी विरह की आशंका से विह्वल है। परन्तु वह कहती है—"प्रियतम! तुम अपने कर-स्पर्श से पवित्र की हुई छड़ी और दृष्टि से पवित्र की हुई पुस्तक यहीं छोड़ जाना। उन्हीं के द्वारा मैं अपने हृदय को समझा लूंगी।" भरत जी के लिए श्रीराम की चरण पादुका ही मन की सान्त्वना का साधन बन गई थी। विरहातुर राम को भी पंचवटी के अणु-अणु में सीता के दर्शन होते थे।

"झर-झर झरना झरत है, जिहि गुफानि सब काल।
गोदावरी सर तट मिली, यह सोई गिरि-माल॥
प्रिया संग बहुतक दिवस, बितये याही ठाम।
द्रुम-मगहू जहं के लगत, मेरे सुहृद ललाम॥

नृत्य-गीत

(८)

गुल[1] सूख गया गुल हरा नहीं होता है।
गुलशन का माली खड़ा-खड़ा रोता है।
बदली के अन्दर चांद छिपा जाता है।
जब मेरा सनम[2] औरों के पास जाता है।
मेरा जला कलेजा राख हुआ जाता है।
जब मेरा सनम कभी मेरे पास आता है।
मेरा हि मन चमन का फूल खिला जाता है।

---

१. निकलना, २. भोजन करना, ३. मन को समझा लेना, १. फूल, २. प्रिय।

मेरे घर के अन्दर और दूसरा घर है।
जहाँ बिछी मैदानी सेज एकला दम है।
मैं करूं लड़ाई का ध्यान नींद भर सोऊँ।
मैं करूं सुरत का ध्यान नैन भर रोऊँ।

"प्रिय ! तुम्हारे प्रेम-वारि के अभाव में मेरा हृदय-कमल सूख गया है। मैं अपने को देखकर रोती हूँ, जिस प्रकार शुष्क वाटिका को देखकर माली विह्वल हो जाता है। मेरी दशा उस सूनी विभावरी के समान है, जिसके प्रिय चन्द्र को मेघों ने आच्छन्न कर लिया है।" गीत की नायिका का प्रियतम भी तो पराई स्त्री के प्रेम की कादम्बिनी में लीन हो गया है !

पास रहत जब खिलत चांदनी,
दूर भये तम छावत है।
वाके बिना लगत जग सूनो,
रहि रहि मन घबरावत है।

—द्विजेन्द्रलाल राय कृत 'मेवाड़-पतन' के हिन्दी अनुवाद से

प्रियतम ! जब तुम और के पास चले जाते हो, तो मेरा हृदय जल-जल कर राख हो जाता है। कैसा एकान्त प्रेम है ! वह स्वयं जलकर राख बनेगी किन्तु किसी को उस अग्नि में दग्ध न होने देगी। ऐसी अवस्था में सुभद्राकुमारी चौहान ने अपने भाव इस प्रकार व्यक्त किये हैं:—

"किन्तु कृष्ण यह कभी किसी पर जरा प्रेम दिखलाता।
नख-शिख से मैं जल उठती हूं, खान-पान नहिं भाता।
खूनी भाव उठें उसके प्रति, जो हो प्रिय का प्यारा।
उसके लिये हृदय यह मेरा, बन जाता हत्यारा।

—सुभद्राकुमारी चौहान द्वारा लिखित 'मुकुल' से उद्धृत

बिहारी की नायिका की नाईं वह सरल ग्राम्य-बाला यह न कह सकी—

मैं तपाय त्रय-ताप सौं, राख्यो हृदय हमाम।
मकु कबहूँ आवें यहां, पुलक पसीजे श्याम।।

मेरा घर काफी बड़ा है, वहाँ एकांतमय कमरे में शैया बिछी है किन्तु मैं अकेली पड़ी हूँ।

"प्रिय तुम आते ही रोष प्रकट करोगे। यह सोचती हूँ, तो मन करता है, सो जाऊं। परन्तु तुम्हारी मोहिनी छवि की स्मृति मुझे अधीर बना देती है।" जो व्यक्ति पराई स्त्री से प्रेम करने लग जाते हैं, उनकी मद से भरी लाल-पीली

आँखें और चढ़ी हुई भृकुटि ही उनकी अभागिनी पत्नियों के भाग्य में रह जाती हैं। हाय रे, नारी का हृदय ! जो अत्याचार और अन्याय सहकर भी सदैव निज प्रिय के लिए विमल प्रेम से परिपूर्ण रहता है। प्रिय की स्मृति-मात्र से ही उसके नेत्रों में पानी भर आया अथवा वियोग की अग्नि उसके हृदय-ताल के जल को भाप बनकर फिर क्षमा की शीतलता से जमकर विरह की चट्टान से टकराकर जल में परिवर्तित हो, बरस पड़ी है।

"एकहि धर्म एक व्रत नेमा। काय वचन मन पति पद प्रेमा ॥"

यही तो स्पृहणीय प्रेम है।

(६)

धन ! जावेंगे परदेश करो बतियां
बरसैं दोय नैन भरैं नदियां
दुखिया भये नैन भरैं छतियां
एक लाल पलंग पचरंग तकिया
जाय पौढ़ रहे गोरी रसिया। बरसैं० ॥
जाओ जाओ जी पिया ! तुमने कछु ना किया
मेरी बाली सी उमर परदेश लिया। बरसैं० ॥
आओ ना गोरी तुम रस की भरी
मोरे मन से ना बिसरो एक घरी। बरसैं० ॥
एक रैन अँधेरी दूजे पिया बिछड़े
तीजे पड़न लगीं बैरन बुँदियां। बरसैं० ॥

पति परदेश जाते हुए अपनी प्रियतमा से प्रेम-मय वार्तालाप करने को उत्सुक है, परन्तु वह बेचारी प्रिय-वियोग की कल्पना से अत्यन्त विह्वल हो उठी है। वह कहती है—"प्यारे ! तुमने कुछ भी नहीं देखा, मुझे इस छोटी सी आयु में छोड़कर परदेश जा रहे हो।"

पति ने उत्तर दिया—"हे प्रिये ! तुम सर्वरस से परिपूर्ण हो, मैं तुम्हें एक क्षण को भी नहीं भुला सकता।"

वह निर्मोही चल दिया। तिमिरमयी रजनी में वर्षा हो रही है। उस बेचारी एकाकिनी के लिये वर्षा भी शत्रु बन रही है।

"पावक झर तैं मेंह झर, दाहक दुसह विशेख।
जरै हिय वाके परस, याही दृगन ही देख ॥ —बिहारी

: ११ :

करुण-रस के विविध गीत

(१)

मेरी लाश पै उनको बुला लेना।
जो वह पूछें किन मारी, उन्हें खूनी खंजर दिखा देना।
जो वह पूछें किसका इलाज, उन्हें विमल नाम बता देना।
जो मेरे माता पिता रोयें, उन्हें धीरज दे समझा देना।
जो मेरे बालक बच्चे रोयें, उन्हें लोरी देय सुला देना।
जो मेरे राजा खुद रोयें, तो छोटी बहन विवाह देना।

भारतीय नारी ने सदैव ही प्राण देकर आन को रखना सीखा है। उसकी धमनियों में सतीत्व का रक्त प्रवाहित होता है। गीत की नायिका ने सतीत्व के ऊपर अपने को न्यौछावर कर दिया है।

केहरि केश, भुजंग-मणि, पतिवरतन के गात।
शूर शस्त्र अरु कृपण धन, मरे लगे हैं हाथ॥

—तुलसीकृत रामायण से।

गीत में उसका अन्तिम सन्देश है—मेरे शव को उन्हें सौंप देना, क्योंकि जो फूल उसने एक दिन अपने देवता को समर्पित किया था, उसका अन्तिम संस्कार भी उन्हीं के हाथों से होना चाहिए। इसीलिए वह कहती है—"मेरी लाश पर उन्हें बुला लेना।" वह मरते समय अपने प्यारे से आज्ञा न ले सकी क्योंकि धर्म पति से भी बढ़कर है। द्विजेन्द्रलाल राय ने 'उस पार' नाटक में सरस्वती से क्या ही अमूल्य शब्द कहलाये हैं—"सतीत्व मेरा देवता है, तुम तो मेरे लिए उसकी अर्चना के फल-फूल मात्र हो।"

"जो वह पूछें, किसने मारा है, उन्हें यह खूनी खंजर दिखा देना।" नारी

चिर-क्षमामयी है। उसके अन्त:स्थल में समस्त विश्व का प्रेम अंतर्निहित है। इसलिए वह उस दुष्ट का नाम भी नहीं बताती, जिसकी दुष्टता से वह आज अपने प्राण त्याग रही है। जो वह यह पूछें कि किस कारण उसने प्राण त्याग दिये, तो कहना—"वह कष्ट से नहीं वरन् तुम्हारी होने की लाज रखने के लिये धर्म और मर्यादा पर मरी है।" उसके इस उत्तर को पाकर उस वियोगाकुल हृदय में भी क्या एक बार आत्मगौरव की ज्योति जाग्रत न हो उठी होगी ?

"मेरे माता-पिता को सान्त्वना देना और समझा देना।" उनके लिये वह उससे अधिक और क्या कहे ? माँ का प्यार ही बच्चों की सबसे बड़ी निधि है। माँ की प्यार भरी लोरी सुकुमार हृदय बच्चे के सारे क्लेशों को अपने में लीन कर लेती है। पर अब वह कभी अपने कलेजे के टुकड़ों को लोरी देने न आ पायेगी। इसी से वह कहती है—"बच्चों को लोरी देकर सुला देना।"

"मेरे सास-सुसर यदि कभी मेरी स्मृति में अधीर हों तो उन्हें मेरी छोटी बहिन बता देना। उनके घर में फिर पुत्र-वधू आ जायेगी, तो उनके घर की रौनक ज्यों की त्यों हो जायेगी। प्राण त्यागने से पहले एक बार फिर अपने प्रिय की स्मृति से उसका हृदय भर उठता है, इसीलिए वह उन्हें अपनी प्यारी बहिन सौंप रही है।

(२)

और दिनों तो सूखी-सी टिकिया,
आज क्यों दी सास खीर की थाली जी।
पहले तो बहू तेरी कटी अकेली,
आज घर आया तेरा बालम जी।
और दिनों तो खट्टी सी लस्सी,
सास आज क्यों दिया दूध कटोरा जी।
पहले तो बहू थी मेरी यानी[1],
आज हुई किसी जोग[2] री।
और दिनों तो टूटी-सी खटिया,
आज दिया सास लाल पलंग री।
अम्मां भी देखी, बहनें भी देखीं,
एक न देखी मैंने सजनों की धी री।

---

१. छोटी, २. योग्य

ऊँची अटारी लाल किवाड़ी,
वहां चढ़ सोई सजनों की धी री।
बांह हिलाई मुख से भी बोला,
पर न बोली सजनों की धी री।

बहू का पति परदेश गया हुआ था। सास का उसके प्रति बड़ा ही निष्ठुर व्यवहार था। भारत में सास-बहू की लड़ाई का इतिहास खून के अक्षरों में लिखा जायगा। सास ने यह सोचकर कि मेरे अन्याय की कथा प्रकट न हो जाये, पुत्र के आने का समाचार पाकर बहू को विष मिलाकर भोजन खिला दिया। पति आया परन्तु उसे न पाया, जिसे देखने की उसे बड़ी आतुरता थी। उसने पूछा और उत्तर पाकर अट्टालिका में गया, परन्तु वह कैसे बोलती जो चिर-निद्रा में निमग्न हो चुकी थी ?

(३)

राजन चाले चाकरी ए म्हाने संग ले चालो जी।
सो जा धरण बावली ए, सो जा चन्द्रावली ए !
चालेंगे जब ले चालेंगे जी ॥
सोई कुण्डा भेड़[1] कै जी, सोई फलसा[2] भेड़ कै ए,
जागूं तो कुण्डा खुल रहा जी ॥
सोई दुपट्टा तान कै जी, सोई दुपट्टा तान कै ए,
जागूं तो चूंदड़ टँक रही जी ॥
चक्की-चूल्हा अपने जिठानी नै दे चलूं जी,
छोरी-छोरा आपनै ए, चालं तो संग ले चालूं जी।
अँगूठी छल्ला अपने सासड़ जी नै दे चलूं जी,
ए म्हारी बहन पड़ोसनों, म्हारे तो राजा कब गए जी ?
दिन का निकाड़[3] था, चिड़ियों का चूंचहाट था,
ए थारे तो राजा जब गए जी ॥
खोऊँ बैरन नींद नै, खोऊँ बैरन नींद नै,
राजा नै धोखा दे दिया जी।

स्त्री के लिए पति-गृह पति के बिना सूना है। गीत की नायिका अपने पति को विदेश जाता देखकर साथ चलने का अनुरोध करने लगी। परन्तु उस निर्मम

---

१. बन्द करके, २. मुख्य द्वार, ३. निकलने वाला।

ने उसे साथ ले चलने का विश्वास दिलाकर सुला दिया। वह उठी परन्तु अपने सर्वस्व को न पा सकी। उसके ये शब्द कितने विवशतापूर्ण हैं—

"सोई कुण्डा भेड़ कै, सोई फलसा भेड़ कै ए,
जागूं तो कुण्डा खुल रहा जी ॥"

वह घर-द्वार, धन-वैभव, यहां तक कि अपने दुलारे बच्चों को भी, छोड़कर अपने प्यारे की खोज में निकलने को प्रस्तुत हो गई। प्रातःकाल का समय था, पक्षी कलरव कर रहे थे। उसके हृदय के राजा उसके हृदय को साथ में लेकर चल दिये। "ऐ बैरिन नींद! तेरा नाश हो, तूने प्यारे से मुझे अलग कर दिया।"

(४)

मायड़ भी बरजै[१] रे जोसिंह, बाबल भी बरजै
रे लाल,
मतना हो जाइयो सुसराल, गिरों हीरे लाल।
मायड़ का बरजा जोसिंह, एक न मान्या रे लाल।
छींकत चल्या सुसराल, गिरों हीरे लाल।
छींकत छांकत जोसिंह, घोड़ा पिलाना[२] रे लाल ॥
टिब्बे तो ढलती[३] रे जोसिंह साला भी मिल गया रे लाल।
घर की कुशल बताय, गिरों हीरे लाल।
फलसे तो ढलते जोसिंह लकड़ी भी मिल गई रे लाल।
हो गये सौन कुसौन गिरों, हीरे लाल।
पांच रुपये रे जोसिंह धरती में गेरे[४] रे लाल,
माड़े से सौन कुसौन, गिरों हीरे लाल।
भाजी[५] तो दौड़ी मेरी माय, कुम्हरे के गइयां रे लाल।
एक हांडी में दोय पेट गिरों हीरे लाल।
एक हांडी में मेरी मां घी-चावल रांधे[६] रे लाल।
एक हांडी में खीर रांधी गिरों हीरे लाल।
किस की खातिर मेरी मां चावल रांधे रे लाल।
किसियां की खातिर खीर, गिरों हीरे लाल।

---

१. मना करना, २. घोड़े को तैयार करना, ३. गोधूलि के समय, ४. डाल दिये, ५. भागती हुई, ६. पकाना।

भाई भतीजों मेरी धी घी-चावल राँधूं रे लाल,
रतन जमाई नै खीर, गिरों हीरे लाल ।
भाजी तो दौड़ी मेरी धी[1] ताऊ के गई रे लाल,
साजन डेरे बुलाय, गिरों हीरे लाल ।
टट्टी के ओले[2] जोंसिह भी बोले हीरे लाल।
सुन लिये गोरी के बोल, गिरों हीरे लाल ।
हुक्का न पियो रे जोंसिह, पानी न पिया रे लाल।
मतना तो खाइयो इनकी खीर, गिरों हीरे लाल।
भाजा तो दौड़ा साला ताऊ के गया रे लाल,
उठो न जीजा हमारे जीम[3] चाल्यो रे लाल ।
करी रसोई ठण्डी हो रही, गिरों हीरे लाल।
हम तो हमारे साले ग्यारस के बर्तो रे लाल,
जाय खा लेंगे अपने देस, गिरों हीरे लाल ।
उठो न जीजा हमारे घोड़े पिलानो रे लाल,
और हो लो ना सालों के साथ, गिरों हीरे लाल।
टिब्बे तो ढलती रे जोंसिह कीरों की जोड़ी रे लाल,
घोड़े तो लिये हैं आगे कर, गिरों हीरे लाल।
पहला कटारा मोरी माँ हँसियों में टाला रे लाल।
घोड़ा भी ले ले हो साला, मत खो मेरी जान,
गिरों हीरे लाल।
घोड़ा न लेऊँ हो जीजा माल ना लेऊं
गिरों हीरे लाल।
खोऊँगा तेरी जान गिरों हीरे लाल ।
टिब्बे तो चढ़ के मेरी माँ देखन लागी हो लाल,
साजन किधर को जाय, गिरों हीरे लाल ।
टिब्बे तो ढलते मेरी माँ कीरों की जोड़ी रे लाल,
चील रही मँडराय गिरों हीरे लाल ।
औरों के घोड़े मेरी माँ हींसते आवें हो लाल,
जोंसिह का घोड़ा उदास, गिरों हीरे लाल ।

१. लड़की, कोने में, ३. खाना खाने ।

पहिले ले मेरी जीजी माल मायला रे लाल,
बैठी हुक्म बजाय गिरों हीरे लाल।
जलाय गेरूँ तेरा माल मायला रे लाल,
जल जांगी सजन के ही साथ, गिरों हीरे लाल।

दम्पति के पारस्परिक प्रेम का विश्व में कोई उपमान नहीं। जोसिंह की सास दूसरी थी, वह उसके अतुल धन-धान्य की स्वामिनी बनना चाहती थी। उसके पुत्र भी इस षड्यन्त्र में सम्मिलित हो गये। उन्होंने जोसिंह को विष-भरी खीर खिलानी चाही, परन्तु जोसिंह की पत्नी ने उसे यह सूचना दे दी और वह व्रत का बहाना बनाकर बच गया। परन्तु अन्त में साथ ले जाकर धोखे से उसके क्रूर सालों ने बेचारे जोसिंह को मार डाला।

राजपूतों की पारस्परिक लड़ाइयों में पति और पितृ-कुल की वैमनस्य की अग्नि को भारतीय नारी ने सदैव अपने रक्त से शीतल किया है। यहाँ भी गीत बड़ा ही मर्मस्पर्शी है। बहिन का यह उत्तर "तुम्हारे राज्य-पाट को अग्नि लग जाय, मैं तो अपने प्रियतम के साथ सती होऊँगी।" हृदय पर गहरा प्रभाव डालता है।

उस धन का उसके लिए क्या मूल्य रह गया जो उसके प्यारे के रुधिर से रंजित है। जोसिंह की मृत्यु की पंक्तियाँ करुण-रस से परि-पूर्ण हैं।

सोहर

(५)

हये मन में सोच-विचार, बालक किसी भूप के हैं।
रथ के जुड़वैया, रथ जल्दी से लाओ,
सीता को रथ में बिठाओ,
सीता कूँ दिया बनवास, बालक किसी भूप के हैं।
इक वन लाँघा, दूजा वन लाँघा,
सीता को लग आई प्यास। बालक०
न यहाँ कूआँ, ना यहाँ बावड़ी,
कहाँ से पिलावें जल नीर। बालक०

तोड़ लाओ ढाक ढकउवा, बनाओ खलउवा[1],
सीता को पिलाओ जल नीर। बालक०
ना यहाँ दाई, ना यहाँ माई,
कौन छियावै[2] हर का नाल। बालक०
बन में से इक तपसी निकला,
हमहीं छियावें हर का नाल। बालक०
ना यहाँ नैनूं[3] ना यहाँ बिछौना,
काहे की पिलावें घुटनीर[4]। बालक०
केला उढ़ैना, केला बिछौना,
केले की पिलाओ घुटनीर। बालक०
दूर खेलन मत जाओ मेरे ललना,
आगे मिलेंगे भगवान। बालक०
एक वन लाँघा, दूजा वन लाँघा,
तीजे कूँ मिल गए राम। बालक०
किसके हो तुम कुँवर कन्हैया,
क्या है तुम्हारा नाम। बालक०
पिता अपने का नाम ना जानूँ,
सीय हमारी माय। बालक०
ले चल रे बालक उस रे कुटी पै,
जहाँ रे तिहारी माय। बालक०
ढक ले री माता केश तू अपने,
बाहर खड़े भगवान। बालक०
ऐसे पुरुष का मुख ना देखूँ,
जियत दिया बनवास। बालक०
फट जा री धरती, समा जा री सीता,
केश राम जी के हाथ। बालक०
इस काया पै दूब उगेगी,
गउएँ चर-चर जाँय। बालक०
इस काया पर बाट चलेगी,
लख आवैं लख जांय। बालक०

---

१. दौना, २. काटना, ३. एक कपड़ा, ४. जन्मघुटी।

इस काया पर गंग बहेगी,
प्रजा करेगी स्नान । बालक०

उपरोक्त गीत में सीता के दूसरे वनवास का वर्णन है। चक्रवर्ती महाराज राम की रानी और मिथिलेश कुमारी बच्चों के पिलाने के लिए घुट्टी तक न पा सकी। यहाँ तक कि जन्म के समय दाई तक भी नहीं। "भाग्य लिखी को मेटनिहारा।"

रामचन्द्रजी ने वन में लव-कुश को देखा, उन्हें उनकी सूरत देखकर ऐसा जान पड़ा कि वे बच्चे किसी राजा के हैं। उन्होंने लव-कुश से पूछा—"तुम किसके बच्चे हो ?" उत्तर मिला—"हमें अपने पिता के नाम का पता नहीं, हमारी माता का नाम सीता है।" कितने मर्म-भेदी शब्द हैं ? क्या श्रीराम के हृदय में यह बात शूल की भाँति न चुभी होगी, कि सीता ने बच्चों से उनका नाम तक भी न बताया ! राम अपना टूटा हृदय लेकर सीता के पास गए। सीता का आत्मगौरव सजग हो उठा। उन्होंने उत्तर दिया—"मेरे लाल ! पृथ्वी फट जाय और मैं उसमें समा जाऊँ। ऐसे व्यक्ति का मैं कभी मुँह भी न देखूंगी, जिसने मुझे व्यर्थ ही कलंकित कर वनवास दिया।"

नारी-हृदय की कोमलता और आत्मगौरव ने ऐसा दृश्य उपस्थित कर दिया है, मानो सूर्य और चन्द्रमा दोनों एक ही साथ उदित हुए हों। सीता की यह तेजोमयी मूर्ति चित्रपट की भाँति नेत्रों के सम्मुख आ जाती है। पृथ्वी फट जाती है और सीता उस में समा जाती है। सीता जी ने कुछ न कहकर भी सब कुछ कह दिया। रावण और कुम्भकरण के कठिन आघातों को सहन करने वाली राम की छाती क्या इस आघात से विदीर्ण न हो गई होगी ?

अन्तिम पंक्तियों में सीता के विशाल हृदय के उद्‌गार भरे हैं। "मेरे शरीर पर दूब उगेगी, जिस पर गउएं चरेंगी। मेरे शरीर पर रास्ता बन जायगा, जिस पर लाखों आयेंगे और लाखों जायेंगे। मेरे शरीर पर गंगा बहेगी जिसमें सब प्रजा स्नान करेगी।" सीता की इच्छा है कि मिट्टी में मिलकर भी उनका शरीर सब के काम आ सके। वह अपने शरीर पर गंगा बहाने को उद्यत हैं—उसी प्रजा के लिए जिसने उन्हें वनवास दिलाया है। कैसी उदारता है ! ऐसी पत्नी को पाकर ही तो राम महान् बन सके थे। सीता की व्यथा समस्त नारी-जाति के हृदय की व्यथा है, इसीलिए उन्होंने उसे पूरी तरह अनुभव किया है। गीत की टोन बड़ी ही करुणापूर्ण है।

(६)

बारह बरस पीछे घर आये ।
आय उतरे बागों छाँव ।
घोड़ा तो बाँधा जी बबूल तलां[1] ।
ताता तो पानी जी मारू[2] ठण्डा होय
कब की खड़ी बन्दी अरज करां ।
थारा तो पानी गोरी हरबी[3] ना न्हावै
न्हावै चिरवेदार दिल फटे मन सिज[4] रहे ।
दिल फटे जैसे बादल फटे पड़ गई रेशम गांठ,
हम तो खोलां वह तो खुलती नहीं ।

पति परदेश गया । १२ वर्ष तक निरन्तर पत्नी उसके नाम की माला जपती रही । वापिस आने पर पत्नी ने उसे गर्म पानी नहाने को लाकर दिया । पति का कटु उत्तर किस सहृदय के हृदय में तीर न चुभा देगा—

"हे स्त्री ! मैं तुम्हारे पानी से कदापि नहीं नहाऊँगा । इसमें तुम्हारे नौकर नहाएंगे । मेरा दिल तुमसे बादलों की भाँति फट गया है । जैसे रेशम की डोरी में पड़ी हुई गाँठ नहीं खुलती, उसी तरह मेरे और तुम्हारे बीच में जो ग्रन्थि है, वह नहीं खुल सकती । एक कवि ने कहा है—

मन-मानिक औ दूध-रस, इनको यहै सुभाय ।
फाटें से फिर ना मिलैं, कोटिन्ह करो उपाय ।।

पुरुष स्वभाव ही से सन्देही होते हैं । स्त्री वर्षों तपस्या करके भी उन पर अपने सतीत्व का विश्वास अंकित नहीं कर पाती । क्योंकि स्त्री का सतीत्व ही जीवन के समस्त सुखों का मूल है । सतीत्व इतना महान् है कि स्त्री उसकी रक्षा में समर्थ है या नहीं पुरुष को यह संदेह बना ही रहता है; और इस संदेश-वश वह भी उसकी पहरेदारी करता रहता है । स्त्री के चरित्र की जाँच-पड़ताल वह अनेक विधियों से करता है । वह उसकी जीवन-संगिनी होती है, इससे वह उसको निर्दोष और निष्कलंक ही देखना चाहता है । पुरुष स्त्री के चरित्र का मूल्य हमेशा अपने चरित्र से अधिक आँकता है । क्योंकि समाज के अनेक प्राचीन और तत्कालीन उदाहरणों से यह विदित हो गया है कि जिस कुल में स्त्री दुश्चरित्र होती है, उस कुल में लक्ष्मी नहीं रहती; उसका सुख, मान, यश, सब नष्ट हो जाता है ।

---

१. नीचे, २. प्रियतम, ३. कदापि, ४. गांठ ।

(७)

गोबर कै खेपा लइके निसरी बहिनियाँ हो न।,
भैया बिरछ तरे ठाड़े हो ना।
गोबर तो फेंका है ओही खेतवा हो ना,
बहिनि झपटि धरेई करियवा हो ना।
ना रोओ, ना रोओ, हमारी बहिनियवां हो ना,
बहिनि तुर्माहि लिवाइ चली सथिवा हो ना।
का मोसे कहेउ मोरी लहुरि भगिनियां हो ना,
बहिनि काहे धरी करियइवा हो ना।
नवइ मन पिसना, नवइ मन कुटना हो ना,
भइया नवइ मन सिझलिउं[1] रसोइया हो ना।
सभियऊं खिलायेऊँ भय्या, सभियऊं पिलायेउं हो ना,
भय्या बचि गई पलेथन[2] टिकरिया हो ना।
भय्या ओहू में कुकरा बिलरिया हो ना,
भइया ओहू में ननदी कलेउवा हो ना।
भइया ओहू में पसिया चमरवा हो ना,
ई दुख बांधेउ भैया गठरी मुठरिया हो ना।
भइया माया के आगे जनि कहियउ हो ना,
रसोइया बैठि माया झंखई हो ना।
ई दुख जनि कहेउ भय्या, बाबुल के आगे हो ना,
भइया सभवा बइठि बापा झंखइ हो ना।
ई दुख जनि कहेउ भैया, भैया के आगे हो ना,
भय्या चिठियां बांचत भैय्या झंखउ हो ना।
ई दुख जनि कहेउ भैया, बहिनि के आगे हा ना,
भय्या बहिनि ससुरवा न जाइहहि हो ना।
ई दुख कहेउ भैया अगुआ के अगवा हो ना,
भय्या जिन मोरी कीसि अगुवइया हो ना।
सोनवा तो जरै ओही सुनरा दुकनवा हो ना,
भय्या बहिनि जरै ससुरिया हो ना।

---

१. बनाना। २. बचा हुआ सूखा आटा।

ई दुख बाँधौ भैया अपनी गठरिया हो ना,
भैया जहाँ रे खोलेउ तहाँ रोयेउ रे ना।
भैया नदिया विहेउ सेरवा[1] रे ना॥

भैया बहिन की ससुराल गया। बहिन का सारा शोक अपने प्यारे भैया को देखते ही उमड़ आया। उसने उसका हाथ पकड़ कर अपनी सारी व्यथा उसे कह सुनाई। "भाई" शब्द में ही अगाध प्रेम अंतर्निहित है। भाई के बिना बहन की करुण कहानी कौन सुने? परन्तु फिर उसे ध्यान आया कि यदि भाई ने यह सब हाल घर जाकर सुनाया तो उसके माता-पिता, भाई-भाभी, और बहिनों को कितना दुःख होगा! विवाह के पश्चात् माता-पिता का अपनी प्यारी बिटिया पर कुछ भी अधिकार नहीं रह जाता। परन्तु उसके दुःखों का अनुमान लगाकर क्या उनका हृदय टूक-टूट नहीं हो जाता! सन्तान के प्रेम में तो ऋषि भी विह्वल होते देखे गए हैं। राजर्षि जनक का अपनी लाड़ली बिटिया सीता के लिए विलाप कितना मर्मस्पर्शी है!—

नव दारुण वा अपमान सों तू, निहचै दृग नीरहिं ढारति होयगी।
सिसु हो न समै पै सिये बन मैं, कहूँ बेहद पीड़ा सों आरति होयगी॥
घिरि हाय अचानक सिंहन सौं, किमि बेबस धीरज धारति होयगी।
करि कै सुधि मोरी सिये बन में, कहुं तात हि तात पुकारति होयगी॥

—भवभूति के 'उत्तर-रामचरित मानस' के हिन्दी अनुवाद से।

क्या विदेहराज की भाँति अन्य पिताओं का हृदय भी अपनी बिटिया के लिए चीत्कार नहीं कर उठता?

इसी से कन्या पण्डित को यह सन्देश देने को कहती है, जिससे वह आँख खोलकर वर ढूँढ़े। "प्यारे भैया दुःख का हाल अगुआ से कहना, जिन्होंने मेरा विवाह कराया है। हे बन्धु, जिस प्रकार सोना सुनार की दुकान पर जलता है, उसी तरह तुम्हारी बहिन ससुराल में शोक की ज्वाला में जल रही है।"

अंत में बहिन उसे रोकती है कि और किसी को मेरा दुःख न कहना; अपनी गठरी में उसे बाँध लो, जहाँ खोलना, वहीं दो बूंद आँसू गिरा देना।" अंत में बहिन को अपने घर (ससुराल) की प्रतिष्ठा का ध्यान आता है और वह फिर उसे रोकती है कि कुछ न करना। मेरे दुःखों को नदी में डुबो देना, पिता के देश में न ले जाना।

---

१. बहा देना।

(८)

लिख-लिख चिठियां पिया जी पै भेजूं
जो घर आवें सवेरे जी।
कागज भी आया थारा चिट्ठी भी आई,
म्हारा तो आवण नाहीं जी।
भाइयों नै भेजूं भतीजों नै भेजूं,
म्हारा तो आवण नाहीं जी।
भाई-भतीजे अपने घरों के राजा
म्हारा तो तू ही राजा जी।
क्या किसी छली ने दूत लगाये
क्या कुछ औगुन भारी जी।
तालों तो न्हाती म्हारे भैया देखी जी
यही है औगुन थारा जी॥
थारी माँ भी न्हावा बहन भी न्हावा
उनके बिचाले राजा हम भी न्हाये जी।
माँ बूढ़ी बहन न्याणी[1] जी
एजी बाला-सा जोबन थारा जी॥

प्रतीक्षा करते-करते आँखें थक जायें, विनम्र पत्र लिखते-लिखते लेखनी घिस जाय, पर सब व्यर्थ। वियोगिनी स्त्रियों के लिये जो नियम समाज में बाँध दिये गये हैं, उनमें जरा-सा भी व्यतिक्रम होते देखते ही पुरुष सशंकित हो उठता है।

(९)

कोरा सा कागद मेरे हाथ,
पंडत पूछन मैं चली, मेरे राम।
कहो तो पंडत कुछ मन की बात,
कब घर आवें मेरे लसकरी, मेरे राम।
आज तो पड़वा, कल नै दूज,
परसों आवें तेरे लसकरी, मेरे राम।

---

१. छोटी

जो आवाँ ए ननदल तेरा बीर,
पान-पतासों तेरा मुख भरौं, मेरे राम।
घर-घर छावों कात दी,
राजा जी का घुड़ला ड्योढ़ी हिनस्या[1], मेरे राम।
कहो न राजा कुछ बात,
ये दिन क्यूँकर काटे लसकरी, मेरे राम।
दिनों दिन बीच कचहरी,
रातों नचाई कंचनी[2], मेरे राम।
कहो न गोरी कुछ बात,
ये दिन क्यूँकर काटे, मेरे राम।
दिन-दिन तीजन[3] में रही मेरे राम,
रात अम्मा धोरै[4] काटी, मेरे राम।

पति और पत्नी के उत्तर में कितना अन्तर है? पति ने वेश्याओं से अपना मनोरंजन किया पर पतिव्रता पत्नी ने तो चरखे और माँ की गोद को ही अपना आश्रय-स्थल बनाया है। स्त्री स्त्री ही है। उसकी पवित्रता ही उसकी निराली निधि है।

---

१. घोड़े का हिनहिनाना, २. वेश्या, ३. चर्खा कातने का स्थान, ४. पास।

: १२ :

मृत्यु के गीत

संसार में अपने प्रिय-जन के वियोग से बढ़कर कोई व्यथा नहीं है। जो हमारे गृह का मुख्य अंग, मां के नयनों की पुतली, प्रियतमा का सर्वस्व, भगिनी का दुलारा भैया, घर का प्रकाश, दुःख में शान्ति और सुख में जीवन प्रदान करने वाला होता है, उसके अनन्त वियोग की व्यथा को चित्रण करने की शक्ति तुच्छ लेखनी में कहाँ है ? अपने ही हाथों से उसे यों नदी में फेंकना अथवा आग लगाना जिसकी ज़रा-सी चोट भी नहीं देखी जाती थी। मन मीन के समान छटपटा कर रह जाता है किन्तु वह नहीं आता और कभी नहीं आता, जो हमारे एक आँसू पर प्राण दे देता था। हृदय खोजा करता है और आँखें ढूँढा करती हैं। उसकी पद-ध्वनि सुनकर हम चौंक उठते हैं। उसकी बोली हमारे कर्ण-कुहरों में प्रतिध्वनित होती रहती है। हृदय में नासूर हो जाता है, जिसकी कोई औषधि नहीं, यह असाध्य रोग है। क्रूर काल की चक्की कभी जननी को छोटे-छोटे शिशुओं से छीनकर, कभी माँ को अपने लाल के वियोग में बिलखती छोड़ कर, कभी पत्नी को पति के बिना जलती चिता में जलने को बाध्य कर, कभी बहिन से दुलारे भैया को छीनकर, तो कभी अन्य सम्बन्धियों के वियोग में तड़पा कर अपने कठोर पाटों में पीसती रहती है। अभागी अंखियाँ सब कुछ देखते हुए भी ऐसी हो जाती हैं, मानो कुछ देख ही नहीं रही हैं। मनुष्य सब काम केवल यन्त्रवत् करता है।

कुछ समय के लिए इस कठोर आघात से हम अचेत हो जाते हैं। परन्तु फिर यह अचेतन अवस्था दूर हो जाती है। उस समय जो शोक का प्रबल उच्छ्वास उठता है, वह सारी सान्त्वनाओं को अपने में लीन कर लेता है। समय व्यतीत होता जाता है, संसार समझता है, हम उन्हें भूल गए हैं, किन्तु वह नहीं जानता, हमारी हँसी के पीछे वेदना का कैसा अथाह सागर हिलोरें ले रहा है,

वे सदैव हमारे पास आते हैं, अपनी उसी छवि को लेकर। समय आँसुओं को सुखा देता है, परन्तु हमें उनसे पृथक् नहीं कर सकता।

इश्क भी महबूब के मरने से मर जाता नहीं।
रूह में ग़म बनके रहता है, मगर जाता नहीं ॥

—महाकवि इक़बाल

हम उन्हें भुलाना चाहते हैं, पर भुला नहीं पाते। उन्हें भुलाने के विचार से ही हृदय में असह्य पीड़ा होती है। किसी बात में भी तो उनका साझा नहीं रहा। क्या हृदय से भी उस मूर्ति को निकाल दें? यह कल्पना हृदय को विदीर्ण करने लगती है।

मृत्यु पर लोक-कविता बड़ी मर्म-स्पर्शिनी है, काव्य-प्रेमी पाठक इसका अनुमान लगायेंगे।

विधवा का विलाप

(१)

हाय हाय मेरा खिवैया !
क्या होनी क्या होइयाँ हाय हाय हाय मेरा सिरताज हा !
नदी आई पहाड़ की, चढ़ गई गगन गंभीर। हाय०
पहले डूबे मोचड़े[१] सूँ[२] घोड़ें असवार।
मेरा भाई मल्लाह[३] का, नय्या पार उतार।
हाथ की दूँगी मूँदड़ी, गल का नौलख हार।
मल[४] का साथ मिला हुआ फेर मिलन का नाँय।
सब सब सूए[५] वालियाँ, राँडी[६] मोल न तोल।
सब सब पूतों[७] वालियाँ, राँडी भौंरा देश ॥
ज्यों-ज्यों मल-सड़ ऊभरै[८], त्यों-त्यों भारी होय।
रांड गली का टोरड़ा[९] मन माने ठुकराय।
रंग महल से ऊतरी, शीश महल ना जाय।
बेसर टूटी सेज पै, बिछुए रतन जड़ाय।
रतड़ा पलंग निवार का, खड़ी सूए के पास।

---

१. जूते, २. साथ, ३. यमराज, ४. मृत्यु, ५. पति, ६. विधवा, ७. पुत्र, ८. निकट आना, ९. कंकरी।

क्या तुम सूए सो रहे, क्या तुम भरे गुमान।
सूता होय जगायले, रूठा होय मनाय।
मौत ना बस की होय होंगे कौने मालवै,
या सरवर की पोल।
सुरगो उट्ठे दामड़े, राँडी मोल ना तोल।
क्या तुम संशय[1] ऊतरे, क्या तुम गढ़े सुनार।
आज पड़े हो धूल में, कीन्हीं क्या करतार।
वहाँ का गया ना बाहुड़े[2], उन राहों ना जाइयो।
उन राहों जम रही धूल।
आवते का मुख देखियाँ जावते की बस पीठ
पीठ दिखाए ना सरै[3], तुम बिन पड़ी पुकार।
हमारी पुकाराँ ना सुनी, ठाड़ा[4] ले गया मार।
की ठाड़े की वीनती, ये दिन मांगे देय।
माँगे दिन तो ना मिले, माँगे मिल गई मौत।

हाय, भवितव्या की क्रूर गति! क्या से क्या हो गया? हाय! मेरे सिर-मौर, मृत्युरूपी नदी की बाढ़ आई और आकाश तक पहुँच गई। पहले मेरे जीवन-नौका के केवट के जूते भीग गये फिर वे स्वयं भी उसमें विलीन हो गए। मेरे भैया यमराज! किसी प्रकार उनकी नौका पार उतार दो अर्थात् मृत्यु की नदी में डूबने से बचा लो। मैं हाथ की अँगूठी और गले का नौलखा हार दे दूंगी। ('भैया' कहना यहाँ साभिप्राय है, क्या भाई बहिन को स्वयं वैधव्य जैसी अग्नि में जलने को छोड़ देगा?) "मैं तुम्हारी अँगूठी को तोड़ दूंगा और नौलख हार को नदी में बहा दूँगा।" हाय! जो काल के साथ चला गया, वह क्या कभी मिलेगा? प्रियतम! सब पति वाली सनाथा हैं, परन्तु तुम्हारे बिना मेरा मूल्य नहीं रहा।

नोट—सूए शब्द का प्रयोग दर्शनीय है। सूए का अर्थ है तोता। जिस प्रकार तोता आँखें बदल लेता है, इसी प्रकार तुमने भी आँखें बदल लीं। या जिस प्रकार पिंजरे से तोता उड़ जाता है, उसी प्रकार तुम उड़ गये।

होकर रहूँ किसकी अहो! अब कौन मेरा है यहाँ?
कह दो तुम्हीं बस न्याय से, अब ठौर है मुझको कहाँ?

१. आकाश। २. लौट कर आना, ३ काम चलना, ४. शक्तिशाली यम।

माता-पिता आदिक भले ही, और निज जन हों सभी।
पति के बिना पत्नी सनाथा, हो नहीं सकती कभी॥

(मैथिलीशरण गुप्त के 'जयद्रथ-वध' से)

"सब की गोदी लालों से भरी हुई है, परन्तु तुम्हारे अभाव में मेरे लिए तो अँधेरी कोठरी ही रह गई है। ज्यों-ज्यों प्यारे! मृत्यु तुम्हारे निकट आई, मेरे लिए भारी पड़ गई। तुम्हीं बताओ, यह असाध्य व्यथा मैं कैसे सहन करूँ?

"सर्वेश! तुम्हारे बिना मैं गली में पड़ी कंकरी के सदृश हो रही हूँ। चाहे आते-जाते कोई भी ठुकरा दे। मेरे सारे ही मान मारे गये। "राँड गली का टोरड़ा, मन माने ठुकराय।" यह पढ़कर हृदय टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। "हाय प्रिय! जिस दिन मैं रंग महल से उतरी थी, नहीं जानती थी कि कभी शीश–महल में नहीं जा सकूँगी। प्यारे! प्रेमक्रीड़ा करते हुए जो बेसर[1] टूट गई थी, वह ज्यों की त्यों शैया पर पड़ी है। रत्न-जटित नूपुर[2] भी वहीं पड़े हैं। वहीं वह सुन्दर निवार का पलंग बिछ रहा है।" वह कल्पना में इतनी डूब गई कि उसे अपनी दशा की सुधि नहीं रही। "प्यारे! क्या तुम सो रहे हो! क्या तुमने मुझसे मान किया है?" उसकी यह पुकार शून्य में प्रतिध्वनित हो उठी। "हाय! सोते हुए को तो जगाया जा सकता है, रूठे को मनाया जा सकता है; किन्तु मृत्यु पर किसी का वश नहीं। प्यारे! न जाने तुम किस लोक में हो, अथवा स्वर्ग में हो।"

कितनी विनय मैं कर रही हूँ क्लेश से रोते हुए।
सुनते नहीं हो किन्तु तुम बेसुध पड़े सोते हुए॥
अप्रिय न मन से भी कभी मैंने तुम्हारा है किया।
हृदयेश! फिर इस भांति क्यों निज हृदय निर्दय कर लिया॥

('जयद्रथ-वध' से)

"स्वर्ग से प्रतिध्वनि आ रही है कि विधवा का कोई मूल्य नहीं। मेरे नाथ! तुम आकाश से उतरे थे, अथवा तुम्हें सुनार ने बनाया था? तुम कैसे सुन्दर लगा करते थे! आज वही तुम धूल में पड़े हुए हो। विधाता ने यह क्या किया?

जो अंगरागांकित रुचिर, सुठि सेज पर थी सोहती।
शोभा अपार निहार जिसकी, मैं मुदित हो मोहती॥

---

१. नाक का आभूषण २. बिछुए

तव मूर्ति क्षत विक्षत वही, निश्चेष्ट अब भू पर पड़ी।
बैठी तथा मैं देखती हूँ, हाय री छाती कड़ी॥

—'जयद्रथ वध' से

"प्यारे ! उस मार्ग से न जाना। वहाँ का गया कभी नहीं लौटता। प्यारे ! जब तुम आये थे तो मैंने तुम्हारा प्यारा मुखड़ा देखा था। तुम आज जा रहे हो परन्तु मैं तुम्हारी पीठ ही देख सकी। क्या कभी तुम्हारा वह सुन्दर मुखड़ा निहार सकूँगी ? प्यारे ! संसार रूठ जाय, पर तुम्हारे रूठे से काम नहीं चलेगा। तुम्हारे बिना कैसा शोक छा गया है। हाय ! हमारी अनुनय-विनय पर यमराज ने किंचित् भी ध्यान न दिया। वह बलशाली था और उसने हमसे तुम्हें छीन लिया। तुम चले गए इस विरह-विधुरा के जीवन को निरन्तर जलने वाली चिता बनाकर। जिन दिनों की याचना की थी वह नहीं मिले 'मन चाही होती नहीं हरि चाहि तत्काल।' मैं लुट गई, हाय ! मेरे केवट ! तुम चल दिए।"

रामायण में रावण की मृत्यु पर मंदोदरी का विलाप भी करुण-रस से परिपूर्ण है—

पति गति देख ते करहिं पुकारा। छूटे चिकुर न वपुष संभारा॥
उर ताड़ना करहि विधि नाना। रोवत करहि प्रताप बखाना॥
तव बल नाथ डोल नित धरनी। तेज-हीन पावक ससि तरनी॥
सेष कमठ सहि सकहिं न भारा। सोइ तन भूमि परेउ भरि छारा॥
वरुन कुबेर सुरेस समीरा। रन सन्मुख धर काहू न धीरा॥
भुज-बल जितेउ काल जम साईं। आजु परेउ अनाथ की नाईं॥

× × ×

सुलोचना अपने पति के मरने पर इस तरह विलाप करती है :—

गुण-गण साहस शील नाह के। कहि रोवत बल विपुल नाह के॥
जेहि भुज-बल-सुरनाथ बिगोवा। सो भुज आजु समर महिं सोवा॥
मणि-गण भूषण वसन बिसारत। महि लोटत करतल सिर मारत॥
मगन शोक-सरि तनु सुधि नाहीं। दारुण विपति कहौं केहि पांही॥
क्षणक प्रबोध सखी कोउ करई। बहुरि शोक दावानल जरई॥
क्षण क्षण उठति परति धरणीतल। पुनि रोवहि सराहि पति कर बल॥

—तुलसीकृत रामायण से

जो विधवा के अन्तर की व्यथा का चित्रण लोक-कविता में है, वह अन्यत्र साहित्य में देखने को न मिलेगा।

(२)

अरे मेरे करम के खारे जल गए, अरु मोमी दूदाभ[1]।
अरे मेरे करम के सुनरा मर गए, रूठ गए मनिहार ॥
बहू री मेरी मत रोवै मुझे लगा री लाल का दाग।
माँ अरी धौले-धौले पहर कपड़े राँडा भेष भरावै।
अरी चले सुनरा के मेरी नाथ उतरवावै।
अरी देही जले जैसे कांच की भट्टी पकावे।
अरी बिच्छू ने मारा डंक लहर क्यूँ न आवे ॥
अरी अपना मन समझावन लागी, दो नैनों में भर आया पानी।
अरे सासू जब धँसूँ महल में दरी बिछौना सूना।
कुछ एक दिनां की ना है मुझे सारे जन्म का रोना।
अरे यानी थी तब रही बाप के मुझे सोच कुछ ना था।
अब कैसे कटें दिन रैन री मुझको एक दिना की ना है।

"हाय मेरा कैसा दुर्भाग्य है। मेरे अच्छे-अच्छे वस्त्र उनके बिना व्यर्थ हैं। मेरे लिए चूड़ी और आभूपरण कुछ भी नहीं रहे।" "बहु! मत रो। मुझे भी तो देख, मेरा लाल भी तो सदा के लिए मेरे हृदय में अपना चिह्न अंकित कर गया है।"

"हाय, अम्मां! सफ़ेद-सफ़ेद कपड़े मुझे पहना दिए गये, मेरी नथ सुनार से उतरवा डाली गई। मेरा शरीर काँच की भट्टी की भाँति जल रहा है! मैं कैसे नहीं रोऊं? मेरे तो यमरूपी बिच्छू ने डङ्क मार दिया है। जब मैं अपने मन को समझाती हूं तो मेरी आँखें भर आती हैं। जब मैं घर में घुसती हूं तो सूनी शैया की ओर देखा नहीं जाता। मुझे तो जन्म पर्यन्त रोना पड़ेगा। हाय! मेरा दुर्भाग्य एक दिन का नहीं। मैं छोटी थी तब माता-पिता के प्रेम की छाया से मेरा बचपन बीत गया पर अब—हाय! कैसे दिन-रात बिताऊंगी?"

"राम किशना चौकस रहिये, तेरी होयगी महल में चोरी।
राम किशना चौकस रहिये, तेरी होयगी महल में चोरी।
अरे आँयत[2] तो वाकी माता रोवै, पांयत[3] रोवै गोरी।
अरी तू क्यों रोवै बन्दी साहब की, जिन जोड़ी तिन तोड़ी।
अरे चार जनों के कांधे रख लई, बनी काठ की घोड़ी।

१. एक प्रकार के सुन्दर वस्त्र २. सिर की ओर ३. पांव की ओर।

अरे जाय उतारी गंगा किनारे, फागुन केसी होरी।
अरे चुग-चुग चन्दन चिता बनाई, फूंक देई फागुन केसी होरी।

मनुष्य का जीवन क्षणभंगुर है, यह जानकर भी मनुष्य को सन्तोष नहीं होता। गीत में मनुष्य की अन्तिम अवस्था का चित्र अङ्कित है।

(३)

चलत पिरान कैसे रोयेउ पिरिया,
तुमका न रोयहूं पिरभु अपने को रोयऊं।
को मोरी पार लगाइ है उमरिया।
देवरा जेठा के लरिका खिलायेउं,
उनहू में दिन बिसरायेऊ पिरिया। चलत०
देवरा जेठा कोउ काम न अइ हैं,
हमहूं को चनना[1] लगायेऊ पिरिया। चलत०

अपने प्रिय को सदा के लिए बिछुड़ता देखकर गीत की नायिका रो रही है। पति से यह देखा न गया, वह बोला—"अब तो मैं जा रहा हूँ प्रिये ! तुम ऐसे समय में क्यों रो रही हो ?" "मेरी जीवन-नौका के केवट ! मैं तुम्हें नहीं, बल्कि अपने लिए ही रो रही हूँ, तुम्हारे बिना मेरी उम्र की नय्या कौन पार लगायेगा ?" "प्यारी ! देवर-जेठ के बच्चों को खिला-पिलाकर उन्हीं में दिन भर भूली रहना। यदि वे भी साथ न दें तो मेरी स्मृति में ही दिन बिता देना।" विधवा के हृदय की अग्नि अमिट है। उसे शान्त करने की शक्ति किसी में नहीं है। यह वह नासूर है, जो कभी अच्छा नहीं होता।

विधुर का विलाप

(४)

ब्याही थी रे बिलसी नाहीं, यो क्या हुई प्यारी ए।
तोड़ी थी रे सूंघी नहीं, ली थी गले में डार, प्यारी ए॥
घर-घर दीवा, घर-घर बाती, रँडुवे के घर घोर अन्धेरा ए।
घर-घर भोजन घर-घर रोटी, मेरे घर ढकनी में चून, प्यारी ए॥
दामन-चुँदरी खूंटी धरे हैं, एक बार पहन दिखाय, प्यारी ए।
पानी की गगरी रीती धरी है, इक बार सागर जाय, प्यारी ए॥

---

१. अर्चना

गहने का डिब्बा भरा धरा है, इक बार पहन दिखाय, प्यारी ए।
भैया तेरा लेने आया, इक बार नैहर[1] जाय, प्यारी ए॥
सेजें मेरी सूनी पड़ी हैं, एक बार सूरत दिखाय, प्यारी ए।
डाल खटोला बगड़[2] बिच सोया, एक बार सुपने में आय, प्यारी ए।

"हाय, प्रिये ! केवल विरह ही की तू हिस्सेदार बनी, सुख-ऐश्वर्य को भोगने के समय तू चल बसी। मैंने जो कलियाँ चयन की थीं, उनकी सुगन्धि का आनन्द न उठा सका। प्यारी ! तू चल दी। हाय, प्रिये ! सबके गृह दीपक की ज्योति से जगमगा रहे हैं, किन्तु तेरे बिना मेरा गृह तिमिराच्छन्न पड़ा है। कौन दीपक जलाए ? सबके यहाँ भोजन बन रहा है, किन्तु तेरे बिना प्यारी ! मेरे लिए कौन खाना बनाएगा ? हाय ! आटा मटकी में पड़ा है। मानो वह जड़ होते हुए भी तेरी प्रतीक्षा कर रहा है।

"प्रियतमे ! तेरे पहनने के वस्त्र ज्यों के त्यों खूंटी पर रखे हैं। पर तू पहनने वाली चली गयी। हाय ! केवल एक बार ही तू अपनी मनोरम छवि दिखा दे। तेरे बिना मटके में जल भी नहीं है, क्या तू एक बार सरोवर तक जाकर मेरे लिए जल न लायेगी ? क्या तू मुझे यों ही प्यास से छटपटाता देख सकेगी ?

"तेरे आभूषण यों ही पड़े हैं। प्राणप्रिये ! क्या मेरे प्रेमानुरोध से भी एक बार तू उन्हें न पहनेगी ?"

"तेरा भैया तुझे लेने आया है, हाय ! क्या तू अपने पीहर न जायेगी ? क्या वह निराश ही लौटेगा ?"

"मेरी शैया तेरे बिना सूनी पड़ी है। एक बार सूरत तो दिखा दे। बस प्रिये ! एक बार कम से कम स्वप्न में तो आ ही जाओ।"

चाहे कभी कोई आकर उसके अभाव की पूर्ति कर दे, परन्तु वह कैसे भुलाई जा सकेगी जिसने उसके चरणारविंद पर अपने हृदय को इसी प्रकार बिखेर दिया था, जैसे फूल अपनी पंखुड़ियों को बिखेर देता है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपनी पत्नी के वियोग में 'स्मरण' नाम की पुस्तक लिखी है, उनकी एक कविता का हिन्दी अनुवाद निम्नलिखित है—

करूँ कामना अपने उर की, तुम्हारे ही द्वारा नित।
रहूं समझता अपने मन में, हो विराज रही जीवन में,
मैं होकर ही नित मेरे हित॥

---

१. पितृगृह, २. आँगन

शुभ प्रसंग जब आता कोई, आती तेरी याद।
तू होती तो तुझे सुनाता, मैं यह सुख संवाद॥
सुख में कभी न आवे स्मृति, पर दुख में तत्काल।
चित्त किसी विस्मृत बाधा से, हो जाता बेहाल॥
कोमल-हृदय बाँट लेता जो, दुख को भी सुख तुल्य।
उसे देखने को बढ़ता है, विह्वलता बाहुल्य॥
कैसे भूला जा सकता है, तेरा प्रणय प्रकाश।
जीवन के प्रत्येक साँस में, है उसका आभास॥
शीघ्र तुझे जाना था, यदि जो होता इसका भान।
करता मैं उन क्षणिक क्षणों का चूस-चूस रसपान॥
बार-बार मन में लाता है, तेरा स्मरण विषाद।
क्षण-भर को ही वहाँ तुझे क्या आती है कुछ याद॥

—सियाराम शरण गुप्त द्वारा लिखित 'विषाद' से

× × ×

"मेरी सहचरी चली गई, मेरा आनन्द समाप्त हो गया। मेरे लिए संगीत में कोई आकर्षण नहीं, वसन्त निरानन्द है। मेरा ऐश्वर्य व्यर्थ है। मेरी शैया सूनी पड़ी है। मेरे गृह की स्वामिनी, मेरी संगिनी, मेरे गुप्त समय की सखि, मेरी शिष्या, जो सब कुछ मेरे साथ सीखती थी, तुझे निष्ठुर मृत्यु ने मुझसे छीन कर मेरा क्या-क्या ले लिया! ओ सुन्दर नेत्रों वाली, तुमने मेरे प्रेमामृत का पान किया था। लो, आज उस दूसरे लोक में मेरे आंसुओं का पान करो। तुम्हारे बिना मेरे लिए यह सब सुख-साज किस काम का रह गया है? मेरी प्रत्येक खुशी तुम्हीं पर निर्भर थी, अब विश्व में कोई भी मुझे प्रसन्न नहीं कर सकता।"

—इन्दुमति की मृत्यु पर अज का विलाप,
कालिदास लिखित 'रघुवंश' के हिन्दी अनुवाद से

श्री बच्चन ने 'निशा-निमन्त्रण' में जो कविताएँ अपनी पत्नी के स्वर्गवास पर लिखी हैं, सभी हृदय पर गहरा प्रभाव डालती हैं।

दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।
हो जाय न पथ में रात कहीं,
मंजिल भी तो है दूर नहीं—
यह सोच थका दिन का पंथी, भी जल्दी-जल्दी चलता है!
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।

बच्चे प्रत्याशा में होंगे,
नीड़ों से झाँक रहे होंगे—
यह ध्यान परों में चिड़ियों के, भरता कितनी चंचलता है।
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है !
मुझ से मिलने को कौन विकल ?
मैं होऊं किसके हित चंचल ?
यह प्रश्न शिथिल करता पग को, भरता उर में विह्वलता है।
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है !

कुमारी कन्या की मृत्यु पर

(५)

गोरी गोर बियासनी, बच्ची मोरनी ए,
गोरे बाबुल की धीय, बच्ची मोरनी ए।
हाय हाय बच्ची मोरनी ए ।।
केरे रोऊँ सराह[१] कै बच्ची मोरनी ए, केरे सुहावन बोल।
किन तेरा डिब्बा खोलियाँ, किन तेरा किया सिंगार।
हिय बधूं[२] उस माय का कैसे किया सिंगार ।।
आँखों पट्टी देय ली, छाती वज्र किवाड़।
इसजानी[३] का बाहुड़ै[४], वहाँ गया ना बाहुड़ै, अपने घर बैठ।
जब तें घर ते नीकली, मन्दे[५] हो गये सौन[६]।
मन्दे सौन न जाइयो, जाइयो शकुन बिचार।
आगे मिल गई लाकड़ी, उल्टे घड़े पनिहार।
छींकत मंजा[७] ढाइयाँ उट्ठी दामन चीर।
काल अचानक मारिया, पहरे बैठे बार[८]।

"हाय ! मेरी मोरनी सी बच्ची ! तू अपनी बाल-क्रीड़ा से इस घर को उल्लासमय बनाये रखती थी। तू कैसी सुन्दर थी, पिता की लाड़ली बिटिया थी। हाय बच्ची ! मैं कहाँ तक रो-रोकर तेरी प्रशंसा करूँ ? कैसी प्यारी बोली थी ! बिटिया ! किसने डिब्बा खोला और किसने तेरा शृङ्गार किया ? हाय, दुलारी बेटी ! इस अभागी मां ने ही तुझे अन्तिम बार भी सजा दिया। तेरी मां के इस निष्ठुर हृदय की प्रशंसा ही करनी पड़ती है। बिटिया ! कैसे

---

१. बड़ाई करना २. बड़ाई करना, ३. संसार का गया हुआ, ४. लौटना, ५. बुरे, ६. शकुन, ७. चारपाई, ८. द्वार पर।

मैं यह देख सकी ? आँखों पर पट्टी बांधकर और छाती पर वज्र रखकर मैंने तुझे सदा के लिए विदा कर दिया। बच्ची ! यहाँ का गया लौट सकता है, परन्तु वहाँ से कोई भी नहीं लौटता। बच्ची ! हाय, तुझे कैसे देख सकूंगी ? तेरे जाते ही सारे शुभ शकुन कुशकुन हो गये। तू अशुभ समय में ही चली गई।"

हाय रे, मां का हृदय ! वह स्वयं बच्ची का दुख सह सकती है, परन्तु अशकुन के समय जाकर उसकी बिटिया कष्ट न पाये, यह भावना उसे और भी विचलित बना रही है। आगे लकड़ी मिली और उल्टा घड़ा लिये पनिहारी। "छींकते ही तेरा पलंग बिछा होगा, बच्ची ! उस पर से सदा ही के लिये विदा लेकर उठी। हाय ! सब बैठे देखते रहे, तुझे काल ले गया।"

सियारामशरण गुप्त ने 'आर्द्रा' में 'खादी की चादर' नामक कविता में पुत्री के वियोग में विह्वल जननी के उद्गार इस प्रकार लिखे हैं—

किन्तु अरे निष्ठुरे, तनिक तो दूध यहाँ पीती जाती।
तू भूखी ही गई हाय रे, जलती है मेरी छाती॥
कौन लोक में पहुँच चुकी तू, पता नहीं हा ! गई कहाँ ?
तो फिर क्यों फिर-फिर आ-आकर भूल दृगों में रही यहाँ।
मुरझा गया भूख से मुख है, कौन खिलावेगा तुझको ?
बता कहाँ है कौन हाय ! जो दूध पिलावेगा तुझको ?
अरे कहीं कोई है ऐसा, हो उसका सौभाग्य अचल।
तुझ तक पहुँचा सके, आज जो एक घूंट पय ही केवल॥

विवाहिता पुत्री की मृत्यु पर

(६)

हाय हाय हे बागों की कोयल।
आँख नींबू की फाँक, बच्ची सोने की चिड़िया।
हाय हाय बच्ची, सोने की चिड़िया।
मूँगफली सी आँगुली। हाय हाय० ॥
नाक सुए की चोंच,
होठ पीपल के पात से,
किन तेरी बाँधी अर्थी। बच्ची सोने की चिड़िया।
किन तेरी चिता चिनाई ?
कन्तै चिता चिनाई[1]।

१. बनाई।

घर तें क्योंकर निकली ?
फिर कब आवेगी बन्नी ?
बायें बोली कोतरी,
सिर पर बोला काग।
क्या मांगे है कोतरी जी ?
क्या मांगे है काग ?
सिर मांगे है कोतरी जी,
धड़ मांगे है काग।
ओढ़ पहर के नीकली[1]······के तख्त बाज़ार।
लोग महाजन न्यू कहैं, किसकी बन्नी[2] जाय।
बन्नी बन्नी मत करो······[3], की रानी जाय।
अरी तेरा बाबल फिरै उदास,
तेरी अम्मां जोहै बाट, अम्मां कौन पुकारै ?
भैया तेरे लेने आया, एक बार नैहर जाय।
चाची ताई तेरी रोवैं, उनको रोकन जाय॥
गहनों का डिब्बा भरा धरा है, एक बार पहन दिखाय॥

यह माँ के शोकपूर्ण हृदय की करुण कविता है। अपनी लाड़ली बिटिया की छवि अब भी आँखों के सामने घूम रही है। अन्तिम पंक्तियों में माँ की वेदना बाँध टूटी हुई नदी के समान बह निकली है। हाय ! अभागिन माँ की प्रतीक्षा क्या कभी पूर्ण होगी ? वर्षों बीत जायेंगे, पर जब वह कभी उस प्रेम से 'अम्मा' शब्द को न सुन पायेगी, तब क्या माँ का प्रेम-भरा हृदय बारम्बार यही करुण पुकार न करता रहेगा "फिर कब आयेगी, सोने की चिड़िया ?"

वृद्ध की मृत्यु पर

(७)

पेड़ड़ा बल पेड़ड़ा देशों दा राजा, हाय हाय री देशों दा राजा।
पेड़ड़ा स्वर्ग विमान, हा देशों दा राजा······
स्वर्गों आई तुझे पालकी, नाले[4] आये विमान,
हर हर करते ले गए, मुख नारायण का नाम।
ले री उतारा हर की पौड़ियां, फूलन की महकार।
पानां के वे साथड़े, फूलन की महकार।

---

१. पति के नगर का नाम, २. दुलहिन, ३. पति का नाम, ४. साथ।

बंशी-बट के देवता रोएं, वृन्दावन की गोपियाँ।
मुख नारायण का नाम।
ना ढल, ना ढल, ना ढलै, कि धरौ हौंदी ओर।
गठरी बाँधे ना रहे, कोने संभड़े[1] ना रहे।
चल उस राजा के साथ।
भरे बजारां काढ़ियां कौन ढला[2] सरदार।
खानदानियों का जमड़ा[3] शाल पढ़न्तों का बाबा।
इतनों का परधान।
काँधी लागे खानी बछड़े[4] हेट[5] लगा परिवार।
पोते चँवर ढुलाइयाँ, दोहते शंख बजायँ।
हर हर करते ले गये, मुख नारायण का नाम।

उपरोक्त गीत में वृद्ध के स्वर्गारोहण का चित्र अंकित है। दृश्य नेत्रों के सम्मुख साकार-सा हो उठता है। मृत्यु अवश्यम्भावी है। जिसने इतने दिन तक पुत्र-पौत्र सहित सुख-ऐश्वर्य का भोग किया, उसकी मृत्यु पर अधिक दुःख ही क्या? पर फिर भी चिर-विदा के समय प्रियजनों को दुःख का होना अवश्यम्भावी ही है। मृत्यु किसी की भी हो, दुखद तो है ही। जो देश-देशान्तरों का राजा था, आज वह चला गया। उसके लिए सुन्दर विमान और पालकी स्वर्ग से आई है। भगवान का नाम जपते हुए सब उसे ले जा रहे हैं। अर्थी को हर की पौड़ियों पर रख दिया गया, फूलों की सुगन्धि दिग्दिगान्तरों में व्याप्त हो गई। पान ऊपर सुशोभित हैं। देवताओं के समान पुरुष और गोपियों के समान स्त्रियाँ उसके वियोग में रो रहे हैं। हाय! तुम न जाओ, न जाओ। अब हमारे ऊपर किसके वात्सल्य की छाया रहेगी? मृत्यु अनिवार्य है। न वह गठरी बाँधने से पीछा छोड़ती है, और न कोने में छिपकर रखने से। आज किस सरदार ने लोक-प्रयाण किया है? वह अपने वंशजों का सिरमौर था, पाठशाला में पढ़ते हुए पोतों का दादा था। उसके पुत्रों ने उसे कन्धे पर उठाया, साथ में उसका सब परिवार था। पौत्रों ने चँवर ढुलाया, नातियों ने शंख बजाया और सब हर-हर करते हुए भगवान् का नाम लेते हुए उसके साथ जा रहे हैं।"

---

१. संभाल कर रखना, २. प्रयाण करना, ३. वंश का शिरमौर, ४. कुटुम्ब के बच्चे, ५. साथ।

यह वर्णन साहित्य में एक दम नया है।

नोट—पति की मृत्यु पर विलाप हमने वृक्ष की छाया में जंगल में बैठकर बड़ी कठिनाई से लिखा है। पुत्र और जामाता की मृत्यु का विलाप हमें नहीं मिल सका। यद्यपि ये गीत अत्यन्त करुण भाषा में और करुण रस से पूर्ण हैं, परन्तु अशुभ होने की आशंका से कोई उन्हें उसे अपने मुंह से बोलना पसन्द नहीं करता।

खण्ड ६

विविध गीत

तथा

ग्राम-दोहे

: १३ :

विविध गीत

जन्म, विवाह, मिलन, वियोग आदि अवसरों के अतिरिक्त भी बहुत-सी घटनाएँ होती हैं जिनका मानव-जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। उसका प्रभाव हमारे ऊपर स्थायी रूप से पड़ता है। ऐसी घटनाओं की अँगुली से हमारी हृत्तन्त्री जब झंकृत हो उठती है, उस समय वह जिस रागिनी की सृष्टि करती है, वह हमारे जीवन के महत्वपूर्ण अंश से निर्मित होती है। इसीलिए उसे सुनकर वास्तविकता हमारे सम्मुख आकर हमें आंदोलित कर देती है।

मानव-जीवन सम्बन्धी प्रत्येक घटना पर कविताएँ लिखी गई हैं। कविता प्रकृति के अधिक निकट है और रवीन्द्र के शब्दों में स्त्री पुरुष से कहीं अधिक प्रकृति के निकट है। नारी का जीवन ही कवित्वमय है; और ग्रामीण नारी—वह तो प्रकृति की गोद में ही खेल-खेलकर विकास पाती है। इसीलिए उसकी कविता में ऊंची उड़ान के स्थान पर जीवन में जो कुछ अटल सत्य है, वही निहित है।

विविध गीत प्रायः चरखा कातते हुए, चक्की पीसते हुए, खेत निराते हुए, बाड़ी बीनते और मिरचें चुगते हुए तथा कभी-कभी खेतों में खाना ले जाते हुए गाये जाते हैं। ये गीत विवाह, जन्म आदि के अवसरों पर भी कभी-कभी गाये जाते हैं।

इनमें से कुछ गीत विशेष अवसरों के भी हैं।

इनमें से कुछ गीतों पर नृत्य भी किया जा सकता है।

ग्रहण का गीत

(१)

आधी गंगा में जौ बोये, आधी में बो दिये बांस।
क्या करने को जौ बोये, और क्या करने को बांस ?

हँस बोलिया मेरे राम ।
धर्म करने को जौ बोये. लठिया टेकन को बाँस ।
क्या करने को कन्या जन्मी, क्या करने को पूत ?
धर्म करने को कन्या जाई, बेल बंधन[1] को पूत ।

किसी ने पूछा—"तुमने जौ क्यों बोये हैं ? और क्यों बाँस लगाये हैं ? क्यों कन्या को जन्म दिया और क्यों पुत्र को जन्म दिया ?"

"दान देने के लिये जौ और वृद्धावस्था में लाठी का आश्रय लेने के लिए बाँस लगाये हैं । धर्म का पालन करने के लिए पुत्री को जन्म दिया है और वंश की वृद्धि के लिये पुत्र को ।"

बड़े-बूढ़ों का विश्वास है कि कन्या को जन्म देने से एक अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है; क्योंकि आर्य कन्या कर्त्तव्य, प्रेम एवं सहिष्णुता की साकार प्रतिमा है । वह जगत्-जननी बनती है ।

और पुत्र ?—मनु महाराज कहते हैं :—

पुन्नाम्नो नरकाद्यस्मात् पितरं त्रायते सुतः ।
तस्मात् पुत्र इति प्रोक्तः—

जो पुं नाम नर की पिता की रक्षा करता है, वह पुत्र कहलाता है । अतएव माता-पिता को पुत्र से परलोक में भी सुख पाने की आशा होती है ।

एकादशी व्रत का गीत

(२)

आज एकादसिया के बरती रहब हम
माई बाप की सेवा करिबै
उनहूँ के दुधवा से उरिन होब हम । आजु०
सास ससुर की सेवा करिबै
उनहुँ के हाड़ गया पहुँचाइब हम । आजु०
सास ससुर की सेवा करिबै
उनहूं की आज्ञा न कबहूँ टालै । आजु
जेठ जिठानी की सेवा करिबै
उनहुं के बालक अपन कर लेवई । आजु०

---

१. वंश-वृद्धि ।

देवर देवरानी का लाड लड़ाइबे
देवरा आपन भइया करि समुझब। आजु०
आज् एकदसिया के परन करब हम
उनहूं के लवा[1] अदई[2] हम होवई। आजु०
कुस कन्या की सेवा करिबै
उनहूं को दायज देव उरिन हम होइबै।
उनहूं के पांव पूजि उऋण हम होइबे। आजु०

कैसे सुन्दर भाव हैं! जब ग्राम-महिलायें एकत्र होकर इस गीत को अलापती हैं तो ऐसा प्रतीत होता है, मानो स्वर्गीय देवियाँ सुधा-वर्षण कर रही हों। निरक्षरा होते हुए भी उनका कर्त्तव्य-पालन का ज्ञान कितना पूर्ण है। गीत में एकादशी के व्रत की सुन्दर व्याख्या है। माता-पिता, सास-ससुर की सेवा इच्छित फलदायिनी है। जेठ-जेठानी के पुत्रों को अपने पुत्र समझना, देवर को छोटे भाई के समान समझना एक हिन्दू-नारी के अपने गुण हैं। तभी वह घर की रानी कहलाती है।

प्रजा की सेवा करके ही राजा राजपद का सच्चा अधिकारी है। और सेवा व्रत को धारण करने पर ही स्त्री घर की वास्तविक अधीश्वरी बनती है।

गोपीचन्द् का गीत

(३)

मूंड मुंडालिये कान चिरा लिये
लाल मेरा जोगी हो रहा जी।
अङ्ग रमा ली भस्म,
लाल, मेरा अमर हो गया जी॥
अग्गम जइयो लल्ला, पच्छम जइयो लल्ला,
लाल! गौड़ बंगाल मत जइयो जी।
अग्गम देखा, पच्छम देखा,
माता मेरी गौड़ बंगाल ना देखा री।
गौड़ बंगाले तेरी बहन बसै है,
लाल मेरे जहर खाय मरेगी जी।
अरी! बारह सौ कन्या सोलह सौ रानी
अम्मा मेरी एक ना मरी है री,

---

१. ओर, २. उऋण।

बहन मेरी कैसे मरेगी जी ?
अरे जा पहुँचे बहन के,
ड्यौढी से अलख जगाई जी ।
अरी मैया की जाई, फकीर तेरी ड्यौढ़ी पै खड़ा,
तू री भोजन दीजो री ।
अरे बासी रे कूसी बीरा मेरे बहुत बहुतेरी,
अरे ताजी मेरे नाय होइहै जी ।
अरे लेके भिच्छा बाँदी निकली,
जोगी के भिच्छा लीजो जी ।
तेरी तो भिच्छा बाँदी मैं हरबी न लूंगा,
तैं तो बहन के सोहगे में दई हैं री ।
'अरी रानी, यह तो तुझे याद करै,
तेरा भइया बनै है जी' ।
तेरी खाल कढ़ा दूं जोगी के रे,
भुस भरवा दूँ रे भुस में आग दिला दूँ जी ।
अरे जो भैया मेरा होगा,
तो पाद पद्म माथे चँदनवा जी ।
अरे जब गोपीचन्द ने ठोकर मारी,
तो पांव पद्म माथे चंदनवा जी ।
अजी देख बीरा की सूरत कू बहन ने,
उल्टे ही खाई है पछाड़ जी ।
भर के तो थाल बहना मोती लायी,
जोगी भैया ! भिच्छा लीजो जी ।
अरी कंकड़ पत्थर मैया-जायी घर भी बहुतेरे,
भोजन होय तो दीजो जी ।
थोड़ी सी बेर बीरा मेरे टिक जा,
तो ताजा भोजन बनाऊं जी ।
अरे जब जोगी वहाँ से चल पड़े,
तब बहन पछाड़ खाय मरी है जी ।
बहन के द्वारे धूनी रमायी,
बहिन कूं अमर कर चले जी ।

इस गीत में भाई-बहिन का अतुलित प्रेम अङ्कित है। 'भाई' और 'बहिन' इन दोनों शब्दों में एक विचित्र आकर्षण है। 'भाई' के सम्बोधन पर विजातीय हुमायूं अनेकों आवश्यक कामों को छोड़कर दौड़ा चला आया। भाई-भाई से वास्तविक भाई नहीं, बल्कि बहिन से ही वास्तविक भाई बनता है। भाई के पसीने की बूंद पर बहिन का शोणित सदैव न्यौछावर है।

इस गीत में माँ और पत्नी के प्रेम से भी अधिक बहिन के प्रेम को दिखलाया गया है। अपने दुलारे भैया गोपीचन्द को जोगी के वेश में देखते ही बहिन अचेत हो जाती है। मोती की भिक्षा अस्वीकृत होने पर बहिन ने भाई के लिये खाना तैयार किया, परन्तु भाई के जाते ही उसकी मृत्यु हो गई।

वैराग्य लेने वाले के प्रति

(४)

ए पुरुख चले बन को आज कोइ राखइ।
आज कोई राखइ, आजु कोइ राखइ॥
सभवा बइठे बपवा उनके झंखैं।
बेटा चले वन कं, आजु कोइ राखइ॥
घर में बइठी माता उनकी रोवैं।
कोरा[1] मोरा सूना आजु कोइ राखइ॥
चिठियाँ बँचाते उनके भैया रोवैं।
बहियां मोरी टूटैं, आजु कोइ राखइ॥
अपने ससुरवा[2] बहिनी उन कर रोवैं।
नाता मोरा टूटैं, आजु कोइ राखइ॥
लट छितराय उनकी तिरिया जू रोवैं।
राजा मोरा छूटैं, आजु कोइ राखइ॥

किसी स्त्री का पति घर त्याग कर वन जा रहा है। उस समय पिता, माँ, भाई, बहिन, स्त्री सब व्याकुल हो उठते हैं। गीत की पंक्तियाँ स्वाभाविकता और करुण-रस से परिपूर्ण हैं।

स्वामी रामतीर्थ के संन्यास लेने का कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है:—

गुणनिधान मतिमान सुखी सब भांति एक लवपुर वासी।
युवा अवस्था बीच, विप्र कुल केतु हुआ है संन्यासी॥

---

१. गोद २. ससुराल में।

वृद्ध पिता माता की आशा, बिन ब्याही कन्या का भार।
शिक्षा-हीन सुतों की ममता, पतिव्रता नारी का प्यार ॥
सन्मित्रों की प्रीति और कालिज वालों का निर्मल-प्रेम।
त्याग, एक अनुराग किया उसने बिराग में तज सब नेम ॥
"प्राणनाथ ! बालक सुत दुहिता"—यों कहती प्यारी छोड़ी।
"हाय ! वत्स ! वृद्धा के धन !!" यों रोती महतारी छोड़ी ॥
चिर-सहचरी 'रियाज़ी' छोड़ी, रम्य तटी रावी छोड़ी।
शिखा-सूत्र के संग हाय ! उन बोली पंजाबी छोड़ी ॥
धन्य पंचनद भूमि जहां इस बड़भागी ने जन्म लिया।
धन्य जनक जननी जिनके घर इस त्यागी ने जन्म लिया ॥
धन्य सती, जिसका पति मरने से पहले हो जाय अमर।
धन्य, धन्य सन्तान, पिता जिनका जगदीश्वर पर निर्भर ॥
शोक-ग्रस्त हो गई लवपुरी, उसकी हुई बिदाई जब।
द्रवीभूत कैसे न होय मन, संन्यासी हो भाई जब ॥

(५)

अरे मथुरा के बन्सी वाले, घरै कब अइयो।
पाँव उनके खड़ौवल[1] सोहैं, घरै कब अइयो ॥
चलति मधुरियन चाल, घरै कब अइयो। मथुरा के० ॥
कान उनके कुण्डल भल सोहै।
चलति न तीरथ नहाय, घरै कब अइयो ॥ मथुरा के० ॥
गले उनके माला सोहै।
कपोलन चुअत गुलाब, घरै कब अइयो ॥ मथुरा के ० ॥
माथे उनके तिलक भल सोहै।
मोतियन सोहें लिलार, घरै कब अइयो ॥ मथुरा के० ॥

गीत में कृष्ण की शोभा का स्मरण कर कोई स्त्री कृष्ण से लौट आने की प्रार्थना कर रही है।

(६)

अरे कैसे दिन काटें प्रभु जतन बताय जा।
जतन बताय जा, हिरदय में लिखाय जा ॥
कैसे दिन काटें० ॥

१. खड़ाऊँ।

एहि पार गंगा, ओही पार जमुना ।
नैया पै चढ़ाय मोकूं जमना में झँकाय जा ॥
कैसे दिन काटें० ॥
आपुन तो जाय कूबरी के सँग बइठे ।
कूबरी सबत मेरी बहियां में लिखाय जा ॥
कैसे दिन काटें० ॥
अपने तो जाय द्वारिका में बइठे ।
अपनी सूरत मेरे हिरदय में लिखाय जा ॥
कैसे दिन काटें० ॥
जतन बताय जा हिरदय में लिखाय जा ।
डोलिया चढ़ाय मोकू मैके में पठाय जा ॥
कैसे दिन काटें० ॥

विरहिणी के शब्दों में कितनी व्यथा भरी है । वह कहती है, "जीवन-धन ! तुम्हारे बिना मेरे दिन कैसे बीतें ? तुम्हीं आकर मुझे यत्न बता जाओ और हृदयंगम करा जाओ । गंगा और यमुना की तरह मेरी व्यथा वेगवती हो रही है । हे प्रिय ! यत्न-रूपी नैया पर चढ़ा कर मुझे पार लगा दो ।"

मेरे सर्वस्व ! यदि कूबरी से ही प्रेम है तो उसका नाम भी मेरे शरीर पर अंकित करा जाओ । तुम्हारी प्रियतमा होने के कारण वह भी मेरी पूजनीया है ।"

कैसे उच्च भाव हैं ! कैसा व्यापक प्रेम ! सती सीता तक सपत्ना की कल्पना से सिहर उठी थीं । शकुन्तला ने दुष्यन्त को कटु वचन कहे थे । किन्तु गीत की नायिका कृष्ण में मिलकर कृष्णमय हो चुकी है ।

सचमुच,

"इकरंगी बिनु कारनहि, इकरस सदा समान ।
गनै प्रिय सर्वस्व जो, सोई प्रेम महान् ॥"

यह स्वार्थी संसार !

(७)

गरीबी हम पै आ गयी हो धीरे धीरे ।
सास घर गई थी, ससुर नहीं बोले,
सास मुख मोड़ गयी हो धीरे धीरे ।
जेठानी घर गयी थी जेठ नहीं बोले,

जेठानी मुख मोड़ गयी हो धीरे धीरे।
देवरानी घर गयी थी देवर नहीं बोले,
देवरानी मुख मोड़ गयी हो धीरे धीरे।

अमीरी हम पै आ गयी हो धीरे धीरे।
ससुर घर गयी ससुर हँस बोले,
सास पीढ़ा डाल गई हो धीरे धीरे।
जिठानी घर गयी जेठ हँस बोले।
जिठानी ने गले लगाया हो धीरे धीरे।
दौरानी घर गयी, देवर हँस बोले,
देवरानी मिठाई लायी हो धीरे धीरे।

संसार के सब नाते मिथ्या हैं। सुख के सब साथी होते हैं, परन्तु विपत्ति में कोई किसी का नहीं। धन के साथ ही सब सम्बन्ध हैं। इसी विषय पर गिरिधर कविराय का निम्न सवैया विख्यात है :—

सांई सब संसार में मतलब का ब्यौहार।
जब लग पैसा गाँठ में तब लग ताको यार।
तब लग ताको यार, यार संग ही संग डोलै।
पैसा रहा न पास यार मुख से नहिं बोलै।
कहैं गिरिधर कविराय, बात चतुरन के ताईं।
करत बेगरजी प्रीत, यार कोई बिरला सांई।

"पीहर मैं नहीं जाती"

(८)

मेरे राजा पीहर मैं नहीं जाती।
पहला लिवैया[1] मेरा नऊआ जो आवै,
दूजा लिवैया मेरा बमना जो आवै,
भले राजा नउआ से ना कर दीजो,
अच्छे राजा बमना से ना कर दीजो।
मेरे राजा पीहर मैं नहीं जाती॥
तीजा लिवैया मेरा भैया जो आवैं,
चौथे लिवैया मेरे बाबल जो आवैं,

१. लेने आने वाला।

भले राजा भैया से ना कर दीजो,
अच्छे राजा बाबुल से ना कर दीजो।
मोरे राजा पीहर मैं नहीं जाती॥
मेरी गोरी! पीहर में क्या दुख भारी।
नउआ भी नाटा[1] गोरी! बमना भी नाटा,
मेरी गोरी साले से ना नहीं होती।
मेरी गोरी सौहरे से ना नहीं होती।
मेरी गोरी पीहर में क्या दुख भारी॥

ओढ़ पहर अंगना में आयी,
मोरे राजा जल्दी खबर मोरी लीजो।
अरे राजा! पीहर मैं नहीं जाती।

आसाढ़ नहीं आऊँ, सावन नहीं आऊँ,
गोरी! भर भादों में आऊं।
मेरी प्यारी! पीहर में क्या दुख भारी?
अम्मा भी दीखै मुझे, बाबुल भी दीखै।
मेरे प्यारे! तुम्हारी सूरत ना दीखै।
अरे राजा! पीहर मैं नहीं जाती॥

प्रेम में मतवाली हुई बाला को अपने प्रियतम से वियुक्त होना क्षण भर के लिये भी अच्छा नहीं लगता, यहाँ तक कि पिता के वात्सल्यमय गृह में जाने की भी उसकी इच्छा नहीं है। पति का प्रेम गम्भीर है।

पिया-मिलन की आतुरता

(९)

मेरे राजा की अलग अटरिया, मिलन जनै कब होगा।
आधी सी रात, पहर का तड़का, मिलने चढ़ी अटरिया।
मिलन जनै कब होगा?
जैसे ही मैंने पैर बढ़ाया, तो आ गई सास बुढ़रिया।
ललना दे मैंने सासू जी भेजी, तो आ गई जुलम जिठनिया।
मिलन जनै कब होगा?

---

१. मना कर दिया।

आधा बांट जिठानी जी भेजी, तो आ गई ननद बिजलिया।
गुड़िया दे मैंने बीबी जी भेजी, तो आ गया पीहर का नउआ।
चिट्ठी दे मैंने नउआ भेजा तो आ गया प्यारा भैया।
मिलन जनै कब होगा ?
मूढ़ा दे मैंने भैया बिठाया, मिलनें चढ़ी अटरिया।
मूढ़े से उठ भैया बोला, जल्दी चलो जीजी भैया !
मिलन जनै कब होगा ?

हमारे ग्रामों में मुगल-साम्राज्य ने परदे की अमिट छाप लगा दी है। बेचारी ग्राम्य स्त्रियाँ अपने प्रियतम के दर्शनों के लिये तरसा करती हैं। रात्रि में भी प्राय: यह सौभाग्य कम ही मिल पाता है।

हमारे गीत की नायिका के दर्शनातुर नैन भी मचल कर रह जाते हैं। कुछ क्षण के लिये भी वह एकान्त न पा सकी। कौन जाने कब उसकी अपूर्ण साध पूर्ण होगी।

संयुक्त परिवारों में वधुओं को अपने प्रीयतम के समीप जाने का प्राय: बहुत ही कम अवसर मिलता है।

प्रतीक्षा

(१०)

राजा चले परदेश हमें कुछ दे चले।
कोई खोटा रुपया हाय निशानी दे चले॥
ढल दुपहर की छाँय चिट्ठी बंचावती।
किस छैले की नार, अकेली क्यों खड़ी ?
चला जा रे असल गंवार, तुझे मेरी क्या पड़ी ?
मेरे पिया गये परदेस अंदेसे[1] में खड़ी।
पिया का रंगा डुपट्टा मल-मल धोवती।
मेरे सूरत आ गई याद, हिया भर रोवती।
एड़ी लाल गुलाल की, पिण्डी जगमगी।
मेरे पिया गये परदेस अंदेसे में खड़ी॥

प्रियतम परदेश चले गये। अपना स्मृति-चिह्न उन्होंने अपना खोटे रुपये के सदृश प्रेम मुझे दिया है, जो उनके अभाव में मेरे लिये खोटे रुपये के समान निरर्थक हो रहा है।

प्यारे का पत्र आया है। एकान्त में खड़ी होकर वह पत्र पढ़ रही है। प्रियतम का दुपट्टा मल-मलकर धोने लगी, परन्तु उसी समय अपने इष्टदेव की स्मृति

१. प्रतीक्षा में।

उसे आ जाती है, और वह मन भरकर रोने लगती है।

महाकवि बिहारी ने भी लिखा है—

श्याम सुरति कर राधिका, तकति तरनिजा तीर।
अंसुवनि करति तरौंस कौ, खीन खौर हौं नीर॥

'प्रियप्रवास' में हरिऔध लिखते हैं—

जो होता है उदित नभ में कौमुदी कान्त आके।
या जो कुसुम विकसा देख पाती कहीं हूँ।
शोभा वाले हरित दल के पादपों को विलोकी।
है प्यारे का विकच मुखड़ा आज भी याद आता॥

फूली संध्या परम-प्रिय की कान्ति सी है दिखाती।
मैं पाती हूँ रजनी तन में श्याम का रंग छाया।
ऊषा आती प्रति दिवस है प्रीति से रंजिता हो।
पाया जाता वर वदन सा ओप आदित्य में है।

पिया के परदेश गमन पर

(११)

गोरी कह दे मन की बात तड़के[1] मैंने जाना है।
सुन यानी[2] के भर्तार छोड़ के मत जाना।
मैंने जाइयो जान से मार फेर चाहे मत आइयो।
गोरी ऐसे मत बोलै बोल, कलेजा धड़कै है।
गोरी तू जाइयो बाबल के देस, उड़ै[3] तू रहियो।
पिया पीहर का देस कुदेस भावज ताने मारेगी।
मैंने जाइयो जान से मार फेर चाहे मत आइयो।
मैं तो जाऊंगा बावनी उजाड़ चिड़ी बन्दा एक नहीं।
उड़ै शेर मारेंगे चिंघाड़, डर के तू मर जायेगी।
पिया शेर मारेंगे चिंघाड़, गले तेरे चिप जाऊँगी।
उड़ै जाड़ा पड़े तुषार, धरती में बिस्तर लाएगी?
पिया जाड़ा सहे शरीर, धरती में बिस्तर ला लूंगी।
गोरी! मतना करै विलाप साथ तैंने ले चालूँ॥

पति विदेश जाने को तत्पर है। वह अपनी स्त्री से कहता है—"प्रिये!

---

१. प्रातः, २. छोटी, ३. वहाँ।

कल प्रातः मैं चला जाऊंगा। आज तो अपने मन की बात कर लो। फिर न जाने कब मिलना हो।"

यह सुनते ही स्त्री व्याकुल हो उठती है और कहती है—"मैं छोटी-सी हूं, प्रियतम ! मुझे छोड़कर न जाना। यदि जाना ही है तो मुझे जान से मारते जाओ।"

महाकवि बिहारी की नायिका ने भी तो कहा है :—

जेहि ने पिय के गवन को, दीन्हो दिन बतलाय।
कहियो ता से आय के, प्रान दान ले जाय॥

पति ने कहा—"तुम पितृ-गृह में जाकर रहना।" स्त्री कहने लगी—"पितृ-गृह में बिना बुलाये जाने पर भाभी ताने देंगी।" पति ने बीहड़ वन और सिंहों का भय, शीत की कठिनता दिखलायी; परन्तु स्त्री ने कहा—'तुम्हारे प्रेमालिंगन में मुझे कुछ भी कष्ट न व्याप सकेगा।"

श्रीराम ने भी सीता के सम्मुख वन के कष्टों का वर्णन किया था :—

ब्याल कराल बिहँग बन घोरा। निसिचर-निकर, नारि नर चोरा॥
डरपहिं धीर गहन सुधि आये। मृगलोचनि तुम भीरु सुभाये॥

सीता जी ने भी इसका उत्तर इस प्रकार दिया :—

बन दुख नाथ कहे बहुतेरे। भय विषाद परिताप घनेरे॥
प्रभु वियोग लवलेस समाना। सब मिलि होहिं न कृपा निधाना॥
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे। सरद बिमल बिधु-बदन निहारे॥

स्त्री पर झूठा सन्देह

(१२)

बारह बरस में पिया घर आये
नाला जालीदार गोरी ए।
पासा पड़्या प्रेम का।
किसने काता, किसने अटेरा,
कोई कौन तेरा गूंथा नाड़ा गोरी ए।
पासा पड़्या०॥
चल गोरी हमारे देश चलां,
उडै चुकाऊँ तेरा न्याव गोरी हे।
बारह दूनी उजाड़[1] भी आयी,
मारू जी ने सांभ्या[2] संसेल[3] गोरी हे।

---

१. बीहड़ बन, २. संभाला, ३. एक शस्त्र।

पहिला कटारा हाथों पर ओटा,
दूजा कटारा छतियों पर ओटा,
तीजे में तज दिये प्राण गोरी हे।
पासा पड्या०॥
पीछे फिर के देखन लागा,
दो नैन रहे मंडराय गोरी के।
मार-मूर कै घर नै चाल्या,
मन में बहुत उदास गोरी हे।
घर-घर दीवा घर-घर बाती,
कोई रँडुवे के घोर अन्धेरा गोरी हे।
घर घर भोजन घर घर खाना,
अरे रँडुवे की ढकनी में चून गोरी हे।
दामन चुंदड़ी खूंटी धरे सैं,[1]
एक बेर पहर दिखाय गोरी हे।
पानी की दोघड़[2] रीती धरी सै
एक बेर सरवर जाय गोरी हे।
गहने का डिब्बा भरा धरा सै,
एक बेर पहर दिखाय गोरी हे।
डाल खटोला बगड़[3] बिच सूत्यां,
एक बेर सुपने में आय गोरी हे।
बीरा तो तेरा लेने आया,
एक बेर पीहर जाय गोरी हे।

पति बारह वर्ष में घर लौटा। उसने पत्नी के पास एक जालीदार कमर-बन्द देखा। उसे उसके सतीत्व पर सन्देह हो गया। वह उसे बीहड़ वन में ले गया और वहां ले जाकर उसे मार डाला। परन्तु 'बिना विचारे जो करे सो पाछे पछताय' रह-रहकर वही करुण शान्त नेत्र उसे सर्वत्र दृष्टिगोचर होने लगे। उसका हृदय विदीर्ण होने लगा। अन्त में निरुपाय होकर वह स्वप्न में एक बार अपनी प्रियतमा का आह्वान करता है।

---

१. है, २. दो घड़े, ३. आंगन।

वियोगिनी और स्वप्न

(१३)

सोती थी सुख की नींद में, सुपने में भया जंजाल ।
सुपने में राजा मिल गये री ।
तुझे तो सुपने ! मरवा गेरूँ रे,
देऊँ कतल करवाय ।
सौ कोस पर पिया बसें, तू क्यों भया जंजाल ।
काहे हमें मरवाम्रो जी, काहे कत्ल कराम्रो ।
हम तो ढलती रैन के बिछुड़ों का करें मिलाप ।।

वियोगिनी ने स्वप्न में अपने प्रियतम को देखा। बरबस दबाई हुई विरहाग्नि प्रज्वलित हो उठी। तृषित एक जल-सीकर पाकर और भी व्याकुल हो उठता है। उसने अपना सब रोष स्वप्न पर उतारा।

परन्तु रामनरेश त्रिपाठी की वियोगिनी के लिये स्वप्न वरदान है—

सपने में तुम नित आते हो, मैं हूँ अति सुख पाती ।
मिलने को उठती हूं, सौतिन आँख प्रथम उठ जाती ।।
असहनीय उस समय हृदय में विरह वेदना होती ।
सोकर खोती है दुनिया, मैं हाय ! जाग कर खोती ।।

—'पथिक से'

दूजा ब्याह करवाले हो

(१४)

पिया ! एक कहा मेरा मान, दूजा ब्याह करवाले हो ।
गोरी ! मत ले ब्याह का नाम, दुखड़ा भारी हो जायेगा ।।
पिया ! जाइयो हमारे गाम, बहन मेरी मां की जायी हो ।
पिया ! दे दूँ हार सिंगार, दे दूं तीयल रेशमी हो ।
पिया ! सौंपूंगी घरबार, हो जाऊं हाथ तलै की हो ।
पिया ! ब्याह के उल्टा आय, बाग़ में डेरा लाइयो हो ।
बांदी ! भर मोती का थाल, रानी को उतारन चालो हो ।
जीजी ! इधर को मुखड़ा मोड़, बहन मेरी मां की जायी हो ।
बीबी ! परै को मुखड़ा मोड़, तुम तो बांझ लुगाई हो ।।

नारी, प्रेम की देवी, धरित्री के समान क्षमामयी है। जब वह त्याग करने

लगती है तो सर्वस्व देते भी नहीं झिझकती। गीत की नायिका अपने प्यारे की शुष्क फुलवाड़ी में एक भी फूल न खिला सकी। प्रियतम की वात्सल्य की उमड़ती हुई धारा के योग्य पात्र की खोज में वह व्याकुल हो उठी। अपनी बहिन से विवाह करने पर उन्हें विवश कर दिया। अपने जीवन का सर्वस्व—प्यारे का प्रेम—प्रियतम की प्रसन्नता पर न्यौछावर कर दिया।

विवाह से लौटने पर वह मोतियों का थाल सजाकर आरती उतारने चली। परन्तु बहिन ने उसके बन्ध्या होने के कारण एक बार उसकी ओर देखा तक भी नहीं।

(१५)

झटक कोठे चढ़ गया मेरा साँवरिया।
सास मेरी पूछै बहू री क्या कह गया तेरा सांवरिया।
छानन की हमसे कह गया, पीसन की नांही कर गया।
हमारा सांवरिया।
जिठानी मेरी पूछै बहू री ! क्या कह गया हमारा देवरिया।
धोवन की हमसे कह गया, मांजन की नाहीं कर गया।
हमारा सांवरिया।
देवरानी मेरी पूछै, जिठानी ! क्या कह गया तेरा साँवरिया।
खाने की हमसे कह गया पोवन की नाहीं कर गया।
हमारा सांवरिया।
ननद मेरी पूछै भाभी ! क्या कह गया तुम्हारा सांवरिया।
भेजन की हमसे कह गया, बुलावन की नाहीं कर गया।
हमारा सांवरिया।

ग्राम-बाला पति के प्रेम की एकान्त अधिकारिणी है। पति जाते हुए उसे अधिक कार्य-व्यस्त रहने को मना कर गया है। वह परिहास की मीठी चुटकी के साथ सबको अपने पति के शब्द बतला रही है।

पिया का पत्र आने पर

(१६)

मरुए के नौ दस पेड़ चमेली एकली।
मेरे पिया ने भेजा परवाना खड़ी खड़ी बाँचती।
संग की सखियां पूछतीं, जीजा का हाल क्यों न बतावती।
सबको लिखा प्रणाम, याद बहुत है आवती॥

बांचत बांचत भयी बेहाल, आंखों से आंसू ढारती।
हाय! अभागिन नार, पिय बिन इकलो दिन काटती।

परिहास

(१७)

हाय! जिया जल क्यूं नी जाये, मेरठ के गये थे बाजार में।
सास लिया मूढ़ा, ननद लिया पीढ़ा
हाय! जिया जल क्यूं नी जाये, मेरे लिये लाए गडीलना।
टूट गया मूढ़ा, टूट गया पीढ़ा,
हाय! जिया जल क्यूं नी जाये, सड़कों पै फिरे गडीलना।
सास लिया लड्डू, ननद लिया पेड़ा,
मेरे लिये लाये कचौरियां।
खा लिया लड्डू, हजम हुआ पेड़ा,
हाय! जिया जल क्यूं नी जाये, कालजे पै धरी कचौरियां।
सास लिया लड़का, ननद लयी लड़की,
हाय! जिया जल क्यूं नी जाये, मेरे लिये लाये बिलूंगड़ा।
भाग गया छोकरा[1] मर गयी छोकरी[2],
हाय! जिया जल क्यूं नी जाये, म्याऊं-म्याऊं करै बिलूंगड़ा।
सास लिया बुड्ढा, ननद लिया बालक,
हाय! जिया जल क्यूं नी जाये, मेरे लिये लाये सिपाहिरा[3]।
लड़ लिया बुड्ढा, भाग लिया बालक,
हाय! जिया जल क्यूं नी जाये, हंटर लगावै सिपाहिरा।

(१८)

अब मन कै धीरज करी के चही।
जहां खांड चिरउंजी के भोजन नाहिन, वहां बन-फल खाइके रही के चही।
जहां सेत सुपेती[4] के डासन[5] नाहिन, उहां पत्ता बिछाइके रही के चही।
जहां पान फूल के डासन नाहिन, उहां कारे कम्बल बिछाइके रही के चही।
जहां सास ससुर सगे स्वामी नाहिन, उहां ससुरे[6] के त्यागन करै कै चही।
जहां भाई बाप सगे भाई नांही, ओहा नैहर[7] के त्यागन करे कै चही॥

---

१. लड़का, २. लड़की, ३. सिपाही, ४. सफ़ेद, ५. शया, ६. ससुराल, ७. पितृगृह।

विपत्ति में धैर्य धारण करने का सुन्दर उपदेश है । सास, श्वसुर और पति-विहीन श्वसुरालय और माता, पिता, तथा सहोदर भैया के बिना पितृगृह सचमुच बिल्कुल सूना ही सूना है । परन्तु जिस पर वश नहीं, उसको धैर्यपूर्वक सहना चाहिये ।

कविवर मैथिलीशरण गुप्त के भावमय शब्दों में—

"दुनिया में सुख दुःख निरन्तर आते जाते रहते हैं ।
सुख तो सभी भोग लेते हैं, दुःख धीर ही सहते हैं ।
मनुज दुग्ध से, दनुज रुधिर से, अमर सुधा से जीते हैं ।
किन्तु हलाहल भवसागर का शिवशंकर ही पीते हैं ।"

(१९)

रघुवर केहु ना बिपतिया के साथी ।
हम जानी हम ही पर बीती, इक दिन सगल दुनिया पर बीती ।
राम और लछिमन दुइनहु बनवासी, एक दिना उनहूं पर बीती ।
सीता, दमयन्ती ने झेलीं, बन के गये से उनहूं पै बीती ।
चांद सूरज सगली[1] दुनिया के मालिक, गहन के लगे तै उनहूं पै बीती ।
एक दिना रावण पै बीती, सोने की लंका माटी ।।

निर्विच्छिन्न पवित्र सुख मनुष्य के भाग्य में नहीं है । गीत की रचियित्री ने सुन्दर उदाहरण देकर यह सिद्ध कर दिया है ।

पीहर का धन बड़ा या पति ?

(२०)

लीपिन पोतिन ओबरिया[2] रे, जगर मगर करत रे ।
मोरी ए बहुआ, अंगना में खुलि[3] पलंगिया, ओबरिये पै डासहु[4] हो ।
मचियहि बइठी हैं रनिया, तो राजा से अरज करैं ।
सोनवां के हमरा नइहर, रुपवा के केवड़िया लागे हो ।
मोरे ए साहेब, सात भैया की बहिनिया पलंगवा कैसे डासहु हो ।
अरे बंगला से उठे सीधा साहेब, तो बन कै सिधारेन हो ।
घोड़े पीठ भये हैं असवार, तो केदारिया बन गयेन हो ।
मोरे पछवड़वा बढइया, बढ़इया भइया मितवा[5] हो ।

---

१. समस्त, २. कोठरी, ३. पड़ा हुआ, ४. बिछा दो, ५. मित्र ।

भइया चंदना कै डोलिया बनाग्रो, साहेब के संग जइबे।
ग्ररे इक बन गई, दूजे बन गई तीजे मधुबन हो।
मोरे साहब, पांचन घुंघरू लदाग्रो, तुम्हारे संग चलिबै।
पिछवइ लौटइ पिया तो चितवइ हो, तो रनिया गोहन[1] लागी
तो रनिया गोहन लागी हो।
सोनवा के तुम्हरा नइहर रूपे के केवड़िया लागे
रूपे के केवड़िया लागे हो।
मोरी ए रनियां सात बीरन की बहिनियां, गोहनवाँ कइसे चलिबौ।
छोड़िवों सोनवे को नैहर, रूपे के केवड़िया लागे हो।
मोरे ए राजा छोड़वऊँ सातों बिरनवां, गोहनवां तोरे चलिबौं॥

पत्नी को ग्रपने पितृगृह के धन पर बड़ा ग्रभिमान है। पति के पलंग बिछाने को कहने पर वह कहती है, "मेरे पिता का घर सोने का बना हुग्रा है ग्रौर उसमें चाँदी के किवाड़ लगे हुए हैं। हे प्रिय, मैं सात भाइयों की प्यारी बहन हूँ, मैं पलंग कैसे बिछाऊं।"

इस गर्वोक्ति को सुनकर पति ने वन को प्रस्थान कर दिया। पत्नी को ग्रपनी भूल ज्ञात हो गई। वह भी पति को मनाने के लिये वन की ग्रोर चली।

प्रेमी के जीवन की ग्रथ ग्रौर इति ग्रात्म-बलिदान में है। किसी ने ठीक ही कहा है—

"यह तो घर है प्रेम का, ख़ाला का घर नाँहि।
सीस उतारै भुईं धरै, तब पैठें या माँहि॥"

(२१)

हो हो के बेकरार चले गये।
जब से गए मोरी सुधि नहीं लीन्हीं हाय।
पाती डाली हज़ार चले गये। हो हो के० ॥
बारह बरस में पिया घर ग्राये, हो क्या क्या लाये सौगात[2]।
वहीं कमाया प्यारी! वहीं लुटाया, ग्रब तेरा ताबेदार।
वहीं कमाया राजा, वहीं लुटाया, हो ग्रब क्या डालूं ग्रचार।
भगवां रँगूंगा, जोगी बनूंगा, हाय हाथ में लूंगा सितार।
काहे को प्यारे मेरे जोगी बनोगे, काहे को लोगे सितार।
ग्रब की खता तुम माफ़ करो जी, तुम पुरुष हम नार॥

---

१. साथ, २. उपहार।

पत्नी ने लम्बे-लम्बे वर्ष प्रतीक्षा-पथ पर आँखें बिछाये हुए बिता दिये। एक दिन उसने अपने जीवन-धन को पाया, परन्तु वह निष्ठुर उसके लिये एक छोटा-सा प्रेमोपहार भी न लाया। उसने मान किया तो वह निर्मोही फिर रुष्ट होकर चलने को तैयार हो गया। वह अपराधी था। परन्तु क्षमा पत्नी ने माँगी। स्त्री निःसन्देह क्षमा की मूर्ति है। वह बड़े से बड़े अपराधी को स्नेहांचल में छुपा सकती है।

कटु परिहास

(२२)

लीपी पोती कोठरी और चन्दन किवड़िया।
जिसमें तो बैठे राजा रानी सार पासा खेलते।
अब हारूंगी हाथों के गजरे गले की मोहन माला।
हारूँगी राजा की बहिनिया, अपना बीरा ब्याहूँ रे॥
इतनी बात सुनी राजा ने महलों से उतरा।
धर घुड़ले पै जीन सौत हम पै लावै रे॥
सासू री सासू मैंने बहुत प्यारी रे।
ननद री ननद मैंने बहुत प्यारी रे।
जिठानी री जिठानी मुझे बहुत प्यारी रे।
क्या रे गुनाह तकसीर सौत हम पै लावै रे।
बेटा रे बेटा मैंने बहुत प्यारा रे।
बड़े ए सजन की धीय गरब मत बोलो रे।
परदे में बोले हैं बोल कलेजा मेरा छोला रे।
आगे आगे राजा का डोला पीछे रानी का डोला।
बीच में साली का डोला कि चँवर डुलाओ रे॥

कभी-कभी परिहास भी विलक्षण रूप धारण कर लेता है। गीत इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

(२३)

ससुर हमारे दूज के चन्दा रे, सास हमारी प्रभात की तारी रे।
वे छिप गये दूज के चन्दा रे, चमक रही प्रभात की तारी रे॥
जेठा हमारे आम का गूदा रे, जिठानी हमारी आम की गुठली रे।
खाय लिया आम का गूदा रे, भड़क गई आम की गुठली रे।
देवर हमारे ताल के बगला रे, देवरानी हमारी ताल की मछली रे।

वे छिप गये ताल के बगला रे, वह छिप गयी ताल की मछली रे ।
नन्दोई हमारे भादों के बदला रे, ननद हमारी भादों की बिजली रे।
वह झमक गई भादों की बिजली रे, बरस गये भादों के बदला रे ।
राजा तो हमारे माथे का बिन्दा रे, सौत हमारी पैर की जूती रे ।
टूट गई पैर की जूती रे, फेंक दई पैर की जूती रे,
दमक रहा माथे का बिन्दा रे ॥

ग्राम-बाला ने उपमा भी ढूंढ़-ढूंढ़ कर खूब दी हैं । ससुर और सास की उपमा चन्द्रमा और प्रभात के तारे से दी गई है । द्वितीया का चन्द्रमा और प्रभात का तारा शीघ्र ही अस्त हो जाते हैं । अस्थायी होते हुए भी सास-ससुर का प्रेम निर्मल है ।

आम के गूदे का स्वाद उससे भी अधिक क्षणिक है, ऐसा ही जेठ का प्रेम होता है । जिठानी का प्रेम आम की गुठली के सदृश है, जो चूसने में कड़ी मालूम होती है, परन्तु थोड़ा माधुर्य भी है । देवर और देवरानी तो ताल के बगुले और मछली की भाँति हैं, जिनके दर्शन कभी-कभी ही होते हैं । ननद और नन्दोई का प्रेम भादों की बिजली के सदृश कभी-कभी ही दिखाई पड़ता है । सपत्नी की उपमा पैर की जूती से दी गई है । जूता मैला होने पर और टूट जाने पर फेंक दिया जाता है । अन्त में उसी प्रकार शोभा लिये हुए उसका मस्तक का सिंदूर चमक रहा है, जिसमें उसके प्रिय का प्रेम अंकित है ।

इसी से तो बिन्दी के विषय में बिहारी जी ने लिखा है—

"कहत सबै बेंदी दिये, आंक दस गुनौ होत ।
तिय लिलार बेंदी दिये, अगणित बढ़त उदोत ॥
मंगल बिन्दु सुरंग, ससि-मुख केसर आड़ गुरु ।
इक नारी लहि संग, रसमय किय लोचन जगत ॥"

विधुर की व्यथा

(२४)

सूरत तेरी नजरों न आई रे ।
प्यारी ! तेरे दुखों का मारा, मैं बन बन फिरा भटकता ।
हाथ कमण्डल बग़ल मृगछाला, तन में भभूत लगाई रे ॥
सूरत तेरी० ॥

गोरी तेरे विरह का मारा, मैं दर-दर फिरा भटकता।
तेरी याद लिये मन में, मैंने घर घर अलख जगाई रे ॥
सूरत तेरी०॥

धना ! तेरी याद का मारा, मैं तीरथ फिरा भटकता।
मैंने छोड़ दिया घर द्वार, जंगल धूनी रमाई रे ॥
सूरत तेरी०॥

तेरे बिना ऐ मन की प्यारी ! मैंने जगते रैन बिताई रे।
तू निकली ऐसी बेपीरन ! तू मोरे सुपने न आई रे ॥
सूरत तेरी०॥

गीत में विधुर के हृदय की सच्ची व्यथा साकार हो उठी है। घर-द्वार छोड़कर, भस्म रमाकर, जोगी बनकर उसने वन-उपवन, तीर्थ सभी छान डाले; परन्तु वह उसे न पा सका जो सदा को उसे छोड़कर चली गई थी। यहाँ तक कि स्वप्न में भी उससे मिलन न हो सका। 'बेपीरन' शब्द में कितना प्रेम और कितनी व्यथा अन्तर्हित है !

(२५)

ए राजा बारी[1] रहन देउ हमका।
जैसे बागन में अमुवा फरतु है,
वइसे राजा ए फरन देउ हमका। ए राजा० ॥
जइसे सड़क पर एक्का चलतु है,
ए राजा वइसे चलन देउ हमका। ए राजा० ॥
जइसे बाँस में किल्ला फुटत है,
ए राजा वइसे फुटन देउ हमका। ए राजा० ॥
जइसे बाग में नीबू फरतु है,
ए राजा वइसे फरन देउ हमका। ए राजा० ॥
जइसे बाग में कोयल रहतु है,
ए राजा वइसे रहन देउ हमका। ए राजा० ॥

बालिका-वधू गृहस्थी के जंजाल से ऊबकर अपने पति से प्रार्थना करती है—"हे प्रिय ! अभी मुझे बाल्य-जीवन का आनन्द उठा लेने दो। मुझसे यह बन्धन नहीं सहा जाता है। हे प्रिय ! जैसे बागों में आम फलते-फूलते हैं, वैसे ही मुझे फलने-फूलने दो।" वह सड़क पर चलते हुए इक्कों से, बाँस के हरियाले

---

१. बलि जाती हूँ।

अंकुर से, नीबू से, और कोयल के स्वतन्त्र जीवन से अपनी तुलना करती है और वैसे ही जीवन बिताने की उत्सुकता प्रकट करती है।

बालिका-वधुओं का क्रन्दन गीत के अक्षर-अक्षर में समाया है। नित्यप्रति इन गीतों को सुनकर भी हिन्दू समाज की आँखें न जाने क्यों नहीं खुलतीं?

नव-विवाहिता लड़की को उपदेश

(२६)

संभल संभल पग धरियो री बहना,
देस बेगाने जाना होगा।
सास बेगानी ससुर बेगाना,
देवर कन्त बेगाना होगा।
ना बाबुल ना बीर लाड़ला,
किसको रोय सुनाना होगा।
एक जान पर दुःख हज़ारों,
सब को रोय बहाना होगा।
सौ नुहरे[1], सौ झिड़की खाकर,
फिर भी सीस नवाना होगा।
वहां न कोई देगा सहारा,
अपना धरम निभाना होगा।

विवाह के उपरान्त कन्या को बिल्कुल नवीन वातावरण में कभी-कभी अनेकों कठिनाइयां झेलनी पड़ती हैं। सब की उपेक्षा और तिरस्कार को भी अपनी मधुर मुस्कान में छुपा लेना पड़ता है। गीत में इसी लिए कन्या को आरम्भ से ही स्वयं को ऐसे साँचे में ढालने का उपदेश दिया गया है जिससे उसका आगामी जीवन कष्ट-पूर्ण न हो।

टेसू का गीत

(२७)

सास के जाये रैंदा पैंदा कद्दू से लुढ़काये रे।
मां के जाये कुंवर कन्हैया भर भर गोद खिलाये रे।
जेठानी के जाये काले कल्लू हम से लिये न जाएं रे।।
भाभी के जाये गोरे गोरे हमारे मन को भाएं रे।

---

१. व्यंग।

दौरानी के जाये मोटे मुग्दर हमसे उठते नाय रे।
भैना के जाये फूल गुलाब के छाती से चिपकाये रे।

नवरात्रों में बच्चे यह गीत गाते हैं और पैसे मांगते हैं।

अतीत की स्मृति

(२८)

छोटी बड़ी सुइयां रे जाली का मोरा काढ़ना।
इक सुख पाया मैंने अम्मा के राज में,
हां अम्मा के राज में,
संग में सहेली रे, गुड़िया का मोरा खेलना।
छोटी बड़ी० ॥
इक सुख पाया मैंने बाबुल के राज में,
हां बाबुल के राज में।
संग में भय्या रे, बगियों में मोरा घूमना।
छोटी बड़ी० ॥
इक सुख पाया मैंने भाभी के राज में,
हां भाभी के राज में।
लम्बी लम्बी निचली रे, चरखे का मोरा कातना।
छोटी बड़ी० ॥
इक सुख पाया मैंने भय्या के राज में,
हां भय्या के राज में।
गोद भतीजे रे खेतों में मोरा जावना।
छोटी बड़ी० ॥
इक सुख पाया मैंने सासू के राज में,
हां सासू के राज में।
आधी आधी रतियां रे, चून मिटे का थेपना।
छोटी बड़ी० ॥
इक सुख पाया मैंने सुसरे के राज में,
हां सुसरे के राज में।
पहर पहर के तड़के रे, चक्की का मोरा पीसना।
छोटी बड़ी० ॥

इक सुख पाया मैंने परदेसी[1] के राज में,
हां परदेसी के राज में।
सारी सारी रतियां रें, अँखियों में उनका काटना।
छोटी बड़ी० ॥
इक सुख पाया मैंने राजा के राज में,
हां राजा के राज में।
चांदी की रातें रे, सेजरियों पै मोरा जागना।
छोटी बड़ी० ॥

ग्राम-बाला जाली बनाते-बनाते अतीत की स्मृति में खो जाती है। उसे स्मरण आता है अपने शैशव का समय, जब वह सखियों के साथ गुड़िया खेला करती थी। भय्या के साथ उद्यान में जाया करती थी। कभी भतीजे को गोद में लेकर खेतों पर जाया करती थी।

फिर स्मरण हो आता है उन दिनों का, जब वह श्वसुरायल में प्रथम बार आई थी और सास के भय से उसे आधी-आधी रात तक बैठकर खाना बनाना पड़ता था और विलम्ब से सोने पर भी प्रातः होने से पहिले ही उठकर चक्की पीसनी पड़ती थी।

फिर ध्यान आता है उन दिनों का जब उसके प्रियतम उसे अकेला छोड़कर चले गये और वह आँखों में ही रातें काट देती थी।

फिर ध्यान आता है उन प्रेमभरी घड़ियों का जो नीरव, निस्तब्ध रजनी में दोनों ने प्रेमालाप करते हुए बिता दीं।

जागना उसे दोनों ही दशा में पड़ा है—परन्तु दोनों में कितना अन्तर है!

नोट—'थेपना' शब्द का पर्यायवाची हमारी साहित्यिक भाषा में मिल सकना असम्भव है। इस शब्द में कितनी उकताहट और भिन्नाहट है!

उलहना

(२९)

लाये मेरे राजा ! हमें री छल करकै।
सइयां ! तोरे राज में कभी न सुरमा सारा।
सलइया भरि भरि कै, हां सलइया भरि भरि कै।
लाये मोरे० ॥

१. प्रवासी पति।

सइयां ! तोर राज में कभी न लायो मिस्सी ।
आँगुलियाँ भरि भरि कै हां आँगुलियाँ भरि भरि कै ।
लाये मोरे० ॥
कन्त ! तोरे राज में कभी न सिमाया दामन ।
यह सितारे जड़-जड़ कै हां सितारे जड़-जड़ कै ।
लाये मोरे० ॥
बलमा ! तोरे राज में कभी न गुँथायी चुटिया ।
फूल मोती भरि भरि कै हां फूल मोती भरि भरि कै ।
लाये मोरे० ॥
प्यारे तोरे राज में कभी न खेली चौपड़ ।
ये पासे डारि डारि कै हां पासे डारि-डारि कै ।
लाये मोरे० ॥
सइयां तोरे राज में कभी न सोई सेजों ।
अरे कौलइया[1] भरि भरि कै हां कौलइया भरि भरि कै ।
लाये मोरे० ॥

पति अपने ही कार्यों में इतना व्यस्त रहता है कि गायिका के सारे अरमान मन के मन में ही रह जाते हैं ।

"लाये मोरे राजा ! हमें छल करकै" में उसके हृदय की समस्त भावनायें एक साथ साकार हो उठी हैं । क्या यह उस छलिया का उससे छल करना नहीं है ? क्या वह विवाह के समय यह जानती थी ?

उलहना होते हुए भी कटु न होकर प्रेम से भरपूर है ।

प्रियतम की खोज

(३०)

सुन सखि ललिता री, कान्हा को मोरे ढूंढ ला । हां कान्ह...
जब देखूं जब जमुना किनारे, गइयां चराय रहा री ।
वही तो मोरा साँवरा । सुन० ॥
जब देखूं जब कदम्ब की छइयां, मुरली बजाय रहा री ।
वही तो मोरा साँवरा । सुन० ॥
जब देखूं जब कुंज-गलिन में, रास रचाय रहा री ।
वही तो मोरा साँवरा । सुन० ॥

---

१. प्रेमालिङ्गन करते हुए ।

जब देखूं जब सबके बिचाले, सैननि[1] सौं बतराय[2] रहा री ।
वही तो मोरा साँवरा । सुन० ॥
जब देखूं जब बगिया किनारे, नैननि सौं बुलाय रहा रही ।
वही तो मोरा साँवरा । सुन० ॥

ग्राम-बाला का प्रेमी प्रीति लगाकर न जाने कहाँ अन्तंध्यान हो गया । बेचारी उससे मिलने को आतुर हो उठी । वह अन्तरंग सखी ललिता के पास पहुंची कि उसके प्यारे की खोज में उसकी सहायता करे ।

ललिता ने कहा, "उसे तो नित्य ही मैं जमुना के तट पर गायें चराते, कदम्ब की छाया में बंशी बजाते, कुँज-गली में रास रचाते, सब के बीच में ही संकेत से बातें करते, तथा नेत्रों के द्वारा ही बुलाते हुए देखती हूँ ।"

यह सुनते ही व्याकुल बाला कहने लगी, "वही तो मेरा प्रिय है ।"

गीत हमें यहाँ कल्पना में डुबा कर समाप्त हो जाता है ।

कौन जाने वह निर्मोही उसकी विरह-व्यथा मिटाने को आया अथवा नहीं !

नोट :—कृष्ण को लोक-साहित्य में प्रेम का प्रतीक माना गया है ।

लावनी

(३१)

सुमरूं एकमकार सीस धर मस्तक नाऊं ।
ओय पतले तन की सजनी ।
तीन लोक सिद्ध तोय, प्राण हरि तैं लगे ।
भगवत लिए उतार सीस धर कंवर कन्हाई ।
देवकी मन आनन्द सोच घट भीतर लायी ।
बैमाता गोदी लिए, ये सूते श्री श्याम ।
इस संकट में और न मेरा, तुम मेरे श्री राम । प्राण० ॥
मन में समझी देवकी, वसुदेव लिया जगाय ।
वे सूते श्री राम, पौल जड़ राखे ताले ।
वसुदेव राम मनाकर, बालक लिया उठाय ।
सूते सभी पलक पट खोले, चरण छुआई जाय । प्राण० ॥
निकस गया वसुदेव और जमना के धोरैं ।
सम्मन भरा आनन्द नीर, चढ़ आए जोरे ।

---

१. संकेत से २. वार्तालाप ।

एक ओर को सिंह दहाड़े, एक ओर गज शेष कलपत हैं।
जदुपति बंसी अरे है, मन में बड़ा अंदेश, प्राण हर तें लगे।
श्री कृष्ण के लिये चरण ये राह तब जमना दीन्हा।
हर्षित हुए वसुदेव, यहां कोई अचरज माना।
नीर धार फट हट गया श्री जमना दीन्ही राह।
कहत भरा श्री राम देव अब तू गोलोक जाय।
निकस गया वसुदेव, नगर गोकुल नै ध्याया।
सम्मन[1] भरा अनन्द, पोल नन्द जी की आया।
नन्द कहे, जसुदा जी से, यो बाबा वसुदेव।
इन्हें कन्या दीजिए और तुम करो किशन की सेव। प्राण० ॥
वृज मण्डल औतार, जहां खेलें गिरधारी।
वहां बसें गोपी-ग्वाल, जहां वे कुंज बिहारी।
बरसाना वृषभान की, गोकुल नन्दा अहीर।
धन धन मात जसोदा रानी, सोते पाए रणधीर। प्राण० ॥
जल जमना का भरण जसोदा मा आई।
और उसी समय वृषभानु सुता मंजन को आई।
ससि-वदनी, मृग लोचनी, लई जसोदा गोद।
तू बेटी वृषभान की मेरे कुंवर कान्ह के जोग।
चोवा चन्दन और अरगजे, मुख मल मल नहाई।
इतर अबीर फुलेल, मांग मोतियन भरवाई।
नैना तो अंजन भरा और मस्तक बिन्दा लाय।
सुन सुन बचन कुंवरी राधिका, जसोदा रानी मन सताए। प्राण०
हार सिंगार पहरा, कुवल बिच चौकी साजै।
बाजूबन्द पहरा और पगों में पायल बाजै।
गूंठी छल्ला मूंदड़ा कीन्हा सभी सिंगार।
मन में हरख रही नन्द रानी, फूली मन न समाय। प्राण० ॥
सखी इकट्ठी हुई, छटी जब बंटी बधाई।
जसुदा से सब कहें कुंवर तू कित तें लाई।
तू क्यों जसुदा बावली, तू क्यों भई अजान।
जे सुन ले तेरा लाडला मैंने घर ना देगा जान ॥

---

१. चारों ओर।

पांच सात सखी निकट जुड़ आई मेरे।
गोदी लई उठाय, हाथ सिर ऊपर फेरे।
गोदी में मेवा दई और राखी उर में लाय।
बाजत सुनकर बंसी वो घर दीन्हीं पहुँचाय। प्राण० ॥
चलत नन्द की नार, बात एक और सुनाई।
मात-पिता से कहो जाय कै करें सगाई।
जन्मी जोहे बाट, इधर, तू कित थी बेटी प्यारी।
किन तेरा किया सिंगार और तेरी मांग संवारी।
किन मस्तक बिन्दी धरी और सभी बनाया रूप।
निरख-निरख मैं सांसे सूखूं, बिदरख लागै धूप। प्राण० ॥
जन्मी हूं वृषभान सुता एक कही कहानी।
कीन्हा दहसत-कार किया गोकुल नन्द रानी।
चलत नन्द की नार, बात इक और सुनाई।
मात पिता से कहो कान्ह की करें सगाई।
बाबल ने गाली दई, तुमने बड़े जुहार।
कह कुंवरी राधा, सुन ले री माता, दे उतर पहुँचाय। प्राण० ॥
वो तो काला कान्ह, मेरी तो राधा गोरी।
कित चन्दन कित कांच, कहो सजि कैसे जोड़ी।
नन्द जी का पालुआ और गढ़ गोकुल का अहीर।
बन में हांकै बाछड़े, वो जमुना जी के तीर। प्राण० ॥
बरसाने से बात चली जसोदा घर आई।
चलत नन्द की नार, बात एक और सुनाई।
उस पटरानी ने यूं कहा, वो तो कुल का अहीर।
खोटा बचन कहा रे कान्हा, रही बदन तन छीन।
खेलत आया कान्ह, आज तू कैसी री मइया।
अपने मन का अंदेश तुरत मोय दो न बताइया।
चिन्ता हरूं शरीर की, जब री करूं जलपान।
निरभय होय बताय दे अम्मां आगे खड़ा रणधीर ॥ प्राण० ॥
पकड़ जसोदा बांह, कान्ह छाती से लाया।
देखत उसकी ओर, नीर नैनन भरि आया।
तू तो बेटा सांवला, तैंने ब्याहवे ना कोय।
तेरा सोच पड़ा मन मेरे, यही अन्देशा मोय ॥ प्राण० ॥

चिन्ता मत कर बावली, मां निरभय भोजन खाय।
जब मेरा नाम जान मनमोहन, लगे तुम्हारे पांय।
जब इक अपने मना बात मोहन ठहराई।
सुन्दर बदन निहार, सांवरे, देई दिखाई।
भर भर कान्हा तुंगल[1], अनवट[2] बिच सोहै, जग मोती।
धाए तिलक लगाय करें और टसरी की धोती।
हाथ में टोडर हथबने[3], गल बैजन्ती माल।
काली जुलफें डस गया, उसकी नागन झलकें बार॥ प्राण० ॥
तन मन तें सब मोह लिया और लीन्हा चित्त चढ़ाय।
हर बिन रूप तजा राधा ने बिन देखे अकुलाई।
सखी सहेली कहैं सुन्दरी उड़ा क्यों रंग तुम्हारा।
हमको नेक बताय, कहना जरा मान लो म्हारा।
आज नैन तेरे नहीं रसीले, हुआ सकल चित भंग।
ललिता बिसारवा दो सखी, उसकी रथ पर आई।
राधा रही रिसाय बहुत मन में पछताई।
ऊकी रथ कह कुमारी से, क्या दुःख व्यापा तोय।
नैना निरख सुख कर बेटी, तुरत बता दो मोय॥ प्राण० ॥
राधा कुंवरी कहै अरी, मैं खाई काले।
वो नन्द जी का कुंवर लहर मेरी तुरत उतारे।
वैद्य सकल संसार के, सब के आवें जांय।
मना-हार मोहन नै ला दे बिन देखे अकुलाएँ ॥ प्राण० ॥
जसोदा जी से जाय कहो अरदास[4] हमारी।
जे नेकी हो जाय करूंगी दासी थारी।
जसुदा से विनती करूं, मुड़ तुड़ लागू पांय।
दीजो अपना लाड़ला, लहर उतारे आय।
सखी सहेली भेज और ये कान्ह बुलाये।
हंसत खेलत रजत मनमोहन आये।
झाड़ पूंछ कान्ह नै उसका पूंछा गात[5]।
बरसाने जा विलंब ना कीजो मान हमारी बात॥ प्राण० ॥

---

१. आभूषण का नाम, २. पैर के अंगूठे का आभूषण, ३. कड़े, ४. प्रार्थना,
५. शरीर।

कौन बरसाना गांव है, कौन वृषभान की नार ।
कौन की कहिए नन्दिनी ना जानूं उसका नाम ।। प्राण० ।।

पकड़ जसोदा बांह गाल पर गुंलचा[1] लाया ।
देखत सुत की ओर, हंसत गोदी में लाया ।
मोर मुकुट मस्तक धरो, तुम बरसाने जाय ।
दुःख झाड़ो वृषभान कुंवरी का, होय तुम्हारा ब्याह ।। प्राण० ।।

बरसाने को चला टेर बंसी की दीन्ही ।
सम्मन भए अनन्द कुँवरी नेकी हो लीन्हीं ।
देखत ही नेकी भई, टुक ना लाया हाथ ।
ऐसा जतन करा है सजनी, कहा कहूँ वाकी बात ।। प्राण० ।।

आए नन्द किशोर चीर जब जरा खसाया ।
पट घूंघट की ओट, देखकर बदन निहारा ।
सैन सैन मुजरा भए, श्री राधे किशन मुरार ।।
उन मस्तक बिन्दी धरी, उन लीन्हा पेच संवार ।। प्राण० ।।

लोरियां

मां की मधुर लोरी में बच्चे के लिये मधु से भी अधिक मिठास है । मां जब स्नेह से थपकते हुए मधुर स्वर में लोरी गाती है तो निंदिया रानी झट से आकर बच्चे की पलकों में झूलने लगती है । लीजिये लोरियों का रसास्वादन कीजिये ।

(३२)

सोजा मेरे भैया ।
मैं ले रही बलैया ।।
जब मेरा भैया पौढ़ेगा ।
नया दुशाला ओढ़ेगा ।।
तब मेरा मन नहीं लगेगा ।
पलका चाहे खिल उठेगा ।।
भोर भये तब उठि आना ।
हाथ धोय कर आजाना ।।

---

१. थप्पड़ ।

माखन मिश्री खा जाना ।
मेरा मन हरषा जाना ।।
सोजा मेरे भैया ।।

(३३)

आ मेरे मुन्ना ! आ मेरे लाल ।
गोद में आकर करे निहाल ।
मुँह बाया है क्या कुछ लोगे ।
हाथ पसारा क्या मिट्टी लोगे ।
गोरा मुखड़ा प्यारी आंख ।
जैसे दो नींबू की फांक ।
आ आ सोजा मेरे लाल ।
आ आ राजदुलारे लाल ।।

(३४)

आजा निंदिया आजा तेरी हेरूँ बाट ।
सोने के हैं पाँये जिसके रूपे की है खाट ।।
मखमल का है लाल बिछौना तकिया झालरदार ।
एक लाख हैं मोती जिसमें, लटकें लाल हज़ार ।।
मुन्नू के चार बहुयें आयें, दो गोरी दो काली ।
दो झुलायें, दो खिलायें, ले सोने की थाली ।।

(३५)

भैया मेरा राजदुलारा ।
भैया मेरा सब का प्यारा ।
भैया मेरे नैनों का तारा ।
सोजा भइया ! प्यारा प्यारा ।
सांझ भयी दिन छिप गया भैया ।
चिड़ियां भी अब सोईं भैया ।
आई निंदिया प्यारे भैया ।
आंख मूंद ले चुन्नू भैया ।
आ आ सोजा प्यारे भैया ।
मुख निरखे तेरा प्यारी मैया ।।

(३६)

मिमना आया दूर से,
मिमने की झांवर[1] भर गईं धूर से।
आजा निंदिया आ री,
मिमने को आके सुला री।
मिमने का मुख गोरा भौंहे काली,
मेरे लाल को कौन गढ़ाये सोने की बाली?
इसके दादा गढ़ायें इसके ताऊ गढ़ायें,
इसके बाबुल गढ़ायें सोने की बाली।
आयी आयी रात काली,
चिमने को लायी नींद की थाली। आजा निंदिया० ॥

(३७)

लोरी ले रे श्याम, वृन्दावन वासी, लोरी ले।
गोकुल के कन्हैया लोरी ले, अवध-बिहारी! तू लोरी ले।
तू वृन्दावन वासी हमारी लोरी ले।
तू गोकुल-कन्हैया हमारी लोरी ले।
तेरा बाबा लुटावै लोरी, तेरी दादी देवै लोरी।
तू दादी का प्यारा, तू बाबा का प्यारा, लोरी ले।
इसी प्रकार सब सम्बन्धियों के नाम लेकर।

पालना

(३८)

झुलावे मैया श्याम झूलैं पलना रे
तेरा दादा गढ़ाये चन्दन पालना
तेरी दादी लगाये फुंदना रे।
इसी प्रकार सब सम्बन्धियों के नाम लेकर।

(३९)

लाये ब्रज के बिहारी अजब पालना।
झूलते हैं कन्हैया अजब पालना॥

---

१. पैर का आभूषण।

तेरे बाबा को बधाई अरे ललना ।
तेरी अम्मा झुलावैं तुझे पालना ।।
अगुन चन्दन का बना है तेरा पालना ।
रेशम की डोरी सुहावैं अरे पालना ।।
झूलो झूलो हमारे दुलारे ललना ।

झुंझना

(४०)

प्यारे ! खेलो दिखाकर यह प्यारा झुंझना ।
तेरी बुआ लाई तेरे लिये झुंझना ।।
कैसा प्यारा, मनोहर सफेद झुंझना ।
लो गोदी में बैठो, बजाओ झुंझना ।।
छन छना छन छन छन छन तुम करना ।
तुम चाँद के भतीजे यह चाँदी का झुंझना ।।
खेलो सब को दिखा के यह प्यारा झुंझना ।।

बच्चे को जगाने का गीत

(४१)

हुआ उजाला छुप गये तारे ।
उठ मेरे नैनों के तारे ।।
झटपट उठकर मुँह धुलवा ले ।
बालों में कंघी करवा ले ।।
आ आ प्यारे बिट्टू नहा ले ।
आ झट माखन मिश्री खा ले ।।
ले किताब पढ़ने जायेगा ।
अच्छा बच्चा कहलायेगा ।।

दसूठन का या नामकरण-संस्कार का गीत

(४२)

उठी मेरे राजा पेड़ू में पीर उठी ।
कहो तो जच्चा तेरी सास को बुला दूं ।
नहीं मेरे राजा सास का काम नहीं । उठी० ।।

कहो तो जच्चा तेरी नन्दल को बुला दूँ।
नहीं मेरे राजा नन्दल का काम नहीं। उठी० ॥
कहो जच्चा तेरी अम्मा बहना को बुला दूं।
कही मेरे राजा, मन की सी बात कही। उठी० ॥
कहो तो गोरी, पण्डित को बुला दूं।
नहीं मेरे राजा पण्डित का काम नहीं। उठी० ॥
कहो तो जच्चा नाई को बुला दूं।
नहीं मेरे राजा नाई का काम नहीं। उठी० ॥
कहो रानी तेरे बाबल, बीरन को बुला दूँ।
कही राजा मेरे मन की सी बात कही। उठी० ॥

बच्चे की छठी और दसूठन पर जब नायन, ब्राह्मणी आदि यह गीत गाते समय वधू से परिहासमयी मधुर चुटकी लेती हैं तो गीत सब के हास-परिहास के बीच और भी सरस जान पड़ता है।

सतिये का गीत

(४३)

भतीजे के जन्म पर बुआ सतिये रखती है। उस समय यह गीत गाया जाता है।

आनंदा भये मोरी नगरी आज अरे मन रंजना।
नन्द लाला भये, नन्द लाला भये, अरे मोरे अंगना ॥
कोई भाबो ने न्हान संजोया, अरे मन रंजना।
अरे नन्दल मुखड़ा निरखै, अरे मन रंजना ॥
जो भाभी तुम पुत्र जनोगी, ले लें गले का हार।
अरे मन रंजना ॥
ऊपर से जसोदा नीचे आई, कोई होय पड़े नन्दलाल।
कोई होय पड़े सुन्दर श्याम, अरे मन रंजना ॥
नायन धीरे धीरे ढोलकी बजाओ।
पिछवाड़े बसै मोरी नन्दल, अरे मन रंजना ॥
बाजे की सुन कै बीबी दौड़ी आई।
लाओ गले का हार, अरे मन रंजना ॥
बीबी काहे की तुम मांगो तिलड़ी।
काहे का गलहार, अरे मन रंजना ॥

भाभी होड़[1] बदे की तिलड़ी भतीजे हुए का हार।
कष्ट उठाया हमने जाया, तुम कैसा मांगो गलहार। अरे मन रंजना ॥

कोई अंगना में झूले पलना, बीबी ले गई भतीजा उठाय। अरे···
कोई राजा रानी दोनों बैठे, घर आंगन न सुहाय। अरे···
अरे थाल भर मोती भाभी लाई, और ऊपर जड़ाऊ हार। अरे···
बीबी ले लो जड़ाऊ हार, अरे मन रंजना।
और दे दो हमारा लाल, अरे मन रंजना ॥

पहन ओढ़ बीबी भयी ठाड़ी, अरे मन रंजना।
कोई भाभी ने मिलन संजोया, अरे मन रंजना ॥

पैरों पड़ती की तोड़ लयी तिलड़ी। अरे···
गले मिलती का तोड़ लिया हार, अरे मन रंजना।
राजा ! देखो हमारी चतुराई, अरे मन रंजना।
हम तीनों चीज ले आई, अरे मन रंजना ॥

गोरी ! तू तो बड़ी हरजाल, अरे मन रंजना।
तेरे पीहर में यही होती आई, अरे मन रंजना ॥

नन्द और भाभी में शर्त लगी हुई है। नन्द ने भाभी से कहा—"यदि भतीजा होगा तो हम हार ले लेंगे।" भाभी ने उस समय तो स्वीकार कर लिया, परन्तु पुत्र होते ही अपना वचन भूल गयी।

नन्द अपने भतीजे को अपने घर ले गयी।

भाभी को घर सूना-सूना लगने लगा। हार और मोती लेकर मुन्ने को लौटाने के लिये नन्द के पास पहुँची। नन्द ने भतीजा भाभी की गोद में दे दिया। जब वह आलिङ्गन करने लगी तो भाभी ने नन्द के गले में से अपना हार और तिलड़ी भी उतार लिये।

भाभी आकर अपने पति से अपनी चतुराई की प्रशंसा करने लगी।

पति ने कहा—"क्या तुम्हारे पिता के घर की यही रीति है ?"

मुण्डन, नामकरण-संस्कार आदि शुभ अवसरों पर हास-परिहास के बीच जब यह गीत गाया जाता है तो बड़ा सुन्दर लगता है।

---

१. शर्त लगाना।

'भाग्य लिखी को मेटनिहारा'

(४४)

अरी घोर गरज कै इन्दर आये,
नरवर-गढ़ को जांय।
अरी नरवर-गढ़ में मेह बरसियो,
बरसेगा झरिय लगाय ॥
राजा नल पै विपद पड़ी,
छोटे भय्या ने लगा दिया बैर।
अरे सेर अनाज को रानी निकली,
कहिय न मिला उधार ॥
मान महत मेरा किसिए न राखा,
किसीए न राखा मान।
राजा नल पै विपद पड़ी,
छोटे भय्या ने, लगा दिया बैर ॥
अरे ! भूने तीतर बन को उड़ गए,
बन में गए समाय।
अरे सरक कै मछली जल में बड़ गई,
अब मेरी कछु न बसाय ॥

'भाग्य लिखी को मेटनिहारा ?' दमयन्ती सी महारानी की यह दुर्दशा, कि एक सेर अन्न के दाने तक न पा सकी। विपत्ति में कोई किसी का नहीं होता। दमयन्ती अपनी इस विपत्ति का समाचार बादलों के द्वारा अपने पितृ-गृह से भेज रही है।

कालिदास के नाटकों के सदृश लोक-गीतों में भी हमें जहाँ-तहाँ प्रकृति मानव की सहचरी के रूप में मिलती है।

"ऐ बादलो ! तुम गरजते हुए नरवर-गढ़ जाना और वहाँ जाकर मूसलाधार वृष्टि करना। फिर कहना, छोटे भाई से वैर के कारण राजा नल पर विपत्ति आ गई है। समय का फेर है, जो कभी रानी थी, उसके लिये सेर भर अन्न भी दुर्लभ हो गया है।

हाय ! भूने हुए तीतर भी उड़ गए। मछली सरककर पानी में चली गई। मेरा कुछ भी वश नहीं चलता।"

विपत्ति में असम्भव भी सम्भव हो जाता है। थोड़ा सा अवलम्बन होता है, वह भी मनुष्य को निराश्रित कर चल देता है।

: १४ :

कुछ ग्राम दोहे

जहां हमारा ग्राम-साहित्य गीतों की दृष्टि से बहुत वृहद् है, वहां इसमें दोहों की भी कमी नहीं है। ग्राम रमणियों ने दोहों की भी पर्याप्त रचना की है। वे विशेषकर दाम्पत्य प्रेम से सम्बन्ध रखते हैं। सबसे अधिक दृष्टव्य बात इनमें यह है कि इनकी मात्राएं भी प्रायः बिल्कुल ठीक हैं। कुछ दो-दो पंक्ति के फुटकर छन्द भी मिलते हैं किन्तु उन्हें भी ग्राम-भाषा में दोहे ही कहा गया है। उदाहरण स्वरूप—

"अगर है चमन फूल फिर भी खिलेंगे।
रही जिन्दगानी तो फिर भी मिलेंगे॥"

एक कवि ने कविता पर निम्नलिखित पंक्ति लिखी है—

सुन्दरी वही है, श्वेत वस्त्रा हो, तदपि सुन्दर लगे।
कविता वही है, जो हृदय में तीर-सी जाकर लगे॥

इस दृष्टि से ग्राम दोहे हिन्दी साहित्य की एक अमूल्य सम्पत्ति हैं। दृष्टान्त स्वरूप कुछ दोहे नीचे दिये जाते हैं—

कहा भयो जो बीछुरे, मो मन तो मन साथ।
उड़ी जात कितहूं गुड़ी, तऊ उड़ायक हाथ॥

एक और कवि ने कहा है—

प्रियजन वियोगों के समय, जब वेदना होती बड़ी।
मंजुल मिलन आशा वहां पर, सांत्वना देती खड़ी॥
भव-ताप-ज्वाला ज्वलित जन के वह मनोरथ बाग को।
कादम्बिनी बन सींचती, करती प्रकट अनुराग को॥

वियोग के दिनों का महाकवि कबीर ने भी कैसा सुन्दर वर्णन किया है—

"कहा भयो जो बीछुरे, दूर बसे की पास।
नैना ही अन्तर पड़ा, प्राण तुम्हारे पास॥

× × ×

सागर में पानी घणो, गागर में न समाय।
तुमको हम सी बहुत हैं, हमको तुम से नाय॥

जिस प्रकार विशाल सागर के जल का एक छोटी-सी मटकी में आ सकना असम्भव है, इसी प्रकार आपके सदृश मैं भी प्रेम करना सीख सकूं, यह भी असम्भव ही है। तुम तुम ही हो और मैं मैं ही हूं। तुम्हारी समता कैसे कर सकती हूँ?

"हमहिं तुमहि सरवरि कस नाथा।
कहउ तो कहाँ चरन कहँ माथा॥

—तुलसीदास

एक और कवि ने इसी भाव को इस प्रकार लिखा है—वह अपने प्रिय को अपने से महान् समझता है, इसीलिए वह उससे पृथक् रहने की याचना करता है—

"अन्त तक रहना मुझसे भिन्न, बुझाना मत मिलने की प्यास।
भिन्न होकर ही तो हे देव, रहोगे देव और मैं दास॥

× × ×

मेरे स्वामी याद तव, आती है दिन रैन।
घड़ियाँ गिनते दिन गया, तारे गिनते रैन॥

विरहिणी अपने प्रिय के वियोग में व्याकुल हो रही है। उसका एक-एक क्षण उसके बिना युग-सदृश व्यतीत होता है। कवि के भावमय शब्दों में यही भाव इस प्रकार व्यक्त किये गये हैं—

श्याम दरस को नैन तरस गए, पल-पल युग सम बीत रहे।
काक उड़ावत दिवस कटत हैं, गिन गिन तारे रैन कटे।

× × ×

चलत-चलत लौं ले गए, सब सुख संग लिवाय।
ग्रीषम बासर सिसिर निसि, प्यौ मम पास बसाय।

एक इंगलिश लेखक ने भी इस भाव को इस प्रकार व्यक्त किया है:—

Short, say they, are the nights in summer,
But ah! they are long for me far from my beloved.

"लोग कहते हैं कि ग्रीष्म-ऋतु की रात्रि बहुत अल्पकालीन होती है। किन्तु

मुझ विरहिणी के लिये तो वह अत्यन्त दीर्घकालीन है।"

पाती ताको भेजिये, जो होवे परदेस।
जो निसि दिन दिल में रहे, ताको कहा सँदेस॥

इसी भाव को मीराबाई ने इस प्रकार लिखा है—

"जाको पिय परदेश बसत हैं, लिख लिख भेजें पाती।
हमरा पिव हमरे हिरदय बसत है, ना आती ना जाती॥"

कबीर ने कहा है—

"प्रीतम कूं पतियाँ लिखूं, जो कहुँ होय बिदेस।
तन में, मन में, नैन में, ताको कहा सन्देस॥"

× × ×

दिल्ली के बाजार में चार कबूतर जायँ।
सीटी देय बुलाय लूं, जोड़ा बिछुड़ा जाय॥

नायिका के प्रियतम जा रहे हैं। क्या सचमुच ही उनके साथ ही उसका हृदय, सुख तथा प्रेम भी नहीं चला गया? उनसे उसका वियोग होने जा रहा है। वह सोचती है, अपने प्रेम के द्वारा उन्हें रोक लूं; किन्तु क्या उड़ते हुए कबूतर सीटी के शब्द से लौटकर आते हैं?

महाकवि बिहारी ने लिखा है—

"अजहुँ न आए सहज रंग, बिरह दूबरे गात।
अबहीं कहा चलाइयत, ललन चलन की बात॥"

एक और कवि ने लिखा है:—

"कंचन में आग गयी, चूनि चिनगारी भई,
भूषण गए हैं सब दूषण उतार लै।
बालम विदेस ऐसे बैस में है लागी आगि,
बरि बरि उठै हिय, बिरह बयार लै।
ए री पर घर किन माँगन को जैहै आजु,
आँगन में चन्दा तें अँगार चार झारि ले।
साँझ भए भौन, संझवाती क्यों ना देत आली,
छाती में छ्वाय दिया बाती क्यों न बारि ले।"

× × ×

शीशी भरी गुलाब की, भेजूं किसके हाथ।
देह मेरी यहाँ पड़ी, प्राण तुम्हारे पास॥

इस दोहे में भी विरह-वर्णन स्वाभाविकता लिये हुए है। उसका विरह ऐसा नहीं है जैसा कि गंग की नायिका का :—

"प्यारी को परसि पौन गयो मानसर पै,
लागत ही औरै गति भई मानसर की।
जलचर जरे औ, सेवार जरि छारि भये,
जल जरि गयौ पंक सूख्यौ भूमि दरकी।"

× × ×

जी चाहत है मिलन को, पर बिन मिला न जाय।
कहा करूँ करतार ने, पर ना दिये लगाय।

मिलनातुर विरहिणी पक्षी होकर प्रिय से मिलने को उत्सुक है। परन्तु परों के अभाव में उसे विवश होकर रह जाना पड़ता है।

कोठे ऊपर मैं खड़ी, सुखाऊं अपने केश।
चारों ओर देखा बहुत, मिला न तेरा देश॥

बेचारी विरहाकुल ग्राम-बाला प्रिय के देश को देखकर ही सन्तोष करना चाहती है, परन्तु वह भी भाग्य में नहीं है।

चकोर को चन्दा, मोर को बादल पियारे हैं।
प्यारे की प्यारी बहन हमको पियारी है॥

प्रिय का प्रिय स्वाभाविक ही प्रिय लगने लगता है।

× × ×

प्रीतम यह मत जानियो, हुआ दूर अब बास।
नैना ही अन्तर पड़ा, प्राण तुम्हारे पास॥

◇ ◇ ◇

जल में कूदे माछली, गदला पानी होय।
तुम परदेसी बालमा, मिलना कैसे होय॥

◇ ◇ ◇

जल में बसे कुमोदनी, चन्दा बसे अकास।
प्रीतम मेरे मन बसै, जानूँ मेरे पास॥

◇ ◇ ◇

प्यारी तेरे नैन के, लगे कलेजे बान।
जल बिन तड़पत मीन ज्यों, वैसे तड़पत प्रान॥

प्यारे तेरी निगाह के, लगे कलेजे तीर।
कैसी मारी खींच के, तुम प्रीतम बेपीर ॥

◇ ◇ ◇

लगी प्रीति नहीं छूटती, सुन मेरे चित्त चोर।
गाँठ लगी खुल जात है, ज्यौं रेशम की डोर ॥

◇ ◇ ◇

सूरत मेरे सनम की, चढ़ी रहत है चित्त।
क्या हुआ तन न मिले, मन मिल आवे नित्त ॥

◇ ◇ ◇

सूआ बन तुम उड़ गये, खाली पड़ा मकान।
दिन दिन तो हम काट दें, बैरन मेरी रात ॥

◇ ◇ ◇

चन्द्रमुखी तव दरस हित, मेरे नैन चकोर।
टरत न टारे चाहते, निरखत हूँ अंजोर[1] ॥

◇ ◇ ◇

कर काँपत पतियां लिखत, जल भरि आवत नैन।
कोरो कागज हाथ दे, मुख सौं कहियो बैन ॥

◇ ◇ ◇

कागज भीजत नैन जल, कर काँपत मसि लेत।
पापी विरहा मन बसो, बिथा लिखन नहीं देत ॥

उपरोक्त दोहों में दी हुई उक्ति में और रामायण में दी गई तुलसीदास जी की निम्न उक्ति में बहुत साम्य है :—

विरह अगिनी तनु तूल समीरा। स्वांस जरै छन माहिं सरीरा ॥
नैन स्रवहिं जल निज हित लागी। जरै न पाव देह विरहागी ॥

नाम पाहरू दिवस निसि, ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित, प्राण जांय केहि बाट ॥

× × ×

आठ पहर चौंसठ घड़ी, यही हमारा काम।
ले माला जपती रहूँ, केवल तेरा नाम ॥

---

१. अनिमेष दृष्टि से।

मेरे आंगन आमली जिस चढ़ बोला काग।
सोने से तेरी चौंच मढ़ा दूं, जो पिया आवें आज॥

मेरे आंगन में इमली का पेड़ है, जिस पर बैठा हुआ कौवा बोलकर प्रिय आगमन की सूचना दे रहा है। ऐं कौए! यदि आज मेरे प्रियतम आ गये तो मैं तेरी चौंच सोने से मढ़ा दूंगी। (मुख से बोलकर ही तो कौए ने प्रिय आगमन की सूचना दी है।)

इसी भाव का कवि तोष का भी एक पद्य है—

"पंजनी गढ़ाय चौंच सोने से मढ़ाय देहौं,
कर पर लाय कर रुचि से सँवारि हौं।
कहै कवि तोष छिन अटक न लैहौं कबौं,
कंचन कटोरे अटा खीर भरि धरि हौं।
ऐ रे कारे काग! तेरे शकुन संजोग आज,
मेरे पति आवें तो वचन ते ना टरिहौं।
करती करार तीन पहिले करौंगी सब,
अपने पिया को फेरि पीछे अंक भरिहौं।"

× × ×

हाथ जोड़ अर्जी करूं, सुनो मेरे दिलदार।
अंखियां प्यासी दरस की, जल्द दिखाओ यार॥

◇ ◇ ◇

हाथ जोड़ बिनती करूं, सुन प्रीतम चित्त लाय।
हम दासी हैं चरण की, दरसन दीजो आय॥

◇ ◇ ◇

जितने सुख संसार में, सुन मेरे दिलदार।
वह सब दुख हो जात हैं, बिछड़त अपना यार॥

महाकवि तुलसीदास के भावमय शब्दों में सीता जी ने वियोग का इन शब्दों में वर्णन किया है :—

रोग सोक सम भूषण भारू। जम जातना सरिस संसारू॥
जहं लगि नाथ नेह अरु नाते। पिय बिनु तियहिं तरनि तें ताते॥
तन धन धाम धरनि पुर राजू। पिय विहीन सब सोक समाजू॥

प्रीतम प्रीत लगाय कै, हर लीन्हो मन मोर।
बिन देखे नहिं चैन अब, सुनहु मीत चित्त चोर।।

◇ ◇ ◇

तुम हो अरस[1] पहाड़ पै, हम जमुना के तीर।
अबका मिलना कठिन है, पैरों पड़ी जंजीर।।

◇ ◇ ◇

चन्दा तेरी चाँदनी, सूरज के मन भाय।
ईश्वर से विनती करूं, बहन जल्द मिल जाय।।

◇ ◇ ◇

रवि को कमलनी बहुत हैं, कमलनी को रवि नाय।
हम सी तुमको बहुत हैं, तुमसी हमरे नाय।।

उपरोक्त दोहों में छन्दशास्त्र की दृष्टि से यति, गति, मात्रा आदि की कहीं-कहीं पर त्रुटियां हैं, परन्तु लोक-कविता तो इन बन्धनों से परे है। भाव और रस की दृष्टि से ये दोहे किसी प्रकार भी हल्के नहीं कहे जा सकते।

---

१. अर्श (आकाश)

लोक-भाषा के विशिष्ट शब्द
और
उनके अर्थ

(अ)

अतलस मसरू=बढ़िया कपड़े के नाम

अधर=बीच में ही

अहेरी=शिकारी

अनगिन=अगणित

अग्रिम=आगे

अलबेला=अनूठा

अलबत्त=अवश्य

अलकं-दलकं=चलने से

अगाड़ी=आगे

अगत=भविष्य

अजड़=जो न खुल सकें

अमोली=अमूल्य

अमरुख=शुष्क

अनमना=उदास, खिन्न

अरूवरू=इधर-उधर

अगड़=आभूषण

(आ)

आले-गीले=गीले

(इ)

इस जनी=इस संसार का

इस्कत=प्रेम

इध्धर=इधर

(ई)

ईंडवे=घड़ा सिर पर ठहराने के लिए ईंडवी

(उ)

ऊभा=आ गया

उठै=वहां

उतारी=नटखट

उघाड़ी=विवस्त्र, नग्न

उनिहार=छवि

उर्ला=इधर का

उपाया=सोचा

उलुखा=पार किया

उद्‌दू बाजार=जिस बाजार में सब वस्तुएं मुफ्त मिलती हों

उलदाहा=उतारा

उनींद=अर्द्ध निद्रा

उरै=यहां

(ऊ)

ऊदी=बैंगनी

ऊना=थोड़ा

ऊनई=हरी भरी होना

ऊकचूक=भूल

(ओ)

ओड़=इतनी बड़ी, मर्यादा

ओलमा=उलाहना

ओटा=उत्तरदायित्व ले लेना

ओलना=बोलचाल बन्द होना

ओबरिया=कोठरी

ओले कौले=इधर -उधर, कोने में

औंघ के=गहरी नींद में

(अँ)

अंदेशे=प्रतीक्षा में

(क)

कछनी, काछी=लंगोट कस लिया
कद, कदी=कब, कभी
कगारे=किनारे पर
कार=कुण्डलाकार लाइन
कामली=कम्बल
काग=कौआ
किल्ला=अंकुर
कुक्कुर=कुत्ता
कूकड़ी=धागे की गोली जो चरखे पर काती जाती है
कोट=किले
कोसना=बुरा-भला कहना
कौंपई कौंपा=कोंपल
कंगाल=दरिद्र
क्वारी=अविवाहित
कछाला=धोती कसके
क्वारे मड़हे=अविवाहित ही
काढ़ियो=निकालना
काले पट्ठे=बाल
किसमों सिर=अवसर अवसर पर
कुपना=बहुत मोटी
कोडी कोडी=झुककर
कोरा=गोद
कौली भरना=आलिंगन करना
कंचनी=वेश्या
कंच=शीशा

(ख)

खलउआ=दौना
खानी बछड़े=पुत्र
खारी=खाली
खिडायो=बिखेर दी
खूंट=दिशा
खोस=छीनकर
खसम=पति
खारी=सरकण्डों की बनी टोकरी
खारी=अप्रिय
छुधा=भूख
खोहन=गुफा
खन्दाओ=भेजो, निर्वासित कर दो

(ग)

गरियाओ=गाली दो
गड्डा=गाड़ी
गजरा=एक प्रकार का हाथ का आभूषण
गतराड़ी रांड=एक गाली
गड़वी=लोटा
गढ़कै=बनाकर
गरबी=घमण्डी
गहन अंधेरा=अत्यन्त अंधेरा
गबरी=भद्दी
गाभरू=सुन्दर नवयुवक
गारडू=साँप का विष उतारने वाला
गाला=झँझट
गिर्द=चारों ओर
गिरदां वाले=यशस्वी
गुहार=समीप
गुनाह=अपराध
गैल=मार्ग
गैल घाट=मार्ग का कष्ट

गोरी=पत्नी
गोड़ी गोड़ी=खोदकर
गड्डी=गाड़ी
गवन्त्री=गाय
गडुवा=लोटा
गजबरण=ग़ज़ब की सुन्दरी
गरुए=भारीपन
गढ़ाना=बचवाना
गहिर=असहाय
गाडुमारू=प्रियतमा
गांठ कै=पल्ले से, पास से
गात=शरीर
गिदौई=लालच करना
गुरपरण=मिट्टी खोदने का औजार
गैल=साथ
गोरी=नवयुवती
गौंडे=मार्ग में

(घ)

घटा=बदली
घड़ाना=बनवाना
घाल=गलना
धेरिया=पुत्री
घोड़िया=लड़के के विवाह के गीत
घरसी=प्रेम और रोष-भरा सम्बोधन
घाला=डालना
घुटनीर=घुट्टी

(च)

चटसाल=पाठशाला
चकचाल=चालबाज़
चांद=सिर के ऊपर का भाग
चिनना=बनवाना
चिपना=लगना
चीती=मनचाही
चीरे वाले=पगड़ी वाले
चुगांदा=चराते हुए
चूंचहाट=कलरव
चोश्रा=कूंश्रा, सुगन्धित द्रव्य
चौमासा=वर्षा ऋतु
चौंरी=वेदी
चौपटे=बिना झिझके, सबके सामने
चंगेरी=डलिया
चनना=स्मृति
चकडोर=चारों ओर गोटा लगा हुआ
चिरवेदार=दास, सेवक
चितऊं=देखा
चीलगाड़ी=वायुयान
चूहड़ी=भँगिन
चून=आटा
चोरणा=चरागाह
चौके=रसोई
चंपाकली=गले का आभूषण

(छ)

छाछ=मट्ठा
छू मंतर=क्षण भर में
छैल=छबीला
छबड़िया=डलिया
छियावै=काटना
छोरा=लड़का
छोरी=लड़की

(ज)

जडूले=पुत्र (दो)
जमड़ा=शिरमौर

जुग जुग=युग-युग
जामा=जन्म लिया
जी=प्राण
जीमत=खाना खाते हुए
जुगनी=गले का आभूषण
जोग=योग्य
जंगमजंगा=लड़ाई
जनु=मानो
जन्यौ=जन्म दिया
जारी=व्यभिचार
जिमाना=खाना खिलाना
जीवड़ा=हृदय
जूना=एकत्रित तृण
जोय=पत्नी

(झ)

झक मारना=झींकते रहना
झमारे=चमकना
झारी=मटकी
झिकोला=हिलना
झूमटा=समूह
झोटा=झूला
झंझर=गड्ढा
झुरूं, झिरवै=तिल तिल करके जलना
झटोला=टूटी हुई खाट
झलोरे ले=लहलहाता है
झिलमिल=जगमगाता हुआ
झोटा देना=झुलाना

(ट)

टके=पैसे
टिब्बे=टीले के निकट
टिकड़ा=मोटी-मोटी रूखी रूखी रोटी
टुकुर-टुकुर=अनिमेष दृष्टि से
टोल=उछाल के मारना
टोटा=कमी
टिब्बे ढलती=गोधूलि
टांक टांक=कोना कोना
टिपारे=सन्दूकची
टुक=जरा तो
टोडरिया=कड़े
टोरड़े=कंकड़ी

(ठ)

ठाढ़े=बलशाली, समर्थवान (काल)
ठेठ=खास
ठाड़ी=खड़ी

(ड)

डगर=मार्ग
डासहुँ=बिछौना, बिछाना
डुलिया=डोली
डोकरिया=वृद्धा
डासन=शैया
डोकरे=लड़के
डूंडो=बिना सींग का
डंगर=पशु

(ढ)

ढलना=अस्त होना
ढील=विलम्ब
ढोला=पति
ढिग=समीप
ढुलना=बिखरना

(त)

तड़के=प्रात:काल ही
तत्ता=गर्म
तपत=गर्मी
तले=नीचे
तड़का=सवेरा
तानें=व्यंग्य
ताक=आलमारी
तांई=लिये
तिलड़ी=तीन लड़ी
तीयल=साड़ी-ब्लाऊज अथवा लहंगा चुंदड़ी और चोली
तोय=तुझे
तौला=मिट्टी का कूंडा
तौं=तुम
तारी=समाधि
तिरिया=स्त्री
तोजन=आंगन, चर्खा कातने का स्थान
तीती=तिक्त
तोड़ा=जंजीर
तौमा=साधुओं का पानी भरने का बर्तन

(थ)

थम=तुम
थामियो=ठहराना
थारा=तुम्हारा
थाम लिया=ले लिया

(द)

दय्या=मां के लिये सम्बोधन
दबक पिहान=अन्न की बोरी
दखिनी=दक्षिण का बना हुआ
दामन=लहंगा
दोहते=षेवते
दुहइया=दुहाई
दुन्द=ऊधम
देस्यां=देती हो
दरब=द्रव्य, धन
दसिया=तिथि (दशमी)
दारी उरखनी=नाचने वाली
दुत्कारी=तिरस्कृत कर देना
दुर=जा
दुहाग=दुर्भाग्य
दोघड़=पानी लाने के दो घड़े (जो ऊपर नीचे सिर पर रखकर स्त्रियां लाती हैं)

(ध)

धड़ूके=गरजता है
धणी=पती
धरनधरी=अग्रसर हुए
धी=पुत्री
धौले=सफेद
धियोरी=कन्या
धण=पत्नी
धीयड़=बेटी
धामर देना=लपेट लेना
धोरे=पास
धेरिया=पुत्री

(न)

न्याणी=छोटी
नाले=साथ
नाजो=सुकुमारी
निकाड़=निकलने वाला

निबड़ना=समाप्त होना
निसरी=निकली
नीका=बारीक
नेग=विवाह आदि शुभ अवसरों पर दिए जाने वाले उपहार
नेड़े=समीप
नेजू=रस्सी
नैनूं=एक प्रकार का कपड़ा
नौरंगिया=नये रंग में रंगा हुआ
नाड़=गर्दन
नातना=दूध बिलोने की रस्सी, पानी छानने का कपड़ा
नाटा=मना कर दिया, छोटे कद का व्यक्ति
नियरे=समीप
निसरि=निकलकर
नीलगरनी=रंगरेजन
नेती=दही बिलोने की रस्सी, योग की एक क्रिया
नैहर=पितृगृह
नोह=नाखून

(प)

परणाय=विवाह कर लेना
पड़ती=गिरती हुई
पछाड़=धड़ाम से गिर पड़ना
पनही=जूता
पर्ला=उधर का
पखालूंगी=धोऊँगी
परिवन्द=हाथ का आभूषण
पठौनी=विदा
पानामारू=काली सघन
पांयत=पैरों की ओर
पांड=गठरी
पानी निवाल सिरजाय=लज्जा से सिर गड़ा जाता है
पाली=ग्वाला
पिछौरा=साधुओं का चोला
पीहर=पितृगृह
पेड़ा=धन्य
पैंज=प्रतिज्ञा
पराया=और का
पट=दरवाजा
पगिया=पगड़ी
पधराय=विराजमान करके
पहुंचा=कलाई
पजरिगौ=जल गया
परगट=प्रकट
पायल= पैर का आभूषण
पाहुने=मेहमान
पारसी=भले बनना
पात=प्रसूता स्त्री का एक प्रकार का भोजन
पिलाना=घोड़ा कसना
पिछोक्कड़=पीछे की ओर
पेट काटकर=स्वयं भूखी रह कर
पैंजनी=पैरों का आभूषण
पैंहडा=घड़े
पैड़ियां=सीढ़ी
पौल=द्वार
पोती=बनाना, सफेदी करना या गोबर से लीपना
प्योसार=पितृ-गृह
पलेथन=रोटी बनाते हुए लगाने के लिए सूखा आटा

पैल गैल=पहली बार
पोत=लीप कर, जहाज़, बार
पौढ़िवे=सोने को
पौन=हवा

(फ)

फलसा=दरवाजा
फेरों=भांवर
फिरना=चिन्ह

(ब)

बधैया=पुत्र जन्म पर भेजे पुरस्कार आदि देना, बाँटना
बगड़=आंगन
बधूं=सराहना करना
बरजोरी=ज़बदरदस्ती
बधी=बढ़ना
बनड़ी=दुल्हिन
बनज=व्यापार
बड़ा=घुस गया
बहकाना=बातों में बहला लेना
बगद आना=भाग आना
बरन=वेष
बरजा=मना किया
बहली=बैलगाड़ी
बयार=बायु
बांस=दुर्गन्ध
बाहुड़ आना=लौट आना
बाड़ी=रूई के पौधे
बाछड़ू=बछड़े
बारह बाट=विपत्ति में फंस जाना, तबाह हो जाना
बाबुलिया=पिता के
बांहदा=चलता हुआ
बारनै=आंगन में
बागली=झोली
बारी=बालिका बाल्यवस्था
बावनी उजाड़=बीहड़ बन
बिराना=पराया
बिसरायऊ=भुलाना
बिछ्टना=बिछुड़ना
बिरम=ब्राह्मण
बिलोवनी=दही बिलोने की हंडिया
बिरवे=वृक्ष
बिसात=मूल्य
बिलूंगड़ी=बिल्ली का बच्चा
बिरमोहै=फंसा कर मोहित कर लेना
बिडार देना=त्याग देना
बीर=भाई
बीजना=बीज बोना
बुहारी=झाड़ू लगाना
बुखार=कोठरी
बुगचे=वस्त्रों सहित ट्रंक
बेर=देर
बेड़=झूलने की रस्सी
बेंदी बैना=सिर का आभूषण
बोड़ा=बिना दांतों का
बंदी=बिचारी
बप्पा=पिता के लिए सम्बोधन
बरगा=समान
बरजना=रोकना
बटेवड़ा=पथिक
बगावें=फेंक देना
बल्ली=पतवार

बतरायवें=वार्तालाप करने को
बर जोग=विवाह के योग्य
बरनी=सम्बन्ध किया
बारादुनी उजाड़=निर्जन वन
बगाया=फेंक दिया
बधाया=वृद्धि की
बाढ़ी=बढ़ाई
बालना=जलाना
बाजूबन्द=आर्मलेट
बार=द्वार पर
बान=आदत
बासन=बर्तन
बासक राजा=सर्प
बाट=रास्ता
बांच कर=पढ़ कर
बार=घर
बिड़ला=पौधा
बिरोगियां=बीमार
बिसाना=लाकर देना
बिरियां=बारी
बिहान=प्रभात
बिलाय गए=अन्तर्धान हो गए, अदृश्य हो गए
बिलंगनी=कपड़े सुखाने की रस्सी
बिजना=पंखा
बिलमायके=भुलावा देकर
बिसावें=मंगाना
बोब्बो=बहिन के लिए सम्बोधन
बेल बधना=वंश-वृद्धि होना
बैसन=अवस्था
बगदो=दौड़ा दौड़ा आया
ठोली ठोली मारना=व्यंग करना
बंजारन=वणिका

(भ)

भछियो=खा डालना
भर्तार=पति
भाल=सूचना
भायली=प्रेमिका
भितरा=अन्तःपुर
भेड़ के=बन्द करके
भैना=बहन
भखी=खा डाली
भड़कना=क्रुद्ध होना
भावें=अच्छे लगना
भिनभिना=सूना
भीतर=अंदर
भौंड़ा=बुरा, भद्दा
भौंरा देश=काली अंधेरी कोठरी
भिनुसार=प्रातःकाल

(म)

मंज्जा=चारपाई
मनरा=मनिहार
मतो=सोचा, योजना
मड़क=ऐंठ
मनड़ा लेना=प्रेम की परीक्षा
मढ़ी=कुटिया
मड़कना=टूटना
माड़े=पतले, हल्के
मांडन=श्रृङ्गार
मांडिया=बिछाना
मांड=चित्रित किये
मुरहा=मरा (एक गाली)

मुकलावले=गौना करने वाले
मूंड=सिर
मेंड=नियम
मैड़ी=बुर्जी
मोय=मुझे
मोचड़े=जूते
मौंडी=साधु
मौड़=मुकुट
मसकी=मोड़ दी
महकार=सुगन्धि
मल=यमराज
मता=चालाकी, योजना
मचियहि=चारपाई पर
मती=बुद्धि
मरोड़ा मार कर=इतराकर
मचियवा=चारपाई
माती=मतवाली
मांह=में
मारू=पति
मिसर=पण्डित
मितवा=मित्र
मुरहा=मूढ़ा, मरा सा अर्थात् एक गाली
मूंदना=बन्द करना
मेला=डाल दिया, रख दिया
मेंड=बाढ़
मेड़ा=रेत
मोमी दूदाब= एक प्रकार के बढ़िया कपड़े
मौंडिया=चालाक साधु
मौला=बौर आना
मंजड़ी=चारपाई
मंदे=बुरे

(य)

यांना=छोटा
यानी=छोटी

(र)

रहसा=चाव में आना
रतनाले=प्रेमपूर्ण सम्बोधन
रहसत=हर्ष, गद्‌गद् हृदय से
रहसी-रहसी=हर्ष, गद्‌गद् हृदय से
रलै=मिलना
रहसी=प्रसन्न हुई
रमतो=घूमता हुआ
रमड़ो=मग्न होकर
रतुली=सुन्दर
रार=झगड़ा
रावरो=पति का, आपका
राजचाल=रानी सी
राय बटियां=खपरैल की छत
राजड़े=पति
रुत=मौसम
रेई=रेह
रकेबी=तश्तरी
राजोड़ा=राजा, पति
राज रजैंगी=राज्य सुख भोगना
रांधे=पकाये
रावटी=बरसाती
राड़=ज़िद
रीता=खाली
रूखलड़े=वृक्ष
रोल=शोर

(ल)

लरजै=क्रोध उठना, उमड़ना
लकुट=डण्डा
लश्कर=सेना में
लश्करी=सैनिक
लज=रस्सी
लवै=समीप
लवा=ओर
लड़बावली=भोलीभाली
लावे=लागी, नौकर
लांगुरिया= अप्सरायें (सुन्दरियां)
लाड़ लड़न्ती=स्नेह करने वाली
लोली=घोड़ी
लुगइयां=स्त्रियां
लंगर=सुन्दर, नटखट
लकोय=छुपाना
लठोली=लठिया
लस्सी=छाछ
लखाये=देखा
लसकी=चमकी
लच्छे झांवर=पैर के आभूषण
लत्ता=कपड़ा
लागे=लगे, लगती है
लावन=लहंगे व साड़ी के नीचे का छोर
लीपे=पुताई करना
लुकाय=छिपाकर
लोई लागे=प्रातःकाल होते ही

(व)

वणज=व्यापार
वरण=रूप
वारी वारी जाना=बलिहारी जाना
विलसती=प्रसन्नचित्त
वेगि=शीघ्र
वारी=ग्राम्य संबोधन
वारना=न्यौछावर करना
विन=उन्होंने

(श)

शिखर=तेज, चोटी पर
सिवाला जाड़ा=कठिन शीत

(स)

सहाई=सहायता
सरीखी=समान
सरै=काम चलना
सहज-सहज=धीरे-धीरे
सयानी=बड़ी
सरती=काम चलना
सरन-सरन=ठण्डी ठण्डी
साख=बड़ाई
सांस घालना=आह भरना
सार=लोहा, लगाना
सांकल=कुण्डा
सालै=चुभ रही है
सायबा=निवासी
सामां जोरो=तैयारी करो
सारो=लागाओ
सिगरी= सब
सिमवाय= सिलवाना
सुहेली=चतुर सखियां
सुमरनी=माला
सूए=पति, तोता
सेती=साथ

सैनन में=संकेत में, कटाक्ष करना
सोहरे=ससुराल
सोहगी=सगाई के समय
सोहरा=श्वसुर
सौगात=भेंट
संतिन लौं सामा रहती=पीढ़ियों तक धन रहता
सिरवाना=बहा देना
सन्भा=सन्ध्या
सरवर की पोल=ईश्वर के द्वार पर
सरांहा=सराहनीय
समग्गर=सारा
सगली=समस्त
समुज्जल=सारी
सगला=सब
सारूं=निर्वाह करना
सासरा=ससुराल
सालगराम=शालिग्राम
सारे=पूर्ण किये
साहबा=पति
सायेधरी=विवाह का रंग चढ़ी हुई
सांभ्या=संभाला
सावन के सी लोर=तेज वर्षा की बूंदें
सिहाया=प्रफुल्ल हो उठा
सिगु=भी
सुवरण=सोना
सूआ=हरी
सेत सुपेती=श्वेत
सेल=एक शस्त्र
सोटी=डण्डा
सोहर=बच्चे के जन्म के गीत
सौन=शकुन
सौंही=सन्मुख
सोकन=सपत्नी
संभड़े=संभाल कर रखना
सिभलऊ=बनाना

(ह)

हरबी=कदापि
हल हल ताप=कठिन ज्वर
हवलिया=हाल, समाचार
हरियल=हराभरा
हथफेर=दुष्ट
हवाला=जंजाल, तेज़
हाथ तले की हो जाना=किसी के अधिकार में हो जाना
हाली=हल चलाने वाला
हिवड़ा=हृदय
हिंसी=घोड़ी की बोली
हुतन करना=जल-जल कर नाश करना
हेत=प्रेम
हेठ की लीली=साथ की घोड़ी
होलरिबा=पुत्र के लिए सम्बोधन
हंसली=गले का आभूषण
हमारव=मना करना
हाड़=हड्डी
हांडै=घूमता है
हिवड़े=हृदय में
हीने=छोटे
हुलहुलियों से=फूट फूट कर
हेट=पीछे
हेरी=ढूंढी
हौंस=चाव
हंस=प्राण